CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वच्छन्दतावाद

डॉ. अजब सिंह

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

- स्वच्छन्दतावाद तथा यथार्थवाद के समन्वय से नवस्वच्छन्दतावाद का सृजन होता है। हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में नवस्वच्छन्दतावाद का प्रचलन अभी पूर्ण रूप से नहीं हुआ है। प्रस्तुत ग्रन्थ में साहित्य तथा समीक्षा के क्षेत्र में इस अवधारणा का सैद्धान्तिक तथा ऐतिहासिक अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

०० सैद्धान्तिक आलोचना के क्षेत्र में 'नवस्वच्छन्तावाद' एक प्रस्तावना कृति है और प्रमाण-कृति भी। इसमें 'नवस्वच्छन्दतावाद' के सैद्धान्तिक आधार, प्रेरक-तत्त्व नवोन्मेष, मार्क्सवादी संदर्भ, सामाजिक धरातल, मनोवैज्ञानिक भूमिका और नियामक संरचना की तर्क-सम्मत व्याख्या की गयी है।

००० आलोचक ने युंग, लुकाच अर्नेष्ट फिशर तथा मायकेल लोई की सामाजिक दृष्टि पर विचार करते हुए भारत की ऐतिहासिकता को दृष्टिगत रखा है। स्वच्छन्दतावाद, यथार्थवाद और परम्परावाद की समन्वित अन्तर्दृष्टि के रूप में समर्थ और सार्थक व्याख्या करते हुए स्वच्छन्दतावाद को गंभीर, विशद, व्यापक और नूतन संदर्भ प्रदान करने के क्रम में यह पुस्तक महत्त्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत करती है।

मूल्य : साठ रुपये

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIE

हिन्दी ६६२

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID
Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

नवस्वच्छन्दतावाद

डॉ० अजब सिंह
बी० ए० आनर्स, एम० ए०,
पी-एच० डी०, डी० लिट्०
रीडर, हिन्दी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

NAVSWACHHANDATAVAD
(Criticism)
by
Dr. Ajab Singh

© डॉ० अजब सिंह

प्रथम संस्करण : १९८७ ई०

प्रकाशक
विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी

मुद्रक
न्यू प्रिन्टिंग सेन्टर, २/२४० ए-१, पाण्डेयपुर, वाराणसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

१८६११

ब्रह्मर्षि योगिराज देवरहा बाबा

के

श्री चरणों में

सादर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

विश्वविद्या

न्यू प्रिन्टिङ सेन्टर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

आमुख

स्वदेश-विदेश के अनेक आलोचकों का मत है कि सभी कविता मूलतः रोमानी और प्रगीतात्मक होती है। उनका तर्क है कि चेतना का स्वच्छन्द उन्मेष ही सर्जक प्रतिभा का लक्षण है, और यही स्वच्छन्दतावाद का भी प्राण-तत्त्व है। इसलिए विचित्र लगने पर भी तथ्य यही है कि नव-लेखन के प्रवर्त्तकों के सभी नारों के बावजूद, स्वच्छन्दतावाद का जादू उनके सर पर चढ़कर चाहे न भी बोलता हो किन्तु अंतश्चेतना में किसी-न-किसी रूप में परिव्याप्त अवश्य रहा है। छायावाद के उत्कर्ष काल के बाद पंत और उनके समानधर्मा कवियों की रचनाओं में जिस प्रवृत्ति का विस्तार हो रहा था, उसे हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों ने प्रायः 'उत्तर छायावाद' के नाम से अभिहित किया है। यह 'उत्तर छायावाद' सामाजिक यथार्थवाद के साथ संश्लिष्ट होकर किस प्रकार नवस्वच्छन्दतावाद का रूप धारण कर लेता है—यही प्रस्तुत ग्रंथ का प्रतिपाद्य है।

सुधी लेखक ने छायावाद-परवर्ती हिन्दी-कविता का समाजशास्त्रीय तथा मनोवैज्ञानिक स्तरों पर सूक्ष्म-गहन अध्ययन कर अपने प्रतिपाद्य को युक्तिप्रमाण-पूर्वक व्याख्यायित व उदाहृत किया है। उनमें काव्य के मर्म में प्रवेश करने की अन्तर्दृष्टि और अपनी प्रतिक्रियाओं को तर्क-सम्मत शैली में प्रस्तुत करने की क्षमता है—और इस दृष्टि से मेरा विश्वास है कि आधुनिक हिन्दी कविता के जिज्ञासु पाठक इस ग्रंथ का अवश्य ही स्वागत करेंगे।

मेरी शुभकामनाएँ।

—नगेन्द्र

दिल्ली विश्वविद्यालय
१३४ वैशाली
दिल्ली—३४

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

आमुख

स्वदेश-विदेश के अनेक आलोचकों का मत है कि सभी कविता मूलतः रोमानी और प्रगीतात्मक होती है। उनका तर्क है कि चेतना का स्वच्छन्द उन्मेष ही सर्जक प्रतिभा का लक्षण है, और यही स्वच्छन्दतावाद का भी प्राण-तत्त्व है। इसलिए विचित्र लगने पर भी तथ्य यही है कि नव-लेखन के प्रवर्त्तकों के सभी नारों के बावजूद, स्वच्छन्दतावाद का जादू उनके सर पर चढ़कर चाहे न भी बोलता हो किन्तु अंतश्चेतना में किसी-न-किसी रूप में परिव्याप्त अवश्य रहा है। छायावाद के उत्कर्ष काल के बाद पंत और उनके समानधर्मा कवियों की रचनाओं में जिस प्रवृत्ति का विस्तार हो रहा था, उसे हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों ने प्रायः 'उत्तर छायावाद' के नाम से अभिहित किया है। यह 'उत्तर छायावाद' सामाजिक यथार्थवाद के साथ संश्लिष्ट होकर किस प्रकार नवस्वच्छन्दतावाद का रूप धारण कर लेता है—यही प्रस्तुत ग्रंथ का प्रतिपाद्य है।

सुधी लेखक ने छायावाद-परवर्ती हिन्दी-कविता का समाजशास्त्रीय तथा मनोवैज्ञानिक स्तरों पर सूक्ष्म-गहन अध्ययन कर अपने प्रतिपाद्य को युक्तिप्रमाण-पूर्वक व्याख्यायित व उदाहृत किया है। उनमें काव्य के मर्म में प्रवेश करने की अन्तर्दृष्टि और अपनी प्रतिक्रियाओं को तर्क-सम्मत शैली में प्रस्तुत करने की क्षमता है—और इस दृष्टि से मेरा विश्वास है कि आधुनिक हिन्दी कविता के जिज्ञासु पाठक इस ग्रंथ का अवश्य ही स्वागत करेंगे।

मेरी शुभकामनाएँ।

दिल्ली विश्वविद्यालय
१३४ वैशाली
दिल्ली—३४

—नगेन्द्र

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

साधुवाद

हमारी भाषा में मनुष्य का एक नाम मानव भी है अर्थात् वह प्राणी जो सर्वांशतः नवीन कभी नहीं होता, पर इसी कारण जिसमें नवीनता की सर्वातिशायी छटपटाहट भी रहती है।

मनुष्य सृष्टि का अंश है, और स्रष्टा का अंश भी। सृष्टि के रूप में वह देहधर्मी परतंत्रता है, स्रष्टा के रूप में स्वतंत्रता का चैतन्य। लेकिन मनुष्य द्वारा की जाने वाली सृष्टियों में इस चैतन्य का भी एक स्तर नहीं होता। प्रजनन में वह नियति-विजड़ित नियम भर है, वस्तु शिल्पादि में मुक्तामुक्त यह साहित्य ही है जिसकी सर्जना में वह सर्वतंत्र-स्वतंत्र होता है। पर इस स्वतंत्रता की भी, जिसके बिना साहित्यिक रचना नहीं होती, जो मूल प्रेरक चेतना होती है वह सृष्टि से जुड़ी बल्कि उसकी एक प्रतिक्रिया ही है। इस प्रकार रचना प्रथमतः और अन्ततः एक सामाजिक प्रतिक्रिया है। रूढ़ि और मुक्ति के इस गोपन संभाषण के दर्शन का एक साहित्यिक नाम स्वच्छन्दतावाद है। रूढ़ि-भंजन के क्रम में किसी प्रकार मुक्ति अपनी आसक्ति की नयी रूढ़ि गढ़ लेती है, पुरानी तोड़कर नयी कंठी धारण कर लेती है और तब किस प्रकार स्वच्छन्तावाद के बाद नवस्वच्छन्दतावाद का अभियान चलता है, यह एक दिलचस्प अध्ययन है। डॉ० अजब सिंह ने प्रस्तुत ग्रन्थ में नवस्वच्छन्दतावाद के विश्वव्यापी कार्यकलाप से संबलित, आधुनिक हिन्दी कविता में उसकी गतिविधि का वैदुष्यपूर्ण विवेचन करते हुए उसकी अन्तर्कथाओं का जो उद्घाटन किया उससे यह अध्ययन और अधिक दिलचस्प हो गया है। आधुनिक हिन्दी कविता में नवस्वच्छन्दतावाद का अद्यतन परिशीलन करने वाली यह अन्यतम पुस्तक है। साधुवाद।

पटना विश्वविद्यालय
१. राजेन्द्र नगर, पटना

—केसरी कुमार

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

प्राक्कथन

आधुनिक कवि कथा-प्रिय न होकर मनोवैज्ञानिक हो गया है। इसीलिए आज का कवि स्वच्छन्दतावादी है। स्वच्छन्दतावादी होना विशिष्ट कला की अपनी विशेषता होती है। स्वच्छन्द दृष्टि के बिना कलात्मक उत्कृष्टता नहीं लायी जा सकती। सर्जनात्मक एवं सक्रिय कल्पनाएँ ऐसी कला को जन्म देती हैं जो स्वच्छन्द दृष्टि लिए होती हैं। रचनाकार भविष्य की कल्पना को स्वच्छन्द दृष्टि से देखता है और चित्रित करता है। वस्तुत: स्वच्छन्द चेतना के अभाव में मौलिक, नवीन एवं मीमांसात्मक सर्जन संभव नहीं है।

स्वच्छन्दतावाद के संदर्भ में प्राय: यह कहा जाता है कि इसमें स्वतंत्रता का बोध होता है। स्वतंत्रता के इस बोध के अन्तर्गत कथ्य की स्वतंत्रता आती है चाहे वह राजनीतिक, व्यक्तिगत, धार्मिक अथवा किसी भी प्रकार की क्यों न हो, जिसके अन्तर्गत साहित्यिक संरचना की स्वतंत्रता विधा के एक नये रूप को अनावृत करता है, किन्तु एक स्वतंत्रता जिसकी ओर सामान्य लोगों की दृष्टि नहीं गयी हैं—प्रतीकात्मक अनुभवजन्य स्वतंत्रता भी है। यह स्वतंत्रता पाठक को कवि के द्वारा दी जाती है। क्योंकि हम उस अनुभव में सीधे डाल दिये जाते हैं न कि केवल उसके बारे में कह दिये जाते हैं। हमें एकदम स्वतंत्र छोड़ दिया जाता है, संभवत: आत्मान्वेषण के लिए और यह कोई छोटी-मोटी अभिप्राप्ति नहीं है। लेकिन जहाँ एक ओर 'प्रतीकात्मक' अभिव्यंजना हमें स्वतंत्रता का वरदान देती है, वहीं यह उसके लिए हमसे मूल्य भी वसूल लेती है। यह मूल्य रहस्यात्मक ढंग से रहने के लिए इच्छा का समर्पण है। ये रहस्य ज्ञात और अज्ञात, सांत और अनन्त के गहनतम स्व के तथा स्व के इतर भी हैं। 'प्रतीक' कवि की तरफ से व्यक्ति को मानवीय रहस्यों का सामना करने के लिए स्वतंत्रता भी देता है। 'प्रतीक' की उद्‌भावना स्वच्छन्दतावादी चेतना का ही स्पन्दन है। प्रतीकात्मक अभिव्यंजना स्वच्छन्दतावादी ही होती है। इसीलिए प्रत्येक युग में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति उभरती रहती है। कलात्मक अभिव्यंजना के दूसरों रूपों की अपेक्षा 'प्रतीक' में यथार्थ को ग्रहण करने की क्षमता अधिक होती है। आज का युग यथार्थवादी है। इसलिए आज इसका प्रयोग अधिक हो रहा है। 'प्रतीक' आज कवि की आत्मिक अभिव्यंजना बन गई है। आत्मिककरण की यही प्रक्रिया इसकी रोमांटिक पहचान बनती है। वस्तुत: स्वच्छन्दतावाद न तो अकस्मात् पैदा होता है और न विलुप्त ही होता है। विगत कतिपय दशकों से हम देख रहे हैं कि जिसे हम स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति कहते हैं वह न्यूनाधिक एक शाश्वत तत्त्व है, प्रत्येक काल और कलाकृति का। मानव स्वभाव

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

से सम्बद्ध होने के कारण स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति प्रायः सभी देशों के जीवन और साहित्य में अभिव्यक्त होती रही है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावाद केवल कविता की धारा ही नहीं है, साहित्य, संस्कृति और जीवन को देखने की समझ भी है।

काव्य की स्वच्छन्दतावादी चेतना का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक एवं विशाल है। मैंने अपने अनुसंधान क्रम में अनुभव किया कि स्वच्छन्दतावादी चेतना आधुनिक काव्य में आज भी किसी-न-किसी रूप में दिखायी पड़ती है। लेकिन वह अपने परिवर्तित रूप में है। ऐसी स्थिति में ऐतिहासिक बदलाव को ध्यान में रखकर स्वच्छन्दतावाद का नामकरण एवं प्रवृत्तियों का विश्लेषण अपेक्षित है। वस्तुतः आधुनिक हिन्दी कविता के इतिहास में स्वच्छन्दतावाद अपने उत्कर्ष पर पहुँचकर जब दूसरी दिशा की ओर उन्मुख होता है और वह यथार्थवाद के सहज मैत्रीभाव से नया रूप लेता है, यही नवीनता स्वच्छन्दतावाद को 'नवस्वच्छन्दतावाद' में परिवर्तित कर देती है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावाद और यथार्थवाद के कलात्मक समन्वित रूपायन नवस्वच्छन्दतावाद के लिए अपेक्षित उपकरण बने। स्वच्छन्दतावाद यथार्थ की नयी भूमियों में प्रवेश करते ही अपने मूल रूप से परिवर्तित हुआ। वस्तुतः स्वच्छन्दतावाद आधुनिकता के यथार्थवादी संदर्भ में नवस्वच्छन्दतावाद का रूप ग्रहण करता है। नवस्वच्छन्दतावाद स्वच्छन्दतावाद का विकसित रूप है। स्वच्छन्दतावादी काव्य-प्रवाह में आधुनिकता की सारी प्रक्रियाएँ आ नहीं पाई थीं, फलतः आधुनिक हिन्दी कविता सामाजिक परिवेश से टकराकर नया मोड़ लेती है जो कि यथार्थात्मक है। वैज्ञानिक उपलब्धियों के स्वरूप सामाजिक वातावरण से प्रसूत आधुनिक हिन्दी कविता यहाँ यथार्थवादी चेतना से मिलती है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी तथा यथार्थवादी बोध के समन्वय से स्वच्छन्दतावाद नये रूप में उभरता है।

नवस्वच्छन्दतावाद निश्चित ही एक परिवर्तित दृष्टि है। इसमें कहने और अनुभव करने के तरीके बदल जाते हैं। यहाँ यथार्थवाद एक शैली के रूप में आता है जो इसका एक प्रकार से स्वयं का स्वच्छन्दतावादी आयाम है। नवस्वच्छन्दतावादी काव्य में कवि जीवन से पलायन और कल्पना-लोक में परिभ्रमण को अस्वीकार करता है। किन्तु, उसकी दृष्टि वर्तमान मानवीय अनुभूतियों पर केन्द्रित रहती है। प्रत्येक यथार्थवादी विकास मूलतः स्वच्छन्दतापरक होता है किन्तु रूढ़िग्रस्त होकर स्वच्छन्दतावाद विरोधी प्रतीत होने लगता है। आधुनिकता के फलस्वरूप स्वच्छन्दतावाद ने एक नया रूप लिया तथा यथार्थवादी चिन्तन ने उसे एक नवीन रूप दिया। अतः कहा जा सकता है कि नवस्वच्छन्दतावाद न तो यह दावा ही करता है कि वह अपनी परिधि में सम्पूर्ण यथार्थवाद को घेर रहा है और न वह यथार्थवाद का समग्र रूप में विरोध ही करता है। वस्तुतः नवस्वच्छन्दतावाद यथार्थवाद को अपने में समाहित कर लेता है या

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

एक विशेष प्रकार के यथार्थवाद को जन्म देता है। वस्तुतः इस आन्दोलन में कल्पनाशीलता यथार्थता एवं बौद्धिकता से एकीकृत जीवनानुभूति की त्रिधारा मिलती हैं। जिस प्रकार गंगा, यमुना और सरस्वती तीनों नदियाँ अलग-अलग प्रवाहित होती रहती हैं और उसे अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है। लेकिन जब तीनों की प्रखर धाराएँ सहजता से एक में मिल जाती हैं तो उस मिलन विन्दु का नाम बदलकर त्रिवेणी हो जाता है। ठीक उसी तरह जब स्वच्छन्दतावाद, यथार्थवाद और परम्परावाद सहजता से समन्वित होकर एक रूप हो जाते हैं, तो उस एकत्रित रूप का नाम 'नवस्वच्छन्दतावाद' हो जाता है।

नवस्वच्छन्दतावादी काव्यान्दोलन में कवि समकालीन-बोध के कारण लोकतांत्रिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक स्वरूप को चित्रित करता है। सामाजिक चेतना एवं सांस्कृतिक चेतना के बिम्बों को चित्रित करने में सक्रिय फैंटेसी एवं सक्रिय कल्पना का भी आधार बनाता है। नवस्वच्छन्दतावादी काव्यान्दोलन में कवि की चेतना सक्रिय फैंटेसी एवं सक्रिय कल्पना के पंख लिए होती है जो इसकी अपनी एक खास पहचान है। नवस्वच्छन्दतावादी कवि को अपनी चेतना में इसका भी सहारा लेना पड़ता है जो स्वच्छन्दतावादी कवियों के पास नहीं थी। इस प्रकार नवस्वच्छन्दतावाद के सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक धरातलों पर कल्पना/यथार्थ, अनुभूति/परिवेश, वैयक्तिकता/सामाजिकता, विद्रोह/क्रांति, यथार्थवाद/समाजवादी यथार्थवाद, आधुनिकता/रोमांटिक आयरनी, मानववाद/नवमानववाद तथा चेतन/अचेतन, संस्कृति/लोकसंस्कृति, प्रेम/सौन्दर्य, देश-प्रेम/प्रकृति-प्रेम, रहस्य-विस्मय/जिज्ञासा, आशा/निराशा की सीमा रेखा को अपने में समेटता है तथा यथार्थवादी धरातल पर मानवीय अनुभूतियों को चित्रित करता है।

कथ्य में समाजशास्त्रीय दृष्टि के फलस्वरूप स्वच्छन्दतावादी वैयक्तिकता व आन्तरिकता यहाँ नहीं मिलती लेकिन यही वैयक्तिकता व आन्तरिकता नवस्वच्छन्दतावादी काव्य में शिल्पतंत्र के रूप में उभरती है। रचना-शिल्प के हर पड़ाव पर नवस्वच्छन्दतावादी कवि आन्तरिक व वैयक्तिक धरातल पर है। इस प्रकार भाषा-शैली, बिम्ब, प्रतीक, मिथक एवं प्रगीतात्मकता के संरचना-क्रम में इन घटकों की रोमांटिक पहचान को रेखांकित किया गया है।

नवस्वच्छन्दतावाद का सामाजिक धरातल मूलतः स्वच्छन्दतावाद का मार्क्सवादी संदर्भ है। क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद को जिसे गोर्की ने समाजवादी यथार्थवाद का एक तत्त्व स्वीकार किया है। नवस्वच्छन्दतावाद के सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक संदर्भों को ध्यान में रखकर नवस्वच्छन्दतावाद के क्रांतिकारी स्वरूप का विश्लेषण पहली बार इस ग्रंथ में विशद एवं व्यापक फलक पर किया गया गया है। इस संदर्भ में युंग, लुकाच,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

अर्न्स्टफिशर तथा मायकेल लोई की नयी समाजवादी दृष्टि तथा भारतीय ऐतिहासिकता को भी ध्यान में रखा गया है। इन विचारों के माध्यम से स्वच्छन्दतावाद का समाजवादी / मनोवैज्ञानिक संदर्भ उभारा गया है तथा युंग के सामूहिक अचेतन के विस्तार को ध्यान में रखकर इसका स्वरूप निर्धारित किया गया है। नवस्वच्छन्दतावाद के सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक संदर्भों के विश्लेषण क्रम में उन सारे घटकों की व्याख्या नवस्वच्छन्दतावादी संदर्भों में की गयी है।

आज की समीक्षा में 'नवस्वच्छन्दतावाद' की चर्चा-परिचर्चा तो हो रही है। लेकिन इसपर व्यवस्थित चिंतन-विश्लेषण का अभाव है। प्रस्तुत ग्रन्थ में पहली बार 'नवस्वच्छन्दतावाद' के सैद्धान्तिक आधार, प्रेरक तत्त्व, नवोन्मेष, मार्क्सवादी संदर्भ, सामाजिक धरातल, मनोवैज्ञानिक भूमिका और नियामक संरचना की तर्क-सम्मत पूरे तर्क के साथ व्याख्या की गई हैं। सामाजिक धरातल एवं मनोवैज्ञानिक धरातल से जुड़ी व्याख्या सैद्धान्तिक आलोचना के क्षेत्र में बिलकुल नयी व्यवस्थित उपलब्धि कही जा सकती है।

प्रस्तुत ग्रंथ के लेखन एवं प्रकाशन में एक लम्बी अवधि का अन्तराल है। देश-विदेश की काव्य-रचनाओं एवं समीक्षकों के विचारों के आधार पर 'नवस्वच्छन्दतावाद' की अवधारणाओं को विश्लेषित एवं व्याख्यायित किया गया है।

यह ग्रंथ कई रूपों में इस लम्बी अवधि के अन्तराल में साधना का आधार बनता रहा है। इसलिए इस संदर्भ में समय-समय पर विषय के अधिकारी विद्वानों से साक्षात्कार करता रहा हूँ। जिन मनीषी विद्वानों के सत्परामर्शों ने मुझे विशेष रूप से लाभान्वित किया है, उनमें डॉ० नामवर सिंह, प्रोफेसर केसरी कुमार, आचार्य देवेन्द्र नाथ शर्मा, डॉ० कुमार विमल, डॉ० इन्द्रनाथ मदान, डॉ० रामविलास शर्मा, डॉ० नगेन्द्र, डॉ० रमेश कुन्तल 'मेघ', डॉ० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरुण', डॉ० शिवकुमार मिश्र, डॉ० शिवप्रसाद सिंह, डॉ० त्रिभुवन सिंह, डॉ० शुकदेव सिंह, डॉ० शशिभूषण सिंह, डॉ० प्रेमशंकर विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के अंग्रेजी विभाग के प्रोफेसर एवं अध्यक्ष मसूदुल हसन, प्रोफेसर असलुम अहमद अंसारी, डॉ० सत्यप्रकाश सिंह, आचार्य एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, डॉ० गिरिधारीलाल शास्त्री भूतपूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, डॉ० नज़ीर मुहम्मद, आचार्य एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, भूतपूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष डॉ० प्रेम-स्वरूप गुप्त, डॉ० विश्वनाथ शुक्ल का सहयोग भी स्मरणीय हैं। डॉ० रवीन्द्र 'भ्रमर' तथा डॉ० कुँवरपाल सिंह ने प्रारम्भ में अध्ययन के लिए 'स्वच्छन्दतावाद' विषय सुझाया था, यह ग्रंथ उसी चिन्तन का विस्तार है। लेखक इन विद्वानों के प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त करता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

लेखन एवं प्रकाशन कार्य के प्रवास में व्यस्त रहने के कारण श्री प्रभात रंजन, श्री ज्योति रंजन, सुश्री चेतना, सुश्री रचना को भी मेरा उचित स्नेह नहीं मिल पाया है। आत्मीय जनों के पत्रों के उत्तर भी समय पर नहीं देने से उनकी भावनाओं को चोट लगी होगी। पूज्य चाचाजी जिन्हें मैं बाबा भी कहता था, इसी कार्य में व्यस्त रहने के कारण उनके अन्तिम दर्शन भी न कर सका, उस स्वर्गीय आत्मा की शांति के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ। लेखन के समय पठन कक्ष की व्यवस्था के क्रम में श्री कैलाश रामजी, श्री रामचन्द्र तथा श्री शंकर जी का स्मरण आवश्यक है। शिष्यों में डॉ. वीरेन्द्रकुमार गुप्त, डॉ. मुकेशकुमार सिंह, डॉ. कमलेश कुमारी, सुश्री रेखा वर्मा, श्री धर्मेशकुमार शर्मा, श्री जयनारायण सिंह, श्री मुहम्मद इम्तियाज़ खाँ, डॉ० गिरीश बाबू गुप्त तथा श्री अरुणकुमार सिंह 'अरुण' का सहयोग भी समय-समय पर मिलता रहा है।

ग्रंथ का प्रारूप गठित करने, विषय से सम्बन्धित आवश्यक सामग्री की सूचना तथा परामर्श हमें समय-समय पर डॉ० नामवर सिंह से मिलता रहा है। प्रकाशन के मार्ग को सुगम करने का श्रेय डॉ० शुकदेव सिंह को है।

काशी में प्रकाशन के समय दौड़-धूप में श्री देवेन्द्रकुमार सिंह, शोध-छात्र, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय तथा श्री नरेन्द्रकुमार सिंह, शोध-छात्र, हिन्दी विभाग, काशी विद्यापीठ का सहयोग भी समय-समय पर मिलता रहा है।

ग्रंथ प्रणयन के प्रेरक मित्रों में डॉ० तेजवीर सिंह चौहान (संस्कृत विभाग, धर्म समाज कॉलेज, अलीगढ़), डॉ० रामप्रताप सिंह (मनोविज्ञान विभाग, वार्ष्णेय कॉलेज, अलीगढ़), डॉ० भँवरलाल भदानी (इतिहास विभाग, अलीगढ़, मुस्लिम विश्वविद्यालय) डॉ० राम सिंह (गोपेश्वर), डॉ० फूलबिहारी शर्मा, डॉ० बुद्धसेन 'नीहार' तथा डॉ० कृष्णमुरारि मिश्र (हिन्दी विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय) का नाम उल्लेखनीय हैं। मेरे गाँव के अभिन्न मित्र, श्री रामरूप सिंह तथा गुरुवर श्री गणेशप्रसाद सिंह, भूतपूर्व प्रधानाध्यापक माधवप्रसाद सिंह, हाई स्कूल, गरीबा टोला, जिला सारण (बिहार) को इस अवसर पर स्मरण करना आवश्यक है। ये भी इस ग्रंथ के प्रणयन के प्रेरक रहे हैं। लेखक इन सबको हृदय से आभार व्यक्त करता है।

ग्रंथ प्रणयन में हमें ब्रिटिश लाइब्रेरी, अमेरिकन लाइब्रेरी नयी दिल्ली, रामजस कॉलेज, दिल्ली तथा मौलाना आजाद लाइब्रेरी, अलीगढ़ से विशेष सहायता मिली है। हिन्दी प्रशाखा के अधिकारी श्री शिवदत्त शर्मा, श्रीमती विजय गोयल, अफताब अहमद व राकीम अली तथा मौलाना आजाद लाइब्रेरी के सभी सहयोगियों एवं अधिकारियों

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

की सेवाएँ मेरे लिए महत्त्वपूर्ण रही हैं। नागरी प्रचारिणी सभा काशी के अतिथि भवन के प्रवास में इस ग्रंथ की पाण्डुलिपि के एक-एक अक्षर को मैंने पढ़ा और संशोधन किया। चिन्तन की एकाग्रता ने इस कार्य को एक नया प्रारूप दिया। इस संदर्भ में सभा के प्रधान मंत्री श्री सुधाकर पाण्डेय तथा प्रचार मंत्री श्रीनाथ सिंह एवं अन्य सहयोगियों को लेखक अपना आभार व्यक्त करता है।

इस कार्य की पूर्णता का श्रेय जीवन सहचरी श्रीमती मोहिनी सिंह को भी जाता है जिनकी मौनसाधना एवं कर्त्तव्यपरायणता का पूरा लाभ मुझे मिला है। पुस्तक की सुन्दर प्रकाशन व्यवस्था तथा सुरुचिपूर्ण कला-निबन्धन का श्रेय विश्वविद्यालय प्रकाशन के संचालक बन्धुवर श्री पुरुषोत्तमदास मोदी और उनके आत्मज श्री अनुरागजी व श्री परागजी को है। लेखक ज्ञात-अज्ञात सभी माध्यमों का कृतज्ञ है।

—अजब सिंह

गुरु पूर्णिमा
सं० २०४४ वि०
चन्द्रशिखा विद्यायन
बेगपुर, अलीगढ़

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

अनुक्रम

	पृष्ठ
१. सैद्धान्तिक आधार	१—३३
२. प्रेरक तत्त्व	३४—४७
३. नवोन्मेष	४८—७१
४. मार्क्सवादी सन्दर्भ	७१—८६
५. सामाजिक धरातल	८७—१४४
६. मनोवैज्ञानिक धरातल	१४५—१८२
७. संरचना	१८३—२१२
८. अन्ततः	२१३—२२५

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

१

सैद्धान्तिक आधार

स्वच्छन्दतावाद एक कलात्मक आन्दोलन है, क्रान्ति है, परंपरा एवं रूढ़ियों के प्रति विद्रोह है तथा जीवन के प्रति एक विशेष प्रकार की रुझान है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावाद सर्वप्रथम एक विचारधारा है जिसका प्रकाशन साहित्य और कला के विभिन्न क्षेत्रों में क्रमशः होता आया है। कवि इसमें सूक्ष्म सौन्दर्यानुभूतियों के चित्र सक्रिय कल्पना के आधार पर प्रस्तुत करता है। इसमें स्वतन्त्रता की चेतना की अधिकता होती है। फलतः कवि रूढ़िगत विचारों एवं काव्य-शैलियों के प्रति विद्रोह करता है। इसमें कवि क्रान्तिकारी विचारधारा का समावेश करके स्वतंत्रता, सामाजिक न्याय और व्यक्ति-स्वातंत्र्य की भावनाओं का हृदय की मार्मिक एवं तीव्र अनुभूतियों के साथ मनोवैज्ञानिक सम्बन्ध स्थापित करता है। इसमें कल्पना गतिशील एवं सूक्ष्म होती है जो कवि में भावावेश की स्थिति ला देती है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावाद आन्तरिक एवं बाह्य अनुभूतियों की सहज अभिव्यंजना है। इसमें जीवन एवं जगत् के प्रति एक भावात्मक क्रान्तिकारी चेतना की सुन्दर प्रस्तुति होती है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावाद केवल कविता की धारा ही नहीं है, प्रत्युत साहित्य, संस्कृति और जीवन को देखने की एक दृष्टि भी है।

सौन्दर्य में अद्भुत के मिश्रण से कविता स्वच्छन्दतावादी भाव-बोध से बोझिल होती है। कला-जगत् में सौन्दर्याकांक्षा की जिज्ञासा के संयोग से स्वच्छन्दतावादी चेतना उभरती है। स्वच्छन्दतावादी कविताओं में जिज्ञासा और विस्मय की भावना प्रबल होती है जो अपनी परिणति में रहस्य-भावना के रूप में बदलती रहती है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावाद एक चेतना है, इसके मूल में क्रान्ति एवं अभिनव सृजन की प्रधानता है। इसलिए स्वच्छन्दतावादी चेतना की एक विशेष पहचान इसकी प्रस्तुति की मौलिकता एवं नवीनता है। स्वच्छन्दतावादी कवि सत्ता तथा रूढ़ियों का विरोधी होता है, चाहे वह राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक या साहित्यिक ही क्यों न हो। स्वच्छन्दतावादी कवि प्रकृति-प्रेमी होता है किन्तु वह राजनीतिक, सामाजिक एवं कलात्मक सत्ता से विद्रोह भी करता है। इसमें विषयिगत सौन्दर्य को वैयक्तिकता से भिगो करके कलात्मक एवं मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया जाता है। इसमें नूतन काल्पनिक विचार होते हैं, जो नूतन शब्दावली, नवीन प्रकार की कलात्मक अभिव्यक्ति को जन्म देते हैं। स्वच्छन्दतावाद जीवन और जगत् की अतिनूतन, अत्याधुनिक एवं विषयिगत अभिव्यक्ति है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MD

स्वच्छन्दतावादी चेतना सामन्त-परम्परा की विरोधी होती है। इस काव्य-प्रवाह में कवि सामन्तयुगीन संस्कारवादी (क्लैसिकल) काव्य के विरोध में अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम ढूंढ़ता है, उस समय वह अभिव्यक्तिपरक होकर लोकगीतों की उन्मुक्त जन-भावना से प्रेरणा ग्रहण करता है। स्वच्छन्दतावादी कविता में लोक-जीवन तथा काव्य मिलकर एक हो जाते हैं। स्वच्छन्दतावादी कविता लोकधुन से पगी होती है। इसके कथ्य में संस्कृति, लोक-संस्कृति की ही प्रधानता होती है। इसकी प्रस्तुति के लिए स्वच्छन्दतावादी कवि लोक-गीतात्मक शैली अपनाता है। कुछ विद्वानों ने प्रसाद-जयन्ती १९६२ के अवसर पर वाराणसी के 'सभा-भवन' में हो रहे कार्यक्रम में इसे 'सामन्तवाद' के नाम से अभिहित किया था। लेकिन यह रोमेण्टिसिज्म का सही अनुवाद नहीं है। यह शब्द चल भी नहीं पाया। हिन्दी के कवि-आलोचक डॉ० रामधारी सिंह 'दिनकर'[1] एवं डॉ० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल[2] ने रोमेण्टिसिज़्म को रोमान्सवाद कहा है। डॉ० केसरीनारायण शुक्ल ने 'रूसी साहित्य का इतिहास' नामक ग्रन्थ में रोमेण्टिसिज़्म के लिए भावुकतावाद नाम सुझाया है। लेकिन इन नामों में स्वच्छन्दतावाद शब्द ही अधिक व्यवहार में चल रहा है। क्योंकि यह शब्द रोमेण्टिसिज़्म का सही अनुवाद प्रतीत होता है। इसे स्वीकार करने में हमें किसी प्रकार की आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

अंग्रेजी में इस शब्द की व्युत्पत्ति 'रोमांस' (Romance) शब्द से हुई है। रोमाण्टिक तथा रोमाण्टिसिज़्म दोनों का मूल उद्गम शब्द रोमांस ही है। रोमांस लैटिन शब्द 'रोमना' (Romana) से निःसृत है। रोमाण्टिक शब्द रोमांस शब्द से निःसृत होकर रोमाण्टिक का रूप धारण करता है। रोमाण्टिक शब्द का मूल रोमांस (Romance) शब्द में ढूंढ़ा गया है, जिसका मूल अर्थ है रोम के लोगों की सभ्यता या प्रवृत्ति। किन्तु, स्वयं 'Romana' या 'Romance' शब्द संस्कृत के 'रमण' शब्द के बहुत ही निकट है। अतः रोमाण्टिक शब्द 'रम्' धातु से निकले हुए 'रमण' शब्द का यूरोपीय रूप प्रतीत होता है। 'रम्' का अर्थ होता है आनन्द का अनुभव करना, किसी वस्तु, व्यापार या भाव में रम जाना। कहा जाता है कि फ्रेडरिक श्लेगल ने रोमाण्टिक का सर्वप्रथम प्रयोग १६९८ ई० में क्लासिक के साथ-साथ कविता की नयी तथा पुरानी धारा के भेद को स्पष्ट करने के लिए किया, जो एक-दूसरे का विलोम था।[3] इस प्रकार आलोचना के क्षेत्र में पारिभाषिक शब्द के रूप में उसका प्रवेश १८वीं सदी में श्लेगल के द्वारा ही माना जाना चाहिए। इस शब्द को पारिभाषिक शब्द के रूप में मान्यता इस युग में ही मिली तथा तब से आज तक उसका व्यवहार क्लासिक के साथ-साथ बराबर चलता आ रहा है। रोमाण्टिक से रोमेण्टिसिज़्म का जन्म होता है। वादों की सृष्टि सदैव आलोचना से ही होती है, साहित्य-सर्जना से सीधे नहीं। इस रोमाण्टिक युग की कविता की मुख्य प्रवृत्तियों को मापने के लिए उसे वाद (इज़्म) के रूप में परिलक्षित किया जाने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

लगा और उसका नामकरण-संस्कार रोमाण्टिसिज़्म किया गया। इस प्रकार रोमांस से रोमाण्टिक तथा रोमाण्टिक से रोमाण्टिसिज़्म रूप निःसृत हुआ।

प्रत्येक भाषा के साहित्य में निरन्तर सृजन होते रहने के कारण रूढ़ियाँ और परंपराएँ बनती हैं और समय आने पर वे टूटती भी हैं। उन्हें तोड़नेवाला कवि स्वच्छन्द और उनकी कविता स्वच्छन्दतावादी होती है। वह साहित्य जो क्रमागत रूढ़ियों तथा परंपराओं को तोड़कर चलता है, स्वच्छन्दतावादी कहलाता है। 'स्वच्छन्दतावाद' अंग्रेजी शब्द 'रोमांटिसिज़्म' का हिन्दी अनुवाद है। इसलिए इसमें पश्चिमी सुगन्ध भी है। इसे आत्मसात् करने के लिए पाश्चात्य आलोचना के निम्न शब्दों की व्याख्या अपेक्षित है। ये शब्द हैं—(१) क्लासिक, (२) रोमाण्टिक।

(१) क्लासिक—कला या साहित्य में पूर्णता का अर्थ है—क्लासिक। अपूर्णता का अर्थ रोमाण्टिक होता है। इस प्रकार क्लासिक और रोमाण्टिक एक-दूसरे से भिन्न तथा विलोम हैं। क्लासिज़्म कलात्मक दुनिया में व्यवस्था पर बल देता है वहीं स्वच्छन्दतावाद व्यवस्था से विद्रोह करता है। एक में कला के बाह्य पक्ष पर बल दिया जाता है तो दूसरे में अन्तःपक्ष पर। इस प्रकार क्लासिक साहित्य में संयम, संतुलन, अनुशासन और परंपरा पर विशेष बल दिया जाता है। यह साहित्य नागरिक या शहरी परिवेश की गम्भीरता लिये हुए है। एलिजाबेथ-युग की समाप्ति में आकर अंग्रेजी साहित्य में एक प्रकार की कृत्रिमता का आधिक्य हो गया था। इस युग में लैटिन, ग्रीक और फ्रेंच एकाडमी से प्रभावित फ्रेंच साहित्य का अंग्रेजी साहित्य पर आधिपत्य रहा। साहित्यकारों का ध्यान साहित्य के बाह्य संगठन और रूप-सौष्ठव की ओर अधिक था। क्लासिक साहित्य के पात्र आभिजात्य-वर्ग से ही लिये जाते हैं। एकत्व को क्लासिकल साहित्य की आत्मा कहा गया है तथा संकलन-त्रय सिद्धान्त से इसकी आत्मा की रक्षा होती है। क्लासिक कविता, हृदय की कविता न होकर प्लैटफार्म की कविता होती है। क्लासिक शब्द का अर्थ है—सर्वश्रेष्ठ, अद्वितीय अर्थात् वैसी वस्तु जिसकी समता संसार की कोई वस्तु न कर सके। यह शब्द पाश्चात्य साहित्य में विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त होता रहा है। यह शब्द उच्च श्रेणी का बोधक है, जिसके अन्तर्गत आनेवाली सर्जना की प्रशंसा के लिए एक तरह की उदात्त बौद्धिक क्षमता अपेक्षित होती है। दूसरे अर्थ में 'क्लासिक' शब्द से किसी कलाकृति के 'कालातीत' रहने की व्यंजना होती है। इस अर्थ के प्रकाश में वह कलात्मक सर्जना 'क्लासिक' होती है, जो क्रूर काल के जीवनेतर आघातों से कभी नहीं मुरझाती और रस-संवेदना की दृष्टि से कभी भी पुरानी नहीं होती। तीसरे अर्थ में 'क्लासिक' शब्द रोमाण्टिक के विलोम अर्थ में व्यवहृत होता रहा है। इस अर्थ के आधार पर यह कहा जा सकता है कि क्लासिकल साहित्य वह है जिसमें जातीय विवेक,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

परम्परीय संस्थिति तथा शास्त्रीयता की सुरक्षा हो। इसके विपरीत रोमाण्टिक साहित्य वह है जिसमें कल्पना और आवेग की अधिकता हो, प्राचीन प्रतिपादित बन्धनों का खण्डन हो एवं स्वप्नों की रंगीनी के साथ वैयक्तिक प्रेम का गायन हो।

इंग्लैंड के पुनर्जागरण-काल का रोमाण्टिक साहित्य सामन्त-विरोधी सामाजिक विकास से जुड़ा हुआ है। १८वीं, १९वीं सदी में जब इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति हुई, नयी मशीनें चालू हुईं, पुरानी उत्पादन-पद्धति समाप्त हुई, पूंजीवाद ने विकास की राह पर एक नया कदम रखा। इस नये विकास से शेली, बायरन का रोमांटिक काव्य सम्बद्ध है। फ्रांस की राज्यक्रांति सामन्त-विरोधी क्रांति थी। इंग्लैंड के सामन्त-विरोधी रोमांटिक कवि स्वभावतः उससे प्रभावित हुए, उसके समर्थक बने।

इस रोमाण्टिक काव्यधारा के विपरीत एक तथाकथित क्लासिकल धारा है, जिसका सम्बन्ध सामन्त-विरोध से नहीं है, जो सामन्ती व्यवस्था और सामन्ती-संस्कृति को कायम रखनेवाली है। इस पर रोमन सामन्तवाद, रोमन रीतिवाद, रोमन लक्षण-ग्रंथों का गहरा असर है। इंग्लैंड में पोप आदि कवि इसके प्रतिनिधि थे।[४]

(२) रोमाण्टिक—क्लासिकल शब्द की तरह 'रोमाण्टिक' भी तीन अर्थों में व्यवहृत होता रहा है। प्रथम अर्थ में रोमाण्टिक साहित्य में किशोर-तत्त्व की अधिकता के साथ-साथ, सौंदर्य, प्रेम, कल्पना और संवेग की बहुलता हो। दूसरे अर्थ में रोमाण्टिक साहित्य वह है जो स्थापित नियमों के विरोध में स्वच्छन्द मार्ग पर भ्रमण करता हो। तीसरे अर्थ में रोमाण्टिक साहित्य वह है जिसमें विषय की अपेक्षा शैली या विधान की प्रधानता हो। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'रोमाण्टिक' शब्द को इसी अर्थ में स्वीकार किया था। किसी लेखक के विचार उद्धृत करते हुए डॉ० रामधारी सिंह 'दिनकर' ने इस शब्द की व्याख्या इस प्रकार की है—"क्लासिकवाद को एक लेखक ने सूर्य का प्रकाश और रोमांसवाद को अँधेरी रात का आसमान कहा है, जिसमें असंख्य तारे टिमटिमाते रहते हैं। क्लासिकवाद ज्ञान का संगठित रूप है, साहित्य में वह लगभग वैज्ञानिक शैली का प्रयोग करता है, किन्तु रोमांसवाद कल्पना है, फैंटेसी है, जो धूमिलता के भीतर से भी हमें ईश्वरानुभूति तक ले जाता है। क्लासिकवाद की शैली लगभग यान्त्रिक होती है, उसका आविष्कार सदियों पूर्व हो चुका है। किन्तु रोमाण्टिक कवि को अपनी राह अपनी वेदना और निराशा में खोजनी पड़ती है। संक्षेप में, क्लासिक चरित्रवान् तथा रोमाण्टिक व्यक्तित्वशील होता है। क्लासिक वह है, जिसके विचार बँध चुके हैं। रोमाण्टिक वह है, जो अभी चिन्तन के प्रवाह में है।"[५] वीलफैन ने क्लासिक और रोमाण्टिक का अन्तर वही बताया है, जो खुला और बन्द का है। खुला की स्थिति क्लासिक की स्थिति है। स्ट्रीच का कहना है कि क्लासिक और रोमाण्टिक में वही अन्तर है जो पूर्णता और अपूर्णता का है। मानवता का सारा इतिहास इन्हीं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

घुरियों पर झूलता रहा है। पूर्णता को अवकाश की अपेक्षा है। अनन्तता को गति और परिवर्तन की आवश्यकता है। पूर्णता सीमित तथा अनन्तता खुली हुई है। पूर्णता के अन्तर्गत स्पष्टता है, जबकि अनन्तता के अन्तर्गत धुंधलापन है। पूर्णता को बिम्ब की आवश्यकता है, अनन्तता को प्रतीक की।[६] एम० एच० अम्ब्रास ने परंपरावादी विचार-धारा को दर्पण तथा स्वच्छन्दतावादी विचारधारा को दीपक का प्रतीक माना है। इस तरह इन दो विचारधाराओं की व्याख्या करने के क्रम में उन्होंने एक ग्रन्थ का निर्माण किया।[७]

यूरोप में रोमाण्टिक धारा होमर से प्रारम्भ होकर, रेनेसां से होती हुई शेक्सपियर, मिल्टन, शेली, कीट्स, बायरन, वर्ड्सवर्थ, कॉलरिज आदि को प्रभावित करती हुई आज तक चली आयी है। रोमाण्टिक प्रवृत्ति सामन्त-विरोधी है, इसलिए प्रगतिशील है। क्लासिकल साहित्य सामन्ती-संस्कृति का पोषक होता है, फलस्वरूप पतनशोल होता है। फ्रेडरिक श्लेगल का कथन है कि रोमाण्टिक कविता सदैव प्रगतिशील होती है।[८]

प्रीस्टले रोमाण्टिक कविता को अचेतन मानस का स्फोट मानता है तथा क्लासिकी काव्य को चेतन मानस से स्फुटित मानता है। आधुनिक युग में टी० आई० ह्लुम ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'स्पेकुलेशन्स' में रोमाण्टिक तथा क्लासिक पर नूतन दृष्टिकोण से विचार किया है। उसके अनुसार जहाँ मानव की परिसीमाओं का स्वीकार कर उसे प्रकृति के अधीन माना गया है, हमें क्लासिक विचारधारा मिलेगी तथा जहाँ मानवीय जीवन को अनन्त संभावनाओं का केन्द्र माना गया है, हम रोमाण्टिक विचारधारा पायेंगे। उसके अनुसार विज्ञान के प्रभाव के कारण आज का मानव अपनी परिसीमाओं को पुनः देख रहा है, अतः क्लासिक युग आनेवाला है।[९] "स्वच्छन्दतावादी युग में अन्विति के दो रूप प्रसिद्ध हुए जो यांत्रिक एवं आंगिक नामों से अभिहित किये गये। कॉलरिज ने कहा कि यांत्रिक अन्विति वह है जिसमें काव्य की संरचना बाहरी नियमों के साँचे में ढलती है। साँचा पहले ही से बना-बनाया तैयार रहता है और उसीके अनुरूप काव्य-शिल्प निर्मित होता है। इसके विपरीत आंगिक अन्विति वह होती है जिसमें एक वृक्ष के समान अपने अन्तरंग नियमों के वशीभूत विकसित होती है।"[१०]

साहित्य को क्लासिक और रोमाण्टिक वर्गों में विभक्त करने की एक परम्परा-सी बन गई है, परन्तु कोई भी कवि ऐसा नहीं हुआ, जिसे शुद्ध रूप से क्लासिक या विशुद्ध स्वच्छन्दतावादी कहा जा सके। शैली में सन्तुलन, नियन्त्रण तथा नियमितता तथा मनो-दशा में स्थिरता होने के कारण कवि को अक्सर क्लासिक कह दिया जाता है, किन्तु ऐसे कवि के भीतर भी स्वच्छन्दतावादी भावधारा प्रवाहित हो सकती है। इस प्रकार आवेगप्रधान भावदशा और विस्फोटशैली का प्रेमी होने के कारण कवि स्वच्छन्दतावादी समझा जाता है, किन्तु एक हद तक नियन्त्रण और नियमितता बरते बिना ऐसे कवि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

का भी काम नहीं चल सकता। अंग्रेजी के कवि विलियम वर्ड्सवर्थ अपने समकालीन विद्रोही कवि शेली और बायरन से बहुत भिन्न हैं, किन्तु उनकी गणना क्लासिक कवियों में न होकर रोमाण्टिक कवियों में की जाती है। इसी तरह गेटे को जर्मन आलोचक क्लासिक समझते हैं, परन्तु अंग्रेज आलोचक रोमाण्टिक। इलियट ने ठीक ही स्वच्छन्दतावाद और परम्परावाद को साहित्य की राजनीति कहा है क्योंकि प्रत्येक सफल स्वच्छन्दतावादी कवि (जैसे वर्ड्सवर्थ) किसी-न-किसी मात्रा में क्लासिक भी होता है और प्रत्येक क्लासिक कवि (जैसे सूरदास, तुलसीदास आदि) अनेक बार रोमाण्टिक हो उठता है। सम-अवस्था अथवा मध्यमार्ग की जैसे सर्वत्र महिमा देखी जाती है, वैसे ही, उसका साहित्य में भी महत्त्व है। निरी बुद्धि से कविता नहीं बनती, किन्तु कोरी भावुकता भी कविता के लिए अपर्याप्त है। अनुभूति के समय भावुकता, किन्तु रचना के समय बुद्धि का सहयोग, यही मार्ग है जिससे ऊँचे साहित्य का सृजन हो सकता है।[११]

हर्बर्ट रीड साहित्यिक आलोचना की केन्द्रीय समस्या स्वच्छन्दतावाद और परंपरावाद के प्रश्न को समझता है। उनका कथन है कि कवि-मन में स्वच्छन्दतावाद और परंपरावाद की लड़ाई चलती रहती है, फलस्वरूप कविता का जन्म होता है।[१२] कविता वस्तुतः कवि के अचेतन मस्तिष्क की अभिव्यंजना होती है। अचेतन मस्तिष्क से ही रोमांटिक, क्लासिक एवं यथार्थपरक वृत्तियाँ कवि-मन में उभरती हैं। कवि-मन में सदैव यह लड़ाई चलती रहती है, जिससे कविता का जन्म होता है। वस्तुतः कवि-मन में रोमाण्टिक, क्लासिक एवं यथार्थवादी चेतना में संघर्ष चलता रहता है। फ्रायड ने व्यक्तित्व की इन तीन वृत्तियों को बताया है—इदम्, अहम् एवं अति अहम् (Id, ego and super-ego or principal reality) इसलिए इनकी लड़ाई सहज रूप से निरन्तर चलती रहती है। फलस्वरूप काव्य-जगत् में स्वच्छन्दतावाद, परंपरावाद एवं यथार्थवाद क्रमशः दिखाई पड़ता रहता है।

परंपरावाद एवं स्वच्छन्दतावाद के उदय, संघर्ष तथा अस्त का हर्जन ने भी वर्णन किया है। हर्जन उन विचारकों में हैं जो वर्तमान के प्रति समर्पित, आगत के प्रति आस्थालु तथा अतीत के प्रति निष्ठावान् हैं। उन्हें परंपरावाद एवं स्वच्छन्दतावाद की सीमाओं एवं शक्ति का ज्ञान है। उन्हें स्वच्छन्दतावाद के अन्त होने पर इसलिए दुःख नहीं है कि उसके स्थान पर जिनका उदय हुआ है, वह उसकी तुलना में अधिक दीप्त है। परंपरावाद के अन्त के विषय में भी उनकी मूल दृष्टि यही है। जो नया उभरकर आता है, वह उजागर होना चाहिए। जो समाप्त हो जाता है, वह सम्पूर्णतः समाप्त नहीं हो जाता। उसकी शक्ति के जीवंतकण अगले विकास में विद्यमान रहते हैं। रोमाण्टिसिज्म और क्लासिज्म के चिरन्तन तत्त्व बिना किसीकी जोर-ज़बरदस्ती के आज भी जीवित हैं। काल-विशेष में मानवीय आत्मा के विकास के दो सच्चे तथा अनिवार्य क्षणों से उनका सम्बन्ध है। वे दो अवस्थाओं के, विभिन्न युगों के दो दृष्टिकोणों के, मूर्त रूप हैं और दोनों

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ही सापेक्ष रूप से सत्य हैं। चेतन तथा अचेतन के रूप में प्रत्येक व्यक्ति परंपरावादी और स्वच्छन्दतावादी होता है या कभी न कभी रह चुका होता है।[१३]

महाकवि गेटे स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति के घोर विरोधी थे। उन्होंने इस प्रकार स्वच्छन्दतावाद और परम्परावाद की परिभाषा की जो उनके समय की अर्थात् १९वीं सदी के यूरोपीय साहित्य में बहुचर्चित रही। इनका कहना है कि मैं रीतिवाद शब्द से किसी स्वस्थ भावना की कल्पना करता हूँ और स्वच्छन्दतावाद से किसी रुग्ण भावना की। आधुनिक काल की रचनाओं में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ अवश्य हैं, परन्तु इसलिए नहीं कि वह नवीन हैं, परन्तु इसलिए कि वह कमजोर, रुग्ण और विकृत हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि क्लासिक और रोमाण्टिक परस्पर विरोधी नहीं हैं। साहित्य का इतिहास इस बात का साक्षी है कि क्लासिकल युग में भी रोमाण्टिक रचनाएँ होती हैं और रोमाण्टिक युग में भी क्लासिकल रचनाएँ होती हैं। क्लासिकल कलाकार भी रोमाण्टिक साहित्य की सर्जना करता है और रोमाण्टिक कलाकार भी क्लासिकल प्रवृत्ति की रचना प्रस्तुत करता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि न कोई काल या कृति या व्यक्ति निरपेक्ष रूप में क्लासिकल या रोमाण्टिक होता है। वृत्तियों की प्रधानता या वृत्तिचक्र के मुताबिक उसकी रचनाएँ कभी क्लासिक और कभी रोमांटिक कहलाती हैं। यद्यपि गोबलीवर्द न्याय से ये दोनों प्रवृत्तियाँ सदैव एक-दूसरे में उपस्थित रहती हैं।[१४] क्रोचे का इस संदर्भ में कथन है, 'क्लासिक' तथा 'रोमांटिक' काव्य के नितांत भिन्न गुण नहीं हैं। एक ही कवि क्लासिक या रोमाण्टिक दोनों हो सकता है। सभी महान् कलाकार क्लासिक तथा रोमांटिक दोनों ही होते हैं, केवल मध्यम तथा निकृष्ट श्रेणी के कलाकार ही विशुद्ध रोमांटिक या विशुद्ध क्लासिक होते हैं।[१५] स्टैढल के विचार इस संदर्भ में और व्यापक एवं स्पष्ट हैं। उनका कथन है कि "सभी बड़े साहित्यकार अपने युग में रोमांटिक होते हैं।"[१६] रोमांटिक कविता केवल कविता का एक प्रकार ही नहीं, बल्कि कविता का एक तत्त्व भी है।[१७] प्रत्येक ऊँची कला मात्र क्लासिक या मात्र रोमांटिक या मात्र यथार्थवादी ही नहीं होती, बल्कि ये तीनों स्थितियाँ एक ही कवि और एक ही कृति में भी समय-समय पर दिखाई पड़ती हैं। काव्य की रचना-प्रक्रिया कवि-व्यक्तित्व की अभिव्यंजना है। इस प्रकार कवि-मन में इदम्, अहम् एवं अति अहम् वृत्तियों की सहज अभिव्यंजना कवि-मानस की प्रस्तुति है। प्रत्येक ऊँची कला विरोधाभास की समन्वित साधना है और इस बिन्दु पर ऊँची कलाएँ रोमांटिक होती हैं। स्वच्छन्दतावादी चेतना मात्र सर्जन नहीं है, बल्कि कल्पनात्मक पुनर्सृजन है। स्वच्छन्दतावादी कविता में वैयक्तिकता, आत्मपरकता, कवि-चेतना की नवीनता ध्वनित होने लगती है।

कला का जीवन के प्रति क्या दृष्टिकोण हो ?—जहाँ तक इसका प्रश्न है, प्रायः विषय एवं विषयिपरकता अथवा यथार्थवादी अथवा आदर्शवादी प्रवृत्तियों के ऊपर बल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

दिया जाता है, जो अवलोकित करने के बदले हमें भ्रान्त ही करता है। यह निश्चित है कि एक कवि वस्तुओं के यथार्थ अंकन में बहुत अच्छा हो सकता है तथा विशुद्ध आत्मपरक तत्त्वों के विवेचन में अशक्त हो सकता है जबकि दूसरा कवि विषयि या आत्मीय जगत् (स्वनिर्मित जगत्) में ज्यादा सरलता के साथ भ्रमण कर सकता तथा वास्तविक जगत् में अपने को अनजाना पा सकता है। दोनों ही अच्छे कवि हो सकते हैं। किन्तु जब हम और निकटता से देखते हैं तो हमें प्रतीत होता है कि जिस प्रकार कविता को सजीव बनाने के लिए और वस्तुओं को हमारी आँखों के सामने प्रकट रूप में लाने के लिए एक हद तक विषयपरकता की आवश्यकता होती है उसी प्रकार अधिक-से-अधिक विषयपरक अभिव्यक्ति भी आन्तरिक दृष्टि और विषयिपरक रचनात्मक प्रक्रिया से आरम्भ होती है। वस्तुतः कवि अपने स्वान्तः से सृजन करता है, न कि अपनी बाह्य दृष्टि से। बाह्य दृष्टि तो आन्तरिक दृष्टि को सृजन के प्रति उन्मुख मात्र करती है। ऐसा न होने पर रचना एक सजीव सृष्टि के स्थान पर यांत्रिक संघटन मात्र होगी।[१८]

"जब तक कवि की चेतना वादग्रस्त रहती है, तब तक उसके लिए पूर्ण समाधि की स्थिति संभव नहीं होती और पूर्ण समाहिति के बिना पूर्ण आत्माभिव्यक्ति या आत्मलब्धि संभव नहीं है। वादग्रस्त चेतना विवाद में उलझ जाती है और विवाद निश्चय ही सर्जना में बाधक होता है। नया कवि अभी वाद और आन्दोलन में इतना ग्रस्त है कि प्रायः समाहिति की स्थिति में नहीं पहुँच पाता। जब कभी ऐसा होता है तभी उत्तम कविता की सृष्टि भी संभव होती है, पर यह कविता वाद के घेरे में नहीं आती और वादी कवि या आलोचक उस पर रोमानी हो जाने का आक्षेप करने लगता है। यह एक प्रकार का दुश्चक्र है जो वर्तमान कविता के उचित उत्कर्ष में बाधक हो रहा है।"[१९] "जब कभी एक वाद की प्रमुखता से अनुसरण होने लगता है, तब उसके विरोध में दूसरी काव्यधाराएँ आविर्भूत होती हैं और एक सन्तुलन बनाती हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से समस्त विश्व-काव्य पर एक नज़र डालने से यह भी ज्ञात होता है कि श्रेष्ठ कवियों ने किसी वाद या सीमित सरणि का आधार नहीं लिया। क्लासिक काव्य, स्वच्छन्दतावादी काव्य और यथार्थोन्मुख रचनाएँ एक-दूसरे के साधनों और उपादानों को बराबर अपनाती रहती हैं और यही काव्य के स्वाभाविक विकास के लिए अपेक्षित भी है।"[२०] गजानन माधव मुक्तिबोध का कथन भी प्रस्तुत संदर्भ में उल्लेखनीय है— "परन्तु लोग आलोचना करते समय किसी 'वाद' के दायरे में बाँधकर ही साहित्य को देख पाते हैं। यह तरीका एकदम गलत है। साहित्य के 'वाद' दार्शनिक या वैज्ञानिक प्रणालियाँ नहीं हैं, वे केवल साहित्य के दृष्टिकोण हैं।"[२१] वस्तुतः 'साहित्यिक वाद' साहित्य के दृष्टिकोण हैं। वह तो मानव-मन की तरंग की तरह कभी रोमांटिक, कभी क्लासिक और कभी यथार्थ भाव बिन्दुओं को उभारता चलता है, सर्जन में भी, आलोचना में भी। रोमांटिक चेतना के अभाव में ऊँची कविता का जन्म नहीं हो सकता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रोमांटिसिज़्म के स्पर्श से क्लासिक कवि भी पहले से कुछ बड़ा कवि हो जाता है और संयमशील महाकवियों में तो रोमांटिक प्रवृत्तियाँ ऐसा चमत्कार उत्पन्न करती हैं जैसा कभी-कभी ही देखने में आता है। रवीन्द्रनाथ और गेटे संयमशील थे, किन्तु संयमशील होने के कारण इन कवियों ने रोमांटिसिज़्म के दोषों को अपने पास तक फटकने नहीं दिया। यह स्पष्ट है कि अच्छी काव्य-सर्जना को प्रस्तुत करते समय कवि 'वाद' के घेरे में नहीं रह सकता। अगर वह 'वाद' के घेरे से बाहर नहीं निकल पाता तो उत्तम काव्य की सर्जना संभव नहीं है। जहाँ भी श्रेष्ठ साहित्य की रचना होती है, उस समय कवि या लेखक किसी विशेष 'वाद' के प्रांगण में ही भ्रमण नहीं करता, प्रत्युत उसके सामने साहित्य का विशाल क्षेत्र पड़ा हुआ रहता है, उसीमें विचरण करता है, चाहे कोई उसे क्लासिक कह ले या रोमांटिक या यथार्थवादी।

स्वच्छन्दतावाद का पाश्चात्य सन्दर्भ—१९वीं शताब्दी के प्रथम तीन दशकों में अंग्रेजी साहित्य के सर्जनात्मक एवं आलोचनात्मक क्षेत्रों में एक नयी विचारधारा विकसित हुई जिसे साहित्यकारों ने स्वच्छन्दतावाद की संज्ञा से सम्बोधित किया है। स्वच्छन्दतावाद की शुरुआत तो १८वीं शताब्दी से ही हो गयी थी, किन्तु, इसका पूर्ण विकास १९वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में हुआ। यह विचारधारा नवपरंपरावादी सिद्धांत के विरोध, विद्रोह के रूप में आया, जब कि यह विद्रोह इंग्लैंड में इतना तीव्र नहीं था जितना जर्मनी और फ्रांस में। नवपरंपरावादी चेतना कला को चेतन बौद्धिकता की उपज मानती है जिसके अन्तर्गत भावना, कल्पना और अचेतन के लिए कोई स्थान नहीं होता। वस्तुतः यह साहित्य कला की चेतन बौद्धिक प्रक्रिया है। प्रतिभा, प्रेरणा, आर्ष काव्य, उन्माद काव्य ये शब्द नवजागरण काव्यशास्त्र के भण्डार में हैं, लेकिन विशुद्ध परम्परावादी आलोचक यह कहते हुए नहीं भूलते हैं कि कवि को प्रेरणा, कल्पना और आविष्कार की आवश्यकता होती है। आविष्कार शब्द जो इसके बाद की आलोचना को विस्तार देता है, जिसे सर्जनात्मक कल्पना कहते हैं, वे काव्य के बौद्धिक सिद्धांत में आस्था रखते हैं। लेकिन वह काव्य पूरी तरह बौद्धिक नहीं होता। स्वच्छन्दतावादी कलात्मक विस्तार के लिए कलाकार को कल्पना की आवश्यकता के साथ ही बुद्धि पर नियंत्रण व प्रतिबन्धन भी करना होता है।[२२] वर्ड्सवर्थ तथा कॉलरिज कवि-आलोचक इस नयी विचारधारा के प्रथम उन्नायक थे। उनके संयुक्त प्रयास से ही स्वच्छन्दतावाद ने एक नया आन्दोलन का रूप धारण किया। वर्ड्सवर्थ के 'लिरिकल बैलेड्स' तथा कॉलरिज के 'लिट्रेरिया बायोग्रेफिया' के द्वारा अंग्रेजी साहित्य में स्वच्छन्दतावाद अपना विस्तार करता है। इस आन्दोलन में शेली, कीट्स तथा बायरन का भी विशेष योगदान है।

"वह आदमी जो प्रकृति को जड़ समझता है तथा मनुष्य को अपना शत्रु समझता है, जो कल्पनाओं को केवल जोड़ने की एक शक्ति समझता है और जो प्रतीक और मिथक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

जैसे उपादानों का प्रयोग नहीं करता, उसे हम स्वच्छन्दतावादी नहीं कह सकते।"[२३] डब्ल्यू० टी० जोन्स का कथन है : "स्वच्छन्दतावाद गतिशील है, किंचित् स्थिर नहीं, इसमें व्यवस्था की अपेक्षा अव्यवस्था अधिक है, बौद्धिकता की अपेक्षा निरन्तरता पर बल है, जिसके अन्तर्गत तीव्र प्रकाश-बिन्दु की अपेक्षा धुँधले प्रकाश-बिन्दु की अधिकता है, जिसमें बाह्य झुकाव की अपेक्षा आन्तरिकता पर बल है और जिसमें इस संसार की अपेक्षा दूसरे संसार की रुझान पर बल दिया गया है।"[२४]

डब्ल्यू० एच० आडेन चेतन और अचेतन की द्वन्द्वात्मकता को स्वीकार करते हैं— स्वच्छन्दतावाद से आशय है चेतन का पाप से मिलाप और स्वच्छन्दतावाद की निर्दोषता के प्रति इसलिए लालायित है कि वह अचेतन से काफी दूर और दूर होता गया। इसी विचार को किंचित् दूसरे रूप में रखते हैं, आत्मचेतना उदात्त मानवीय गुण है, इसलिए स्वच्छन्दतावादी कलाकार सबसे अधिक आत्मचेता होने के नाते स्वच्छन्दतावादी नायक बन जाता है। किन्तु चेतना की प्रतिभा एक बहुदेववादी है जो प्रकृति में व्याप्त है।[२५] इसी वर्ष एफ० डब्ल्यू० वेट्सन इस परिणाम पर पहुँचे कि "प्रकृतिबिम्ब, जो चेतन और अचेतन को जोड़नेवाली कड़ी है, स्वच्छन्दतावादी कविता की बुनियादी अन्विति है।"[२६]

पोलट के अनुसार हर लेखक स्वच्छन्दतावादी लेखक या कवि अपने विषय के संसार में रहता है जिसे वह अपनी चेतना से निर्मित करता है। आलोचक का कार्य उसकी वैयक्तिक चेतना में प्रवेश करना है। लेकिन पोलट अब इन चेतना के बारे में यह सोचते हैं कि ये काल की सर्वव्यापक आत्मा में अन्वित हैं। रेनेसां और बरोक और स्वच्छन्दतावाद के बारे में साहस से सामान्यीकरण करते हैं। स्वच्छन्दतावाद को न केवल जर्मन या फ्रांसीसी सब इस प्रयास से परिभाषित करते हैं ताकि विषय और विषयि, केन्द्र और परिधि के विरोध पर व्यक्तिगत अनुभूति में विजय पा सके।[२७] आर० ए० फोक्स की पुस्तक 'रोमांटिक एसरसन' भी यह चित्रित करती है कि प्रतीकों का स्वच्छन्दतावादी विधान संगति के वियन को योग देता है। एक स्पष्ट ढंग से स्वच्छन्दतावादी शब्दावली की घोषणा की विषमता आधुनिक कविता के संघर्ष और आयरनी से है।[२८] इसके विपरीत फ्रैंक करमोड अपनी पुस्तक 'रोमांटिक बिम्ब' में आधुनिक प्रतीक की प्रेरणा को मुख्यतः डब्ल्यू० बी० यीट्स में सीधे स्वच्छन्दतावाद से अंकित करते हैं। फ्रांसीसी का प्रतीक स्वच्छन्दतावादी बिम्ब है जो विस्तृत है और जिसे विस्तृत पराभौतिक और जादुई आधार मिला हुआ है। लेकिन करमोड यह स्वीकारते हैं कि प्रतीकवाद 'एक महान् और कुछ तरीकों में हानिकर ऐतिहासिक मिथक है', और यह अति-मानवीय बिम्ब के विचार का नाश करना चाहता है और जिसे वह अनिवार्य समझते हैं, वियोजित कलाकार, कलाकार जो आडम्बरी पैगम्बर और ऋषि है।[२९]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रेने वेलेक का कथन है कि इंग्लैण्ड तथा यूरोप में स्वच्छन्दतावाद का अभिप्राय योगियों की शाब्दिक दृष्टि से नहीं है, बल्कि इसका सम्बन्ध विषय एवं विषयि, मानव और प्रकृति, चेतन और अचेतन के मिलाप से है।[३०] More Peckham अपने विस्तृत लेख में 'स्वच्छन्दतावाद के सिद्धान्त की ओर १९५१ में' स्वच्छन्दतावाद को जैविक गत्यात्मकवाद कहते हैं। इस तरह पेक्खम कल्पना और प्रकृति के बारे में उस धारणा को स्वीकारते हैं जिसका वर्णन रेने वेलेक ने अपने वर्णन में किया है। लेकिन वह प्रतीक और मिथक के विचार को छोड़ देते हैं। पेक्खम एक नई धारणा देते हैं, नकारात्मक स्वच्छन्दतावाद जो निराशाजनक शून्यवादी स्वच्छन्दतावाद है। परिचर्या इस प्रकार चलती है कि स्वीकारात्मक स्वच्छन्दतावाद बायरन में फिट नहीं बैठता, लेकिन नकारात्मक स्वच्छन्दतावाद बैठता है। पेक्खम अपना विचार बाद में बदल देते हैं और स्वच्छन्दतावाद को जागरण कहते हैं तथा विश्वास करते हैं कि स्वच्छन्दतावाद का सार अराजकता पर विधान आरोपित करने में है। ये स्वच्छन्दतावादी मूल्यों की चर्चा करते हुए कहते हैं—"इसका मूल्य-परिवर्तन, अपूर्णता, वृद्धि, अनेकत्व, सर्जनात्मक कल्पना, अचेतन को लिये हुए होता है।"[३१] पेक्खम ने स्वच्छन्दतावाद को जागरण कहा है और इसके मूल्यों के रूप में परिवर्तन, अपूर्णता, वृद्धि, अनेकत्व आदि स्थितियों का भी संकेत देते हैं। इस विश्लेषण में इसके अतिरिक्त दो ऐसे बिन्दु भी हैं जो अपनी सीमारेखा में स्वच्छन्दतावाद की पूरी चेतना को समेट लेता है। सर्जनात्मक कल्पना के द्वारा साहित्यकार ऐतिहासिक तथ्य को सर्जनात्मक कल्पना से एक नूतन मौलिक रूप देता है। इस कला में जो कवि जितना दक्ष होगा, वह उतना ही बड़ा स्वच्छन्दतावादी होगा। हम यह भी कह सकते हैं कि सर्जनात्मक कल्पना के अभाव में सर्जन स्वच्छन्दतावादी सर्जन के रूप में नहीं ढल सकता। स्वच्छन्दतावादी सर्जना के लिए कवि सर्जनात्मक कल्पना से सहायता लेता है। सर्जनात्मक कल्पना के द्वारा साहित्यकार अपनी कलात्मक रचना में वैयक्तिकता, नवीनता, मौलिकता लाता है। वस्तुतः पेक्खम स्वच्छन्दतावादी मूल्यों के क्रम में सर्जनात्मक कल्पना की चर्चा कर, स्वच्छन्दतावादी मूल प्रवृत्ति को संकेतित करते हैं। सर्जनात्मक कल्पना के इन्हीं बिन्दुओं को विलियम ब्लैक ने भी लोवास (Los) से कहा है[३२]—"मैं एक नियम का सृजन करूँगा या दूसरे के बनाये हुए नियम पर चलूँगा तो गुलाम हो जाऊँगा। मैं तर्क और तुलना नहीं करूँगा, मेरा कार्य सृजन करना है।"

अब रही पेक्खम की अचेतन की अवधारणा की बात, इसके द्वारा कवि की रचना में अचेतन की स्थितियों का आकलन अपेक्षित है। फ्रायड के अनुसार अचेतन की सीमारेखा वैयक्तिक धरातल होता है और इसमें यौन-सम्बन्धी इच्छाएँ दमित रहती हैं जो समय पाकर स्वप्नों, बिम्बों, प्रतीकों के रूप में अभिव्यंजित होती हैं। लेकिन युंग ने अचेतन की सीमारेखा को विस्तार दिया और वैयक्तिक अचेतन के साथ-साथ सामूहिक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIB

अचेतन को भी अचेतन की सीमारेखा में विश्लेषित किया। इसी क्रम में उन्होंने मूल वृत्तियाँ, आद्य-बिम्ब, फैन्टेसी, प्रतीक एवं मिथक को विश्लेषित किया है। इनका यह भी कहना है कि अचेतन में दमित अनुभूतियाँ मात्र यौन-परक ही नहीं होतीं, बल्कि इसके अतिरिक्त भी होती हैं, जो अचेतन में दबी होती हैं। उसकी अभिव्यक्ति तो होती ही है, फलस्वरूप सामाजिक, सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ फैन्टेसी एवं प्रतीक के रूप में स्वरूप ग्रहण करती हैं। पेक्खम के अचेतन के द्वारा इन दोनों की प्रस्तुति होती है। इस प्रकार पेक्खम की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का मूल्यांकन एवं विश्लेषण उपयुक्त एवं न्यायसंगत प्रतीत होता है।

स्वच्छन्दतावाद में आदिम वृत्तियाँ आन्तरिक एवं सर्जनात्मक शक्तियों के द्वारा उत्पन्न होती हैं। कवि में यहाँ सदैव प्रकृति के अनुकरण की प्रकृति होती है, परन्तु उसके सर्जनात्मक साँचे (मॉडल) का निवास उसके मस्तिष्क में होता है। जिस प्रकृति का वह अनुकरण करता है, वह उसके अन्तः में निवास करती है, जबकि वह बाहर भी होती है। बाह्य प्रकृति का अनुकरण स्वच्छन्दतावादी कवि नहीं करता है। स्वच्छन्दतावादी विचारधारा आन्तरिक सर्जनात्मक शक्ति में अभिव्यंजित होती है।[३३]

स्वच्छन्दतावाद विषय एवं विषयि, केन्द्र और परिधि के विरोधाभास को व्यक्तिगत अनुभूति के आधार पर समाप्त करने का प्रयास है। जहाँ पर विषय और विषयि, केन्द्र और परिधि का वैषम्य समाप्त हो जाय तथा वैयक्तिक अनुभूति में विषय और विषयि, केन्द्र और परिधि का विलयन हो जाय, वही स्थिति स्वच्छन्दतावाद की है।[३४]

जर्मनी तथा इंग्लैण्ड में जो २०वीं शताब्दी के प्रारम्भ में पुस्तकों की पूरी माला स्वच्छन्दतावाद की प्रकृति की परिभाषाओं के प्रति अर्पित है तथा स्वच्छन्दतावाद पर गम्भीरता से विचार भी हुआ है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावाद विरोधी भावबिन्दुओं को समन्वित करता है। संयोगात्मक कल्पना-शक्ति का प्रयोग विरोधी चीजों का सामंजस्य, सीमित-असीमित का, अमरता और क्षणभंगुरता का, सार्वभौमिकता और व्यक्तिवादिता का अङ्कन ही स्वच्छन्दतावाद है। स्वच्छन्दतावाद को अगर एक नाम से पुकारा जाय तो वह होगा विरोधाभास के बीच कल्पना की समन्वय-शक्ति।[३५] हावर्ड मुमफोर्ड जोन्स अपनी पुस्तक 'क्रान्ति और स्वच्छन्दतावाद' में स्वच्छन्दतावाद की सीमारेखा को विश्लेषित करते हुए कहते हैं—"किन्तु, वह घनत्व धीरे-धीरे एक नये रूप में अभिव्यक्त हुआ, आत्मबोध और आत्माभिव्यक्ति की नई विधियाँ आविष्कृत हुईं तथा अहं की धारणा में यह क्रान्ति स्वच्छन्दतावाद के किसी भी सिद्धान्त का मौलिक तत्त्व बना।"[३६] इस परिभाषा में अहं की भावना में क्रान्ति स्वच्छन्दतावाद के किसी भी सिद्धान्त के लिए आवश्यक है। इस प्रकार 'क्रान्ति' आधुनिक स्वच्छन्दतावाद या नव-स्वच्छन्दतावाद के लिए अपेक्षित है। स्वच्छन्दतावाद विशुद्ध फैंटेसी है, जिसमें

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वर्तमान वास्तविकता का पूरी तरह से परित्याग कर दिया जाता है—इस मान्यता के ऊपर बेलिस्की ने संशोधन किया। उसने काव्य को वास्तविक और आदर्शपरक इन दो प्रकारों में विभक्त किया है और बतलाया कि एक कवि जीवन को अपने आदर्शों के अनुरूप सृजन करता है और दूसरा इसको नग्न वास्तविकता में उपस्थित करता है, जब आदर्शपरक दृष्टि और जीवन का पुनर्सृजन समृद्धि वना दिया जाता है, शैलीगत चित्रवत्ता और आलंकारिकता के द्वारा उत्तानित संवेगवत्ता, अतिमानवीय आवेशमय चरित्रों के साथ स्पष्ट आत्मपरकता के द्वारा रँगा हुआ जो कि कतिपय विशिष्ट कलात्मक उपायों के द्वारा प्रकट किया गया हो। यहीं पर हम स्वच्छन्दतावाद का कार्य देखते हैं। बेलिस्की के अनुसार स्वच्छन्दतावाद का क्षेत्र मनुष्य का सम्पूर्ण आन्तरिक और आत्मिक जीवन है, जो कि आत्मा और हृदय की वह पवित्र भूमि है जहाँ से उन्नति के निमित्त किये हुए सारे प्रयास उद्‌भूत होते हैं और कल्पना के द्वारा सृष्ट आदर्शों में सन्तोष पाते हैं। आगे इनका कहना है कि वहाँ जीवन है, जहाँ मनुष्य है और जहाँ मनुष्य है, वहीं आपको स्वच्छन्दतावाद मिलेगा।[३७] गोर्की स्वच्छन्दतावाद के सन्दर्भ में कहते हैं कि स्वच्छन्दतावाद एक प्रकार का परिवेश है, परिवर्तन के युग में समाज के द्वारा अनुभूत भावनाओं और वृत्तियों का न्यूनाधिक अस्पष्ट संश्लिष्ट प्रतिफलन है। इसकी प्रमुख विशेषता है, किसी अभिनव वस्तु की आकांक्षा, नवीनता के लिए व्याकुलता, उस अभिनव वस्तु से परिचित होने के लिए स्नायविक शीघ्रता। फिर भी सर्वप्रथम स्वच्छन्दतावाद को गोर्की ने ही अक्रियात्मक और क्रियात्मक, रूढ़िगत और प्रगतिशील भेद किये और क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद के भावी अस्तित्व के अधिकार के ऊपर बल दिया। इस स्वच्छन्दतावाद को 'सामूहिक स्वच्छन्दतावाद' कहा। तीन वर्ष बाद गोर्की ने स्वीकृति के साथ कोत्सुविन्स्की के इस कथन को उद्‌धृत किया, स्वच्छन्दतावाद सबसे अधिक मानवीय है, मेरा विचार है कि इसका सांस्कृतिक अर्थ अपूर्ण रूप में समझा गया। यह अतिरंजना अवश्य करता है, किन्तु यह अतिरंजना करता है शिव के सिद्धान्तों की। और इस कार्य के द्वारा इस बात को प्रमाणित करता है कि मनुष्य के भीतर शिवं के प्रति कितनी पिपासा है।[३८] गोर्की स्वच्छन्दतावाद को दो रूपों में विभाजित करता है—अक्रियात्मक और क्रियात्मक। अक्रियात्मक स्वच्छन्दतावाद वस्तुतः मनुष्य के जीवन को रँग-चुनकर उसे संतुष्ट करने अथवा उसके आसपास की दुनिया से उसका ध्यान हटाने का प्रयत्न करता है और उसे अन्तर्जगत् के निष्फल आत्मदर्शन, जीवन की न हल होनेवाली पहेलियों जैसे प्रेम, मृत्यु तथा अन्य अनिवार्य समस्याओं के चिन्तन में उलझाता है। क्रियात्मक स्वच्छन्दतावाद मानव के जीवन-संकल्प को दृढ़ करता है, आसपास के जीवन और उसके सभी प्रकार के उत्पीड़न के विरुद्ध विद्रोह करता है। क्रियात्मक या सक्रिय स्वच्छन्दतावाद को हम नवस्वच्छन्दतावाद भी कह सकते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

ए० एन० सुकोलाव का कथन है—"स्वच्छन्दतावाद का प्रत्येक विद्यार्थी इसके पक्ष-विपक्ष को ही इसका आधारभूत तत्त्व मानता है। स्वच्छन्दतावाद के तत्त्व ये हैं—स्वप्न और वास्तविकता की मुठभेड़, किसी आदर्श की परिपुष्टि और उपस्थापना, आत्मपरकता, वैयक्तिकता, वास्तविकता के चित्रण में पुनर्निर्माण के तत्त्व, पुराने कलात्मक रूपों का परित्याग, चित्रवत्ता की खोज इत्यादि। और ये सभी वस्तुतः स्वच्छन्दतावाद के रूप हैं। परन्तु स्वच्छन्दतावाद की परिभाषाएँ जो किसी एक विशेषता के ऊपर आधारित होती हैं, प्रणालीगत दोष से ग्रस्त होती हैं। यह दोष है एक संश्लिष्ट वस्तु की एकांकी परिभाषा करना।"[३९]

स्वच्छन्दतावादी सौन्दर्य-शास्त्र के अनुसार कला का विकास मनुष्य के लिए है और जीवन के लिए है। कॉलरिज के अनुसार अन्य कलाओं की तरह कविता विशुद्ध मानवीय है। क्योंकि इसके तत्त्व मन से उत्पन्न होते हैं, और इसकी प्रसूतियाँ मन के लिए होती हैं। वर्ड्सवर्थ के विचार से "कवि मानव-स्वभाव के निमित्त सुरक्षा की शिला है। यह संस्थापक और रक्षक है।"[४०]

रेयमन्ड विलियम्स ने स्वच्छन्दतावाद को इस रूप में व्याख्यायित किया है—"स्वच्छन्दतावाद की एक वृत्ति, कला की नियमबद्धता का सक्षम परित्याग है और दूसरी वृत्ति जगत् के अनावृत रहस्यों का अध्ययन है।"[४१]

स्वच्छन्दतावाद पर व्यापक फलक के क्रम में रेयमन्ड विलियम्स के विचार इस प्रकार हैं—स्वच्छन्दतावाद का विशेष रूप से सम्बन्ध अनुभवगत समस्याओं से है। रोमांटिक का तात्पर्य वह साँचा है जिसमें कि सामान्य अनुभवों को आकार दिया जाता है। इन अनुभवों का सम्बन्ध सामाजिक संघर्षों, विच्छेदनों तथा परम्पराओं का विघटन है जो कि फ्रांस की क्रांति के उपरान्त तथा औद्योगिक क्रांति के साथ उत्पन्न हुए थे। इस प्रवृत्ति के सर्जक कवि तथा लेखक अपने समय के उत्पीड़न के साथ भावनात्मक रूप से प्रतिबद्ध थे। इस ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को नज़रअन्दाज करना उन लेखकों तथा कवियों को उस युग में उपयोगिता को नकारना होगा।[४२]

एम० एच० अब्राम्स का कथन है कि रोमांटिक कवियों के ऊपर एक अभियोग यह लगाया जाता है कि वे अपने युग की वास्तविकताओं को अपनी दृष्टि से ओझल रखे हैं। इससे भी बड़ा अभियोग यह लगाया है कि उन्होंने मानव के उत्पीड़न और दुराचार की ओर ध्यान नहीं दिया है। इसी आधार पर कहा गया है कि रोमांटिक कवि पूर्ण कवि नहीं थे, क्योंकि उन्होंने सामाजिक मानवीय अनुभव के सामाजिक आयाम का नगण्य-सा उपस्थापन किया है। यद्यपि वे समाज के महत्त्व पर बल देते हैं फिर भी वे इसे मानव-चैतन्य की महती आवश्यकता के रूप में ही लेते हैं, किन्तु वास्तविकता यह है कि ये कवि मानव-जीवन में निहित उत्पीड़नों की वास्तविकता और तार्किकता के प्रति

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDR

एकान्त भाव से सजग थे। मैथ्यू आरनोल्ड का यह कथन कि "वर्ड्सवर्थ की दृष्टि मानव-जीवन के आधे भाग के प्रति मूंदी हुई है।" यह कथन साहित्य के इतिहास में प्रचलित हो चला है। किन्तु, वास्तविकता यह है कि प्रोस्पेक्टस में उसने स्वयं कहा है कि स्वर्ग के पुनर्ग्रहण की संभावना के पीछे वह मानवीय सत्य के कवि के रूप में मदान्ध करनेवाले भावों, एकान्त उत्पीड़न, दुःख के झंझावातों को प्रकट करना चाहता है। वस्तुतः वर्ड्सवर्थ के वर्णनात्मक कविताओं का विषय है--मनुष्य के प्रति अमानवीय व्यवहार, भयंकर सामाजिक अत्याचार, असमर्थ और असहाय वृद्धावस्था, अपराध और विषाद, अत्याचार और निराशा, शिशुवध, निराधार अत्याचार के दबाव में पड़कर चारित्रिक पतन, दुःखद परिस्थितियों में पड़े हुए, अनन्यगतिक मनुष्य का धैर्यप्रिय शिशु का अचानक लोप तथा लुसी का कब्रगत होना। वर्ड्सवर्थ के इन विषयों के प्रति आरनोल्ड ने अपनी आँखें संभवतः इसलिए मूंद ली हैं कि ये परम्परागत त्रासदी से भिन्न विनीत ग्राम्य जीवन से सम्बद्ध थे।[४३]

एम० लेसर ने स्वच्छन्दतावाद को फ्रांसीसी क्रान्ति की तात्त्विक चेतना के साथ तादात्म्य स्थापित करते हुए, हमारी परेशानियों का प्रमुख कारण वे उस आन्दोलन के भूत से पूर्ण विच्छेद में मानते हैं तथा यूरोपीय सभ्यता की प्राचीन परम्पराओं के त्याग में मानते हैं। अतः वे इसका उपचार प्राचीनतर विश्वास और प्राचीनतर राजनीतिक तथा सामाजिक विधान की स्वीकृति में मानते हैं तथा विकासवादी धारणा के द्वारा उत्पन्न होनेवाले आशावादी भाग्यवादिता के परित्याग में मानते हैं। किन्तु, एम० सेलियर का अभिमत है कि जहाँ तक क्रान्ति की चेतना विचार-संगत आशावादी डेकार्ट के मत को माननेवाली तथा क्लैसिकल है, वहाँ यह न्यायी है, टिकाऊ है तथा संसार में अपनी बात अधिक-से-अधिक मनवाने में सक्षम है तथा स्वच्छन्दतावाद की बुराई का सम्बन्ध केवल क्रान्तिकारी आन्दोलन से समझना चाहिए। जहाँ यह अपने सही रास्ते से अलग हो गया है तथा सामाजिक रहस्यवाद और अद्यतन साम्यवादी समाजवाद में मानना चाहिए।[४४] मेरा इस सम्बन्ध में कहना है कि इसी बिन्दु पर स्वच्छन्दतावादी कवि या लेखक अपनी चेतना का विस्तार करता है और उसकी कला नवस्वच्छन्दतावादी हो जाती है। यह इसका दोष नहीं है, बल्कि युग-धर्म की व्याख्या है और यह कला को उत्कृष्टता प्रदान करती है, समकालीनता से जोड़ती है। यह स्वच्छन्दतावादी कला का उच्चतर बिन्दु है। स्वच्छन्दतावादी विचार और कल्पना की इस गवेषणा को हम वहाँ समाप्त करते हैं जहाँ से आरम्भ लक्षित होता है और मेरा विश्वास है कि हम इसे कुछ उच्चतर बिन्दु पर ले जा सके हैं। जैसा कि गिलमैन को लिखे हुए अपने पत्र में कॉलरिज ने वृत्ताकार स्वच्छन्दतावादी शिल्प कहा है। कविता के लिए उपस्थापित ऊँचे तर्कों की भूमिका के रूप में प्रोस्पेक्टस नामक अपने ग्रन्थ में वर्ड्सवर्थ ने मनुष्य-प्रकृति और मानव-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

जीवन के अपने ध्यानों के पीछे निहित मौलिक गुणों को अर्थात् जहाँ से चला हैं वहीं पहुँचा लेकिन उसी स्थान के उच्चतर बिन्दु पर।[४५]

स्वच्छन्दतावाद का भारतीय सन्दर्भ

हिन्दी के विद्वानों ने भी स्वच्छन्दतावाद के स्वरूप पर विचार किया है। स्वच्छंदतावाद शब्द अंग्रेजी के 'रोमेण्टिसिज़्म' का हिन्दी पर्याय है। इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने किया था। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने स्वच्छन्दतावादी कविता को कृत्रिम और रूढ़िबद्ध काव्य-प्रवाह की प्रतिक्रिया से स्वाभाविक भावधारा की कविता माना है। उनके कथनानुसार—"प्रकृति प्रांगण के चर-अचर प्राणियों का रागपूर्ण परिचय, उनकी गतिविधि पर आत्मीयता-व्यंजक दृष्टिपात, सुख-दुःख में उनके साहचर्य की भावना, ये सब बातें स्वाभाविक स्वच्छन्दतावाद के पदचिह्न हैं।"[४६] स्वच्छन्दतावादी कविता की पृष्ठभूमि पर प्राकृतिक तत्त्वों को सर्वाधिक महत्त्व देने के कारण ही उन्होंने श्रीधर पाठक, पं० रामनरेश त्रिपाठी, ठाकुर गुरुभक्त सिंह तथा उदयशंकर भट्ट आदि को नवीन काव्य-प्रवृत्ति के प्रतिनिधि कवि घोषित किया है। आचार्य शुक्ल ने जिस अर्थ में स्वच्छन्दतावाद का प्रयोग किया है, वहाँ अंग्रेजी के 'रोमेंटिसिजम' का अनुवाद होते हुए भी उसके एक पक्ष से ही सम्बद्ध है। स्वच्छन्दतावादी कविता की आत्मनिष्ठ उद्भावनाओं, प्राकृत कल्पना-छवियों, वैविध्यपूर्ण प्रेरणाओं आदि का अंकन इसके अतिरिक्त नहीं हो सकता। परिणामस्वरूप यह परिभाषा नवकाव्य-प्रवृत्ति के समस्त स्वरूप का आकलन नहीं करती। इसके अतिरिक्त आचार्य शुक्ल ने जिन कवियों को प्रमुखता दी है वे नूतन काव्यान्दोलन के प्रारंभिक कवि हैं। निश्चय ही उनकी कविता में प्राकृतिक सुषमा का परिपार्श्व प्राप्त होता है किन्तु इसी आधार पर उन्हें इस काव्यधारा का प्रतिनिधि कवि नहीं स्वीकारा जा सकता।

डॉ० नामवर सिंह आचार्य शुक्ल की इस परिभाषा का उल्लेख करते हुए लिखते हैं कि शुक्लजी के 'स्वच्छन्दतावाद' की परिभाषा इतनी सीमित थी कि वह सम्पूर्ण छायावादी कविताओं को न घेर सकी, उसकी सीमा में केवल पं० श्रीधर पाठक, पं० रामनरेश त्रिपाठी, ठाकुर गुरुभक्त सिंह, सियारामशरण गुप्त, सुभद्राकुमारी चौहान, उदयशंकर भट्ट और संभवतः 'नवीन' तथा माखनलाल चतुर्वेदी ही आ सके। इस प्रकार शुक्लजी के 'स्वच्छन्दतावाद' में छायावाद की रहस्यभावना के लिए कोई जगह न थी। फलतः स्वच्छन्दतावाद अंग्रेजी के रोमेंटिसिज्म का अनुवाद होते हुए भी 'छायावादी' कविता का केवल एक अंग बनकर रह गया। धीरे-धीरे 'छायावाद' सम्पूर्ण रोमेंटिसिज़्म का वाचक बन गया।[४७]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का स्वच्छन्दतावाद के संदर्भ में कहना है—१९वीं शताब्दी के आरम्भ में अंग्रेजी कवियों में एक अद्भुत उन्मुक्त भावधारा प्रबल होकर प्रकट हुई। इसमें परिपाटी-विहित और परम्परायुक्त रस-दृष्टि के स्थान पर कवि की आत्मानुभूति, आवेगधारा और कल्पनाप्राधान्य था। इस विशिष्ट दृष्टिभंगी की प्रधानता को ध्यान में रखकर कुछ विद्वानों ने इसे हिन्दी में स्वच्छन्दतावाद कहा है।[४८] आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी स्वच्छन्दतावाद में आत्मानुभूति, आवेगधारा और कल्पना की उपस्थिति को स्वीकारते हैं। पुनः वे स्वच्छन्दतावाद को इस रूप में प्रस्तुत करते हैं—"रोमांटिक साहित्य की वास्तविक उत्सभूमि वह मानसिक गठन है जिसमें कल्पना के अविरल प्रवाह से घनसंश्लिष्ट सिविड़ आवेग की ही प्रधानता होती है। मानसिक वृत्तियाँ ही इस व्यक्तित्व-प्रधान साहित्यिक रूप की प्रधान जननी है।"[४९] आचार्य द्विवेदी स्वच्छन्दतावादी कविता के लिए कल्पना के अविरल प्रवाह घनसंश्लिष्ट निबिड़ आवेग तथा मानसिक वृत्तियों को इसके मूल में बताते हैं। इसके साथ ही स्वच्छन्दतावादी कवि कल्पना-आवेग के माध्यम से नयी सर्जना करता है तथा स्वच्छन्दतावादी कविता विद्रोहात्मक होती है, साथ ही उसमें रचनात्मक दृष्टिकोण भी अपेक्षित है।[५०]

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी के अनुसार—"स्वातन्त्र्य की लालसा और बंधनों का त्याग रोमांटिक धारा के रूप में व्याप्त है।"[५१] आचार्य वाजपेयी ने स्वतंत्रता की लालसा और बंधनों का त्याग स्वच्छन्दतावादी कविता के लिए सुझाया है। पुनः वे कहते हैं, रोमेंटिसिज्म में वस्तु का उदात्त होना आवश्यक नहीं। साधारण-से-साधारण वस्तु में भी काव्यात्मक चित्रण बनने की क्षमता है, यह स्वच्छन्दतावादी मत है। रोमेंटिक काव्य-पद्धति में चित्रण के योग्य वस्तुओं की कोई सीमा निर्धारित नहीं है।[५२] इस विवरण में साधारण वस्तु का अंकन स्वच्छन्दतावादी कविता का विषय होता है, सर्वथा समीचीन है। हिन्दी के प्रख्यात आलोचक डॉ० नामवर सिंह का कहना है—"स्वच्छन्दतावाद प्राचीन रूढ़ियों से मुक्ति की आकांक्षा है।"[५३] डॉ० सिंह की व्याख्या में प्राचीन रूढ़ियों से मुक्ति की आकांक्षा को स्वच्छन्दतावाद कहा गया है। इसमें स्वच्छन्दतावाद की मूल प्रवृत्ति विद्रोह का अंकन तो है, लेकिन स्वच्छन्दतावाद इसके अतिरिक्त भी कुछ और है।

कवि-आलोचक डॉ० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरुण' का कथन है—"हिन्दी स्वच्छन्दतावाद या रोमांसवाद के मूलतत्त्व प्रायः वे थे जो अंग्रेजी कविता के रोमांसवाद में प्राप्त होते हैं। अर्थात् रूढ़ियों से मुक्ति, व्यक्तिगत जीवानुभूति, स्वच्छन्द व रमणीय कल्पना, प्रकृति के प्रति गम्भीर प्रेम तथा उसमें चेतन सत्ता का आरोप, अतीत और भविष्य के प्रति लालसा, ललक, बौद्धिकता के स्थान पर कोमल भावना का प्राधान्य, मुक्त छन्द-विधान आदि।"[५४] इस विवरण में स्वच्छन्दतावादी प्रायः सारी प्रवृत्तियाँ आ गई हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र का कथन है—"सामाजिक बंधनों को तोड़कर जीवन में स्वच्छन्द विचरण करने की लालसा ही स्वच्छन्दतावाद है'।"[५५] इसमें केवल सामाजिक बंधनों से विद्रोह की बात उठायी गयी है। मानविकी पारिभाषिक कोश का संपादन करते हुए डॉ० नगेन्द्र ने 'स्वच्छन्दतावाद' को इस प्रकार विश्लेषित किया है—"राष्ट्रीय अतीत तथा मध्ययुग से सम्बद्ध दृश्यों, घटनाओं एवं पात्रों का चित्रण, अमूर्त की अपेक्षा मूर्त की स्वीकृति, प्राकृतिक दृश्यावली तथा तज्जनित प्रबल रागात्मक अद्‌भुत तथा विस्मयोत्पादक व्यापार, आत्मा और परमात्मा, स्वप्न तथा अवचेतन—ये सभी स्वच्छन्दतावादी साहित्य के प्रिय विषय रहे हैं। गीतात्मकता, दिवास्वप्न बहुलता, कल्पना तथा उत्प्रेरणा इस साहित्य के प्रमुख लक्षण हैं।"[५६] डा० नगेन्द्र के इस विवरण में स्वच्छन्दतावादी कविता विद्रोह तथा क्रांति में लिपटी होती है, का आकलन नहीं हो पाया है। परम्परा एवं रूढ़ियों से विद्रोह के साथ-साथ स्वच्छन्दतावादी कवि क्रांति के द्वारा सामाजिक व राशनीतिक व्यवस्था को बदलना चाहता है। एक नयी समाज-व्यवस्था चाहता है। क्रांति के द्वारा स्वच्छन्दतावादी साहित्यकार पूंजीवादी व्यवस्था के स्थान पर समाजवादी-व्यवस्था लाना चाहता है।

डॉ० रामचन्द्र मिश्र का कथन है कि "स्वच्छन्दतावादी काव्य काव्य की विशेष सर्जना है जो कल्पना और आवेग से युक्त परम्परागत विधान और बाह्यांग नियन्त्रण से विमुक्त और मानसिक सरलता तथा अकृत्रिमता से सम्पन्न मानसिक तथा लोकभूमि की भावनाओं से युक्त है।"[५७] डॉ० मिश्र की यह परिभाषा अधिकतर स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का आकलन तो करती है, लेकिन दार्शनिक एवं मनोवैज्ञानिक सन्दर्भ में अपूर्ण है, क्योंकि स्वच्छन्दतावाद चेतन-अचेतन, विषय और विषयी, अन्तः और बाह्य, प्रकृति और मानव तथा दो विरोधी तत्त्वों को मिलाता भी है। इस परिभाषा में विद्वान् लेखक ने इस तरह की कोई बात नहीं उठायी है। इसलिए यह परिभाषा भी स्वच्छन्दतावाद की सीमारेखा को अपने में नहीं समेट पाती। इसलिए अपूर्ण ही कही जायेगी।

पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों की विभिन्न परिभाषाओं की समीक्षा करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर आते हैं कि स्वछन्दतावाद नवीन अनुभूति की भूमि पर पुरानी परम्पराओं और रूढ़ियों से विद्रोह कर, चेतन प्रकृति तथा लोक-जीवन की अनुभूति को वाणी देता है। नये काव्यरूपों, नयी शैलियों को पल्लवित एवं पुष्पित करता है। चेतन और अचेतन, विषय और विषयी, अन्तः और बाह्य, मानव और प्रकृति दो विरोधी तत्त्वों का समन्वय भी करता है तथा इसकी दुनिया पूरी तरह से नई होती है।

इन परिभापाओं एवं विवरणों के आधार पर स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ[५८] निर्धारित की जा सकती हैं—(क) भावगत (ख) शिल्पगत।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(क) भावगत—

१. कल्पना
२. अनुभूति
३. व्यक्तिवाद
४. मानववाद
५. सौन्दर्य
६. प्रेम
७. विस्मय और रहस्यानुभूति
८. विषाद और असन्तोष
९. विद्रोह और नवीनता
१०. लोक-साहित्य और लोक-गीत
११. अतीत प्रेम (विशेषकर मध्ययुग से)
१२. प्रकृति-प्रेम ।

(ख) शिल्पगत—

१. मिथक
२. बिम्ब
३. प्रतीक
४. प्रगीतात्मकता ।

स्वच्छन्दतावादी विरोधी आन्दोलन एक नया ताना-बाना बुनने में असफल रहा। इसके अन्दर पुराना ताना-बाना भी नहीं है और न इसके द्वारा तीसरे ढांचे की ही शुरुआत हुई और न पुराने की ओर प्रत्यावर्तन ही। स्वच्छन्दतावाद के विरोध में विषयीगत होने का जो आरोप आरनाल्ड ने लगाया, जिसे बाद में अक्सर दुहराया गया। इसे मान लिया गया कि वस्तुगत एक अच्छी कविता का श्रेष्ठ गुण है। लेकिन यह विचार अपने-आपमें स्वच्छन्दतावादी है और अंग्रेजी समीक्षा में कॉलरिज के साथ आया। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि स्वच्छन्दतावादी विरोधी आन्दोलन के पास इतने साधन नहीं हैं कि वह एक नयी चीज बन सके, सिवाय पोस्ट-रोमेंटिक आन्दोलन के। इसका प्रथम दौर जो है वह आधुनिक साहित्य में विद्यमान हैं। इसकी चर्चा प्रो० कर्माण्डे एवं अन्य लेखकों के कार्यों में प्रस्तुत हैं। स्वच्छन्दतावादी पैमाने से इसे मापा जा सकता है। तब शायद हम स्वच्छन्दतावाद के गुण इस प्रकार देख सकते हैं कि ग्रीक शिल्पकला में इरादे से कोई नवीन विचार की अभिव्यक्ति नहीं की गयी है, बल्कि उसमें मूल विचार की ओर संकेत है। उसी तरह आधुनिक साहित्य में भी जो प्रवृत्तियाँ स्वच्छन्दतावाद के पश्चात् मिलती हैं, उनमें भी कोई नवीनता नहीं है, परन्तु

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

स्वच्छन्दतावादी मूल विचारधारा के प्रति प्रत्यावर्तन ही है।[५९] लेकिन मेलविल का यह विचार अंग्रेजी कविता के अध्ययन-विश्लेषण के बाद सही नहीं उतरता है। क्योंकि अंग्रेजी कविता में भी बाद के स्वच्छन्दतावादी कवि अपनी चेतना में आधुनिक परिवेश एवं वैज्ञानिकता को घोल रहे थे। फलतः स्वच्छन्दतावादी भाव-बोध एवं शिल्प-तंत्र भी एक नवीन रूप में ढल रहा था।

श्री अरविन्द के अनुसार कविता बौद्धिकता से ऊपर उठकर समग्र अध्यात्म की अभिव्यक्ति है। स्वच्छन्दतावादी कविता इसी समग्रता का एक अंश है। किन्तु, विशुद्ध और वास्तविक स्वच्छन्दतावादी कविता जिसमें केवल जीवन-तत्त्व की अभिव्यक्ति हुई हो और जो विचार-तत्त्व के प्रति निरपेक्ष हो, ऐसी आज संभव नहीं रही। यदि कवि ऐसी रचना करने की चेष्टा करता है तो यह एक मिथ्या प्रदर्शन मात्र होगा, एक विचार-प्रधान प्रदर्शन मात्र होगा और इस प्रकार जो कुछ भी प्रतिभा खर्च की जायेगी, वह स्थायी फल नहीं लानेवाली होगी। जर्मनी और फ्रांस के वर्तमानकालीन स्वच्छन्दतावादी आन्दोलन की विफलता का यही रहस्य है।[६०] आज स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ अपने परिवेश एवं युगधर्म के अनुसार ढल रही हैं। आज का स्वच्छन्दतावादी कवि व साहित्यकार मात्र स्वच्छन्दतावादी नहीं रहा, बल्कि युगधर्म एवं आज की वैज्ञानिक उपलब्धियों के आलोक में कविता में स्वच्छन्द वृत्तियों को उजागर करता है।

प्रस्तुत सन्दर्भ में पाल व्रीन्स का यह कथन उल्लेखनीय है—बाद के स्वच्छन्दतावादी कवि साधारण स्वच्छन्दतावादी नहीं रहे,[६१] इसलिए आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवि व साहित्यकार युगबोध एवं वैचारिकता को अभिव्यक्त करता है। अंग्रेजी साहित्य में रस्किन, रोजेरी, विलियम मौरिस इत्यादि कवियों व साहित्यकारों ने अपनी अनुभूतियों को परिवेश के संघात से प्रसूत भाव-बिन्दुओं द्वारा चित्रित किया है।[६२] वस्तुतः ये साहित्यकार अंग्रेजी साहित्य में बाद के स्वच्छन्दतावादी कवि व साहित्यकार हैं। जान बेली ने डब्ल्यू० एच० आडेन, डब्ल्यू० बी० यीट्स एवं डायलन थामस की कविताओं में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ देखी हैं।[६३]

काव्य का सामाजिक कर्म (सोशल फंक्शन ऑव पोयट्री) नामक अपने निबन्ध में इलियट का कथन है—"सच्चा वास्तविक काव्य केवल बदलती हुई स्थितियों में ही जीवित नहीं रहता, बल्कि उन प्रश्नों के समाप्त हो जाने के बाद भी उसकी स्थिति रहती है, जिसका कविता के पूरे आवेग के साथ सम्बन्ध था।[६४] इस दृष्टि से यह कहना ठीक है कि स्वच्छन्द उत्कृष्ट काव्य-सर्जना कभी भी समाप्त नहीं होती।

यद्यपि यीट्स, इलियट, लॉरेन्स, फौकनर परम्परावादी थे जिन्होंने जीवन में पारम्परिक मूल्यों के ह्रास की निन्दा की, फिर भी वर्तमान परिस्थिति में कल्पना और मूल्यों का पुनः आविष्कार करना चाहिए, इस बात में वे सतत निरत रहे। यह

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अठारहवीं शताब्दी में सुलभ परम्परावादी आलोचनात्मक चेतना और कलात्मक आत्म-बोध के बीच का विरोधाभास है। इस विरोधाभास का एक पक्ष अठारहवीं शताब्दी की परम्परावादी आलोचनात्मक चेतना और कलात्मक आत्मबोध है और दूसरा पक्ष व्यक्तिवादी कल्पना की आश्चर्यजनक शक्तिमत्ता में विश्वास है, जिसके परिणाम हैं आधुनिक काव्य की महती उपलब्धियाँ। आज इस बात का संशय उत्पन्न हो गया है कि हम इस विरोधाभास को भूलते हुए बौद्धिकता में अत्यधिक विश्वास करने लगे हैं।[६५]

कार्ल क्रोबर (Karl Krober) का कहना है कि १९५० से प्रारम्भ होनेवाले दशक के अन्त में स्वच्छन्दतावाद आधुनिक हो गया। मेरी समझ से इस परिवर्तन में मैंने भी थोड़ी सहायता की। क्योंकि मैंने ही बीसवीं शताब्दी के साहित्य और स्वच्छन्दतावादी साहित्य के मध्य सातत्य को प्रोत्साहित किया। उस समय स्वच्छन्दतावादी समीक्षक टी० एस० इलियट के बैबिटरी के विस्तार और नई समीक्षा की रूमानी कविताओं की अन्धाधुन्ध आलोचना का विरोध कर रहे थे। हम सफल हुए। १९६० से आरम्भ होनेवाले दशक के उत्तरार्द्ध तक स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति उठ खड़ी हुई थी, जिसके परिणामस्वरूप उन अट्टालिकाओं में क्रोध के बाघ आ विराजमान हुए थे जिनमें से उपदेश के घोड़े चरागाह में भेज दिये गये थे। १९७० से प्रारम्भ होनेवाले दशक के स्वच्छन्दतावादी साहित्य के अध्ययन की जड़ पूर्वतर दशक की स्वच्छन्दतावाद की आधुनिकता के ऊपर बल देने की प्रवृत्ति पर आधारित है।[६६] इसी क्रम में जॉन बेली का कथन है : "किसी पदार्थ को शब्दों में प्रकट करने के क्रम में अन्तर्दृष्टि और कल्पना का निकट सहयोग होता है। काव्यात्मक अभिव्यक्ति में पदार्थ का तात्त्विक रूप सुरक्षित नहीं रह पाता। अमेरिकी नवस्वच्छन्दतावादी कवि-आलोचक वैलेस स्टीफेन्स के अनुसार कल्पना में उपस्थापित पदार्थ से वास्तविक पदार्थ पृथक् हो चुका होता है। किसी पदार्थ का अमरत्व प्रदान करने के स्थान पर कविता के शब्द उसे अयथार्थ बना देते हैं। यह यथार्थ-विहीनता कवि की उस कृति से उत्पन्न होती है, जिसके अन्तर्गत वह अपने में काल्पनिक पदार्थ को वास्तविक पदार्थ से पृथक् कर देता है। काव्यात्मक अभिव्यंजना आकर हम उस पदार्थ को अब नहीं देख सकते, जिसे आरनोल्ड ने 'पदार्थ का तात्त्विक रूप' में कहा है। किन्तु, पदार्थ का परम्परावादी स्वच्छन्दतावादी सिंहासनारोहण की प्रवृत्ति संभवतः मरी नहीं है।"[६७] आधुनिक स्वच्छन्दतावाद व नवस्वच्छन्दतावाद में यथार्थ का संस्पर्श अपेक्षित हैं। यथार्थ से कटा हुआ, मात्र कल्पना से जुड़ा हुआ काव्य व साहित्य नव स्वच्छन्दतावादी नहीं हो सकता।

पाश्चात्य स्वच्छन्दतावाद में काव्य की अभिव्यंजना प्रमुखतः तीन आयामों में थी— ईश्वर, प्रकृति और मानव। आधुनिक स्वच्छन्दतावाद व नवस्वच्छन्दतावाद में दैवी भावना को हटाया गया, अतिमानवता को मानवरूप में तथा अतिप्राकृतिकता को

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

प्रकृतिरूप में प्रस्तुति दी गई है। इस प्रकार काव्यात्मक अभिव्यंजना-प्रवाह में अब केवल प्रकृति और मानवीय जीवन की झाँकियाँ ही अवशेष रहीं। बौद्धिकता का प्रभाव बढ़ता है। १८वीं शताब्दी के साथ अंग्रेजी कविता में क्रिश्चियन, शैतान, ईश्वर, स्वर्ग और नरक की बातें काव्य में चित्रित मिलती है! स्वच्छन्दतावादी कवि इसे अपने कथ्य एवं अभिव्यंजना-शिल्प में लाते भी हैं, लेकिन नवीन अर्थ में ढूंढ़ते हैं। यहाँ धर्म और ईश्वर को नकारा नहीं गया है, बल्कि उसकी अतिमानवता को हटाकर उसे मानवीय भावनाओं, आकांक्षाओं एवं बौद्धिक अवगति के अधिक निकट लाने का प्रयास किया गया है। नवस्वच्छन्दतावादी चिन्तन में भी धर्म या ईश्वर को नकारा नहीं गया है, न पूरी तरह स्वीकारा ही गया है।

एम० एच० अब्राम्स ने आधुनिक स्वच्छन्दतावाद के तीन रूपों (ईश्वर, प्रकृति और मानव) के स्थान पर दो रूपों (मानव और प्रकृति) में चित्रित देखा है। ये आधुनिक स्वच्छन्दतावाद के लिए दो तत्त्वों की समन्वित साधना को आवश्यक मानते हैं। ये दो तत्त्व हैं—विषय एवं विषयी, अहं एवं शून्य, मानव-मस्तिष्क या चेतना जिसे प्रकृति के साथ जोड़ देते हैं। इस प्रकार आधुनिक स्वच्छन्दतावाद में मानव और प्रकृति एक महत्त्वपूर्ण उपादान हुए। इसी क्रम में एम० एच० अब्राम्स का कहना है कि आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवियों ने सामान्यतया अतिप्राकृतिक तत्त्वों को प्राकृतिक बनाया है और दैवी तत्त्वों को मानवी।[६८] स्वच्छन्दतावादी आन्दोलन के बाद हिन्दी-काव्य व साहित्य के क्षेत्रों में बहुत सी नयी बातें आईं। यथार्थवादी चिन्तन इतना गहरा हो गया कि स्वच्छन्दतावाद को नवस्वच्छन्दतावाद कहना आवश्यक हो गया। वस्तुतः कलात्मक जगत् में 'यथार्थ' का बोझ इतना बढ़ गया कि यथार्थता की अभिव्यंजना के फलस्वरूप स्वच्छन्दतावाद को नवस्वच्छन्दतावाद नाम देना पड़ा। यथार्थता समकालीनता की अभिव्यक्ति में सहायक बनती है। यही नवस्वच्छन्दतावादी काव्य-कला को गतिशील बनाती है और यही इसकी अस्मिता है।

माइकेल जी० कूक (Michael G. Cooke) का कथन है कि नवस्वच्छन्दतावाद आधुनिक विश्व निन्दा का आमूल-चूल परिवर्तन है। आज वे स्वच्छन्दतावादी कवि आधुनिक चेतना के प्रतिष्ठापक बन गये हैं। समसामयिक संसार के प्रथम गवेषक तथा पताकाधारी।[६९]

टी० एस० इलियट के साथ एजरा पाउन्ड, डब्ल्यू० एच० आडेन, सी० डी० लुइस, स्टीफेन स्पेन्डर, लुई मैकेनीश आदि नाम लिये जा सकते हैं, जिन्होंने नये अंग्रेजी काव्य को समृद्ध किया और आधुनिकता को समर्थ बनाया है। टी० ई० हुल्म (T. E Hulme) ने स्वच्छन्दतावाद का विरोध किया और साथ ही स्वच्छन्दतावाद का अस्त भी मान लेता है और दूसरी ओर क्लासिक और रोमांटिक पद्धतियों के चक्र की बातें भी करता है।[७०] इनका चिन्तन बिम्बवाद से जुड़ा हुआ है। ऐसी स्थिति में यह कहना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ठीक है कि स्वच्छन्दतावादी स्थितियाँ आधुनिक कविताओं में विद्यमान हैं। ये स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ जैसे बिम्ब, प्रतीक, मिथक, प्रगीत, फैन्टेसी, अस्तित्ववाद, अतियथार्थवाद, सामाजिक यथार्थवाद आदि वस्तुतः यथार्थ की अभिव्यक्तियाँ ही हैं। ऐसा लगता है कि परम्परावादी विचारधारा तथा यथार्थवाद के प्रहार से यूरोप में स्वच्छन्दतावादी चेतना समाप्त हो गई, लेकिन स्थितियाँ एवं परिवेश संकेत देता है कि वे युग के अनुरूप नये रूप में चित्रित हैं। वस्तुतः यह कहा जा सकता है कि स्वच्छन्दतावाद आज एक नये रूप में हमारे सामने उपस्थित है। प्रत्येक देश-काल की काव्य-कला, कृतियों में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ उभरती रहती हैं, उसे एकदम समाप्त या मृत नहीं समझना चाहिए।

आधुनिक कविता मूलतः स्वच्छन्दतावादी काव्य-परम्परा का अनुसरण कर रही है। अनुभूति की ईमानदारी स्वच्छन्दतावादी कविता की मूल चेतना है। आधुनिक कविता में अनुभूति की ईमानदारी की अभिव्यंजना कवियों की एक विशेष पहचान है। प्रत्येक कवि अपनी अनुभूति को ईमानदारी से अभिव्यंजित कर रहा है। रचना-प्रक्रिया की दृष्टि से स्वच्छन्दतावादी चेतना कवि व साहित्यकार की 'स्वीय' चेतना द्वारा स्वयं ही के चिन्तन-क्रिया की प्रस्तुति है। इस प्रकार इसका स्वरूप वर्तुल होता है। आधुनिक कवि व साहित्यकार भी 'स्वीय' चेतना पर बल देता है। अतः आज का काव्य व साहित्य भी स्वच्छन्दतावाद की तरह गतिशील है, जिसके मूल में रचनाकार के निजी स्वर की वैयक्तिकता पर बल है। इस प्रकार 'स्व' की आन्तरिक गवेषणा और वैयक्तिक सर्जनशीलता भी आधुनिक काव्य व साहित्य ने स्वच्छन्दतावाद से प्राप्त की है।

वस्तुतः आधुनिक हिन्दी कविता स्वच्छन्दतावादी दौर के पश्चात् अपना नूतन रूप निर्मित कर रही है। इस रूप-निर्माण की प्रक्रिया में कविता अपने श्रृंगार-प्रसाधन में कुछ नवीनता भी लाती है। भावबोध एवं रचना-शिल्प में बदलाव आया। कविता में युग-सापेक्षता एवं यथार्थता का स्वर मुखरित हुआ। कविता में रोमांस के साथ यथार्थ का मिलाप अपनी सहज प्रक्रिया में होने से कवियों का रचना-संसार नवीन दिशा की ओर गतिशील होता है। डॉ० नामवर सिंह का कथन महत्त्वपूर्ण है—"चौंकना न चाहिए यदि यह कहा जाय कि आज हिन्दी के अधिकांश प्रेमियों के संसार 'रोमांटिक' हैं—साधारण पाठक तो रोमैंटिक-संस्कार से बँधे हैं ही, अनेक नये कवि-आलोचक भी जाने-अनजाने कहीं-न-कहीं रोमैंटिक असर में हैं।"[७१] प्रस्तुत परिप्रेक्ष्य में मुक्तिबोध का कथन है—"पन्त, प्रसाद, निराला और वर्मा का रोमैंटिक-युग समाप्त नहीं है, केवल उसकी दिशा में थोड़ा-सा परिवर्तन है।"[७२] मुक्तिबोध यह भी कहते हैं—"दूसरे सप्तक वाले अपनी नवीन भावनाएँ लेकर प्रयोगवाद में आए। 'दूसरा-सप्तक' रोमांटिक परिधान की दृष्टि से अधिक मनोरम है। रोमांटिक भावनाएँ जीवन की यथार्थता है।"[७३] रोमांटिक भावनाओं को जीवन की यथार्थता से जोड़कर मुक्तिबोध इसकी सीमारेखा को विस्तार

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

देते हैं। वस्तुतः यह सत्य है कि यथार्थता की रेखाएँ रोमांटिक भावनाओं के साथ उभरती हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वच्छन्दतावाद का पतन या समापन नहीं होता है, बल्कि, स्वच्छन्दतावाद का विकास युगानुरूप आज भी हो रहा है। यह सत्य है कि जीवन में यथार्थ की रेखाएँ रोमांटिक भावनाओं के साथ उभरती रहती हैं और इस रोमांटिक प्रवाह को 'नवस्वच्छन्दतावाद' के नाम से सम्बोधित किया गया है।

"नयी आलोचनात्मक प्रणाली ज्ञान-विधि के ऊपर बल देती है। साहित्यिक कृतियों के मूल और अर्थ समालोचक के उस प्रयास से आविर्भूत होते हैं, जिसके अन्तर्गत अपने और विषय अर्थात् कविता और उपन्यास के मध्य सार्थक सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है। यही स्वच्छन्दतावादी प्रणाली है।"[७४] कविता जब विचारधारा की अभिव्यंजना देती है तो कवि को मिथक, बिम्ब, प्रतीक एवं प्रगीतात्मकता का सहारा लेना पड़ता है। आज की कविता दुरूह होती जा रही है। फलस्वरूप कवि अपनी ज्ञान-विज्ञान की अनुभूतियों को संश्लिष्ट रूप में अभिव्यंजित करता है और इस अभिव्यंजना में उसकी आत्मपरकता एवं वैयक्तिकता ही होती है, जो अपने आदर्शों एवं अनुभवों के अनुरूप ढाल देता है। २०वीं शताब्दी का काव्य मिथकीय चेतना, बिम्बों, प्रतीकों एवं प्रगीतों का काव्य है। इन शिल्पों की रचना में कवि की आत्मिक भावनाएँ ही प्रमुख होती हैं। वस्तुतः कवि अपनी विचारधारा को अपनी आत्मिक चेतना में मिलाकर उसकी प्रस्तुति करता है। यही कारण है कि आज के स्वच्छन्दतावादी अर्थात् नव-स्वच्छन्दतावादी कवियों में शिल्पपक्ष की अभिव्यंजना में वैयक्तिकता या आत्मपरकता स्वस्थ रूप में दिखाई पड़ती है। शिल्प-तंत्र में नवस्वच्छन्दतावादी कवि हर बिन्दु पर वैयक्तिकता, आत्मपरकता की स्थिति में रहता है। यहाँ स्वच्छन्दतावादी भावबोध की आत्मपरकता एवं वैयक्तिकता नवस्वच्छन्दतावादी काव्य-प्रवाह में शिल्पों की सर्जना के रूप में दिखाई देती हैं।

आधुनिक कविता और कला घोर व्यक्तिवादी बन गयी है। आज सभी कवि या लेखक एक ही विचारधारा के नहीं हैं। इनमें कुछ प्रगतिशील कवि या लेखक भी हुए हैं, जिन्होंने सामाजिक क्रांति और परिवर्तन का संदेश दिया है। वस्तुतः यह संदेश भी कल्पनात्मक एवं भावनात्मक है, जो स्वच्छन्दतावादी दृष्टिकोण का परिचायक है।

आज की कविता का धरातल मनोवैज्ञानिक है, जो इसे स्वच्छन्दतावादी बनाने में सहायक बनता है। 'उर्वशी' की भूमिका में डॉ० रामधारी सिंह 'दिनकर' कविता की परिभाषा देते हैं—"कविता की भूमि केवल दर्द को जानती है, बेचैनी को जानती है, केवल वासना की लहर और रुधिर के उत्ताप को पहचानती है।[७५] 'दिनकर' की कविता की इस परिभाषा के आधार पर उत्कृष्ट कविता निश्चित रूप से वैयक्तिकता से सिक्त होती है—का बोध होता है। कविता के लिए जिन विशेषणों का

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यहाँ प्रयोग हुआ है, वे सबके सब कवि के आत्म-बोध से जुड़े हुए हैं। आत्म-बोध से पगी कविता आत्मपरक ही होगी और उस बिन्दु पर कविता स्वच्छन्दतावादी हो जाती है। मनोविज्ञान के अनुसार कविता का जन्म अचेतन से होता है। लेकिन उसका कुछ अंश चेतन-मस्तिष्क से भी जुड़ा होता है। अचेतन की स्थिति वैयक्तिक एवं सामाजिक दोनों ही होती है। इस मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण में वैयक्तिकता एवं सामाजिकता का द्वन्द्व प्रतिपाद्य है। चेतन एवं अचेतन का विलयन वस्तुतः इन विचारधाराओं को भी नवस्वच्छन्दतावादी धरातल पर पहुँचा देता है।

आज का कवि आधुनिक कविता में वैयक्तिकता व आत्मपरकता, जीवन का वैयक्तिक निरीक्षण तथा विज्ञान की अभ्यासजन्य भूमिका—इन तीनों की समन्वित चेतना की अभिव्यंजना में नवीनता एवं मौलिकता को लिये हुए होती है। फलतः नवीनता एवं मौलिकता की समृद्धि के लिए कवि सर्जनात्मक एवं सक्रिय कल्पना से विम्ब, प्रतीक, फैन्टेसी, आयरनी एवं मिथकीय चेतना के प्रस्तुतीकरण में स्वच्छन्द धरातल का निर्माण करता है। कथ्य में समाजीकरण एवं सामाजिक चेतना से आक्रांत रहने के कारण आज का साहित्यकार अपने सर्जन-शिल्प में वैयक्तिकता एवं आत्मपरकता को पिरो देता है। वस्तुतः छायावादोत्तर कविता का एक नवीन दिशा में प्रयाण, स्वच्छन्दतावाद का एक नवीन आयाम है, नवचेतना का बोधक है। इसी बिन्दु पर कवि या साहित्यकार मात्र स्वच्छन्दतावादी नहीं होता, वरन् समसामयिक चेतना व वर्तमान आत्मिक अनुभूतियों से जुड़ भी जाता है। "जीवन का रोमांटिक दृष्टिकोण यह है कि मनुष्य अनिवार्य रूप से उन शक्तियों का आगार है जिनसे नूतन सृष्टियाँ रची जाती हैं, अतएव उसकी प्रत्येक इच्छा को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मिलनी चाहिए। क्रान्तियों का जन्म मनुष्य के इसी आत्मविश्वास से होता है, अतएव सभी क्रांतियाँ स्वभाव से रोमांटिक होती हैं और इसलिए साहित्य का प्रत्येक रोमांटिक आन्दोलन स्वयं वायवीयता में मग्न रहने पर भी क्रांतिकारी आन्दोलनों के प्रति सहानुभूतिशील रहता आया है। अंग्रेजी के स्वच्छन्दतावादी कवि फ्रांसीसी एवं औद्योगिक राज्य-क्रान्ति के प्रति सहानुभूतिशील थे और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवि भी भारतवर्ष में क्रान्ति की तैयारी को बड़े ही उत्साह से देखते थे।"[७६] चेतना के लिए क्रान्ति एक आवश्यक उपादान है। कवि अपनी विचारधारा को क्रांति के द्वारा प्रस्तुत करना चाहता है। अपने आदर्शों की स्थापना के लिए क्रान्ति करता है, और क्रांति के बाद अपने आदर्शों को स्थापित करना चाहता है।

हमारा संसार अब भी स्वच्छन्दतावादियों का संसार इस अर्थ में है कि यह व्यवस्था-विहीन प्रतीत होता है तथा कवि की सत्ता की अव्यवस्था के ऊपर यह दृष्टिकोण किन्हीं महत्त्वपूर्ण अंशों में भिन्न भी है। उदाहरण के लिए (१) नागरिक जीवन के विकास में जिसके कारण सम्बन्ध-विच्छेद समूह में व्यक्ति का अकेलापन, सर्वविदित हो चुका है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

(२) भौतिक और वैज्ञानिक विकासों के सामने आस्था का पतन जो भाग्य का नियामक है। (३) मनुष्य की संभावित महत्ता की आशावादिता से उसके एक समन्वित जगत् के बनाने की संभावना के प्रति निराशा से है।[७७] टी० एस० इलियट स्वच्छन्दतावादी विरोधी होते हुए भी स्वच्छन्दतावादी दृष्टिकोण के साथ हैं, क्योंकि संवेग और अनुभूति पर ऐकान्तिक रूप से जोर देने का मतलब रोमांटिक दृष्टिकोण पर बल देना है। इलियट स्वच्छन्दतावादी विरोधी होते हुए भी इससे बच नहीं पाये। टी० एस० इलियट काव्य की समग्रता पर जोर देते हैं जो भाषिक होती है। रूपकों, बिम्बों आदि का महत्त्व काव्य की आन्तरिक अनिवार्यता के रूप में ही है। ऐसी स्थिति में वह रोमांटिक भी है। इलियट कविता में संवेग या अनुभूति की ठोस अभिव्यक्ति स्वीकारते हैं। इस स्वीकार में ही वे स्वच्छन्दतावादी चेतना को आज की कविता में उसकी उपस्थिति स्वीकार भी कर लेते हैं।

हावर्ड मुमफोर्ड जोन्स का कथन है कि यथार्थ या वास्तविकता की शुद्धि या रक्षा में सम्भवतः सारे सिद्धान्त विषयिगत होते हैं।[७८] इसलिए जहाँ ऐसी स्थिति काव्य-कलात्मक सर्जन में उभरती है, वहाँ पर कलाकार व कवि की चेतना स्वच्छन्दतावादी होती है। यथार्थ के चित्र को भी महान् कवि या लेखक अपने-अपने ढंग से प्रस्तुत करता है। प्रस्तुतीकरण की प्रक्रिया अलग-अलग होती है और इस बिन्दु पर हर कवि या कलाकार स्वच्छन्दतावादी होता है। स्वच्छन्दतावादी कविता सदैव विकसन की स्थिति में होती है, जो कभी पूर्णता को प्राप्त नहीं होती।[७९] प्रो० लवज्जाय का कथन इस सन्दर्भ में स्पष्ट है कि वास्तव में स्वच्छन्दतावाद को एक निश्चित इकाई या अखंडनीय वस्तु मानना एक गलत दृष्टिकोण है—यह शब्द ही भ्रामक है और इसमें अनेक काव्य-दृष्टियाँ समाहित हैं।[८०] आर० ए० फोक्स का कहना है कि स्वच्छन्दतावादी कविता की आत्मपरकता इसमें निहित है कि इसमें कवि अपनी व्यवस्था का सृजन करता है। कार्य करने के लिए उसके सामने औपचारिक नियम नहीं होते तथा अपनी मौलिकता के लिए प्रशंसा भी प्राप्त कर सकता है।[८१]

परिणाम अच्छा हो या बुरा, आधुनिक जगत् स्वच्छन्दतावादी आन्दोलन का ही सामान्यतः परिणाम है। युंग के पहले आरनोल्ड ने इस बात को स्वीकार किया है कि इस आन्दोलन की जानकारी के ऊपर आधुनिकवाद का भविष्य निर्भर है। जब आधुनिकवाद का सार्वभौम स्वरूप जान लिया जाता है तो यह अन्तर्ज्ञान की ओर उन्मुख होता है, जिसे स्वच्छन्दतावाद ने गवेषणा में प्रकट किया, वैचारिक धरातल बढ़ा है। आधुनिक साहित्यकार पुरातन कथा-प्रियता की जगह मनोवैज्ञानिक अधिक हो गया है। और इस बिन्दु पर कवि या लेखक अपने सर्जन में स्वच्छन्दतावादी ही रहता है। स्वच्छन्द रुझान हर ऊँची कला या कलाकार की अपनी विशेषता है। कला स्वच्छन्द वृत्ति से कटकर कलात्मक उत्कृष्टता को नहीं ला सकती। सर्जनात्मक एवं सक्रिय कल्पना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कला को जन्म देती है। इसके अभाव में कला उभार की स्थिति में नहीं आ सकती। कम्युनिज्म भी अपने-आपमें एक प्रकार की स्वच्छन्दतावादी तरंग है, जिसके द्वारा एक कल्पित या आदर्श संसार का स्वप्न देखा जाता है। तथापि इसमें एक ऐसे समाज की कल्पना की जाती है, जो अस्तित्व में नहीं है। उसकी सम्भावनाओं को कवि कल्पना की आँखों से देखता है। देखने की यह कला और उस समाज में नव-मानव की परिकल्पना भी स्वच्छन्दतावादी चेतना का एक रूप है। प्रेम से मनुष्य वचित नहीं रह सकता, सौन्दर्य के प्रति मानवीय आकर्षण तो होता ही है। क्रांन्ति के द्वारा कवि अपनी दुनिया को परिर्वतित करना चाहता है। क्रांति और क्रांतिकारी वैचारिकता के मूल में भविष्य का एक स्वप्न होता है। भविष्य के स्वप्न के द्वारा हम क्षितिज के उस पार भी देखते हैं। यह काम कवि व साहित्यकार स्वछन्दतावादी दृष्टि से ही कर पाता है। स्वच्छन्दतावादी चेतना के अभाव में कवि व साहित्यकार ऐसा नहीं कर सकता। भविष्य के स्वप्न के सन्दर्भ में लेनिन ने कहा है—"We must dream" भविष्य के स्वप्न की अभिव्यंजना साहित्यकार स्वच्छन्द वृत्ति के द्वारा ही कर पाता है। वस्तुतः कवि साहित्यकार स्वच्छन्दतावादी चेतना को अभिव्यंजित करने के लिए निरन्तर बाध्य होता है। मौलिक, नवीन, अनोखी एवं मीमांसात्मक कलात्मक सर्जनात्मक साधना की स्थिति में कवि व साहित्यकार को स्वच्छन्दतावादी चेतना से काम लेना पड़ता है। वस्तुतः स्वच्छन्द चेतना के अभाव में मौलिक, अनोखी, नवीन एवं मीमांसात्मक सर्जना सम्भव नहीं है। जहाँ साहित्यकार मौलिक, अनोखी, नवीन, एवं मीमांसात्मक सर्जना की साधना की प्रक्रिया में होता है, उस बिन्दु पर वह स्वच्छन्दतावादी होता है। स्वच्छन्द वृत्ति से महान् कवि व साहित्यकार कट नहीं सकता है।

सामान्यतया लोग इस तथ्य से परिचित नहीं हैं कि स्वच्छन्दतावादी चेतना बिम्ब-विधान, क्रियाशक्ति एवं बौद्धिकता से समन्वित अनुभूति स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति को बनाती है। कवि लोग उचके होकर और असंयमित होकर नहीं सोचते और अनुभव करते। वस्तुतः कविता समग्रता की ही अभिव्यंजना है। इसका परिणाम यह होता है कि कविता कुछ क्लिष्ट होने लगती है। अंग्रेजी की १८वीं शताब्दी की कविता एवं हिन्दी की द्विवेदी-युगीन तक की कविता समझने में आसान है। कथ्य एवं अनुभूति भी स्पष्ट है। लेकिन जब विचार और अनुभूति एकीभूत हो जाते हैं तो काव्य-प्रक्रिया क्लिष्ट होने लगती है। तब केवल कथन मात्र ही नहीं होता, बल्कि संश्लिष्ट 'प्रतीक' के द्वारा हम अनुभूति में स्वतः डाल दिये जाते हैं। वहाँ हमें संवेग ही नहीं मिलता, बल्कि कवि के निजी संसार के रहस्य के सम्बन्ध में स्वानुभूति-अनुभव भी मिलता है और सम्भवतः अपना स्व ही। स्वच्छन्दतावाद में रहस्य एवं जिज्ञासा-भाव एक सामान्य तत्त्व है, जिसकी चर्चा अधिकांश आलोचकों ने की है। रहस्य या जिज्ञासा-भाव में कवि अतींत या भविष्य के आदर्शों को स्वच्छन्दतावादी ढलाव करता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

देवी-देवताओं की शक्ति की तरह कला की प्रारम्भिक एवं आदिम सहज प्रकृति या संश्लेषण जो यथार्थ को चित्रित करने का यथासम्भव प्रयास करती है, वही सदैव 'रहस्य' की स्थिति होती है। जहाँ स्वच्छन्दतावादी चेतना की प्राप्ति होती है, वहीं रहस्य-जिज्ञासा-भाव की भी और जहाँ कहीं भी रहस्य-जिज्ञासा-भाव की स्थिति है, वहाँ 'प्रतीक' मिलेगा। केवल 'प्रतीक' ही रहस्य एवं जिज्ञासा-भाव को स्पष्ट कर सकता है। 'प्रतीकीकरण' बीसवीं शताब्दी की कविता की केन्द्रीय प्रवृत्ति है इसलिए आज की कविता कवि-मन की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति है। प्रतीकात्मक अभिव्यंजना के रूप में आज स्वच्छन्दतावाद एक नया आयाम लेता है। वस्तुतः प्रतीकात्मक अभिव्यंजना स्वच्छन्दतावादी होती है और इसीलिए प्रत्येक युग में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति उभरती रहती है। कलात्मक अभिव्यंजना के दूसरे रूपों की अपेक्षा 'प्रतीक' में यथार्थ को ग्रहण करने की शक्ति अधिक होती है। कवि मानव अनुभव में समागत आत्यन्तिक और अनिर्वचनीय तत्त्व की अभिव्यक्ति 'प्रकृति' के माध्यम से ही कर सकता है। आज का युग यथार्थवादी चेतना का युग है। इसलिए आज के अभिव्यंजना शिल्प में कवि 'प्रतीक' का प्रयोग प्रचुर मात्रा में करता है। 'प्रतीक' कवि की आत्मिक अभि-व्यंजना होती है। फ्रांस में प्रतीकवादी आन्दोलन ने स्वच्छन्तदावादी समीक्षा के तत्त्व को फिर से ग्रहण किया और बीसवीं शताब्दी में प्रेषित किया।[८२] मुक्तिबोध का कथन है कि हम प्रतीकों के द्वारा अपने-आपको प्रकट करते हैं।[८३]

स्वच्छन्दतावाद के बारे में प्रायः कहा जाता है कि इसमें स्वतंत्रता का एक नया बोध होता है। स्वतंत्रता के इस नये बोध के अन्तर्गत कथ्य की स्वतंत्रता रहती है, चाहे वह राजनीतिक, व्यक्तिगत, धार्मिक अथवा किसी भी प्रकार की क्यों न हो, जिसके अन्तर्गत साहित्यिक संरचना की स्वतंत्रता विधा का एक नया रूप अनावृत मती होना है। इसका तात्पर्य है कि कवि के गहरे व्यक्तिगत ढंग में संवेगों की अभिव्यक्ति की स्वतं-त्रता भी आती है। किन्तु एक स्वतंत्रता जिसकी ओर सामान्यतया लोगों की दृष्टि नहीं गई है—'प्रतीकात्मक' अनुभवजन्य स्वतंत्रता। यह स्वतंत्रता पाठकों को कवि के द्वारा दी जाती है। क्योंकि हम अनुभव में सीधे डाल दिये जाते हैं, न कि केवल उसके बारे में कह दिये जाते हैं जैसा कि रूपक आदि में होता है। हमें एकदम स्वतंत्र छोड़ दिया जाता है, संभवतः आत्मान्वेषण के लिए और यह कोई छोटी-मोटी अभिप्राप्ति नहीं है। लेकिन जहाँ एक ओर 'प्रतीकात्मक' स्वच्छन्दतावादी कविता हमें स्वतन्त्रता का वरदान देती है, वहाँ यह उसके लिए हमसे मूल्य भी वसूल लेती है। यह मूल्य रहस्यात्मक ढंग से रहने के लिए स्वीय इच्छा का समर्पण है और ये रहस्य हैं— ज्ञात और अज्ञात के, शान्त और अनन्त के, अपने गहनतम स्व के तथा स्व-इतर के भी। अन्ततोगत्वा 'प्रतीक' कवि की तरह से व्यक्ति को मानवीय रहस्यों का सामना करने के लिए सुन्दर के साथ भयंकर स्वतन्त्रता भी देती है। 'प्रतीकात्मक अभिव्यंजना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी चेतना का ही स्पन्दन है, स्वच्छन्दतावाद न तो अकस्मात् पैदा होता है और न विलुप्त ही होता है। विगत कतिपय दशकों से हम देखते हैं कि जिसे हम स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति कहते हैं वे न्यूनाधिक एक तत्त्व हैं, प्रत्येक काल और प्रत्येक कलाकृति का।

स्वच्छन्दतावाद के सम्पूर्ण अध्ययन के बाद हम एक सामान्य निर्णय पर पहुँचते हैं कि स्वच्छन्दतावाद के अन्दर दो विरोधी तत्त्वों में समन्वय, सर्जनात्मक एवं सक्रिय कल्पना, बिम्ब, प्रतीक, मिथक, प्रगीतात्मकता एवं स्वतन्त्रता का एक नया बोध एवं चेतन प्रकृति की व्याप्तता मिलती है। इसमें विषय एवं विषयि, स्वयं और दुनिया, विद्रोह और क्रांति, चेतन और अचेतन, वैयक्तिकता एवं सामाजिकता की दूरी समाप्त हो जाती है। ये ही अद्यतन स्वच्छन्दतावादी चेतना की मूलभूत प्रवृत्तियाँ हैं। स्वच्छन्दतावाद में विचार और अनुभूति का सुन्दर समन्वय होता है। मूलतः जहाँ दो विरोधी तत्त्व मिलते हैं, वही कल्पना है, वही स्वच्छन्दतावादी चेतना का विस्तार है, फैलाव है। हम कह सकते हैं कि स्वच्छन्दतावाद मानवीय अनुभूतियों तथा मानवीयता का दर्पण है। वस्तुतः नवस्वच्छन्दतावादी चेतना में प्रेम, सौन्दर्य एवं क्रांति की त्रिधारा प्रवहमान है। निम्न साहित्यिक स्तर में भी हम स्वच्छन्दतावाद के अन्दर एकता देखते हैं—पुनर्जागरण एवं रहस्य-भावना, प्राचीन रोमांस लोकगीत एवं मध्ययुगीन रुझान। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि स्वच्छन्दतावाद चेतना की शाब्दिक परिभाषा हमें भ्रमित करेगी। हम सिर्फ इंगित कर सकते हैं कि स्वच्छदन्ता क्या है? जिस प्रकार हम लाल रंग को इंगित करते हैं।

सदर्भ

१. डॉ० रामधारी सिंह 'दिनकर' : शुद्ध कविता की खोज, पृ० २९, ३०, ३५, ३६।
२. डॉ० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल : आधुनिक कविता में प्रेम और सौन्दर्य, पृ० ३१८-१९।
३. The Encyclopaedia Americana, 1829, Vol. XXIII, p. 655.
४. नामवर सिंह (सं०) आलोचना, पूर्णांक ४०, अक्टूबर-दिसम्बर १९६७ (संवाद रोमाण्टिक बनाम आधुनिक वक्तव्य—डॉ० रामविलास शर्मा) पृ० ६।
५. शुद्ध कविता की खोज, पृ० ३१।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

६. Northrop Frye (Ed.) Romanticism Reconsidered, pp. 113-14.
७. M. H. Abrams : The Mirror and the Lamp.
८. L. R. Furst : Romanticism in Perspective, New York, 1969, p. 23.
९. T. E. Hulme : Speculations, 1936, p. 118.
१०. डॉ० विक्रमादित्य राय : वर्ड्‌सवर्थ और कॉलरिज समीक्षा-सिद्धान्त, पृ० २७।
११. डॉ० रामधारी सिंह 'दिनकर' : चक्रवाल की भूमिका, पृ० १५।
१२. "It is important to remember that the struggle between classicism and romanticism also exists inside each mind. And it is from this very struggle that the work is born." P. William J. Handy Max Westbrook (Ed.) : Twentieth Century Criticism, p. 423.
१३. नरोत्तम नागर (अनु०) : दर्शन साहित्य और आलोचना, पृ० १०५।
१४. T. S. Eliot : Selected Prose (Penguin, 1953), p. 31.
१५. A. E. Powell : Romantic Theory of Poetry, London 1926, p.2.
१६. "All the great writer's were romantic in their day." L. R. Furst : ROmanticism in Perspective, p. 317.
१७. "The Romantic poetry is not only a type of Poetry, but also an element of poetry." वही
१८. Sri Aurobindo : The Future Poetry, Vol. 9, p. 34.
१९. डॉ० नगेन्द्र : साप्ताहिक हिन्दुस्तान (१० मार्च, १९६८), पृ० ५०।
२०. आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी : धर्मयुग (६ अगस्त, १९६७), पृ० १९।
२१. गजानन माधव मुक्तिबोध : नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ० १०९।
२२. Rene Wellek : A History of Modern Criticism (1750-1950), p. 13.
२३. Northrop Frye (Ed.) : Romanticism Reconsidered, p. 113.
२४. Rene Wellek : Concepts of Criticism, p. 205.
२५. Northrop Frye (Ed.) : Romanticism Reconsidered, p. 128.
२६. वही, पृ० १२८।
२७. Rene Wellek : Concepts of Criticism, p. 213.
२८. वही, पृ० २१७।
२९. वही, ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

३०. "What is called romanticism in England and on the continent is not the literal vision of the mystics but the concern for the reconciliation of subject and object, man and nature, consciousness and unconsciousness to which we have returned several times." वही, पृ० २०२।

३१. Shiv Kumar (Ed.) : British RomanticPoets, Recent Revaluations, p. 11.

३२. "I must create a system or la enslav'd by another man's. I will not reason and compare : my business is to create." C. M. Bowra : The Romantic Imagination, p. 23.

३३. Edited by Northrop Frye (Ed.) : Romanticism Reconsidered, p. 13.

३४. वही, पृ० १२३।

३५. वही, पृ० ११३।

३६. "But the intensity slowly came to be expressed in a new way. new modes of self–identification and self–expression were invented, and this revolution in the concept of the ego is babic to any theory of romanticism."—Revolution and Romanticism, p. 5.

३७. And further : "Life is where man is and where man is, there you will find romanticism."
—A. Ovcharenko : Socialist Realism and the Modern Literary Process, p. 151-52.

३८. वही, पृ० १५३।

३९. "Each student of romanticism names some one facet of it as the basic ; the confrontation of dream and reality, the affirmation and representation of an ideal, subjectivism, individualism, the 'principle of re-creation' in the depiction of reality, the rejection of outmoded artistic forms, the search for the picturesque, and so on. And these are indeed all facet of romanticism." वही पृ० १५५।

४०. M. H. Abrams : Natural Supernaturalism, p. 429.

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

४१. Culture and Society, p. 56.
४२. M. H. Abrams : Natural Supernaturalism, p. 429.
४३. वही, पृ० ४४३-४४।
४४. M. H. Abrams : The English Romantic Poets, p. 7
४५. M. H. Abrams : Natural Supernaturalism, p. 461
४६. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० ६२८।
४७. 'आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ', पृ० १३-१४।
४८. डॉ० देवराज उपाध्याय : रोमांटिक साहित्यशास्त्र (भूमिका, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी), पृ० १।
४९. वही, पृ० ३, ५, ६।
५०. वही, पृ० ३, ५, ६।
५१. आधुनिक साहित्य, पृ० ४३९।
५२. वही, पृ० ४४३।
५३. छायावाद, पृ० १५।
५४. आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य, पृ० ३१८-१९।
५५. हिन्दी का समसामयिक साहित्य, पृ० ५४।
५६. डॉ० नगेन्द्र : मानविकी पारिभाषिक कोश (साहित्य खण्ड), पृ० २२६-२७।
५७. पं० श्रीधर पाठक तथा हिन्दी का पूर्व स्वच्छन्दतावादी काव्य, पृ० ४६।
५८. स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों के विस्तृत विश्लेषण के लिए द्रष्टव्य है—डॉ० अजब सिंह "आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ, पृ० १४-३९ (विश्व-विद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, १९७५)।
५९. "Then, perhaps, we may see in Romanticism also the quality that Melvila found in Greek architecture.

Not innovating wilfulness,
But reference for the Arche type."

—Northrop Frye (Ed.) : Romanticism Reconsidered, p. 25.
६०. Sri Aurobindo : The Future Poetry, Vol. 9, p. 192
६१. "Romantics need not simply romantics."—Studies in Romanticism, Vol. 16, No. 4, Fall 1977, p. 489.
६२. Graham Hough : The Last Romantics, pp. 1–213
६३. The Romantic Survival, Pp. 77-229.
६४. T. S. Eliot : On Poetry and Poets, p. 17.
६५. Stephen Spender : The Struggle of the Modern, p. 23.

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

६६. Studies in Romanticism, Vol. 21, No. 4, Winter 1982, p. 557.
६७. वही, पृ० ५५४-५५।
६८. वही, पृ० ६१४।
६९ Sic transit ignominia Mundi : "Today the same romantics have become the benchmark of the modern spirit, the first explorers and standard bearers of the contemporary world."
—Studies in Romanticism, Vol. 21, No. 4, winter 1982, p. 569.
७०. Speculations, p. 136.
७१. संपादक मण्डल, अकविता : स्थितियाँ और अन्तर्धाराएँ, पृ० १३।
७२. नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ० ६६।
७३. वही, पृ० ६२।
७४. Studies in Romanticism, Vol. 12, No. 4, Fall 1973, p. 779.
७५. उर्वशी, भूमिका, पृ० ज।
७६. डॉ० रामधारी सिंह 'दिनकर' : चक्रवाल (भूमिका) पृ० ११।
७७. R. A. Foakes : The Romantic Assertion, p. 15.
७८. "Probably all theory is a subjective correction of or protest against Reality."—Revolution and Romanticism, p. 395.
७९. "The Romantic type of poetry is still becoming indeed, its peculiar essence is that it is always becoming and that it can never be completed."–Studies in Romanticism, Vol. 17, No. 3, Summer 1978, p. 314.
८०. A. O. Lovejoy : Essay in the History of Ideas, p. 146.
८१. The Romantic Assertion, p. 13.
८२. Rene Wellek : A History of Modern Criticism, 1750-1950, p. 340.
८३. नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ० ११९।

३

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

२

प्रेरक तत्त्व

देश में राजनीतिक आन्दोलन और आर्थिक संघर्ष इतने उग्र हो गये थे कि सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं से अपने को अलग करना असम्भव था। महायुद्धों की चपेट से आर्थिक वैषम्य ने देश के प्रत्येक वर्ग की जनता के मन में आमूल परिवर्तन की आकांक्षा पैदा की। साहित्य भी सामाजिक उत्पादन की एक कोटि है, अतः साहित्यकार का सामाजिक विषमताओं और नवीन राजनीतिक चेतना के लिए प्रवृत्त होना, एक मुख्य अन्तर्विरोध बनकर सामने आया। एक तरफ युद्धों और अकाल की भयावहता ने जीवन की विषमताओं को गंभीर बनाया और व्यक्ति के अस्तित्व को चोट पहुँचायी—सतही जीवन-मूल्यों, भोग, कुंठा, अहं, काम की तरफ और दूसरी ओर व्यापक सामाजिक चेतना ने मुक्ति की चेतना प्रकट की। आर्थिक धुरी ने भोग, कुंठा, नियतिवाद को बढ़ावा दिया। इसे विशेषकर कविता में गम्भीर प्रश्रय प्राप्त हुआ और बच्चन, अंचल, नवीन, भगवतीचरण वर्मा, दिनकर तथा नरेन्द्र शर्मा आदि प्रतिनिधि कवि के रूप में सामने आये।

इस समय मध्यमवर्गीय युवक के सामने आर्थिक समस्या अत्यन्त उग्र तथा विकराल रूप में नृत्य कर रही थी। शिक्षा की बढ़ती हुई सुविधाओं के फलस्वरूप साधारण युवा-वर्ग अपने जीवन-यापन के लिए नौकरी की ओर बड़ी तेजी से दौड़ रहा था। लेकिन शिक्षित युवक-समाज की संख्या को देखते हुए, इसका निराकरण कठिन था। क्योंकि विदेशी सरकार को केवल व्यवस्था बनाये रखने से मतलब था। उससे आगे वह कुछ भी करने को तैयार नहीं थी। देश की इन वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विकास-योजनाएँ आवश्यक थीं, परंतु उस पर न तो सरकार और न उसके उपजीवी पूंजीपतियों को इसकी चिन्ता थी। इस भयंकर वैषम्य से हमारा शिक्षित युवक-वर्ग जूझ रहा था। विद्यालय, महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय में आत्मसम्मान की भावना बढ़ रही थी, उसमें संवेदनशीलता का उन्नयन हो रहा था। उस युग में कोरे अराजकतावादी प्रलय के आह्वानों से अलग, सर्जना की सजग भावना से उद्बुद्ध होकर काव्य-रचना होने लगी। इस तरह की काव्य-सर्जना में विदेशी सत्ता के विरुद्ध विद्रोह तथा सामाजिक रूढ़ियों को तोड़ फेंकने की चेतना थी, किन्तु उसमें भावी समाज का एक रूप भी दिखायी पड़ा। सामाजिक वैषम्य और बहुजनहिताय के समाज की हीनदशा का समकालीन कवियों पर इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि उनकी कल्पना के रंगीन पंख जल गये और उन्हें विवश होकर जन-जीवन की भूमि पर पैर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रखना पड़ा। इस तरह कवि आदर्शवाद से हटकर सामाजिक यथार्थ की ओर बढ़े वे वर्तमान युग की अशांति और असन्तोष के मूल में आर्थिक वैषम्य देखते हैं। अतः आज की कविता इस शोषित-पीड़ित बहुजन समाज का पक्ष लेकर लिखी जा रही है। सामाजिक और आर्थिक विषमता का बहुत ही संश्लिष्ट अंकन भगवतीचरण वर्मा की कविताओं में मिलता है। उन्होंने 'विषमता', 'राजासाहब का वायुयान', 'भैंसा गाड़ी' आदि कविताओं में सामाजिक विषमता का बड़ा ही सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया है। इस प्रकार इस युग के कवियों ने सामाजिक और राजनीतिक विषयों को लेकर बहुत ही प्रभावपूर्ण कविताएँ हिन्दी-जगत् को दीं। इसका परिणाम यह हुआ कि कविता जीवन के अधिक निकट आयी और सामाजिक परिवर्तन में वह उपयोगी अस्त्र के रूप में प्रयुक्त होने लगी।

हिन्दी कविता में नवस्वच्छन्दतावादी चेतना १९३७ ई० में राज्यों के आंशिक स्वतंत्रता-प्राप्ति के साथ उभरती है। कवियों को एक नयी उमंग एवं उत्साह इसलिए दिखाई पड़ा कि आंशिक स्वतंत्रता की प्राप्ति से उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता की आशा बनी। कालान्तर में इन आशाओं पर वज्रपात भी होता है। फलतः कवियों में उत्साह के साथ दुःख, पीड़ा एवं वेदना भी अभिव्यक्त होने लगती है।

छायावादी कविताओं में व्यक्तिवादी भावनाओं की गहरी अभिव्यक्ति मिलती है, लेकिन उत्तर छायावादी वैयक्तिक कविता में व्यक्तिवाद, अहंवाद के रूप में परिवर्तित हो गया। अहंवाद पूंजीवाद की विक्रतियों का ही फल है। दूसरी तरफ मध्यवर्ग के ऊपर आर्थिक समस्याओं का भयंकर रूप प्रकट होने से मध्यवर्ग का स्वप्न बिखरने लगा। मध्यवर्गीय जीवन के कवि अपनी हीनता की भावना को छिपाने के लिए उच्चता की भ्रमपूर्ण भावना से पीड़ित होने लगे। नतीजा यह हुआ कि जीवन-संघर्ष से पराजित कवि अपने अहम् के घेरे के अन्दर जमकर बैठ गया। वह अपने व्यक्तिगत सुख-दुःख, आशा-निराशा, प्रेम की सफलता-विफलता, प्रेमिका का रूप-चित्रण, आलिंगन-चुम्बन, निराशा की वेदना, मृत्यु की काली छाया, मृत्यु-पूजा, मृत्यु के बाद का वर्णन, शराब और साकी से मनोरंजन आदि की अभिव्यक्ति प्रस्तुत करने लगे।

इस युग की कविता में वैयक्तिक जीवन की असफलताओं और अभावों से उत्पन्न गहरी निराशा, वेदना और मृत्यु-कामना की अभिव्यक्ति है। बच्चन, नरेन्द्र, भगवतीचरण वर्मा और रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' की कविताओं में एकाकीपन, निराशा और वेदना बहुत अधिक मिलती है। उनका जीवन समाज से संघर्ष करता हुआ दिखलायी पड़ता है। नियति की भयंकर छाया इन कवियों के सिर पर चक्कर काटती है। कुछ कवि उससे बचने के लिए प्रेयसी और मधुशाला की शरण में जाते हैं। पर वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों की अंकन में भी उन्हें विफलता ही मिली।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

किन्तु 'मधुशाला', 'मधुबाला' और 'मधुकलश' बच्चन को अधिक देर तक भ्रमपूर्ण आनन्द नहीं दे पाते। वेदना का बोझ इतना भारी हो गया कि कवि जीवन से ही निराश हो चले। वे अपने को मुर्दा समझने लगे और चिता पर भस्म होने की इच्छा करने लगे। मृत्यु की छाया उन्हें चारों ओर दिखलायी पड़ने लगी। निराशा और दुःख के कारण इन कवियों का मन मरघट, चिता, मृत्यु आदि निर्वेदजनक वस्तुओं में अधिक रमने लगा।

लेकिन केवल निराशावादी तथा फक्कड़पन की स्थिति में रहने तथा प्रेमी-प्रेमिका की भावनाओं की अभिव्यंजना से ही समस्या का समाधान सम्भव नहीं है। इसलिये कवियों की वाणी राष्ट्रीय स्वाधीनता की उत्कृष्ट अभिलाषा और मुक्ति-कामना के लिए शब्द-विधान करने लगी। इस काल के कवियों ने स्वाधीनता के लिए गुलामी की जंजीरें तोड़ने की कामना से राष्ट्रीय आन्दोलन को अग्रसारित किया। इस धारा के कवियों में मुख्य रूप से 'दिनकर', 'नवीन', सुभद्राकुमारी चौहान, सोहनलाल द्विवेदी, नरेन्द्र शर्मा, माखनलाल चतुर्वेदी, आदि अनेक नवयुवकों में स्पष्ट विद्रोह तथा क्रान्ति का ओजस्वी नाद मुखरित हो उठा। ऐतिहासिक दृष्टि से इन कवियों का बोध उतना सुलझा, स्पष्ट तथा व्यापक न रहा हो, पर पूंजीवादी-साम्राज्यवादी संस्कृति के विरुद्ध तथा जन-जीवन की विषमताओं, आर्थिक कठिनाइयों तथा वर्ग-संघर्ष के पक्ष में उन्होंने अनेक रूपों से अपनी सशक्त सहानुभूति तथा संवेदना की सफल अभिव्यक्ति की है।

दिनकर ने 'रेणुका' और 'हुंकार' में अपने राष्ट्र-गीतों द्वारा राष्ट्रीय भावना को चित्रित किया तथा अधिकतर ऐतिहासिक वीरों और घटनाओं का आधार लिया। 'दिनकर' राष्ट्रीय क्रान्ति के लिए, अपने प्राणों को उत्सर्ग करनेवाले वीरों की कीर्ति-गाथा गाते हैं। वह उनका जयगान करे जो पुण्यवेदी पर अपनी गर्दन का मोल लिये बिना ही चढ़ गये।

सोहनलाल 'द्विवेदी' भी राष्ट्रीय क्रान्ति के प्रबल गायकों में रहे हैं। स्वतंत्रता के लिए वे दासत्व से मुक्ति की कामना करते हैं और प्राणों की बाजी लगाने को कहते हैं—

भीम और अर्जुन के पुत्रों,
बने हुए हो दास।
ऐसे पराधीन जीवन से,
मधुर मृत्यु का पाश।[1]

पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' भी क्रान्ति की ज्वाला जलाकर सब कुछ स्वाहा कर देने के लिए निडर होकर गाया करते थे:—

कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ, जिससे उथल-पुथल मच जाये,
एक हिलोर इधर से आये, एक हिलोर उधर से आये।[2]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इस प्रकार समकालीन कवि राष्ट्रीय स्वाधीनता के लिए अपनी कविताओं के द्वारा जन-जन की भावनाओं को उद्वेलित कर रहे थे। राष्ट्रीयता की भावनाओं को उभार रहे थे।

१९२९ ई० में पं० जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में कांग्रेस के अधिवेशन ने 'पूर्ण स्वराज्य' की प्राप्ति को ही अपना उद्देश्य निश्चित किया। २ जनवरी १९३० ई० में नई कार्यसमिति की बैठक हुई और उसमें यह निश्चय हुआ कि पूरे देश में 'पूर्ण स्वराज्य' दिवस मनाया जाय। इसके लिए २ जनवरी १९३० ई० का दिन निश्चित किया गया। १९३० ई० में ही महात्मा गांधी ने सत्याग्रह-आन्दोलन दांडी नामक स्थान पर प्रारम्भ कर दिया। यह आन्दोलन १९३४ ई० तक चलता रहा। सरकार ने दमन-चक्र की गति तेज कर दी और कांग्रेस को अवैधानिक घोषित कर दिया। अंग्रेजी सरकार जितनी ही राष्ट्रीय चेतना को दबाने का प्रयत्न करती थी, राष्ट्रीय स्वतंत्रता की चेतना उतनी ही अधिक तीव्रता से अभिव्यंजित हो रही थी। एक के बाद एक क्रांतिकारी को फाँसी के तख्ते पर झूलना पड़ रहा था। इन बलिदानों के फलस्वरूप राष्ट्रीय संघर्ष तेजी से बढ़ रहा था।

फलतः अंग्रेजी सरकार को अन्त में 'गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया एक्ट' १९३५ पारित करके प्रान्तीय स्वायत्तता की माँग को स्वीकार करना पड़ा। फलस्वरूप १९३७ में विधानसभा के पश्चात् बंबई, मद्रास, बिहार, संयुक्तप्रांत, उड़ीसा और मध्यप्रदेश में कांग्रेस का मंत्रिमंडल गठित हुआ। इसके पश्चात् नार्थवेस्ट फ्रांटियर प्राविंस में भी कांग्रेस-मंत्रिमंडल का गठन हुआ। १९३७ ई० के चुनावों में कांग्रेसी उम्मीदवारों की सफलता का एक यह भी कारण था कि मजदूरों ने उन्हें जोरदार समर्थन दिया, क्योंकि कांग्रेस का चुनाव-घोषणा-पत्र उनके मन के मुताबिक था। इस घोषणा-पत्र का प्रभाव कवियों पर भी पड़ा। फलतः चिंतन में सामाजिकता की अधिकता हुई। इस सामाजिकता का एक और प्रधान कारण यह भी था कि १९३६ ई० के लखनऊ के कांग्रेस-अधिवेशन में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने समाजवादी लक्ष्यों की घोषणा की। कांग्रेस के अन्दर समाजवादी चेतनावाला वर्ग मजबूत होता जा रहा था। अप्रैल १९३६ ई० में लखनऊ के कांग्रेस-अधिवेशन के द्वारा राष्ट्रीय कांग्रेस का आधुनिक इतिहास आरम्भ होता है। यह समाजवादी प्रभाव ही था कि कांग्रेस का अधिवेशन सन् १९३७ ई० में फैजपुर गाँव में सम्पन्न होता है तथा यहीं पं० जवाहरलाल नेहरू समाजवादी सम्मेलन को यह संदेश देते हैं—"जैसा कि आप लोगों को मालूम है कि मुझे हर समस्या के प्रति समाजवादी दृष्टिकोण में बड़ी भारी दिलचस्पी है।"[३] फैजपुर कांग्रेस-अधिवेशन के द्वारा समाजवादी विचारधारा को जो प्रोत्साहन प्राप्त हुआ उसने जनता को एक नया उत्साह दिया और एक नवीन पथ को भी अन्वेषित किया। किसानों और श्रमिकों में यह प्रभाव विशेष रूप से उभरा तथा उन्होंने संगठित होकर अपने सामूहिक हितों की रक्षा के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

लिए आन्दोलन को बढ़ाया। किसानों की ही तरह श्रमिकों के मन में भी स्वतंत्र समाजवादी भारत का स्वप्न उभर रहा था। "जब तत्कालीन भारतीय समाज के दूसरे वर्ग भारत को स्वतंत्र करने की कामना कर रहे थे, भारतीय श्रमिक स्वतंत्र समाजवादी भारत के स्वप्न देख रहे थे।"[४]

१९३८ में कलकत्ता-अधिवेशन में भारतीय साहित्य के प्रबुद्ध लेखकों ने काम करने के लिए पृष्ठभूमि का निर्माण हेतु व्यापक संयुक्त मोर्चा कायम कर दिया। इसके बाद प्रेमचंद के 'हंस' को ही इस महान् आयोजन का मंच बनाया गया। फरवरी १९३९ से श्रीपतराय के सम्पादकत्व में 'हंस' अंतरप्रान्तीय साहित्यिक प्रगति का अग्रदूत बनाया गया और उसके सम्पादक मण्डल में उर्दू के मौलाना अब्दुल हक, उड़िया से कालिन्दीचरण प्राणिग्राही, बंगला से नन्दगोपाल सेन गुप्त, मराठी से वि० स० खांडेकर, कन्नड़ से वी० अश्वस्त नारायण राव आदि को रखा गया।

मार्क्सवादी और गैर-मार्क्सवादी लेखकों का व्यापक जनवादी मोर्चा बनाने की दृष्टि से 'हंस', 'रूपाभ', 'संघर्ष' आदि पत्रिकाओं का प्रयास सराहनीय था। इसके अतिरिक्त प्रगतिशील लेखक संघ की बैठकों में गैर-मार्क्सवादी लेखकों को भी आमंत्रित करने का सिलसिला जारी रहा। उन दिनों छायावाद के सभी प्रमुख कवि प्रगतिशील आन्दोलन के साथ जुड़ गये थे। उनके अलावा अमृतलाल नागर, शिवमंगल सिंह 'सुमन', 'दिनकर', नरेन्द्र शर्मा, अंचल, नेमिचन्द्र जैन, भारतभूषण अग्रवाल, गिरिजाकुमार माथुर, रामविलास शर्मा, त्रिलोचन शास्त्री, शमशेरबहादुर सिंह, मुक्तिबोध आदि न जाने कितने कवि व लेखक प्रगतिशील आन्दोलन के समर्थक हो गये।

भावबोध के स्तर पर आलोचनात्मक यथार्थवाद, समाजवादी यथार्थवाद : क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद—इन काव्यरूपों की प्रस्तुति हुई। पंत 'रूपाभ' निकालकर यथार्थता का समर्थन करने लगे थे, निराला नयी यथार्थवादी प्रवृत्तियों से अपने काव्य-रचना संसार को सुशोभित कर रहे थे। अप्रैल १९३७ में प्रसाद ने यथार्थवाद पर विचारपूर्ण लेख लिखा था। इस प्रकार प्रगतिवाद का मुख्य विरोध स्वच्छन्दतावादी चेतना से न होकर अध्यात्मवाद, आदर्शवाद एवं रूढ़िवाद से था।

सामाजिक यथार्थ के चित्रण पर बल, साम्राज्यवाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी राजनीति का प्रचार, स्वाधीनता-संघर्ष का समर्थन—इन तीनों ही दृष्टियों से 'हंस' के समकक्ष पत्रों में रामवृक्ष बेनीपुरी द्वारा, पटना से प्रकाशित 'जनता' का प्रमुख स्थान है। इस पत्र का प्रकाशन १९३७ ई० में प्रारम्भ हुआ और इस पत्र पर श्री लोकनायक जयप्रकाशनारायण से प्रभावित 'कांग्रेस समाजवादी पार्टी' के एक गुट का नियन्त्रण था।

१९३८ के आसपास जो परिवेश था उससे टकराकर यथार्थ की ओर काव्य को मोड़ने का प्रयास छायावादी और उत्तर छायावादी दोनों कर रहे थे। लेकिन नये बुद्धिवादी युवक ही यथार्थ के निकट थे। इस तरह हम देखते हैं कि कल्पना और यथार्थ से समन्वित काव्यात्मक रुझान कवियों की हो रही थी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

निराला, पंत अपनी स्वाभाविक गति से अपनी कविताओं में रोमांटिक भावबोध और यथार्थ के कटु-तिक्त बोध को समन्वित कर नयी सामाजिक चेतना का परिचय दे रहे थे। निराला की कविताओं में जनजीवन के प्रति लगाव के कारण स्वाभाविक रूप में क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद और समाजवादी यथार्थवाद की ओर उनका झुकाव बढ़ रहा था। इसी भावभूमि पर १९३७ ई० में 'दनवेला' में निराला ने अपनी पराजय की गाथा अंकित की और स्वार्थजड़ित समाज पर व्यंग्य किया। इस प्रकार नवयथार्थवादी चेतना, मानववाद और सर्वहारा संस्कृति के उपादानों से कविता को समृद्ध करने के प्रयास आरम्भ हुए। प्रगतिवादी कविता ने समाजवादी यथार्थवाद की प्रस्तुति की। समाजवादी यथार्थवादी चेतना अपने में क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद के साथ थी। यह स्वच्छन्दतावाद का सक्रिय रूप था।

द्वितीय विश्व-युद्ध के अन्तिम वर्षों में समस्त विश्व एक विचित्र गति से गुजर रहा था। भारतवर्ष भी नयी दृष्टि और नयी चेतना से प्रभावित हो रहा था। प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नयी कविता की मूल चेतना मानववाद की है। १९३९ में द्वितीय विश्व-युद्ध आरम्भ हुआ और इसकी आग सारे संसार में भड़क उठी। इस युद्ध ने राष्ट्रीय चेतना को बहुत ही जागरूक बना दिया और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति भी गहन-मनन का विषय बन गयी। इसी समय सुभाषचन्द्र बोस ने आजाद-हिन्द सेना का संगठन कर ब्रिटिश सरकार को समाप्त करने का प्रयास किया। बम्बई में भारतीय जल-सेना ने भी अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह किया। इन परिस्थितियों में ब्रिटिश सरकार ने यह अनुभव किया कि अब इस देश पर हमारा शासन स्थापित नहीं रह सकता। पं० जवाहरलाल नेहरू को शीघ्र ही स्वतन्त्रता प्राप्त होने की आशा थी और उन्होंने कहा कि राष्ट्रीयता तथा अन्तर्राष्ट्रीयता के संघर्ष में राष्ट्रीयता की विजय निश्चित है।[५]

१९४२ ई० की क्रान्ति के पश्चात् स्वतंत्रता प्राप्त होने की पूर्ण आशा बनी, परन्तु मुस्लिमलीग ने पाकिस्तान की माँग की। ३ जून ९९४७ को पाकिस्तान की माँग पूर्ण रूप से स्वीकार कर ली गयी।

१५ अगस्त १९४७ ई० को भारत स्वतन्त्र हुआ। १५ अगस्त १९४७ स्वाधीनता प्राप्ति के साथ स्वतंत्रता-संघर्ष का नया दौर शुरू हुआ। उसने काव्य व साहित्य में कल्पना और यथार्थ, अनुभूति और परिवेश, वैयक्तिकता और सामाजिकता, विद्रोह और क्रांति, संस्कृति और लोकसंस्कृति, चेतन और अचेतन के अन्तर्विरोधों को नया संदर्भ और नया आयाम दिया। परन्तु संविधान २६ जनवरी सन् '५० को लागू किया गया और भारत में प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य की स्थापना की गयी। इस संविधान में नागरिकों के मौलिक अधिकारों को सुरक्षित रखा गया है। ये अधिकार हैं—समानता का अधिकार, स्वतन्त्रता का अधिकार, शोषण के विरुद्ध अधिकार, धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार, संस्कृति और शिक्षा का अधिकार, सम्पत्ति का अधिकार तथा संवैधानिक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

उपचारों का अधिकार—और ये अधिकार प्रत्येक नागरिक के लिए सुरक्षित हैं। इन अधिकारों के अतिरिक्त भारतीय संविधान में राज्य की नीति के निर्देशक सिद्धान्तों का भी उल्लेख है जिसके द्वारा प्रत्येक नागरिक उन्नति कर सकता है। भारतीय संविधान भारत को एक धर्मनिरपेक्ष राज्य घोषित करता है। अस्पृश्यता को हमारे संविधान में दण्डनीय माना गया है और ऊँच-नीच की भावना को समाप्त करके समानता की भावना को प्रोत्साहन दिया गया है। अभी तक हमारे समाज में स्त्रियों की दशा बहुत ही खराब थी, जिसके निवारणार्थ संविधान में स्त्रियों और पुरुषों को समान अधिकार प्रदान किये गये हैं। राज्य की नीति के निर्देशक तत्त्वों में समाज-कल्याण-सम्बन्धी अनेक बातें ली गयी हैं, जैसे ग्राम पंचायतों का संगठन, शिक्षा तथा लोक-कल्याण-सम्बन्धी कार्य, सबके लिए रोजगार, कृषि तथा पशुपालन, जनता का स्वास्थ्य आदि।

स्वतन्त्रता से पहले व्यक्ति के विकास की कोई विशेष व्यवस्था नहीं थी। लेकिन संविधान के लागू होने पर हमें भविष्य के प्रति आशा हुई कि भारत विभिन्न क्षेत्रों में उन्नति करेगा तथा दूसरे उन्नतिशील देशों के समान हो जायेगा। प्रत्येक व्यक्ति को निष्पक्ष भाव से उन्नति करने का अवसर प्रदान किया जायेगा एवं उसके इस अधिकार का अपहरण करने पर उचित न्याय भी दिया जायेगा।

१९३७ ई० में चुनावों के बाद गठित कांग्रेसी मंत्रिमण्डल में उनकी समस्याओं पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया। अंग्रेजों की मनमानी देखकर १९३९ ई० में भारतीय मंत्रिमण्डल ने अपना त्याग-पत्र दे दिया। इसी समय द्वितीय विश्व-युद्ध छिड़ा हुआ था। ८ अगस्त १९४२ को बंबई में अखिल भारतीय कांग्रेस ने अपना 'भारत छोड़ो' आन्दोलन प्रस्तावित किया। यह आन्दोलन स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए एक खुला विद्रोह था। अगस्त १९४२ की क्रांति भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन की बहुत महत्त्वपूर्ण घटना थी। यह क्रांति जनता की थी। इसी समय नेताजी सुभाषचन्द्र बोस द्वारा गठित 'आजाद हिन्द फौज' अंग्रेजी साम्राज्य को भारतवर्ष से निष्कासित करने के लिए संघर्षरत था। लेकिन जापान के पराजित हो जाने पर वे अपने उद्देश्य में पूर्ण सफलता प्राप्त न कर सके। युद्ध-समाप्ति के तुरन्त बाद सरकार ने 'आजाद हिन्द फौज' के अधिकारियों पर मुकदमा चलाने का निर्णय किया। इसलिए एक बार फिर बिजली की तरह क्रांति की लहर सारे देश में कौंध गयी।

आधुनिक हिन्दी कविता में १९३८ के आस-पास का समय नूतनता एवं व्यापकता की दृष्टि से महत्त्व रखता है। पंत का 'युगांत', 'युगवाणी' का प्रकाशन हुआ। यह वह समय था जब हिन्दी कविता कल्पना और आदर्श की धरती से उतरकर सामाजिक यथार्थ की प्रशस्त भूमि पर पाँव रखती है। इसी समय अनेक पत्र-पत्रिकाओं का जन्म हुआ, जिनमें रूपाभ, हंस, जनता और जागरण का विशेष महत्त्व है। इसी समय अनेक श्रमिक संस्थायें स्थापित हुईं, सभाएँ हुईं और अनेक ऐतिहासिक हड़तालें हुईं। श्रमिकों,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

किसानों, सर्वहारा की समस्याओं की अभिव्यक्ति हिन्दी कविताओं में विलक्षण है। और ये अभिव्यक्तियाँ क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद की ही अभिव्यक्तियाँ हैं। पं० नरेन्द्र शर्मा, अंचल, सुमन, नागार्जुन, त्रिलोचन शास्त्री, केदारनाथ अग्रवाल, निराला, मुक्तिबोध, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना आदि कवियों ने अपनी कविताओं में सामाजिक चेतना को वाणी दी है। राष्ट्रीय, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक आन्दोलन का संघर्षपूर्ण इतिहास निश्चित ही नव-स्वच्छन्दतावादी कवियों का प्रेरणा-स्रोत बना। "कविता की जिस चेतना का प्रादुर्भाव सन् १९३९-४० में हुआ था, उसने पिछली समस्त मान्यताओं को बदल डाला और एक अभूतपूर्व बौद्धिक नवोन्मेष को जन्म दिया। पूरी की पूरी मर्यादा-परिधियाँ प्रतिस्थापित कर दो गयीं। इतनी बड़ी तात्त्विक क्रांति हिन्दी कविता में कभी नहीं आई थी।"[६] उस समय के युवा कवि अपने को गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ पाकर एकदम घोर क्रांति का बिगुल बजाना चाहते थे और अपने देश को पूर्ण स्वतंत्र करने के लिए महाप्रलय की तान छेड़ने के लिए पूर्णतया कटिबद्ध थे। वे अनाचारों के उन्मूलन के लिए अपना सर्वस्व बलिदान करने के लिए तत्पर थे। तत्कालीन युवा कवि श्री गिरिधारीलाल शास्त्री ने अपनी 'आर्य' शीर्षक कविता में अपने प्राचीन गौरवपूर्ण इतिहास का संस्मरण कराते हुए वर्तमान परिस्थितियों में पूर्ण संघर्ष, विद्रोह और क्रांति के लिए स्पष्ट घोषणा की थी—

पूर्वजों के उन्नत आदर्श पालने में मिलता आनन्द।
जगत् में मानपूर्वक जियो, करो, बोलो, सोचो स्वच्छन्द।
अनश्वर आत्मा, निर्भय रहो, सर्वदा रखो आत्म-सम्मान।
अनाचारों का करने शमन छेड़ दो महाप्रलय की तान।[७]

इसी तरह राष्ट्रीय आन्दोलन के तूफानी दिनों में राष्ट्रीय जागरण के प्रौढ़ कवि पंडित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' महाक्रांति के लिए स्पष्ट शब्दों में उद्बोधन दे रहे थे—

'महाक्रांति के नव विधान हित
तुम करने बलिदान उठो;
उठो, उठो ओ नंगों भूखो,
ओ मजदूर, किसान उठो।'[८]

वस्तुतः हिन्दी कविता के इतिहास में नवस्वच्छन्दतावादी चेतना की अभिव्यंजना परिवेशगत आवश्यकता थी। क्योंकि आधुनिकता-बोध के नूतन सन्दर्भों का आरम्भ ऐतिहासिक अनिवार्यता के कारण हुआ। स्वच्छन्दतावादी वायवी कल्पना युगधर्म के लिए अनुपयुक्त एवं बेकार हो चुकी थी। युग की यथार्थता के समक्ष उसकी अतिशय कल्पनाशीलता भावुकतापूर्ण स्वच्छन्दतावाद व्यंग्य प्रतीत होता था। फलतः यथार्थवादी युग के नये कवि के लिए सार्थक अभिव्यंजना के भावबोध एवं शिल्प की बड़ी समस्याएँ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

थीं। इसी तरह ये कवि आगे बढ़े भी। कविता का रचना-संसार समसामयिक चिंतन एवं यथार्थ से जुड़ गया।

१९४३ का वर्ष भारतीय इतिहास में विभीषिका का दृश्य प्रस्तुत करता है। इसी वर्ष बंगाल में भयंकर अकाल पड़ा। इस अकाल में काफी लोग काल-कवलित हुए। अकाल के बाद भीषण महामारियाँ भी फैलीं और काफी लोग मरे भी। तत्कालीन कवियों ने अपनी कृतियों में इन दर्दनाक, रोमांचक यथार्थ चित्रों की झाँकियाँ सजाई हैं। निराला, सुमन, बच्चन, रामविलास शर्मा आदि कवियों ने अपनी कविताओं में इन्हें चित्रित किया। इसी प्रकार हिन्दी कविता में यथार्थपरक अभिव्यंजना की शुरुआत होती है।

विश्व-युद्ध २ सितम्बर १९४५ को टोकियो की सन्धि के रूप में इसका रूप बदला। इस युद्ध में रूस की महान् विजय से संसार में समाजवादी निष्ठा बढ़ी और उसमें दृढ़ता भी आई। फलतः पराधीन एवं शोषित देश के कवियों की चेतना साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद से मुक्ति के लिए छटपटाने लगती है। चीन में जनवादी सरकार के गठन से समाजवादी विचारधारा को और भी बल मिला। इसी वर्ष ब्रिटेन में आम चुनाव में मजदूर-दल की विजय तथा चर्चिल के टोरी-दल की हार प्रगतिशील विचारधारा का एक और प्रतिमान निर्मित हुआ। १९४५ के आम चुनाव में ब्रिटेन में मजदूर-दल बहुमत से विजयी हुआ था। चर्चिल के स्थान पर एटली प्रधानमंत्री निर्वाचित हुए थे। दल की इस जीत से भी भारतीय जन-जीवन में उत्साह एवं उमंग की भावनाएँ दिखाई पड़ती हैं। १९४६ ई० की संविधान सभा के निर्वाचन में कांग्रेस बहुमत से विजयी हुई। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का उद्देश्य पूरा हुआ। अनेक आन्दोलनों के अनन्तर सैकड़ों वर्षों की गुलामी की जंजीर तोड़ डाली गयी। १५ अगस्त १९४७ ई० को देश स्वतंत्र हो गया।

हिन्दी कवियों ने स्वतंत्रता का स्वागत किया। इस प्रसन्नता के साथ दुःख की अनुभूतियाँ भी लिपटी थीं। फलतः साम्प्रदायिकता, विभाजन एवं शरणार्थियों की समस्याओं को लेकर काव्य-सर्जना नूतन रूप में प्रकाश में आई। कवियों ने कथ्य की बहुलता को नवीन शिल्पों में गूँथकर समाज के सामने रख दिया। ये प्रस्तुतियाँ साहित्य और समाज के लिए एक नई चेतना का द्योतक हैं। भारतीय स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद हमारे यहाँ लोकतंत्र-शासन की पद्धति अपनाई गई। उसके पहले राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की हत्या हुई। इस प्रकार गांधी-युग समाप्त होता है। स्वाधीनता-प्राप्ति के साथ नेहरू-युग की शुरुआत होती है।

सन् १९६४ में नेहरू के निधन के साथ नेहरू-युग की समाप्ति होती है। प्रधानमंत्री के पद पर श्री लालबहादुर शास्त्री अपना कार्यभार सँभालते हैं। श्री लालबहादुर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शास्त्री के अचानक निधन से प्रधानमंत्री-पद पर श्रीमती इन्दिरा गांधी २४ जनवरी १९६६ को सत्ता ग्रहण करती हैं। वस्तुतः यहीं से इन्दिरा-युग की शुरुआत होती है। किन्तु, श्रीमती इन्दिरा गांधी को २४ मार्च १९७७ को प्रधानमंत्री-पद से हटना पड़ा और इसी दिन से श्री मोरारजी देसाई प्रधानमंत्री के रूप में कार्य देखने लगते हैं। श्री जयप्रकाश नारायण-आन्दोलन के फलस्वरूप २८ जुलाई १९७९ को चौधरी चरण-सिंह जनता-सरकार के प्रधानमंत्री के रूप में कार्य करने लगते हैं। सत्ता जनता-सरकार के आपसी तनाव के कारण १४ जनवरी १९८० को पुनः श्रीमती इन्दिरा गांधी के हाथ में आ जाती है। वस्तुतः अपने लम्बे कार्यकाल में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने देश के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक चेतना को नया सन्दर्भ दिया है। दुर्भाग्यवश ३१ अक्टूबर १९८४ को श्रीमती इन्दिरा गांधी की निर्मम हत्या हुई और इसीके साथ इन्दिरा-युग समाप्त हो जाता है। ऐतिहासिक सन्दर्भों में नेहरू-युग एवं इन्दिरा-युग की अपनी विशेष महत्ता है। इसके कई उतार-चढ़ाव ऐतिहासिक महत्त्व के बिन्दु हैं।

३१ अक्टूबर १९८४ को श्री राजीव गांधी प्रधानमंत्री-पद पर सर्व-सम्मति से बैठाये जाते हैं। जनवरी १९८५ में लोक-सभा का आम-चुनाव होता है। इन्दिरा कांग्रेस की जीत होती है। और पुनः श्री राजीव गांधी प्रधानमंत्री बनाये जाते हैं। ऐति-हासिक क्रम में यहीं से श्री राजीव गांधी-युग की शुरुआत होती है।

जनता द्वारा निर्वासित प्रतिनिधियों ने संविधान-सभा के रूप में १९४९ ई० के अन्त में स्वतंत्र भारत के संविधान का निर्माण किया गया। २६ जनवरी सन् १९५० से उसे कार्यरूप में परिणत किया गया। १९५२ ई० में स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद पहला आम चुनाव हुआ, जिसमें कांग्रेस की जीत हुई। जुलाई १९५२ तक उत्तर प्रदेश में जमीन्दारी-प्रथा समाप्त कर दी गयी। सरकार अपनी विविध नीतियों एवं कार्यक्रम के माध्यम से समाजवादी व्यवस्था की ओर बढ़ रही थी। इसी समय पं० जवाहरलाल नेहरू समाजवादी देशों का परिभ्रमण करके वापस आये थे। उन्होंने प्रगति के लिए समाजवादी व्यवस्था की आवश्यकता पर बल दिया। १९५५ ई० में आवड़ी में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ, जिसमें उन्होंने समाजवादी ढाँचे को अपना आदर्श घोषित किया। स्वतंत्र भारत ने १९४९ ई० में समाजवादी देशों के साथ व्यापारिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्ध जोड़कर अपनी समाजवादी रुझान को प्रकट किया। तत्कालीन अन्तर्राष्ट्रीय परिवेश हमें लोकतंत्र एवं समाजवादी चेतना से परिव्यास मिलता है।

जुलाई १९५० ई० में नेहरू और स्टालिन के बीच हुए पत्राचार तथा कोरिया के युद्ध के शांतिपूर्ण समाधान के लिए किये गये निरन्तर प्रयत्नों से विश्व-शांति के लिए भारत की सक्रिय भूमिका की शुरुआत होती है। १९५४ ई० में शांति स्थापित करने के लिए पाँच बड़े राष्ट्रों का कोलम्बो सम्मेलन आयोजित किया गया। जून १९५४ ई०

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

में भारत और चीन ने पंचशील के सिद्धान्तों पर दृढ़ रहने के बारे में एक संयुक्त घोषणा-पत्र तैयार किया। ये सिद्धान्त हैं—

१. दूसरे देशों की सार्वभौमिकता एवं प्रादेशिक अखण्डता का सम्मान।
२. अनाक्रमण।
३. दूसरे देशों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना।
४. समानता तथा पारस्परिक लाभ।
५. शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व।

अप्रैल १९५५ ई० में भारत और चीन-सरकार ने मिलकर बांडुग में पहला अफ्रो-एशियाई सम्मेलन आयोजित किया, जिसमें अफ्रीका और एशिया के २९ देशों ने भाग लिया तथा विश्व-शांति तथा राष्ट्रीय स्वाधीनता के लक्ष्यों का उद्घोष किया गया। वस्तुतः यह घटना विश्व के इतिहास में नये संतुलन का एक गंभीर दस्तावेज था। भारत और चीन के बीच मैत्री और सहयोग साम्राज्यवाद के भविष्य के लिए कितना घातक हो सकता है, बांडुग सम्मेलन से प्रसूत नये विश्व-संतुलन को देख पश्चिमी साम्राज्यवाद—ब्रिटिश और अमेरिका—चौंक पड़ा। इस मैत्री और सहयोग में उन्हें विश्व-समाजवाद की अनिवार्य विजय का मार्ग दिखाई पड़ा। फलतः पश्चिमी साम्राज्यवाद का सारा प्रयत्न, भारत की प्रतिक्रियावादी शक्तियों के साथ मिलकर भारत और चीन-सरकार की मैत्री को खंडित करना था। इसके लिए भारत-चीन सीमा-समस्या का अनुचित लाभ उठाया गया तथा मैत्री और सहयोग के स्थान पर संघर्ष और युद्ध को भड़काया गया। १९६२ ई० में भारत-चीन सीमा-युद्ध एक अप्रिय घटना थी। अन्त में यह युद्ध-विराम के साथ समाप्त हुआ, लेकिन कोई समझौता न हो सका। फलस्वरूप पश्चिमी साम्राज्यवादी देशों और भारत में बड़े व्यापारी-वर्ग के बीच उनके प्रतिक्रियावादी सहयोगियों का मुख्य उद्देश्य पूरा हुआ। भारत तथा चीन सरकार के बीच मैत्री और सहयोग समाप्त हो गया और उसका स्थान संघर्ष ने ले लिया। ऐसी स्थिति में अमेरिकी और ब्रिटिश साम्राज्यवादियों को भारत में अपनी स्थिति मजबूत करने का अवसर मिला। भारत के अन्दर वामपंथी प्रगति को रुकावट का सामना करना पड़ा और अन्ध-राष्ट्रवाद के उन्माद की लहर चल पड़ी। वामपंथी आन्दोलन छिन्न-भिन्न हो गया। कम्युनिस्ट पार्टी का विभाजन हो गया। मंत्रिमण्डल में प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू के प्रमुख वामपंथी सहयोगी रक्षा-मंत्री श्री कृष्ण मेनन के विरुद्ध दुष्प्रचार किया गया। वस्तुतः उन्हें संसद् में कांग्रेस का प्रतिनिधित्व करने से भी वंचित कर दिया गया। १९६९ ई० में पश्चिम बंगाल में वे संयुक्त मोर्चे की सहायता से निर्दलीय उम्मीदवार के रूप में विजयी होकर संसद् में आ सके। यह दक्षिण पंथी अभियान प्रधानमंत्री पंडित नेहरू के भी विरुद्ध दिशा लेने लगा था, पर इसी बीच उनकी मृत्यु हो गयी।[६]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्वतंत्रता के साथ-साथ भारत का विभाजन हुआ और पाकिस्तान का निर्माण हुआ। विभाजन के साथ-साथ भारत में आर्थिक समस्याएँ भी उपस्थित हुईं। पाकिस्तान की स्थिति को सुधारने के लिए ५५ करोड़ रुपये देने पड़े। कश्मीर की समस्या देश की प्रमुख समस्या बनी। औद्योगिक विकास की अपेक्षा सेना पर अधिक व्यय होने लगा। शरणार्थियों के पुनर्वास से देश के करोड़ों रुपये खर्च हुए। देश विभाजन के पश्चात् भारत के भाग में ८२ प्रतिशत जनसंख्या आई, परन्तु कृषि-क्षेत्र ७५ प्रतिशत ही आया। पंजाब और सिंध के क्षेत्र गेहूँ की उपज के लिए प्रसिद्ध थे वे पाकिस्तान में चले गये। फलतः खाद्यान्न की समस्या उत्पन्न हुई। जून १९६६ ई० में रुपये का अवमूल्यन हुआ, जिससे पहले से चली आ रही ह्रासोन्मुखी स्थिति पर जबरदस्त प्रहार हुआ। यह अवमूल्यन अमरीकी सरकार के दबाव से किया गया था, जिसे विश्व बैंक द्वारा बल भी मिला था। इसके बाद १९६७ में आम चुनाव हुआ। फलतः राज्यों में मिली-जुली सरकारें बनीं। यह आम चुनाव भारतीय लोकतंत्र-प्रणाली के विकास में एक नया मोड़ था, भारत के लिए नई घटना थी। द्वितीय विश्व युद्ध के फलस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक सम्बन्ध में आने से आर्थिक स्थिति प्रभावित हुई। समाजवादी विचारधाराओं ने भी देश की सामाजिक व्यवस्था को प्रभावित किया। औद्योगिक क्रांतियों का भी समाज की पारिवारिक व्यवस्था पर प्रभाव पड़ा। इसके अतिरिक्त कृषि-प्रधान देश होने के कारण भी राजनीतिक क्रिया-कलाप की सामाजिक प्रतिक्रिया व्यापक रूप से मिली। विश्व-युद्ध, जन-क्रान्ति, स्वतंत्रता-प्राप्ति तथा भारत-विभाजन के कारण जो परिस्थितियाँ बनीं उनके कारण कृषि तथा औद्योगिक व्यवस्थाओं में गंभीर परिवर्तन हुआ और फलतः नये वर्गों का जन्म आर्थिक आधार पर हुआ।

आधुनिकता के दो विरोधी आदर्श हमने अपनाये हैं। ये आदर्श पाश्चात्य एवं साम्यवादी आदर्श हैं। स्वतन्त्रता के बाद हमारे यहाँ संविधान, राजनीतिक दल, कार्य-पद्धति आदि के लिए पाश्चात्य एंग्लों-अमरीकी आदर्श ही ग्रहण किया गया है। आधुनिकता के ये दोनों आदर्श परम्परा का विरोध करते हैं। आधुनिकता के पाश्चात्य आदर्श में धर्म की भी स्वीकृति है, विशेषकर अमेरिकी आधुनिकता में, लेकिन साम्यवादी (पूर्वी) आधुनिकता में धर्म का निषेध है। इन दोनों विचारधाराओं के द्वन्द्व आधुनिक हिन्दी कविता में त्रिकोणात्मक अभिव्यक्ति लेता है।

परम्परागत आधुनिकता
(भारत)
●

पूर्वी देशों की आधुनिकता (रूस और चीन) ●   ● पाश्चात्य देशों की आधुनिकता (ब्रिटेन और अमेरिका)

१९३५-३६ ई० से स्वतंत्रता के पूर्व तक प्रगतिशील लेखक एक विशिष्ट सामाजिक ढाँचा तथा मूल-व्यवस्था का प्रचार करते रहे हैं। इस प्रगतिशील आधुनिकता की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

चेतना है—वैज्ञानिक भौतिकवादी विश्व-बोध, उत्पादन के साधनों का समाजीकरण, तकनीकी उन्नति, सर्वहारा-क्रान्ति, सर्वहारा की तानाशाही, वर्ग-संघर्ष, परंपरा के निषेध का निषेध, सहयोगी एवं वर्गहीन समाज का गठन। यह बोध यशपाल, अमृतलाल नागर, रांगेय राघव, महापंडित राहुल सांकृत्यायन, डॉ० रामविलास शर्मा, डॉ० शिवदानसिंह चौहान, डॉ० प्रकाशचन्द गुप्त, आदि लेखकों में मिलता है। इसके विपरीत पाश्चात्य आधुनिकता से प्रभावित साहित्यकार इस पूर्वी आधुनिकता के विरोधी हैं। क्योंकि साम्यवादी व्यवस्था में व्यक्ति के स्थान पर समाज को ही अधिक महत्त्व दिया गया है। अज्ञेय मूलतः पाश्चात्य आदर्श के पुरोहित और प्रचारक हैं। वे सामाजिक यथार्थवादी की अधिक चिंता न करके व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों और मूल्यों की सर्जना करते रहे हैं। नयी कविता का 'परिमल-ग्रुप' ने मूलतः पाश्चात्य आधुनिकता के आदर्श को अपनाया है। डॉ० भारती आलोचना के सम्पादकीय विचारों एवं 'प्रगतिवाद' नामक पुस्तक में सोवियत समाज के अन्तर्विरोधों पर व्यंग्य अधिक करते हैं। उनकी दृष्टि व्यक्तिमूलक है, पाश्चात्य आधुनिकता से ग्रस्त है।

अज्ञेय इधर परंपरागत आधुनिकता के परिसर में चिन्मय अर्थ स्वीकार करने लगे हैं। इसलिए उनकी कविताओं में नवरहस्यवाद के स्वर सुनाई पड़ने लगे हैं। श्री सुमित्रानन्दन पंत, महादेवी वर्मा एवं 'दिनकर' आदि में परंपरा का ही चिन्मय रूप अभिव्यंजित हुआ है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी भी परामानव की अनुभूतियों एवं चिन्मयता के व्याख्याता हैं। इनके उपन्यास 'अनामदास का पोथा' में इस चिन्मय आध्यात्मिकता की सुन्दर अभिव्यंजना हुई है। इसके विपरीत प्रगतिशील साम्यवादी आधुनिकता में परम्परा को इस चिन्मय चेतना को स्वीकार नहीं किया जाता। 'नई कविता' में परंपरा से मिथक, बिम्ब एवं प्रतीक का चयन अधिक हुआ है। उदाहरण के रूप में 'अंधा युग' (धर्मवीर भारती), आत्मजयी (कुँवरनारायण), संशय की एक रात (नरेश मेहता) आदि काव्य-कृतियों में इन प्रवृत्तियों के दर्शन होते हैं। इसके विपरीत साम्यवादी आधुनिकता में लोक मिथक अधिक हैं, जैसे मुक्तिबोध की 'ब्रह्मराक्षस' एवं 'ओरांग-ओटांग' शीर्षक कविता वस्तुतः मुक्तिबोध की कविता यहीं पर एक नवीन पगडंडी की ओर बढ़ती है। इनकी कविताओं में निचले गरीब मध्यवर्ग से सम्बन्धित मिथक, क्रान्ति की दृष्टि, परम्परा एवं रूढ़ियों से विद्रोह इसमें था। फलतः यहीं से पूर्वी आधुनिकता में एक नवीन प्रवृत्ति उभरती है। इसे हम नवस्वच्छन्दतावादी मोड़ कह सकते हैं। 'नई कविता' में समाजवादी यथार्थवाद, अस्तित्ववाद, मनोविश्लेषणवाद एवं भारतीय परंपरागत आधुनिकता के क्रम में नव-रहस्यवादी चिन्तन-बिन्दुओं के रूप में कवियों का रचना-संसार अपना विस्तार करता है। वस्तुतः नई कविता में आधुनिकता के इन त्रिकोणात्मक रूपों की प्रस्तुति हुई है।

पाश्चात्य आधुनिकता में विवेकशीलता, उदारता, विविधता, अनेकता, स्वतंत्रता, लौकिकता तथा व्यक्ति के आत्म-गौरव पर अधिक बल दिया जाता है। लेकिन पूर्वी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आधुनिकता में वैज्ञानिक भौतिकवाद एवं साम्यवादी शासनों का संगम है। 'ससकों' के कवि शिल्प की नूतनता की दृष्टि-से एक से लगते हैं, लेकिन विषय-वस्तु की दृष्टि से अज्ञेय, भारती, कुँवरनारायण आदि पाश्चात्य आधुनिकता के शिविर में हैं तो डॉ० रामविलास शर्मा, मुक्तिबोध, शमशेरबहादुर सिंह, केदारनाथ सिंह, नेमिचन्द्र जैन, भारतभूषण अग्रवाल आदि पूर्वी आधुनिकता के शिविर में हैं।

द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद पाश्चात्य देशों में, विशेषकर जर्मनी और फ्रांस के दर्शन और साहित्य में पूर्वी-पाश्चात्य आधुनिकता के विरोध में अस्तित्ववादी चिन्तन का जन्म होता है। अस्तित्ववाद व्यक्तिवादी दर्शन था। इसने समस्त दार्शनिक चिंतन (काँट, हीगल तथा मार्क्स) का विरोध किया एवं जीवन की असंगतियों, मृत्यु-बोध, अजनबीपन, अनिश्चय आदि धारणाओं का तत्त्वज्ञान प्रस्तुत किया। द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद भ्रम-भंग की स्थिति में भारतीय साहित्यकारों पर अस्तित्ववाद का व्यापक प्रभाव पड़ा। अतः आधुनिक हिन्दी कविता इन मोड़ों से होकर गुजरती रही है।

संदर्भ

१. सोहनलाल द्विवेदी : जागो हुआ विहान, युगधारा, पृ० ९०।
२. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' : हम विषपायी जनम के, पृ० ४२९।
३. पं० सीतारमैया : कांग्रेस का इतिहास, भाग–२, पृ० १६।
४. ए० आर० देसाई : राष्ट्रवाद की राष्ट्रीय पृष्ठभूमि, पृ० १८३।
५. पं० जवाहरलाल नेहरू : दी डिस्कवरी आफ इण्डिया, पृ० ३६६।
६. गिरिजाकुमार माथुर : नयी कविता, सीमाएँ और संभावनाएँ, पृ० ३, ४।
७. धर्म-समाज कॉलेज, अलीगढ़, पत्रिका १९४०-४१, पृ० ९।
८. हम विषपायी जनम के, पृ० ५३१।
९. रजनीपाम दत्त : आज का भारत, पृ० १६।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MoE

३

नवोन्मेष

'कामायनी' की रचना पूरी करने के कुछ ही दिनों बाद प्रसादजी स्वर्गवासी हुए और यह संयोग था कि यह समय स्वयं छायावाद के निधन का भी समय सिद्ध हुआ। पन्त का 'युगान्त' छायावाद की समाप्ति की ही घोषणा है। स्वयं निराला ने कविता की छायावादी मुद्रा से अपने को अलग करना शुरू किया और १९३६ में प्रगतिशील लेखक संघ की विधिवत् स्थापना के बाद तमाम जागरूक रचनाकर्मी छायावाद से मुक्त होने के प्रक्रम को प्रगतिवाद से जोड़ने लगे। निराला की १९३७ ई० में प्रकाशित कविता 'वह तोड़ती पत्थर' न केवल सामाजिक चेतना की रचना सिद्ध हुई, बल्कि छायावाद के बाद की रचना-प्रवृत्ति की प्रामाणिक कृति भी सिद्ध हुई। इस सन्दर्भ में ही बाद में छायावाद की शव-परीक्षा प्रोफेसर नवकिशोर गौड़ और 'छायावाद का पतन' डॉ० देवराज के निबन्ध भी प्रकाशित हुए। स्वच्छन्दतावादी, छायावादी मनोवृत्ति के साथ आन्तरिक रूप से सम्बद्धता महसूस करते हुए बच्चन, अंचल, 'दिनकर' तथा नरेन्द्र शर्मा ने जिस तरह की कविताएँ लिखीं वे छायावाद से भाषा के मामले में इतनी अलग थीं और उनकी अभिव्यंजना-प्रणाली इतनी मूर्त, लौकिक तथा रहस्यमुक्त थी कि उसे उत्तर-छायावाद की कविता कही गई। प्रगतिशील आन्दोलन से सम्बद्ध नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, शिवमंगल सिंह 'सुमन' और त्रिलोचन शास्त्री जैसे कवियों ने कविता की नयी जमीन तलाशी। प्रयोगधर्मिता भी कविता के तेवर से जुड़ी और अज्ञेय के नेतृत्व में प्रयोगवाद खड़ा हो गया। लेकिन उत्तर-छायावाद तथा कथित प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नयी कविता, नवगीत तथा अकविता मिला-जुलाकर एक ऐसी निर्माणाधीन प्रवृत्ति का संकेत करते हैं जिसे 'वाद' के स्तर पर नवस्वच्छन्दतावाद ही कहना उचित है। इस नवस्वच्छन्दतावाद को आलोचक रामविलास शर्मा एक खास तरह के संक्रमण मानते हुए कहते हैं "छायावाद के उत्तरकाल में स्वयं छायावादी कवि अपनी पुरानी भावधारा से विलग होकर यथार्थवाद की नयी भूमिका की ओर बढ़े।......प्रसाद की 'तितली' निराला की देवी, चतुरी चमार, बिल्लेसुर बकरिहा, श्रीमती महादेवी वर्मा के रेखा-चित्र—ये सब इस संक्रमण के प्रमाण हैं।"[1] डॉ० बच्चन सिंह ने भी इस काल की रचना-प्रवृत्ति को 'उत्तर स्वच्छन्दतावाद नाम दिया है।[2]

उत्तर शब्द इस तथ्य का सूचक है कि यह समूचा काल स्वच्छन्दता या रोमानियत से दूर होने की क्रमिक प्रक्रिया है। यहाँ खण्डित भ्रमों के स्थान पर नये यथार्थ को पाने का प्रयास है। यह दूसरी बात है कि पुराने भ्रमों के स्थान पर नये भ्रमों और

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्वच्छन्दतावाद के स्थान पर नवस्वच्छन्दतावाद की सृष्टि भी होती रही। स्वच्छन्दतावाद के अनन्तर आनेवाली काव्य-चेतना, जो अपने में स्वच्छन्दतावाद और यथार्थवादी चेतना को समन्वित करके एक नई प्रस्तुति कर रही थी, भाषा की सादगी की दृष्टि से स्वच्छन्दतावाद से अलग प्रतीत होती है। वस्तुतः यह स्वच्छन्दतावाद का विस्तार है। आधुनिकता मध्ययुगीन भाव-बोध के प्रति प्रतिक्रिया है। यहाँ भगवान् को छोड़ दिया गया है और इसके स्थान पर मानव—नव-मानव को स्थानान्तरित किया है। मानववाद, नवमानववाद आधुनिकता की एक प्रवृत्ति है। आधुनिकता में काव्य का धरातल यथार्थपरक होता है। यथार्थवादी चिन्तन में मानवी अनुभूतियाँ प्रधान होती हैं। यहाँ संघर्षरत मानव को कविता में चित्रित किया गया है। यही संघर्षरत मानव यथार्थवादी चिन्तन में बदलाव के कारण एवं नवीनतम विकास के फलस्वरूप समाजवादी यथार्थवाद के रूप में कविता के क्षितिज पर परिलक्षित होता है। यहाँ सर्वहारा के जीवन एवं संस्कृति के चित्रण में कवि को स्वच्छन्दतावादी दृष्टि लेनी पड़ी है। यथार्थवादी कविता, जो उत्तर-छायावाद-काल में पल्लवित एवं पुष्पित होती है, उसमें सामाजिक यथार्थ एवं वैयक्तिक यथार्थ दोनों की स्थितियों को डॉ० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल ने स्वीकार किया है। इन दोनों प्रवृत्तियों के संयोग से इन कविताओं का विकास होता है। इसी विवेच्य काव्य-प्रवाह में 'किसिम किसिम' की कविता भी विविधवादों के नाम से खड़ी हुई और कुछ आगे-पीछे चली।[३] मेरा इस सन्दर्भ में कहना है कि इनको एक ही नाम से पुकारा जाना चाहिए और वह नाम है : नवस्वच्छन्दतावाद। नवस्वच्छन्दतावादी चेतना में आलोचनात्मक यथार्थवाद एवं समाजवादी यथार्थवाद की स्थितियों का संयोग होता है। 'नव-स्वच्छन्दतावाद' में मार्क्सवादी एवं लेनिनवादी विचारधारा से भी साहित्यकार अपने को जोड़ता है। फलस्वरूप इस बिन्दु पर वह पूँजीवाद एवं साम्राज्यवाद का विरोधी भी हो जाता है।

आज नयी कविता और नई कहानी के आन्दोलन में स्वच्छन्दतावादी-बोध को स्वीकार किया जा रहा है—बिम्ब-विधान एवं प्रतीक-योजना के रूप में। डॉ० इन्द्रनाथ मदान का कथन है कि नई कविता रोमांटिक बोध को आगे ले जानेवाली है। यह इसका संशोधित संस्करण है, जिसे उत्तर-छायावादी कहना अधिक संगत है।[४] डॉ० मदान इसके लिए 'उत्तर छायावाद' नाम देते हैं। लेकिन यह नामकरण भी न्यायसंगत प्रतीत नहीं होता, क्योंकि उत्तर-छायावाद का भाव यह निकलता है कि यह काल छायावाद के बाद का क्षयी रोमांस का है। इसे सीमा-विस्तार देने के लिए 'नव-स्वच्छन्दतावाद' कहना उपयुक्त है, क्योंकि इसका सम्बन्ध व्यापक फलक से भी जुड़ जाता है और अपने में पूर्ण युग-सापेक्षता की चेतना की अभिव्यंजना देता है।

अंग्रेजी कविता में १८३० की क्रांति के आसपास एक युग का अन्त हो गया था। साहित्य में नये युग का उदय था। संक्षेप में यह एक व्यापक भावना थी कि स्वच्छ-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

न्दतावाद का अन्त हो गया है। नये युग का उदय हो गया है, जिसका सम्बन्ध वास्त-विकता, विज्ञान और इहलोक से है। इसी प्रकार विगत अष्टम और नवम दशकों में होनेवाली अनुभूति के सम्बन्ध में कह सकते हैं कि यथार्थवाद और प्रकृतवाद अपनी दौड़ पूरी कर चुके थे और इनका स्थान नई कला लेने लगी थी, जो प्रतीकात्मक, नव-स्वच्छन्दतावादी थी या जिसे किसी नाम से पुकारा जा सकता है।[५] अंग्रेजी कविता में १९वीं शताब्दी के अन्तिम चरण में स्वच्छन्दतावाद फिर से उभार में आया। जर्मन साहित्य में 'नवस्वच्छन्दतावाद' का प्रयोग विशेष रूप से Hormannsthal, George and Yongrilke कवियों के लिए प्रयुक्त हुआ है। 'प्रतीकवाद' स्वच्छन्दतावाद की आनुवंशिक परम्परा है और यह प्रवृत्ति बाद के स्वच्छन्दतावाद में उभरती है। शिल्प तथा दृष्टिकोण दोनों में प्रतीकवाद स्वच्छन्दतावाद का विस्तार है।[६] स्वच्छन्दतावाद का आगामी चरण प्रतीकवाद का है। प्रतीकवाद का सम्बन्ध फ्रेंच रोमांटिक काव्यधारा से भी है। स्वच्छन्दतावादी कवि की भाँति प्रतीकवादी कवि भी अपनी निजी भावनाओं को संप्रेषित करते हैं।

"नई कविता उस प्रकार की आइवरी टावर की रोमांटिक स्वप्नशीलता की एकांतप्रिय, आत्मरतिमय आध्यात्मिकता की कविता नहीं है, जैसी कि पुरानी रोमांटिक युग की हुआ करती थी। वह मूलतः एक परिस्थिति के भीतर पलते हुए मानव-हृदय की, पर्सनल सिचुएशन की कविता है। इसलिए उसमें कहीं आत्मा-लोचन है तो कहीं बाह्य-स्थिति-परिस्थिति और समाज पर व्यंग्य है तो कहीं आर्थिक विषमताओं से उत्पन्न करुणा-भाव है तो कहीं ग्लानि है। कहीं वैकल्पजनित विक्षोभ है तो कहीं जीवन-आलोचना है। यहाँ तक कि उसमें जहाँ रोमांटिक रंग है, वहाँ भी एक व्यक्ति-स्थिति-परिस्थिति का दबाव है या उभार है। यह पर्सनल सिचुएशन यहाँ तक बढ़ गई है कि बहुतेरे कवियों ने उसे व्यक्त करने के लिए अपनी एक निजी अभिव्यक्ति-शैली और प्रतीक-सम्पदा भी बढ़ा ली है। यहाँ तक कि कई बार, एक कवि को दूसरे कवि की कविता ही समझ में नहीं आती।"[७] इस प्रकार हम देखते हैं कि भाव-बोध एवं शिल्प-तंत्र में भी नवस्वच्छन्दतावाद स्वच्छन्दतावाद से किंचित् बदले हुए रूप में दिखाई पड़ता है। भाषा-शैली एवं छन्द, बिम्ब, प्रतीक, प्रगीतात्मकता, मिथकीय चेतना में कवि की आन्तरिकता या व्यक्तिवाद किंचित् परिवर्तित रूप में दृष्टिगत होता है। स्वच्छन्दतावादी भाव-बोध की आन्तरिकता या वैयक्तिकता नवस्वच्छन्दतावाद में शिल्पों की बुनावट के रूप में दिखाई पड़ती है। मुक्तिबोध स्वच्छन्दतावाद को जीवन की यथार्थता के रूप में स्वीकार करते हैं। दूसरे सप्तक में स्वच्छन्दतावादी भावनाएँ लेकर कवि प्रयोगवाद में आये। दूसरा सप्तक रोमांटिक परिधान की दृष्टि से अधिक मनोरम है।[८] स्वच्छन्दतावाद वस्तुतः जीवन की यथार्थता है। रोमांटिक भावना को जीवन की यथार्थता से जोड़कर मुक्तिबोध इसकी सीमारेखा को विस्तृत करते हैं। जीवन की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यथार्थता की रेखाएँ रोमांटिक भावनाओं के साथ उभरती हैं। अतः हम इस रोमांटिक काव्य-प्रवाह को नवस्वच्छन्दतावाद कहते हैं क्योंकि इस पर यथार्थ का गहरा रंग है।

नवस्वच्छन्दतावादी कविता में कवि की स्वीय अनुभूतियों की अभिव्यंजना नूतन बिम्बों, प्रतीकों, मिथकों एवं प्रगीतों के रूप में हुई है। नवस्वच्छन्दतावादी कविता की निराशा आध्यात्मिक न होकर, पार्थिव है, कल्पना से अधिक उस पर यथार्थ जीवन की विषाद एवं निराशा का रंग है। कल्पना की उड़ान प्रखरतर नहीं है। यहाँ कवि समकालीन जीवन-बोध को भी मिथकों, बिम्बों एवं प्रतीकों के रूप में चित्रित करता है। प्रकृति को मानवीकृत करके सम्बन्ध स्थापित करता है। उसकी शब्द-योजना उर्दू से प्रभावित है और बोल-चाल के निकट है। नवस्वच्छन्दतावादी कविताओं में प्रगीत सबसे ज्यादा लिखे गये। इनमें से कितने ही प्रगीत ऐसे हैं, जो अपनी झंकार से हमारे पूरे जीवन को झकझोर डालते हैं। हिन्दी की राष्ट्रीय कविताएँ जो अब तक उपदेशों और प्रवचनों का नीरस भार ढोती आयी थीं, इसी काल में आकर अनुभूतियों के सच्चे आलोक से जगमगा उठीं और सीधे उपदेशों का आश्रय बनाना छोड़कर अनुभूति के जोर से जनता का हृदय हिलाना शुरू कर दिया। राष्ट्रीय कविताएँ भी प्रचार न होकर अनुभूतियों का जीवित कोष होती है। यह बात माखनलाल चतुर्वेदी, नवीन, सुभद्राकुमारी चौहान की कविताओं में अनायास ही स्पष्ट हो जाती है।[९] "एक बात निश्चित है कि कविता अब अधिक निर्मम हो गई है और उसने पूर्ववर्ती गीतात्मकता और भावुकता को जैसे बिदा दे दी है।"[१०] प्रगीत में भी बदलाव आया, परिवर्तन हुआ। प्रगीतात्मक प्रवृत्ति नये रूप में उभरी है, जो नवस्वच्छन्दतावाद की एक विशेषता होती है। भावुकता अतिशय कल्पनाशीलता एवं उच्छ्वास की प्रवृत्तियाँ प्रायः समाप्त हो गई हैं। प्रगीत भी यहाँ अनुभूति / परिवेश, वैयक्तिकता / सामाजिकता, विद्रोह/कल्पना क्रांति तथा यथार्थ से जुड़ा हुआ है। नवस्वच्छन्दतावादी चेतना में स्वच्छन्दतावाद / यथार्थवाद एक समन्वित इकाई के रूप में परिवर्तित दिखाई पड़ता है। यह बदलाव वस्तुतः दोनों की सहजता से प्रसूत है। इस मिलन-प्रक्रिया में स्वच्छन्दतावाद / यथार्थवाद अपने सहज एवं विशुद्ध रूप में दिखाई नहीं पड़ते। सहजता से दोनों के आपसी मिलाप की प्रक्रिया नवस्वच्छन्दतावादी चेतना को उभारती है।

विशुद्ध स्वच्छन्दतावादी चेतना का यहाँ अभाव है। आत्मपरकता एवं सर्जनात्मक कल्पनाशीलता जो विशुद्ध स्वच्छन्दतावाद के लिए अपेक्षित है, वह नवस्वच्छन्दतावाद में शिल्प-विधान के रूप में दिखाई पड़ता है। कवि यहाँ हर बिन्दु पर अकेला है, भाषा-छन्द की रचना में, मिथक की पुनर्रचना में, बिम्ब-विधान एवं प्रतीक योजना में तथा प्रगीतात्मकता में भी नवस्वच्छन्दतावाद का भाव-बोध भी स्वच्छन्दतावाद के भाव-बोध से किंचित् बदला हुआ है। यहाँ स्वच्छन्दतावाद एवं यथार्थवाद मार्क्सवाद, स्वच्छन्दतावाद एवं क्रांति, स्वच्छन्दतावाद एवं आधुनिकता के विभिन्न तरंग, पूँजीवाद

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

विरोधी चेतना, शहरीकरण, संस्कृति, लोक-संस्कृति एवं यथार्थवादी चिंतन के फलस्वरूप लोकतांत्रिक, आर्थिक, सांस्कृतिक चेतना के समन्वित रूप की अभिव्यंजना वस्तुतः नव-स्वच्छन्दतावादी चेतना का क्षेत्र है। समकालीन मानव जीवन-बोध के फलस्वरूप कवि लोकतांत्रिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक चेतना को चित्रित करता है। फलतः सामाजिक धरातल चरमरा जाता है, एक नूतन परिवेश उभरता है। युग-सापेक्षता के फलस्वरूप स्वच्छन्दतावाद ने एक नया रूप लिया, यथार्थवादी चिंतन ने उसे एक नवीन रूप दिया। गंगोत्री से पानी चलते-चलते अन्त में भी उसी रूप में चलता है, लेकिन जगन्नियन्ता संसार की रचना क्यों करता है? उद्देश्य के साथ करता है तो उसमें कमी होगी। निरुद्देश्य सर्जना का कोई अर्थ नहीं होता। इसलिए वह अपने पूर्ण आनन्द को रचनात्मक आनन्द के रूप में परिणत करने के लिए सृष्टि करता है। ठीक उसी तरह स्वच्छन्दतावादी साहित्यकार अपनी कल्पना को यथार्थ से जोड़ने के लिए समकालीन जीवनानुभूतियों से सिक्त कर अपनी मूल चेतना को जीवित रखता है। वस्तुतः अपने नूतन विकास की स्थिति में स्वच्छन्दतावादी कला जीवन-यथार्थ की अभिव्यंजना करती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि हरिद्वार की गंगा से किसी भी स्थिति में काशी की गंगा कम पवित्र और अकल्याणकारी नहीं है, स्यात् ज्यादा ही है क्योंकि उसने जन-जीवन को सींचने में हरिद्वार की गंगा से ज्यादा अपने को लगाया है। इसीलिए काशी की गंगा लोकातीत शिवत्व का अधिष्ठान बन सकी है। गंगा हरिद्वार से प्रवाहित होती हुई प्रयाग तक पहुँचकर त्रिवेणी बन जाती है। इसी त्रिवेणी के उपरान्त ही वास्तविक शिवत्व की प्राप्ति होती है जो काशी की उपलब्धि है। हरिद्वार की गंगा में पवित्रता ही पवित्रता है किन्तु काशी की गंगा में कलुषता को मिटाने की क्षमता भी है। अतः नवस्वच्छन्दतावादी कला अपनी मूल चेतना रोमांटिकता को लेकर तो चलती ही है लेकिन हरिद्वार की गंगा और काशी की गंगा में जो पार्थक्य है, जो यथार्थता है, जो उपयोगितावादी रूप है, वही स्थिति स्वच्छन्दतावादी और नवस्वच्छन्दतावादी कला और कलाकारों की है।

आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों की जो रेखा भारतेन्दु के समय से उभरती है, उसका धीरे-धीरे क्रमिक विकास होता है। कविता की जो धारा भारतेन्दु के समय उद्भूत हुई वही आगे चलकर छायावाद के नाम से प्रख्यात हुई, परन्तु विकास के साथ इस काव्यधारा में इतना अधिक परिवर्तन हो गया कि अचानक दोनों को एक मानने में कठिनाई होने लगी। कविता की इस धारा का उद्भव यद्यपि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के समय से ही माना जा सकता है, परन्तु श्रीधर पाठक ही स्वच्छन्द काव्यधारा के अग्रदूत थे। भाव, भाषा छन्द एवं व्याकरण, हर तरह से श्रीधर पाठक ही सच्चे स्वच्छन्दतावादी थे और उन्हींके कारण इस आन्दोलन को बल मिला था। पं० रामनरेश त्रिपाठी, रूपनारायण पाण्डेय, मुकुटधर पाण्डेय ने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इस काव्यधारा के विकास में योग दिया। इन कवियों की कविताओं में सीधी, सरल भाषा का प्रयोग, वन-वैभव, एकांत प्रणय, सौन्दर्यप्रियता, अतीत प्रेम और देशभक्ति आदि स्वच्छन्दतावाद के तत्त्व उन्मुक्त भाव से प्रकट हुए। वैयक्तिक विद्रोह भाव इन कवियों में नहीं मिलता, जो आगे चलकर छायावाद में विकसित होता है।

आधुनिक काव्य-सरिता में स्वच्छन्दतावाद की जो तरंग पं० श्रीधर पाठक की कविताओं में उभरी वह अधिक सघन रूप में प्रसाद, निराला, पंत तथा महादेवी वर्मा की कविताओं में दिखायी पड़ी। हिन्दी की स्वच्छन्द काव्य-धारा की चरम परिणति छायावाद में ही मिलती है। द्विवेदीयुगीन कवियों की भाषा सरल तथा सीधी-सादी थी, लेकिन छायावाद में काव्य की सरलता तिर्यक् क्लिष्टता में परिवर्तित हो गयी। छायावादी कविताओं में प्रेम-सौन्दर्य की अभिव्यक्ति में स्पष्टता, खुलापन एवं अनुभूति की सही अभिव्यंजना नहीं है, क्योंकि आध्यात्मिक आवरण में कवियों ने अपने को ढँक लिया है। इनके यहाँ प्रेम-कहानी की शुरुआत तो होती है, लेकिन परम्परावश ये खुलकर उसे आगे नहीं बढ़ा पाते। छायावादी कविताओं में अतिशय कल्पनाशीलता, भावुकता, व्यक्तिवादिता, प्रेम-सौन्दर्य का व्यक्तिनिष्ठ अंकन और भावोच्छ्वास की अभिव्यक्ति सघन रूप में मिलती है। "मानव चेतना के परिष्कार, उन्नयन व समृद्धि में छायावाद की कविता समस्त हिन्दी कविता के वृत्त में अनूठी है और वह अत्यन्त गरिमामय बनी रहेगी। हाँ, अतिकाल्पनिकता व यथार्थ जीवन के पराङ्मुखता या वितृष्णा ने उसकी गति को कुंठित कर दिया—यद्यपि, यह कहने में भी हमें संकोच नहीं कि उसके स्वस्थ मानवीय मनोवैज्ञानिक व सांस्कृतिक तत्त्व उत्तरकालीन कविता में भी अनेक रूपों में विद्यमान रहे और वे आज भी हैं।"[११] इस बिन्दु पर हिन्दी कविता परिवेश से टकराकर नूतनभाव-बोध का निर्माण करती है।

स्वच्छन्दतावाद को नवीन धरातल पर रखना, जो युग-सापेक्षता के साथ अभिव्यंजित होता है, उसे नवस्वच्छन्दतावाद कहेंगे। नवस्वच्छन्दतावाद स्वच्छन्दतावाद के प्रति प्रतिक्रिया है, आधुनिकता की चुनोती का परिणाम है। कविता का नया विस्तार है। स्वच्छन्दता वाद वैज्ञानिक उपलब्धियों के सामने टिक नहीं सका, जिन नये क्षितिजों को नापा गया, उनके लिए तर्क, बुद्धि एवं भौतिक दृष्टि की अधिक अपेक्षा थी, जिएके सामने स्वच्छन्दतावादी कल्पना, भावुकता एवं आध्यात्मिकता का टिके रहना कठिन ही नहीं, असंभव भी था। डारविन के विकासवाद ने रोमांटिक भावनाओं पर बड़ा निर्मम प्रहार किया और यथार्थवादी प्रवृत्तियों को बल प्रदान किया। "सन् १९३६ के बाद के यथार्थ की अभिव्यक्ति लिए सामाजिक चेतना से अनुप्राणित हिन्दी काव्य छायावाद ही नहीं, पूर्ववर्ती समस्त साहित्यिक परम्परा के संबल, समर्थ और जीवन-तत्त्वों की विरासत को सँभालते हुए वह नये युग के साहित्य की ऐसी आवश्यकता बनकर हिन्दी के रंगमंच पर अवतरित होकर उसने व्यक्ति के स्थान पर समाज और जन-जीवन के कल्याण की,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

निराशा, पराजय, पस्ती और क्षयी रोमांस के स्थान पर आशा, उल्लास और स्वस्थ प्रेम की, रहस्य, अध्यात्म के स्थान पर नैतिक जीवन की सच्चाई की ओर हमारे साहित्य को गतिशील किया।"[१२] हिन्दी कविता में १९३७ से ही युग-सापेक्षता के दबाव के कारण स्वच्छन्दतावाद में 'नव' शब्द जोड़ना पड़ा, उसी तरह जिस तरह कविता को नयी कविता, कहानी को नयी कहानी, गीत को नवगीत कहा गया। स्वच्छन्दतावादी हिन्दी-कविता सामाजिक परिवेश से टकराकर नये रूप में करवट लेती है। हिन्दी स्वच्छन्दतावाद में रूढ़ियाँ निर्मित हो रही थीं और वह परम्परागत होता जा रहा था। भाव-बोध की स्वतंत्रता के नाम पर भावुकता की अधिकता होने लगी थी। इसी तरह कलात्मक नियम भी अधिकाधिक रूढ़ होते जा रहे थे। कथ्य और शिल्प की रूढ़िवादिता के कारण स्वच्छन्दतावादी चेतना यहाँ क्षीण दिखाई पड़ती है। स्वच्छन्दता-वादी चेतना यहाँ पूरी तरह समाप्त नहीं हो पाती, किन्तु युग-सापेक्षता के संस्पर्श से अपना रूप सँवारती है, बदलती है। नवस्वच्छन्दतावादी चेतना ने स्वच्छन्दतावाद का विरोध किया और नये रूप में अपनी अभिव्यक्ति की। विज्ञान की उपलब्धियों के फल-स्वरूप तथा सामाजिक वातावरण से प्रसूत हिन्दी-कविता इस बिन्दु पर आकर यथार्थवादी चेतना से मिलती है। फलतः स्वच्छन्दतावादी / यथार्थवादी बोध के समन्वय से स्वच्छ-न्दतावाद नये रूप में उभरता है। इस बदलाव की व्याख्या के लिए 'नवस्वच्छन्दतावाद' नाम देना पड़ा। यद्यपि यह एक परिवर्तित दृष्टि है और इसमें कहने और अनुभव के तरीके बदल जाते हैं। यहाँ यथार्थवाद एक शैली के रूप में विकसित होता है जो एक प्रकार का स्वच्छन्दतावाद है, जो जीवन के पलायन और सुदूर कल्पना-लोक के परिभ्रमण को अस्वीकार करता है। परन्तु इसके बदले अपनी दृष्टि को वर्तमान अनुभूतियों पर केन्द्रित करता है, जिसे वह 'रोमांटिक आयरनी' द्वारा अभिव्यक्त करता है। प्रत्येक यथार्थवाद में स्वच्छन्द प्रवृत्ति होती है, जिसे बाद में स्वच्छन्दता विरोधी कह देते हैं। यह स्वच्छन्द प्रवृत्ति यथार्थवाद में व्यंग्य के द्वारा अभिव्यक्त होती है और इसकी पहचान 'आधुनिकता' है। यह नवस्वच्छन्दतावाद स्वच्छन्दतावादी रोमानियत से इस बात में भिन्न है कि इसकी प्रकृति एवं सौन्दर्य-बोध वायवीय और सामान्य नहीं बल्कि यथार्थ और विशेष है। नवस्वच्छन्दतावादी ऐन्द्रियबोध अनुभूत और सुनिश्चित होने का विश्वास दिलाता है। ये कविताएँ रागात्मक होते हुए भी भावोच्छ्वासित नहीं बल्कि आन्तर सजगता से नियंत्रित हैं। इसके अतिरिक्त छायावादी प्रगीतात्मकता छन्दबद्ध गीतों में मुखरित होती है। इस नवस्वच्छन्दतावादी उत्थान में गेय छन्दों के अतिरिक्त मुक्त-छन्दों के लघु प्रगीतों की भी रचना हुई। अतः इस प्रगीतात्मकता की पहचान अनुभूति की प्रामाणिकता है। नवस्वच्छन्दतावाद ने काव्य में कल्पना/यथार्थ के अन्त-र्विरोधों को नया संदर्भ और नया आयाम दिया। कविता में नवस्वच्छन्दतावादी उत्थान रागात्मक एवं प्रगीतात्मक रूपों में प्रकट हुआ जिसके उपकरण 'प्रेम' और 'सौन्दर्य' थे।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्वच्छन्दतावादी कवि जब अतीतकालीन अनुभूतियों की अभिव्यंजना में अथवा सुदूर भविष्य की कल्पना में अपने को लगाता है तो वहाँ पर विशुद्ध स्वच्छन्दतावादी कविता का जन्म होता है। इससे पृथक् जब वह वर्तमान को यथार्थके माध्यम से अपनी स्वच्छन्द वृत्तियों को अभिव्यक्ति देता है तो वहीं पर नवस्वच्छन्दतावादी कविताओं में व्यक्तिवादी चिन्तन तो मिलता है, लेकिन इसकी कोई धार्मिक-आध्यात्मिक भावभूमि नहीं है। फलस्वरूप इस धारा का व्यक्तिवाद मान्य आस्थाओं के प्रति सन्देह एवं विद्रोह को लेकर चला है। इस धारा के कवियों में आध्यात्मिकता के प्रति सन्देह और नैतिक-सामाजिक मान्यताओं के प्रति विद्रोह भी है। अतः प्रारम्भ में वह नकारात्मक जीवन-दर्शन लेकर चलता है। बच्चन तथा उनके समकालीन कवियों की कविताओं में सन्देहवाद, भाग्य या नियतिवाद तथा यत्र-तत्र निषेधवाद तक मिलता है। कालक्रम के साथ व्यक्तिवाद, भाग्यवाद से मानववाद की ओर प्रयाण करता है। नरेन्द्र शर्मा, रामेश्वर शुक्ल अंचल, गोपालसिंह नेपाली, आरसीप्रसाद सिंह, बच्चन आदि कवि क्षयी रोमांस के गीत को त्यागकर सामाजिक चेतना के साथ स्वस्थ मानवीय रोमांस के गीत भी गाने लगते हैं। वैयक्तिक प्रेम इस धारा के कवियों के काव्य की मूल चेतना है। यह प्रेम निश्चित रूप से लौकिक है और इस पर आध्यात्मिकता का आवरण नहीं है। प्रेम के संयोग वियोगजन्य हर्ष-विषाद, उदासी, टूटन, असंतोष आदि का सघन स्वर इन कविताओं में मुखरित हुआ है। प्रेम यहाँ सांसारिक है, प्रत्यक्ष है इसलिए इसका रूप बिल्कुल स्पष्ट है। बच्चन के 'निशा निमन्त्रण' और 'एकांत संगीत' यदि प्रेम के अवसाद के घनत्व को मुखर करते हैं तो 'मिलनयामिनी' मिलन की मादकता और उमंग को। नरेन्द्र शर्मा के 'प्रवासी के गीत' में यदि लौकिक विरह की अधिकता है, तो अन्य रचनाओं में प्रेयसी के सौन्दर्य-भोग और संयोग की ऊष्मा के मादक चित्र भी हैं। यही बात 'अंचल', नवीन, दिनकर आदि की कृतियों के विषय में भी कही जा सकती है। इस धारा के कवियों का मुख्य स्वर 'प्रेम' ही है। स्वच्छन्द वृत्ति सौन्दर्य और प्रेम की भूख लिए उड़ती थी, वह तृप्त नहीं हो पाती थी। स्वच्छन्द उड़ान सामाजिक प्रतिबन्धों से टकराती थी और टूटकर विरह की पीड़ा बन जाती थी। देश पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था, साथ ही सामाजिक रुढ़ियों और आर्थिक विषमता के विकराल पाश में फैला हुआ था। अकेला संवेदनशील कवि अपने को टूटता हुआ पा रहा था। इसलिए इन कवियों का समस्त परिवेश उदासी और निराशा को लिये हुए था, दृष्टि रोमांटिक थी। किन्तु स्वस्थ जीवन-दृष्टि के अभाव में वह व्यक्तिवादी अनुभव, निराशा, क्षण मृत्यु की छाया, नियति-बोध से लिपटा हुआ था। कवि अपनी पीड़ा, असफलता, उदासी व निराशा को झेलता हुआ जीवन को विफल और आधारहीन समझने लगा। नवस्वच्छन्दतावादी की निराशा आध्यात्मिक न होकर पार्थिव है। कल्पना से अधिक उस पर यथार्थ जीवन की उदासी का रंग है। इस धारा के कवियों ने विद्रोह की बात अपनी कविताओं में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

खूब कही है। सामाजिक दायित्व और वैयक्तिक अनुभूतियों के बीच द्वन्द्व का अंकन भी हुआ है। कविता में व्यक्ति, सत्ता, नियति और अलौकिकता के प्रति कवि का विद्रोह मुखरित हुआ है। वैयक्तिकता से सिक्त इस अस्वीकृति में धर्म तथा ईश्वर को ललकारा गया है—

प्रार्थना मत कर, मत कर, मत कर।
युद्ध-क्षेत्र में दिखला भुजबल;
रहकर अविजित, अविचल, प्रतिपल,
मनुज-पराजय के स्मारक हैं—
मठ, मस्जिद, गिरजा घर।[१३]

युग-सापेक्षता से नवस्वच्छन्दतावादी कवियों का चिन्तन सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक परिस्थितियों के दबाव के कारण नया रूप ग्रहण करता है। स्वच्छन्दतावाद में केवल वैयक्तिक अनुभूतियों का बखान हो रहा था, इसलिए उसे 'व्यक्तिवादी' कविता भी कहा गया है। लेकिन, नवस्वच्छन्दतावादी कविता व्यष्टि के साथ समष्टि की समस्याओं को व्याख्यापित करती है, वस्तुतः व्यक्तिमन के साथ-साथ बाह्य स्थितियों एवं समसामयिक समस्याओं का बखान भी करती है। कवि यहाँ समाजवादी यथार्थवाद से प्रभावित होकर शोषितों के जीवन और उसकी समस्याओं के लिए क्रान्ति करना चाहता है। कवि यहाँ पर सामाजिक-आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक रूढ़ियों से जूझता है और परिणाम में नव चिन्तन छनकर आता है। उदाहरण के रूप में 'नवीन' की इस कविता को लिया जा सकता है—

लपक चाटते जूठे पत्ते जिस दिन मैंने देखा नर को
उस दिन सोचा : क्यों न लगा दूँ आग आज इस दुनिया-भर को ?
यह भी सोचा : क्यों न टेंटुआ घोंटा जाय स्वयं जगपति का ?
जिसने अपने ही स्वरूप को रूप दिया इस घृणित विकृति का।[१४]

हिन्दी स्वच्छन्दतावाद भी नवीन भावबोध के धरातल पर उभरा था। लेकिन भारतीय परिस्थितियाँ बड़ी तेजी से बदल रही थीं। फलतः स्वच्छन्दतावादी कवियों की एकतानता, चिंतन की स्थिरता और भावनात्मक एकता धीरे-धीरे कमजोर होने लगी और एक नूतन युगबोध बोलने लगता है। यह नया युगबोध अनास्था और अभाव से ग्रस्त है। भोगे हुए यथार्थ की निर्व्याज अभिव्यक्ति यहीं से शुरू होती है।

सन् १९३५ ई० से १९३७ ई० के बीच पुरानी काव्यधारा ने करवट बदली और सन् '३७ के बाद वह स्पष्टतः नवीन रूप में उभरने लगी। 'रूपाभ' का प्रकाशन १९३८ ई० से ही शुरू हुआ था और उसका दृष्टिकोण सामाजिक यथार्थपरक था। उसमें मार्क्स का प्रभाव गांधीवादी विचारधारा के साथ मिलकर चला था। नव-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्वच्छन्दतावादी कविता में प्रारम्भ में पस्ती और पराजय के साथ देश की आर्थिक-राजनीतिक अवस्था में अन्तर्निहित अन्तर्द्वन्द्व स्पष्ट होते जा रहे थे। देशी पूंजीवाद ने जड़ें जमा ली थीं, साम्राज्यवाद व सामन्तवाद से उसका गठबन्धन हो रहा था। फलतः राजनीति में धीरे-धीरे समाजवादी विचार उभरने लगे और १९३४ में कांग्रेस समाजवादी दल का गठन हुआ। कवियों में भी इस नूतन वैचारिकता का प्रभाव पड़ा। इसके साथ ही रवीन्द्रनाथ के प्रभात्र से विश्व-मानवतावादी दृष्टि, विश्व-प्रेम, अन्तर्राष्ट्रीयता, सामाजिक न्याय एवं पूर्व-पश्चिम के अध्यात्म व भौतिकता के समन्वय का परिवेश चिन्तन-जगत् में व्याप्त था। उसे लेकर कुछ कवि आगे बढ़े। छायावादी विषयवस्तु को छोड़कर पंत ने 'युगान्त' की रचना की और 'नव-मानव' का प्रथम अभिनन्दन किया। 'युगान्त' में मानववादी दृष्टि दिखाई पड़ती है। इसके बाद 'युगवाणी' में इस परिवर्तन के कारण मानववादी चेतना सबसे पहले व्यक्त हुई जो कहीं मार्क्स के साम्यवाद की ओर उन्मुख थी, कहीं सीधी प्रकृतवादी यथार्थ की ओर। सन् १९३४ और १९३७ ई० के बीच कितने ही कवियों की रचनाओं में नव-मानववाद दृष्टिगोचर होता है।

वैयक्तिकता या आन्तरिकता की प्रस्तुति के लिए नवस्वच्छन्दतावादी कवि मिथक, बिम्ब, प्रतीक एवं प्रगीतात्मकता को अपनी अभिव्यंजना के माध्यम बनाते हैं। स्वच्छन्दतावादी चेतना में वैयक्तिकता ही सर्वोपरि होती है। इसीके फलस्वरूप कथ्य एवं शिल्प बनते हैं। ऐसी स्थिति में नवस्वच्छन्दतावाद वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी और यथार्थवादी चेतना का विलयन है। यथार्थवादी चेतना के दोनों पक्षों को साथ लेकर चलनेवाली काव्ययात्रा नवस्वच्छच्छन्दतावादी कवियों की है। इसमें समाजवादी यथार्थवादी प्रवृत्तियों के क्रम में जैसा कि अलेक्जेण्डर फेडवे ने कहा है कि समाजवादी यथार्थवाद अपने में क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद को लिये हुए है। समाजवादी यथार्थवाद साहित्य के स्रोत की शक्तियाँ और उपयोगिताएँ सोवियत श्रमिकों का जीवन है। ऐसी स्थिति में स्वच्छन्दतावाद हमारे साहित्य का विरोधी नहीं बनता, बल्कि 'Affinity with the people' के आधार पर इससे मिल जाता है। इस तरह बिना स्वच्छन्दतावाद के जो मानव की अनुभूतियों पर विश्वास करता है, यह असंभव है कि हम उसके जीवन को चित्रित कर सकें। सर्वहारा-संस्कृति के चित्रण में कवि को अपनी स्वच्छन्दतावादी दृष्टि लेनी पड़ती है।[१५] साहित्यकार सामाजिक जीवन से कटकर नहीं चल सकता। मार्क्सवादियों के अनुसार स्वच्छन्दतावाद का क्रान्तिकारी रूप भी होता है। गोर्की ने एच० जी० वेलस को लिखे पत्र में सामाजिक स्वच्छन्दतावाद (Social Romanticism) की चर्चा की है।[१६]

समाजवादी यथार्थ स्वच्छन्दतावादी कला है। इसमें समाजवादी यथार्थ और स्वच्छन्दतावादी रुझान को पृथक् करके नहीं देखते बल्कि दोनों को मिलाकर एक भिन्न

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

प्रकार का मिश्रण बनाते हैं। इसमें समाजवादी यथार्थ स्वच्छन्द प्रवृत्ति को वायवी होने से बचाता है तथा स्वच्छन्द प्रवृत्ति कला के स्तर को उभारती है, और इन दोनों को अलग-अलग नहीं देखा जा सकता। दोनों को अलग-अलग देखने से कविता की अन्विति को आघात पहुँचता है।[१७] यथार्थवाद और स्वच्छन्दतावाद के मिश्रण के सिद्धान्त का विरोध गोर्की जीवन के अन्तिम वर्ष में कर रहा था। इसके द्वारा तब वह इस निष्कर्ष पर आया कि 'समाजवादी यथार्थवाद' की व्यापकता अपने में एक तत्त्व क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद को लिये हुए है और इससे अधिक इसकी व्याख्या की आवश्यकता नहीं है।[१८] अनातोली लुनाचार्स्की ने भी समाजवादी यथार्थवाद और स्वच्छन्दतावाद के अन्तः सम्बन्ध पर विचार किया है। उनका कथन है कि हमारा स्वच्छन्दतावाद समाजवादी यथार्थवाद का प्रमुख अंग है। कुछ अंशों तक स्वच्छन्दतावादी तत्त्व के अभाव में समाजवादी यथार्थवाद की कल्पना नहीं की जा सकती। यही तत्व इसे मात्र तटस्थ चित्रण होने से बचाता है। लेकिन यह स्वच्छन्दतावाद बुर्जुआ स्वच्छन्दतावाद से भिन्न होता है। बुर्जुआ स्वच्छन्दतावाद में कल्पित और अप्राप्य आदर्श के प्रति आसक्ति का भाव पाया जाता है जब कि समाजवादी यथार्थवाद में प्रेरित आदर्श और कर्तव्यपरायणता के प्रति। समाजवादी चेतना से आक्रान्त कवि भी वर्तमान व्यवस्था से असन्तुष्ट होने के कारण विद्रोही होता है। समाजवादी यथार्थवाद यथार्थ चित्रण का नहीं, अपितु यथार्थ सम्भावना का साहित्य होता है। समाजवादी यथार्थ जीवन के प्रति एक इतिहास निर्देश दृष्टि को स्वीकार करता है। इसलिए समूचा मानव-जीवन उसका कार्यक्षेत्र होता है। यथार्थवादी दृष्टि के कारण कवि में जीवन को समझने की अद्भुत क्षमता होती है और वह जन-साधारण के कष्टों का चितेरा बन जाता है। समाजवादी यथार्थवादी चेतना में भूत, वर्तमान और भविष्य सबका विवेचन किया जाता है, लेकिन उसकी दृष्टि भविष्य पर ही केन्द्रित होती है।

आज की समाजवादी कविता के लिए रोमैंटिसिज्म बहुत फलप्रद हो सकता है। इस बात में काफी सच्चाई है कि बीसवीं सदी के बुर्जुआ समाजवादी कवि का गहरा लगाव प्रश्नातीत मूल्योंवाले किसी स्थिर जन-समुदाय से नहीं है। अराजक लोकनायक ब्रेख्त ने अपने जीवन के परिपक्व समाजवादी वर्ष प्रवास में बिताए। मायाकोव्सकी आरम्भ में भविष्यवादी थे, ऐलुआर, अरागों, नेरुदा 'सुर-रियलिस्ट' थे। यदि ये आन्दोलन बीसवीं शती के रोमैंटिसिज्म नहीं तो क्या है? सर्वनाशी विद्रोह, सनकीपना, निजी फैन्टेसी का सृजन मानसिक रहस्यमयता आदि बातें किस प्रवृत्ति के सूचक हैं? इसे १९१४ के बाद के रूपक समझना चाहिए। अराजकता के कगार पर बैठा हुआ जो कवि समाजवादी क्रांति में आस्था और बन्धुत्व प्राप्त करता है उसके निसर्ग-पूर्वज निश्चित रूप से आरम्भिक रोमांटिक कवि ही हो सकते हैं। आधुनिक युग के विद्रोही कवियों ने संसार के राजनीतिक संघर्षों और जनतांत्रिक मुक्ति-युद्धों में उसी तरह सक्रिय भाग

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लिया जैसे बायरन, शेली, पुश्किन आदि रोमांटिक कवियों ने अपने समय के मुक्ति-युद्धों में हिस्सा लिया।[१९] स्टैनली मिचेल का कथन है कि निस्सन्देह समाजवादी के नाते हम रोमांटिक विरासत के साझीदार हैं लेकिन रोमांटिक कवियों को समाजवादी समझना गलत है।[२०]

ब्रेख्त ने अपनी प्रकृति के अनुरूप यहाँ भी दोनों पक्षों के तर्क प्रस्तुत किए हैं—

ओ हम
जिन्होंने दोस्ती के लिए जमीन तैयार करना चाहा
अपने-आपके ही दोस्त न हो सके।
लेकिन तुम अन्त में जब
आदमी सचमुच अपने साथी की मदद कर सके
याद करना हमें
तनिक नरमी से।[२१]

प्रगतिवादी चिन्तक मात्र भावुकता और रोमानियत के विरोधी होते हुए भी सामान्यतः सरस भावनाओं के विरोधी नहीं है। उनका विरोध सर्वथा यथार्थ से असम्पृक्त रूमानियत से है।[२२] इस युग की आवश्यकता ने जैसा उग्र रूप धारण कर लिया है, इससे प्राचीन विश्वासों में प्रतिष्ठित हमारे भाव और कल्पना के मूल हिल गये। श्रद्धा विश्वास में पलनेवाली संस्कृति का वातावरण आन्दोलित हो उठा है और काव्य की स्वप्नजड़ित आत्मा जीवन की कठोर आवश्यकता के उस नग्न रूप से सहम गयी हैं। अतएव इस युग की कविता सपनों में नहीं पल सकती है, उसकी जड़ों को अपनी पोषण सामग्री धारण करने के लिए कठोर धरती का आश्रय लेना पड़ रहा है।[२३] "मानव-जीवन और संस्कृति के भविष्य के सम्बन्ध में इतना स्वस्थ और आशावादी दृष्टिकोण रखने के कारण गोर्की का यथार्थवाद वर्तमान जीवन की विभीषिका तक ही अपने को सीमित नहीं करता, वह उसके आगे, नवीन भविष्य के निर्माण का स्वप्न भी देखता है। यह स्वप्न पलायनवादी रंगीन हवा महल नहीं है। यह स्वप्न-क्रूर यथार्थ के साथ संघर्ष करनेवाले क्रांतिकारी की नवीन विश्व-योजना है। इसकी जड़ आकाश में नहीं, धरती में है, आज के यथार्थ के वक्ष में है। अपने इस सिद्धान्त को गोर्की ने क्रांतिकारी रोमांस (Revolutionary Ramanticism) कहा है, पर आज इसीको समाजवादी यथार्थवाद (Socialist Realism) कहते हैं।[२४] "स्पष्ट है कि समाजवादी यथार्थवाद अतीत के यथार्थवाद की परम्पराओं का अवलम्बन लेता है और आज की परिस्थितियों के अनुरूप उनका सम्बर्द्धन तथा विकास करता है। समाजवादी यथार्थवाद की कला अपने में पुरानी यथार्थवादी कला के अनुभव को ही नहीं, अन्य कला-प्रवृत्तियों की प्रगतिशील परम्पराओं को भी समाहित करती है। इस तरह समाजवादी यथार्थ की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

प्रणाली की एक मुख्य विशेषता जीवन का ऐसा विश्लेषणपरक तथा काव्यात्मक अवबोधन है कि जो वास्तविकता का उसकी गतिशीलता में चित्रण करने की अपेक्षाओं को पूरा करता है। इसी तरह समाजवादी यथार्थवाद में पायी जानेवाली क्रांतिकारी रूमानियत काफी हद तक क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद की कला में पनपी हुई परम्परा का सहारा लेती हैं। किन्तु इसके साथ ही समाजवादी यथार्थवाद अतीत के यथार्थवाद से बुनियादी तौर पर भिन्न है। उसमें ऐसी नयी विशेषताएँ तथा लक्षण पाये जाते हैं, जिनका सम्बन्ध वास्तविकता के प्रति कला के नये दृष्टिकोण से है।"[२५]

हिन्दी की छायावादोत्तर कविता के इतिहास को बहुधा अनेक अभिधाओं के द्वारा विभाजित करने का प्रयास किया गया है। यह भी कहा गया है कि छायावाद के अनन्तर हमारे काव्य की धारा वैयक्तिक, राष्ट्रीय, सांस्कृतिक, अनुभूतिपरक, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता, नवगीत, अकविता तथा अन्य दिशाओं की ओर अग्रसर हुई है। इन विविध नामों के माध्यम से छायावादोत्तर हिन्दी कविता का पूर्ण और निष्पक्ष विवेचन नहीं किया जा सकता। अगर हम किसी युग के काव्य का मूल्यांकन वादीय दृष्टि से करते हैं तो उस युग की वादरहित किन्तु अन्य दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण रचनाएँ हमारी दृष्टि से ओझल हो जाती हैं। "परन्तु लोग आलोचना करते समय किसी खास 'वाद' के दायरे में बाँधकर ही साहित्य को देख पाते हैं। यह तरीका एकदम गलत है। साहित्य के 'वाद' दार्शनिक या वैज्ञानिक प्रणालियाँ नहीं है, वे केवल साहित्य के दृष्टिकोण हैं।[२६] 'साहित्यिक वाद' साहित्य के दृष्टिकोण हैं। वह तो मानव-मन की तरंग की तरह कभी रोमांटिक, कभी क्लासिक और कभी यथार्थ भाव-बिन्दुओं को उभारता चलता है, सर्जन में भी, आलोचना में भी। वास्तव में अच्छी काव्य-सर्जना को प्रस्तुत करते समय कवि 'वाद' के घेरे में नहीं रह सकता। अगर वह 'वाद' के घेरे से बाहर नहीं निकल पाता तो उत्तम काव्य-सर्जना संभव नहीं है। जहाँ भी श्रेष्ठ साहित्य की रचना होती है, वहाँ कवि या लेखक किसी विशेष 'वाद' के प्रांगण में ही भ्रमण नहीं करता, प्रत्युत उसके सामने साहित्य का विशाल क्षेत्र पड़ा रहता है। उसी में वह विचरण करता है, चाहे उसे कोई क्लासिक कह ले या रोमांटिक या यथार्थवादी। किसी सम्प्रदायविशेष के काव्य के मूल्यांकन के लिए वादीय दृष्टि प्रणाली उपयोगी हो सकती है, लेकिन इन संकुचित सीमाओं में युग की समस्त काव्य-चेतना का विश्लेषण नहीं किया जा सकता। इस महान् कार्य के लिए व्यापक एवं विस्तृत फलक को लेकर आगे बढ़ना चाहिए। छायावादोत्तर हिन्दी-कविता कई उतारों-चढ़ाओं के बीच की कविता है। वह चाहे वैयक्तिक कविता हो, चाहे प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता, नवगीत, अकविता हो, वे सब निश्चित रूप से हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य-चेतना के विकास-सोपान हैं। इन सभी विकास-सोपानों में आधुनिक हिन्दी-कविता की चेतना कल्पना / यथार्थ वैयक्तिकता / सामाजिकता, विद्रोह / क्रान्ति, आधुनिकता /

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रोमांटिक आयरनी, यथार्थवाद / नवयथार्थवाद, मानववाद / नवमानववाद की क्रांति-चेतना से जुड़ी हुई है।

नवस्वच्छन्दतावादी चेतना वैयक्तिक आन्तरिक गीतिकाव्य के रूप में अभिव्यक्त हुई है। कवि इसके माध्यम से अपनी आन्तरिक अनुभूतियों की बात तो करता ही है, साथ ही सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक स्थितियों से विद्रोह भी करता है। इस विद्रोह में सामाजिक यथार्थवादी चेतना अपनी स्वच्छन्द उड़ान में, लोक-जीवन, संस्कृति, लोकसंस्कृति एवं लोकगीतों में प्रकट होती है। कवि अपनी आन्तरिक भावनाओं एवं सामांजिक विषमताओं को मिथक, बिम्ब, प्रतीक एवं रोमांटिक आयरनी के द्वारा समाज के सामने रखता है। शिल्प-तंत्र में कवि यहाँ अकेला दिखाई देता है। वस्तुतः नवस्वच्छन्दतावादी कविताओं के शिल्प में वैयक्तिक एवं अन्तःचेतना की गहन अभिव्यक्ति हुई हैं।

प्रगीत के द्वारा नवस्वच्छन्दतावादी कवि अपनी आन्तरिकता को सहज एवं कलात्मक ढंग से व्यक्त करता है। बच्चन, दिनकर, अंचल, नरेन्द्र शर्मा, सुमन, केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन, नागार्जुन, गिरिजाकुमार माथुर, नरेश मेहता, केदारनाथ सिंह, धर्मवीर भारती, शंभुनाथ सिंह, रवीन्द्र भ्रमर, रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरुण', अज्ञेय आदि ऐसे ही कवि हैं। इसके अतिरिक्त कुछ कवि ऐसे भी हैं जो समाजवादी यथार्थवाद से प्रभावित होकर लोक-जीवन, लोक-परिवेश व लोक-संस्कृति को अपनी आंतरिकता का विषय बनाते हैं। यह प्रस्तुतीकरण भी स्वच्छन्दतावादी कलात्मक धरातल पर होती हैं अर्थात् कवि की अनुभूति सामाजिकता में इस तरह घुल-मिल जाती है कि लगता है जैसे कवि की अपनी आन्तरिक चेतना बोल रही है। शिवमंगल सिंह 'सुमन', त्रिलोचन, नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, केदारनाथ सिंह आदि कवि इसी पंक्ति में आते हैं।

सामाजिक चेतना से आक्रान्त कवि सुमन, त्रिलोचन, नागार्जुन, केदारनाथ सिंह, केदारनाथ अग्रवाल आदि की कविताओं में यह वैयक्तिक आन्तरिकता व विद्रोही भाव नवस्वच्छन्दतावादी चेतना से युक्त हैं। इसके अतिरिक्त संस्कृति, लोक-संस्कृति, लोक-जीवन एवं लोक-परिवेश की अभिव्यंजना इतनी बारीकी से करते हैं जिससे लगता है कि वे आन्तरिकता को आंचलिकता से पाग रहे हैं। निश्चय ही सामाजिक चेतना की ये प्रवृत्तियाँ आधुनिक हिन्दी-कविता में सन् १९३७ई० से उभरने लगती हैं। नवस्वच्छन्दतावादी विचारधारा को बल प्रदान करनेवाला साप्ताहिक पत्र 'जनता' (१९३७ ई०) था। 'जनता' कांग्रेस समाजवादी पार्टी का पत्र था, जिस पर जयप्रकाशनारायण से प्रभावित 'कांग्रेस समाजवादी पार्टी' के एक गुट का नियंत्रण था। इस पत्र के द्वारा किसानों में नव-जागृति की भावना को बल मिलता है। सितम्बर १९३९ ई० में जब द्वितीय विश्व-युद्ध छिड़ा तो 'जनता' ने पूरी तैयारी के साथ अन्तर्राष्ट्रीय अंक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

निकाला। अतः ऐतिहासिक दृष्टि से 'रूपाभ' के प्रकाशन, राज्यों में कांग्रेस की सरकार की आंशिक स्थापना के फलस्वरूप कवियों में एक नयी चेतना जागृत होती है और यहीं से स्वच्छन्दतावाद परिवेश से टकराकर एक नया रूप लेता है। अनूभूतिपरक कविता (वैयक्तिक कविता) प्रगतिवादी कविता, प्रयोगवादी कविता, नई कविता, नवगीत एवं अकविता में अपना रूप सँवारता चलता है। सामाजिक चेतना को कवि ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में आंतरिकता से युक्त करके व्यंग्यों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। इस अवधि में प्रकाशित अनेक कविता-संग्रहों के नाम भी स्वच्छन्दतावादी चेतना से जुड़ा हुआ है। अज्ञेय की 'हरी घास पर क्षणभर', 'बावरा अहेरी', 'इन्द्र धनु रौंदे हुए', गिरिजाकुमार माथुर के 'धूप के धान', केदारनाथ अग्रवाल के 'फूल नहीं रंग बोलते हैं', नागार्जुन के 'सतरंगी पंखोंवाली', 'तालाब की मछलियाँ', त्रिलोचन के 'दिगन्त', 'धरती', नरेश मेहता के 'वन पाखी सुनो', धर्मवीर भारती की 'कनुप्रिया', श्रीकांत वर्मा की 'भटका हुआ मेघ', रघुवीर सहाय की 'सीढ़ियों पर धूप में', रामविलास शर्मा की 'रूप-तरंग' इत्यादि। नवस्वच्छन्दतावादी चेतना के फलस्वरूप इस बीच बौद्धिक प्रयोगशील कवि ही नहीं, सामाजिक चेतना से आक्रांत कवि भी अपने संग्रहों के लिए रूप-रंग से स्वच्छन्दतावादी नाम का चयन कर रहे थे।

प्रयोगवाद, नई कविता में भी आंतरिकता-वैयक्तिकता का दौर चलता है। कवि अपनी चेतना की अभिव्यंजना वैयक्तिक धरातल पर करता है। यत्र-तत्र लोक-परिवेश को अपनी चेतना का विषय बनाता है। वैयक्तिकता एवं यथार्थता को ये कवि प्रगीत एवं प्रतीक के रूपों में अभिव्यंजित करते हैं। अज्ञेय, प्रभाकर माचवे, गिरिजाकुमार माथुर, केदारनाथ सिंह, नेमिचन्द्र जैन, नरेश मेहता, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, गजानन माधव मुक्तिबोध इत्यादि कवियों की कविताएँ ली जा सकती हैं। 'तार-सप्तक' से बढ़कर स्वच्छन्दतावादी चेतना 'दूसरा सप्तक' में दिखाई पड़ती है। "नई कविता ने अपने भाव-बोध और उपमानों का ऐसा कल्पना-लोक रच लिया है जो छायावाद से कहीं ज्यादा काल्पनिक और रीतिवाद से कहीं ज्यादा रूढ़िबद्ध है।"[२७] मुक्तिबोध का कथन है—"दूसरे सप्तकवाले अपनी नवीन रोमांटिक भावनाएँ लेकर प्रयोगवाद में आये। दूसरा सप्तक रोमांटिक परिधान की दृष्टि से अधिक मनोरम है। रोमांटिक भावनाएँ जीवन की यथार्थता है।"[२८] "छायावादी काव्य-रचना की प्रक्रिया जहाँ भीतर से बाहर की ओर है वहाँ नई कविता की रचना-प्रक्रिया बाहर से भीतर की ओर है। एक में रूप पर भाव का आरोपण है तो दूसरी में रूप का भाव में रूपान्तरण है। कवि और पाठक के बीच जोड़नेवाली कड़ी 'आस्था' नहीं, यथार्थ है।"[२९] नवस्वच्छन्दतावादी चेतना स्वच्छन्दतावाद से भिन्न है, क्योंकि यहाँ यथार्थ का रंग चढ़ा हुआ है। ये कवि रागात्मकता से अधिक रागात्मक सम्बन्धों पर ध्यान देते हैं तथा अनुभूति से अधिक अनुभूतियों के परिवर्तित संदर्भ पर विशेष बल देते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इस कथन की पुष्टि करते हुए 'दूसरा सप्तक' में अज्ञेय कहते हैं—"हमारे मूल राग-विराग नहीं बदले—प्रेम अब भी प्रेम है और घृणा अब भी घृणा है, यह साधारणतया स्वीकार किया जा सकता है। पर यह भी ध्यान में रखना होगा कि राग वही रहने पर भी रागात्मक सम्बन्धों की प्रणालियाँ बदल गई हैं।"[३०] "छायावाद से विपरीत नई कविता में जिस प्रकार रूप भाव-ग्रहण करता है, तथ्य सत्य हो जाता है और अन्ततः अनुभूति निर्वैयक्तिक हो जाती है, उससे स्वयं कविता की संरचना में भी गहरा परिवर्तन आ जाता है।"[३१] 'नई कविता' की स्वतंत्र स्वीकृति को अस्वीकृत करते हुए डॉ० नामवर सिंह का कथन है कि छायावादी काव्य-संस्कार आज भी कितने प्रबल हैं। इन संस्कारों के रहते हुए नयी कविता की स्वीकृति का कोई अर्थ नहीं।[३२] "नई कविता वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी संस्कार का विस्तार है, इन कविताओं में स्वच्छन्दतावादी संस्कार अभी भी विद्यमान है। ऐसी स्थिति में इसे स्वच्छन्दतावाद का नया विकास नवस्वच्छन्दतावाद कहना उपयुक्त है। 'नई कविता' में वस्तु सत्य सिमटकर 'आत्म-सत्य' हो गया है। अन्वेषण की जो राह बाहर की ओर जा रही थी वह सहसा अन्दर की ओर मुड़ गयी, जो वास्तविकता से हटकर ईमानदारी पर आ गयी। उल्लेखनीय है कि १९५१ में 'प्रतीक' के सम्पादकीय ने काव्य में 'ईमानदारी' का नारा दिया, जिससे आगे चलकर 'अनुभूति' की प्रामाणिकता की अवधारणा विकसित हुई। बौद्धिकता का स्थान 'रागात्मकता' ने लिया और छायावाद-युग का प्रिय शब्द 'अनुभूति' पुनः प्रचलन में आ निकला।"[३३] "दृष्टि रोमेंटिक होने मात्र से भावना का ज्ञानात्मक आधार कमजोर नहीं होता। ज्ञानात्मक आधार कमजोर तब होता है जब कवि समाज से प्राप्त अद्यतन ज्ञान की उपेक्षा कर अद्यतन ज्ञान द्वारा संप्रेरित भावनाओं से दूर हटकर केवल ऐकांतिक निबिड़ लोक में ही विचरण करता है।"[३४] वस्तुतः नई कविता स्वच्छन्दतावादी भावुकता एवं स्वच्छन्दतावादी संस्कारों से मुक्ति नहीं पा सकी है। 'तीसरा सप्तक' स्वच्छन्दतावादी दृष्टि से 'तार-सप्तक' एवं 'दूसरा सप्तक' से भी आगे है। सर्वहारा-संस्कृति से प्रेम करनेवाले यथार्थवादी कवि केदारनाथ अग्रवाल को अब 'केन नदी की हंसों जैसी जाँघ'[३५] देखने की स्वतंत्रता मिल गई थी। अकाल के बारे में 'प्रेत का बयान' करनेवाले नागार्जुन अब यह भी स्वीकार करने लगे हैं कि—

बहुत दिनों के बाद
अबकी मैं जी-भर सुन पाया
धान कूटती किशोरियों की कोकिल कंठी तान
बहुत दिनों के बाद।[३६]

यह नवस्वच्छन्दतावादी काव्य यथार्थ एवं कल्पना, सर्जनात्मक एवं सक्रिय कल्पना के योग से निर्मित एक नवीन भावबोध एवं नूतन शिल्प की सुन्दर अभिव्यंजना है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

प्रस्तुत परिप्रेक्ष्य में लक्ष्मीकांत वर्मा का यह कथन उल्लेखनीय है—नई कविता और छायावाद के बीच जो अर्द्ध-चेतन मन में समझौता प्रयोगवाद के रूप में हुआ था वह सबका सब उलटकर आ पड़ा है। प्रयोगवाद में जिस अन्वेषण की बात अज्ञेय ने उठायी थी वह केवल 'तथ्य' और 'कथ्य' तक ही सीमित रही, अज्ञेय ने तथ्य और कथ्य को केवल 'तथ्य' और 'कथ्य' तक ही लिया था। उन्होंने इस कथ्य और तथ्य के पीछे भावबोध के परिवर्तन पर विचार नहीं किया है।[३७] स्वच्छन्दतावादी काव्य की वैयक्तिक चेतना क्रमशः विकृत होती हुई नयी कविता में अस्तित्ववाद के रूप में भी दिखायी देती है। चरम व्यक्तिवाद को वह सामाजिक दर्शन का रूप देकर प्रस्तुत करती है। अशोक वाजपेयी नई कविता में स्वच्छन्दतावाद को स्वीकारते हुए कहते हैं—"इसमें छायावाद की दार्शनिक मान्यताएँ और काव्य-मुद्राएँ अभी भी विद्यमान हैं जिनका मूल स्रोत अब छायावादियों की तरह कालिदास या अन्य संस्कृत कवियों का सौन्दर्य-बोध नहीं है, बल्कि लोकगीत या लोकलय है।"[३८] लोकगीतात्मक शैली के कारण नयी कविता में स्वच्छन्दतावाद का नया रूप मिलता है। श्री लक्ष्मीकान्त वर्मा ने 'लहर' के अंकों में बड़े विस्तार से यह दिखलाया है कि अज्ञेय से लेकर सर्वेश्वर तक प्रायः सभी प्रयोगशील कवि किसी-न-किसी रूप में कमोबेश रोमाण्टिक भाव-बोध से ग्रस्त हैं।[३९]

नवगीत में भी प्रगीतात्मकता की स्वच्छन्दता तो मिलती ही है। यहाँ पर प्रगीत के द्वारा कवि लयात्मकता के साथ अपनी आंतरिकता को स्वच्छन्दतावादी रूप देता है। इस धारा में कुछ कवि विशुद्ध वैयक्तिक काव्यधारा की चेतना लिये हुए हैं जिनमें ठाकुरप्रसाद सिंह, वीरेन्द्र मिश्र, उमाकान्त मालवीय, शंभुनाथ सिंह, रवीन्द्र भ्रमर आदि प्रमुख हैं। कुछ अन्य कवियों ने सामाजिक चेतना को वैयक्तिक धरातल पर लोक-जीवन के संदर्भ में बारीकी से कलापूर्ण ढंग से अभिव्यक्त किया है। इनकी कविता आंचलिकता को वाणी देती है। इस दृष्टि से हरीश भदानी, केदारनाथ सिंह, रमेश रंजक, रामावतार त्यागी, बालस्वरूप राही, रमानाथ अवस्थी आदि के नाम लिये जा सकते हैं। इसके बाद अकविता का दौर आता है। इस दौर में भी एक नयी रोमानियत देखी जा सकती है। यहाँ शहरी जीवन का परिवेश है। अकविता में सपाटबयानी में तनाव छिपा हुआ है। 'अकविता' के दौर में सौमित्र मोहन की लम्बी कविता 'लुकमान अली' अति यथार्थवादी विन्यास की याद दिलाती है। अति यथार्थवादी चेतना भी स्वच्छन्दतावादी चेतना का ही एक नया विस्तार है। 'अकविता' में सेक्स की जिज्ञासा, इतिहास का निषेध, विचार की अस्वीकृति, सत्ता से विद्रोहाभास आदि हैं। 'अकविता' भयानक और आतंकवादी यथार्थ से आँखें मिलाने का पाखंड करती है। प्रत्यक्षीकरण को व्यर्थताबोध, निरर्थकता बोध, मृत्यु-बोध, निष्कासन बोध से मंडित कर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

देती है। ऐसा दृसस्फीत प्रत्यक्षीकरण असार्थक होता है जो हमें शब्दार्थ से आगे केवल अंधकार में छलाँग लगवा देता है तथा भाषा में मुहावरों और लतीफों का मोहक जाल रचता है। छायावादोत्तर नयी छायावादी कविता का मूल्यांकन करते हुए डॉ० रामविलास शर्मा ने कहा है कि "आज तक भी किसिम-किसिम की नयी छायावादी कविता लिखी जा रही है।"[४०]

प्रोफेसर नामवर सिंह का कहना है कि "चौंकना न चाहिए यदि यह कहा जाय कि आज हिन्दी के अधिकांश काव्य-प्रेमियों के संस्कार रोमांटिक हैं—साधारण पाठक तो रोमांटिक-संस्कार से बँधे हैं ही, अनेक नये कवि और आलोचक भी जाने-अनजाने कहीं-न-कहीं रोमांटिक असर में हैं।"[४१] इसी क्रम में श्री सुमित्रानन्दन पंत के शब्दों में भी यह कहा जा सकता है : "अपने अमूर्त भावबोध, सूक्ष्म कला-भंगिमा, अन्तर्मुखी अनुभूति आदि की श्लक्ष्णता के कारण, अमिश्रित साहित्यिक संचरण होने से, प्रयोगवाद और नई कविता को आप छायावाद का भी छायावाद कह सकते हैं; जिस जीवन-यथार्थ के सामाजिक स्तर का बोध प्रगतिवाद ने बहिर्मुखी उत्थान में दिया उसीके अन्तःप्रसरित सूक्ष्म पक्ष का प्रच्छन्न-बोध व्यक्ति-चेतना के भीतर से नयी कविता दे रही है।"[४२]

हिन्दी की नयी कविता या आज की अन्य भंगिमा की कविताओं में भाषा छन्द, मिथक, बिम्ब, प्रतीक, प्रगीत एवं रूपक की अभिव्यक्ति नये रूपों में होती है। ऐसी स्थिति में आधुनिक कविता शिल्पगत धरातल पर व्यक्तिपरक ही रहती है, क्योंकि भाषा, छन्द, मिथक, बिम्ब, प्रतीक, प्रगीत एवं रूपक कवि-मन की उपज है। आधुनिक हिन्दी कविता स्वच्छन्दतावाद के अनन्तर एक नया मोड़ लेती है। इस बिन्दु पर हिन्दी कविता स्वच्छन्दतावादी बोध से छुटकारा पाने के लिए छटपटाती तो है, लेकिन इसकी साधना विफल रहती है। लेकिन यहाँ स्वच्छन्दतावाद में यथार्थवाद का संयोग होने के फलस्वरूप स्वच्छन्दतावाद एक नये रूप में दिखाई पड़ता है। इसलिए स्वच्छन्दतावादी या छायावादी दौर के पश्चात् की कविताओं में स्वच्छन्दतावादी आधुनिक बोध को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। इसे ही नवस्वच्छन्दतावाद, नवरोमानवाद के नाम से अभिहित किया जा सकता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि स्वच्छन्दतावादी, नवस्वच्छन्दतावादी विचारधाराएँ एवं प्रवृत्तियाँ आज की कविताओं में भी मिलती हैं।

मेरी अपनी दृष्टि में आधुनिक हिन्दी कविता में स्वच्छन्दतावादी चेतना का ही स्पन्दन है, क्योंकि इसमें रूढ़ियों के प्रति विद्रोह का स्वर बहुत साफ है। फिर वह विद्रोह चाहे समाज की रूढ़ियों के प्रति हो, चाहे साहित्य की कलात्मक सत्ता के प्रति हो। इसलिए हिन्दी छायावादोत्तर काव्य की सारी प्रवृत्तियों को नवस्वच्छन्दतावाद नाम से सम्बोधित किया जाना चाहिए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

अंग्रेजी आलोचकों का एक वर्ग यह मानने से इनकार करता है कि यूरोप में स्वच्छन्दतावाद समाप्त हो गया। बल्कि उनका यह कहना है कि विक्टोरिया-युग में जो स्वच्छन्दतावादी तत्त्व काम कर रहे थे, ऐसा लग रहा था कि स्वच्छन्दतावादी आन्दोलन लाने की चेष्टा की जा रही है। संवेदनशील कवि मशीनीकरण से ऊब गये थे और उन्होंने इस मान्यता में सचाई देखी कि सभ्यता के साथ-साथ काव्य का हनन हो रहा है। परन्तु, यदि हम आस्कर वाइल्ड की रचनाओं और स्पिनवर्न की रचनाओं से गुजरें तो पायेंगे कि उसमें स्वच्छन्दतावाद के स्वर सुनायी पड़ते हैं। अंग्रेजी कविता में स्वच्छन्दतावादी-युग के बाद टेनिसन, ब्राउनिंग एवं मैथ्यू आरनाल्ड में जो स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं, उनका रूप बदला हुआ है। काव्यात्मक अभिव्यंजना पर यथार्थवाद का प्रभाव दिखाई पड़ता है। स्वच्छन्दतावाद और यथार्थवाद के समन्वय से काव्य में एक नयी चेतना उभरती है। क्योंकि मार्क्स तथा ऐंजिल्स के विचारों का यथार्थवादी प्रहार साहित्य पर होने लगा और विशुद्ध स्वच्छन्दतावाद का चल पाना यूरोप में कठिन हो गया। मैथ्यू आरनाल्ड जिसमें कवि-आलोचक के सम्मिलित व्यक्तित्व हैं, 'सांस्कृतिक संदर्भों' को अधिक महत्त्व देते हैं। सांस्कृतिक संदर्भों की नूतन प्रस्तुति में भी स्वच्छन्दतावादी चेतना परिवर्तित रूप में दिखाई पड़ती है। यद्यपि परिवेश के कारण बदलाव आया। वे बुद्धि और भावना दोनों को साथ लेकर चलते हैं। डब्ल्यू० बी० यीट्स (१८६५—१९३९) की रहस्योन्मुखी प्रवृत्तियाँ बौद्धिक होते हुए भी स्वच्छन्दतावाद से जोड़ी जाती हैं। वह प्रगीत-सृष्टि और बैलेड्स को अभिव्यंजना का माध्यम बनाता है। यीट्स की कविता में 'रोज़' एक प्रतीक के रूप में आया है जो उनकी प्रेमिका 'मॉडगान' के लिए है। यीट्स अपनी कल्पना को देहाती जीवन की कथा से जोड़ता है। केल्टिक आन्दोलन आयरिश साहित्य में बाद का स्वच्छन्दतावाद था जिसमें वह किसान-जीवन का गीत लिखता है और उसमें लोक-कल्पना की अभिव्यक्ति करता है। जान वेली ने आधुनिक कवियों में डब्ल्यू० बी० यीट्स, डब्ल्यू० एच० आडन तथा डायलन थामस की कविताओं में स्वच्छन्दतावाद को जिन्दा देखता है।[४३] कार्ल क्रोबर का कथन है कि १९५० से प्रारम्भ होनेवाले दशक के अन्त में स्वच्छन्दतावाद आधुनिक हो गया। इनका यह भी कहना है कि "मैंने ही बीसवीं शताब्दी के साहित्य और स्वच्छन्दतावादी साहित्य के मध्य सातत्य को प्रोत्साहित किया।"[४४]

आर० ए० फोक्स की पुस्तक 'रोमांटिक एसरसन' भी यह चित्रित करती है कि प्रतीकों का रोमांटिक विधान संगति के वियन का योग देता है। स्पष्टतः रोमांटिक शब्दावली की घोषणा की विषमता आधुनिक कविता में संघर्ष और आयरनी से है। इसके विपरीत फ्रैंक करमोड अपनी पुस्तक 'रोमांटिक इमेज़' (१९५७) में आधुनिक प्रतीक की प्रेरणा को मुख्यतः यीट्स में सीधे स्वच्छन्दतावाद से अंकित करते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDR

फ्रांसीसी का प्रतीक रोमांटिक बिम्ब है जो विस्तृत है और जिसे विस्तृत पराभौतिक और जादुई आधार मिला हुआ है।[४५] ग्राहम हक ने अपनी पुस्तक 'दि लास्ट रोमांटिक्स' में ऐसे साहित्यकारों व कवियों की चर्चा की है, जिनके विचारों में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं।[४६] इस तरह हम देखते हैं कि विक्टोरिया-युग के बाद की कविताओं में भी स्वच्छन्दतावाद के कुछ अवयव दिखाई देते हैं। टेनिसन, रोज़ेटी, राबर्ट ब्राउनिंग, विलियम मौरिस जैसे कवि आगे चलकर समाजवादी यथार्थ से जुड़े। स्टीफेन स्पेण्डर मार्क्स और फ्रायड के विचार के समन्वय द्वारा एक नयी उपलब्धि लाने का प्रयास कर रहा था। वैयक्तिकता / सामाजिकता का द्वन्द्व आडन-वर्ग के लगभग सभी कवियों की कविताओं में मिलता है। वस्तुतः द्वन्द्व मनःस्थिति के बावजूद इन कवियों ने अपने समय के कार्य को एक नयी दिशा दी।

साहित्य के इतिहास के अनुसार १९५० दशक तक इलियट और नई आलोचना के एकाधिकार के विपरीत प्रतिक्रिया पूरे वेग में आ चुकी थी तथा इसके एक अंश के रूप में स्वच्छन्दतावाद का पुनरागमन हो रहा था। इंग्लैंड में नवरहस्योद्घाटन के कवि विश्व-महायुद्ध के दौरान आविर्भूत हो चुके थे तथा १९४० के दशक का उत्तरार्द्ध तथा १९५० के दशक के आरम्भिक वर्ष डायलन थामस के उत्थान के वर्ष थे। ऐसा नहीं कि डायलन थामस उन दिनों महत्त्वपूर्ण कविता लिख रहे थे, बल्कि वे अपनी कविता का सुप्रसिद्ध भाट्टवत पाठ प्रस्तुत कर रहे थे जिसने कुछ समय के लिए उनके बहुत से अनुयायी बना दिये। अपने सामाजिक विद्रोह, रहस्य-वादी धार्मिकता तथा सहज काव्य के द्वारा थोड़े ही समय में बीट कवि अपना महान् प्रभाव डालने लगे थे। ऐलेन ग्रीन्सवर्ग की 'Howl' नामक कृति १९५६ में प्रकाशित हुई थी। उद्वेलित होकर पुरानी पीढ़ी के कवियों ने जिनकी निर्वैयक्तिक कविताएँ नई आलोचना से प्रभावित थीं, वे अब एकदम वैयक्तिक तथा अपने दोषों को स्वीकार के रूप में लिखना आरम्भ किया। उनकी शैली ढीलेपन और अपूर्णता का प्रदर्शन करने लगी। इसके अन्तर्गत राबर्ट लॉवेल्स का 'Life Studies' १९५९ तथा कुछ दिनों बाद जान बेरीमैन का 'Dream Songs' का नाम लिया जा सकता है। इसी बीच यूंग के लड़के और लड़कियाँ ब्लेक तथा आद्य बिम्ब काफी दिनों से क्रियाशील हो चले थे। एठीथ सीटवेल और हील्डा डूलिटिल भी अपने जीवन के पर्यवसान की ओर इनमें आ मिले थे। इनके अतिरिक्त वीज़न और रहस्यवाद के कवि के रूप में कैथलीन रेन का नाम लिया जा सकता है। अनेक कारणोंवश इन गतिविधियों को स्वच्छन्दतावादी कहा जा सकता है तथा यह आशा की जा सकती थी कि वे डेढ़ शताब्दी पूर्व आनेवाले महत्तर स्वच्छन्दतावादी कवियों के लिए भूमिका तैयार कर रहे थे।[४७]

अंग्रेजी कविता में स्वच्छन्दतावादी आन्दोलन वर्ड्सवर्थ/कॉलरिज के 'लिरिकल बैलेड्स' से अपना स्वरूप निर्माण करता है। वस्तुतः यह अंग्रेजी स्वच्छन्दतावाद का घोषणापत्र

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIL

है। बायरन, शेली, कीट्स में यह काव्यान्दोलन अपने उत्कर्ष पर है। स्वच्छन्दतावादी चेतना जीवन-यथार्थता की प्रस्तुति है। आधुनिक युग प्रतीकों का युग है। प्रतीकात्मक अभिव्यंजना यथार्थ तथा रहस्यात्मक अंकन के लिए एक उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण शिल्प है। इसलिए स्वच्छन्दतावादी/नवस्वच्छन्दतावादी चिन्तन की अभिव्यक्ति के लिए 'प्रतीक' आवश्यक है। आज का कवि अपनी अभिव्यंजना प्रतीकों के द्वारा करता है। फ्रांस में प्रतीकवादी आन्दोलन ने स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के तत्त्व को फिर से ग्रहण किया।[४८] आधुनिक स्वच्छन्दतावाद व्यक्तिवाद पर जोर देता है। यही व्यक्तिवादी चेतना 'व्यंग्यों' के माध्यम से अभिव्यक्त होती है। इस तरह हम देखते हैं कि अंग्रेजी कविता में भी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ आज भी किसी-न-किसी रूप में दिखाई पड़ती हैं। वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी वैयक्तिकता नवस्वच्छन्दतावादी दौर में शिल्प के रूप में दिखाई देती है। इस बिन्दु पर हर कवि रचना-शिल्प में एक-दूसरे से भिन्न है, इसी तरह की स्थितियाँ आधुनिक हिन्दी कविता में भी दिखाई पड़ती हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि स्वच्छन्दतावादी चेतना मानव-जीवन की विविधताओं में कहीं-न-कहीं उलझे-सुलझे रूप में विद्यमान रहती ही है।

पूंजीवादी देशों में भी समाजवादी विचारधारा साहित्य में विकसित हो रही है। केवल साहित्यिक प्रवृत्तियों की प्रतियोगिता के रूप में नहीं, बल्कि मुठभेड़ों व विरोधों की लड़ाई से। समाजवादी विचारधारा कलाकार के कार्यों की प्रकृति को निर्धारित करती है, जो अपने साथ सहजता से क्रांतिकारी सर्वहारा को लिये हुए हैं। प्रस्तुत संदर्भ में प्रसिद्ध चिली कवि पाब्लो नेरूदा को लिया जा सकता है। नेरूदा का 'मेम्बायर्स' क्रांतिकारी सर्वहारा के चित्रण का एक अद्‌भुत ग्रंथ है। पाब्लो नेरूदा कविता-संसार के इतिहास में एक युगांतकारी कवि हैं। इनके काव्य में प्रेम, प्रकृति और क्रांति की त्रिधारा प्रवहमान है। ये अपने देश की मिट्टी, उसके इतिहास तथा मिथकीय परंपराओं एवं पौराणिक संदर्भों से गहरे रूप में जुड़े हुए हैं। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि इनकी कविताएँ उनके अपने जीवन तथा अपने देश से जुड़ी हुई हैं। लेकिन उस पृष्ठभूमि के अभाव में उनकी कविताओं की व्याख्या करना दुष्कर कार्य है। वस्तुतः पाब्लो नेरूदा ने बीसवीं शताब्दी के विश्व-काव्य को एक नया संदर्भ दिया है। ये संसार के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण नवस्वच्छन्दतावादी कवि के रूप में सदैव स्मरणीय रहेंगे। इन्हें विश्व-काव्य का इतिहास कभी भी विस्मृत नहीं कर सकता है। इनकी कविताओं में प्रेम और क्रांति की विरोधी चेतना की सशक्त अभिव्यंजना हुई है। पाब्लो नेरूदा लैटिन अमेरिका की क्रांतिकारी राष्ट्रीय भावधारा के कवि भी हैं तो वे दूसरी ओर विश्व-मानवता के मुक्ति-गायक भी हैं। वस्तुतः इनकी कविताओं में प्रेम, प्रकृति और क्रांति इस तरह घुल-मिल गये हैं कि उसे बिलगाना कठिन है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रूसी साहित्य में आज भी नवस्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ; क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद या समाजवादी स्वच्छन्दतावाद के उपादान मिलते हैं। यह स्वच्छन्दतावाद जीवन या आधुनिक जीवन से पृथक् नहीं है। इसके विपरीत जीवन-दृष्टि के द्वारा देखी हुई यह जगत् की कलात्मक अभिव्यक्ति है। यह जीवन-दृष्टि अलेक्जेंडर ब्लोक के शब्दों में दसगुना तेज है।[४६]

●

सन्दर्भ

१. आस्था और सौन्दर्य, पृ० २४८।

२. आधुनिक हिन्दी-साहित्य का इतिहास, पृ० २७३।

३. भारतीय हिन्दी परिषद् के उन्तीसवें अधिवेशन के अवसर पर 'आधुनिक साहित्य : कविता' पर अध्यक्ष-पद से डॉ० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल का अभिभाषण, २५ जनवरी, १९८०, पृ० ५।

४. डॉ० इन्द्रनाथ मदान : आधुनिकता और हिन्दी-साहित्य, पृ० १७६।

५. Rene Wellek : Concepts of Criticism, p. 240.

६. L. R. Furst Romanticism, p. 64.

७. गजानन माधव मुक्तिबोध : नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ० ५४।

८. वही।

९. डॉ० रामधारी सिंह 'दिनकर' : चक्रवाल (भूमिका), पृ० २०-२१।

१०. आलोचना (त्रैमासिक) जनवरी १९७४, ('हिन्दी-साहित्य के पचीस वर्ष' डॉ० नामवर सिंह का निबन्ध) पृ० ७२।

११. काशी विद्यापीठ, वाराणसी में आयोजित निबन्ध-गोष्ठी में 'आधुनिक साहित्य कविता' पर अध्यक्ष-पद से डॉ० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल का अभिभाषण, २५ जनवरी, १९८०, पृ० ४।

१२. डॉ० शिवकुमार मिश्र : प्रगतिवाद, पृ० २१।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MHRD

१३. हरिवंशराय बच्चन : आधुनिक कवि, पृ० ६३ ।
१४. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' : हम विषपायी जनम के, पृ० ४९३ ।
१५. Yuri Barabash : Aesthetics and Poetics, p. 132.
१६. Gorki on Literature, p. 368.
१७. Yuri Barabash : Aesthetics and Poetics, p. 133.
१८. Avnerzis : Foundations of Marxist Aesthetics, p. 282.
१९. सम्पादक नामवर सिंह, त्रैमासिक आलोचना, पूर्णाङ्क ४०, अक्टूबर—दिसम्बर, १९६७, पृ० २२ ।
२०. वही, पृ० २४ ।
२१. वही, पृ० २४ ।
२२. चन्द्रबली सिंह : रोमांटिक कला, नई चेतना, ५, १९५१ ।
२३. सम्पादकीय, रूपाम, वर्ष १, अंक १, जुलाई, १९३८ ।
२४. अमृतराय : नयी समीक्षा, पृ० ८० ।
२५. आन्नेर ज़िस : कला के वैचारिक और सौंदर्यात्मिक पहलू, पृ० १८६ ।
२६. मुक्तिबोध : नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ० १०९ ।
२७. डॉ० रामविलास शर्मा : नयी कविता और अस्तित्ववाद, पृ० ११९ ।
२८. नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ० ६२ ।
२९. डॉ० नामवर सिंह : कविता के नये प्रतिमान, पृ० २५ ।
३०. दूसरा सप्तक, पृ० १ ।
३१. कविता के नये प्रतिमान, पृ० २६ ।
३२. वही, पृ० २० ।
३३. वही, पृ० ९५ ।
३४. गजानन माधव मुक्तिबोध : एक साहित्यिक की डायरी, पृ० १३९ ।
३५. फूल नहीं, रंग बोलते हैं, पृ० १२२-२३ ।
३६. डॉ० प्रभाकर माचवे : नागार्जुन, पृ० ५० ।
३७. क, ख, ग, जुलाई, १९६५ ।
३८. अशोक वाजपेयी : फिलहाल, पृ० १७७ ।
३९. सम्पादक मंडल : अकविता : स्थितियाँ और अन्तर्धाराएँ, पृ० १३ । (कविता और अकविता, डॉ० नामवर सिंह का निबन्ध)
४०. धर्मयुग, रविवार, १९७०, पृ २० ।
४१. सम्पादक मंडल अकविता : स्थितियाँ और अन्तर्धाराएँ, पृ० १३ ।
४२. छायावाद : पुनर्मूल्यांकन, पृ० १५० ।
४३. The Romantic Survival, p. 77–227.

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

४४. Studies in Romanticism, Vol. 21, No. 4, Winter, 1982, p. 557.
४५. Rene Wellek : Concepts of Criticism, p. 217.
४६ The Last Romantics, p. 1–214.
४७. Studies in Romanticism, Vol. 21, No. 4, Winter 1982, p. 561.
४८. Rene Wellek : A History of Modern Criticism, 1750–1950, p. 340.
४९. A Ovcharenko : Socialist Realism and Modern Literary Process, p. 204.

●

४

मार्क्सवादी सन्दर्भ

बीसवीं शताब्दी का चिन्तन-विषय 'मार्क्सवाद' है। मार्क्सवाद पर दो प्रमुख बहसें हुईं। एक पश्चिम यूरोप–फ्रांस में, दूसरी पूर्वी यूरोप–हंगरी में। फ्रांस में हुई बहस का प्रतिनिधित्व कर रहे थे—ज्याँ पाल सार्त्र जर्नल लता 'मादन' और पूर्वी यूरोप की बहस का प्रतिनिधित्व जार्ज लुकाच का सम्पूर्ण साहित्य है। जार्ज लुकाच का सारा साहित्य मार्क्सवाद की पुनर्रचना और पुनर्अध्ययन है। जार्ज लुकाच मार्क्स के बाद सबसे बड़ा मार्क्सवादी कहा जा सकता है। जार्ज लुकाच का मार्क्सवाद वस्तुतः मार्क्स के बाद नहीं, बल्कि उसके समानान्तर चलनेवाला मार्क्सवाद है। एक अर्थ में इतिहास के नियमों तथा समाज-संगठन की शर्तों के अध्ययन पर आधारित लुकाच का मार्क्सवाद सबसे प्रामाणिक मार्क्सवाद है। जार्ज लुकाच ने ही सर्वप्रथम कथा-साहित्य के लिए इतिहास-बोध को आवश्यक माना है। लुकाच का इतिहास-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

बोध अतीत का नहीं, बल्कि वर्तमान का बोध है। मार्क्सवाद और स्वच्छन्दतावाद दोनों के मध्य में जार्ज लुकाच एक महत्त्वपूर्ण विचार-केन्द्र हैं। जिनका जीवन एक अवस्था थी, जिस पर मार्क्सवाद की स्वच्छन्दतावाद के साथ रुझान गहनतर रूप में अभिव्यक्त हुई, इसमें आद्यन्त इसकी प्रमुख अवधारणा निम्नलिखित है—मार्क्सवाद की जड़ें आधुनिकता के विरुद्ध स्वच्छन्दतावाद के विद्रोह में गहराई से धँसी हुई थीं। किन्तु अपने विकास के क्रम में पूंजीवादी युग और इसकी वैज्ञानिक प्रवृत्ति के लिए अपने द्वार को खुला रखने की उत्कंठा के वशीभूत होकर मार्क्सवाद ने इन जड़ों से सम्बन्ध विच्छिन्न कर लिया। और आज भी यह ऐसा ही कर रहा है तथा उसका मूल्य भी चुका रहा है। यही मूल्य समाज को भी आधुनिक बनने के लिए चुकाना पड़ता है।[1]

जहाँ तक मार्क्स का प्रश्न है उसने हीगेल का अनुगमन किया जो स्वच्छन्दतावाद का सबसे बड़ा स्वच्छन्दतावादी आलोचक है। इतिहास में आवेग और इच्छा की प्रमुख भूमिका से सम्बद्ध अपनी अवधारणा में स्वच्छन्दतावादी संवेग की भावानुभूति या भाववृत्ति अपेक्षाकृत अधिक संवेगात्मक अभिव्यक्तियों तथा इसकी आवेगात्मक संस्कारों के प्रति उसकी सहिष्णुता अत्यल्प थी और जर्मनी में विकसित राजनीतिक स्वच्छन्दतावाद के प्रति उसकी सहिष्णुता और भी कम थी।[2] इस पारंपरिक वैचारिक दृष्टिकोण की एक सुगठित अभिव्यक्ति माइकेल लोई (Michael Lowy) द्वारा लिखित जार्ज लुकाच के राजनीतिक मूल्यांकन के ऊपर हाल ही में लिखी हुई एक अति-महत्त्वपूर्ण पुस्तक में प्राप्त होती है, जिसका अध्ययन दूसरे संदर्भों में मार्क्सवाद और स्वच्छन्दतावाद की समस्या को एक नये धरातल पर रखता चला आ रहा है।[3] माइकेल लोई के अनुसार मार्क्स के प्रगतिवादी विचार और स्वच्छन्दतावाद के सामाजिक दृष्टिकोण में अनेक समताएँ हैं—अलग-थलग पड़ जानेवाले श्रमिक के ऊपर उसके समालोचन का पूर्वाभास एडमूलर की उस व्यवस्था में पाया जाता है, जिसके अन्तर्गत उसने यह दिखाया कि समुचित सामाजिक बन्धनों से पृथक् होकर कार्य निरर्थक हो जाता है। इसी तरह टामस कारलायल का यांत्रिक और आर्थिक व्यवस्था के प्रति विद्वेष समता रखता है, मार्क्स की उन विशद व्याख्याओं को जो धन के सम्बन्ध में दी गई हैं। लोई ने इस बात का संकेत किया है कि मार्क्स के सिद्धान्त सामाजिक और वैचारिक स्तर पर पूंजीवाद-विरोधी स्वच्छन्दतावाद, मार्क्सवाद से सर्वथा विमुख था।

अस्ट्रेलियन मार्क्सवादी लेखक अर्न्स्ट फिशर जिसने 'कला की आवश्यकता' नामक पुस्तक लिखी है, ने यह विचार प्रकट किया है कि मार्क्स का सिद्धान्त एक ऐसे मत से आविर्भूत हुआ है, जो स्वच्छन्दतावादियों के भी विचारों का मूल था। और वे मूल हैं—'मनुष्य के पूर्णत्व का स्वप्न।' यद्यपि मार्क्स ने इस आदर्श को नई

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दिशाओं में पहुँचाया किन्तु फिशर के अनुसार उसने इसकी संरचना उस वैश्व मत के स्वच्छन्दतावादी विद्रोह के ऊपर की जो प्रत्येक वस्तु को माल के रूप में परिणत करना चाहता था और मनुष्य को एक पदार्थ के रूप में अवःपतित कर चुका था। लौह-युग के कवियों और दार्शनिकों ने यह शिकायत की कि मनुष्य स्वयं अपने स्व का एक टुकड़ा मात्र शेष रहा है, अपने कार्यों के द्वारा अभिभूत किया जा चुका है तथा अपने स्व से दूर फेंका जा चुका है। यह शिकायत मार्क्स के हाथों में पहुँचकर सर्वहारा क्रांति के सिद्धान्त के रूप में परिणत हुई। एक भिन्न दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया हुआ इसके सदृश एम० एच० अब्राम्स का विचार प्राकृतिक और अतिप्राकृतिक नामक पुस्तक में मिलता है, जहाँ कि मार्क्स की क्रांति और साम्यवाद सम्बन्धी धारणाएँ अलगावभरे जीवन के टेढ़े-मेढ़े रास्ते पर चलकर मानवता की अन्तिम मुक्ति (आत्यन्तिक मुक्ति) सम्बन्धी स्वच्छन्दतावादी दृष्टि के विस्तार के रूप में उपस्थित की गई है। अथवा जैसा कि आल्विन गोल्डनर ने हाल ही में कहा है।[४] मार्क्स के विचार में स्वच्छन्दतावाद के महत्त्वपूर्ण तत्त्व विद्यमान थे और यदि मार्क्सवाद को पूर्णतया समझना है तो इन तत्त्वों को भी अच्छी तरह पकड़ना होगा। संक्षेप में उपस्थापित ये विचारधाराएँ तीव्र होते हुए भी मात्र आंशिक हैं और वस्तु को पूरी तरह प्रस्तुत नहीं करतीं। किन्तु उनका केन्द्रीय विचार यह है कि १८४० और १८५० के बीच बलपूर्वक और तदुपरान्त कमजोर ढंग से मार्क्स ने स्वच्छन्दतावादी और प्रबुद्ध उपयोगिता सामाजिक समालोचना की धारा को मिश्रित किया।[५]

ये बातें कहीं भी उतनी स्पष्ट नहीं है जितना कि साम्यवादी घोषणा-पत्र में। मार्क्स के विचार स्थायी इसलिए बन सके हैं क्योंकि इसने वर्तमान समाज के प्रति मानवीय संवेदनशीलता के दो परस्पर विरोधी धाराओं का समिश्रण किया है वे ध्रुव हैं वैज्ञानिक दृष्टिकोण और इसके विपरीत स्वच्छन्दतावादी विद्रोह।[६] विशुद्ध स्वच्छन्दतावादी जैसे अपने पूर्वगामी प्रवृत्ति की तरह नवस्वच्छन्दतावाद आधुनिकता के विरोध (जो उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है) एक सांस्कृतिक वैमनस्य के चतुर्दिक् केन्द्रित है। नवस्वच्छन्दतावाद आधुनिकता के एक पक्ष के सांस्कृतिक विरोध में केन्द्रित है। इस पक्ष के अन्तर्गत आते हैं, शहरीकरण, बौद्धिकता, आर्थिक और सामाजिक जीवन का यंत्रीकरण, प्रत्यक्षवाद, यांत्रिक भौतिकवाद के रूप में इन शक्तियों का बौद्धिक जीवन में अनुप्रवेश तथा मानवीय अनुभव में क्रमागत आत्मपरकता, इच्छा-शक्ति और कल्पना-शक्ति के महत्त्व के तिरस्कार के प्रति सामान्य प्रवृत्ति के रूप में जो आधुनिकता है, उसके विपरीत सांस्कृतिक विद्रोह का केन्द्र-बिन्दु है नवस्वच्छन्दतावाद।[७] इस बिन्दु पर H. Stuart Hughes ने अपनी पुस्तक 'चेतना और समाज' में यूरोपियन सामाजिक विचारधारा का पुनर्निर्माण १८९० से १९३० के क्रम में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

विवेचित किया है।[८] सामंतवादी, निराशावादी, पलायनवादी और तर्कशून्य तत्त्व-मयता के बावजूद भी नवस्वच्छन्दतावाद को पूंजीवाद-विरोधी नवस्वच्छन्दतावादी समझना चाहिए। पूंजीवाद-विरोधी नवस्वच्छन्दतावादी (Neo-Romantic anti-capitalism) पद को सर्वप्रथम जार्ज लुकाच ने प्रस्तावित किया था। माइकेल लोई ने अपनी पुस्तक में तथा अस्ट्रेलियन मार्क्सवादी फ्रेशर ने अपने सद्यःप्रकाशित निबन्ध में इसे विश्लेषित किया है।[९] उदाहरण स्वरूप लोई उस समय अपने लक्ष्य पर है जब वह नवस्वच्छन्दतावादी आन्दोलन को संस्कृति के नाम पर विनिमय मूल्य द्वारा विजित होने की घटना के प्रतिरोध के रूप में चित्रित करता है। अन्ततः जार्ज लुकाच का मार्क्सवाद नवस्वच्छन्दतावादी पूंजीवाद-विरोधी प्रवृत्ति से आविर्भूत हुआ है।[१०] वर्तमान युग में आत्मपरकता और संसार, आत्मा और क्रिया, चेतना और प्रकृति, अनुभूति और तर्क, रूप और वस्तु, एक-दूसरे से विभक्त हो गये हैं, कला जीवन की समग्रता से पृथक् हो गई है और यह सामाजिक जीवन भी उत्तरोत्तर आणविक होता जा रहा है।

नवयुवक लुकाच इस सामान्य चित्र के भीतर विशेष आकर्षक विषय इसलिए रहा कि उसने १९१९ से १९२० ई० के मध्य मार्क्सवाद और स्वच्छन्दतावाद के बीच एक सुसंगठित सैद्धान्तिक एकत्व विकसित करने की कोशिश की। इस योजना की मुख्य रेखाओं में प्रथम था एक कार्यान्वियन-सिद्धान्त जिसका बीज उसकी पकड़ में द्वितीय महायुद्ध के पूर्व ही आ गया था। 'इतिहास और वर्गचेतना' में १९२३ ई० में प्रकाशित अपने 'कार्यान्विथन और सर्वहारा चेतमा' नामक निबन्ध में लुकाच ने इस सिद्धान्त को विस्तृत रूप से मार्क्सवादी अभिव्यक्ति दी है। इसके द्वारा लुकाच ने मार्क्स के अलग-थलग पड़े हुए श्रमिक की समालोचना को न केवल पुनर्निर्मित किया (यद्यपि उसकी गति १८४४ की सुप्रसिद्ध आर्थिक और दार्शनिक सुप्रसिद्ध हस्तलिखित प्रतियों में नहीं थी) और इस प्रकार उसने इसे सम्पूर्ण मार्क्सवादी सिद्धान्त के केन्द्र में रखा, अपितु इसके अतिरिक्त उसने चुपचाप मार्क्सवाद की प्रमुख धाराओं का एक प्रशस्त (और स्वच्छन्दतावादी) प्रतिवाद प्रस्तुत किया। यह कार्य उसने कार्यान्वियन के समालोचन को इतना विस्तृत करके किया कि उसके अन्तर्गत विज्ञान और वैज्ञानिक दृष्टिकोण दोनों ही समाहित हो गये, जिन्हें लुकाच ने शोधित जगत् के स्तम्भ माना।

द्वितीय, लुकाच ने इस बात पर बल दिया कि मार्क्सवाद में वास्तविक क्रांति-कारी तत्त्व आर्थिक व्यवस्था की प्राथमिकता का विचार नहीं था, बल्कि सम्पूर्णता की धारणा थी। इस संदर्भ में उसने तीन परस्पर संपृक्त तत्त्वों को स्वीकार किया है। वह हीगेल और मार्क्स के द्वारा किये गये समालोचन में समान थे। किन्तु, जो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अन्ततः लुकाच उसे अपने नवस्वच्छन्दतावादी मूल्यों के ऊपर आधारित मानते थे। उसके पूर्णतावादी विचार के अन्तर्गत व्यष्टि के ऊपर समष्टि, अंश के ऊपर अंशी की आद्यता के व्यवस्थावादी सिद्धान्त आते हैं। इसके अतिरिक्त उपर्युक्त विचार के अन्तर्गत यह धारणा भी आती थी कि सम्पूर्णता ऐतिहासिक होती है तथा ऐतिहासिक युग में गति इतिहास बनानेवालों की चेतनता की प्राप्ति में निहित है, जो इतिहास बनानेवाले सर्वहारा हैं। अन्ततोगत्वा लुकाच का विश्वास था कि सम्पूर्णता की धारणा का सम्बन्ध है एक विशिष्ट वास्तविकता के साथ जो यह है कि सत्ता की सम्पूर्णता इतिहास में बुर्जुआ समाज के विघटन में निहित है और इतिहास के लक्ष्य के रूप में साम्यवाद के रूप में पुनः निर्मित होना है।

कार्यान्वियन का समालोचन और पूर्णता की धारणा लुकाच के नवस्वच्छन्दतावादी मार्क्सवाद के तीसरे प्रधान तत्त्व को जन्म देते हैं, जो सम्पूर्ण क्रांति है। इस संदर्भ में साम्यवाद का तात्पर्य केवल उत्पादन की विधि और सम्पत्ति सम्बन्धी सम्बन्धों को एक तरह से बदलकर दूसरे तरफ में रखना मात्र नहीं है, बल्कि इसका अर्थ-व्यवस्था के अधिशासन से मानवता को मुक्त कराना है, जिसके अन्तर्गत नित्यप्रति के समूचे जीवन और संसार को उलट देना है और उसके स्थान पर एक नई व्यवस्था को लाना है।[११] मार्क्सवाद मानव को अपने दर्शन का केन्द्र मानता है। वस्तुत मानव और उसका विकास मार्क्सवादी मूल चेतना है। मार्क्सवाद चूंकि मानव और उसके विकास से सम्बद्ध विचारधारा है तो इसका सम्बन्ध मानवीय अनुभूतियों से सम्बद्ध होने के कारण स्वच्छन्दतावादी चेतना से भी जुड़ता है, क्योंकि स्वच्छन्दतावाद का केन्द्रविन्दु मानवीय जीवन है। समाजवादी यथार्थवादी कला में संवेगात्मक अनुभूति का यथातथ्य अंकन इसे स्वच्छन्दतावादी चेतना से मिला देती है। गोर्की समाजवादी यथार्थवाद की परिभाषा देते हुए कहते हैं कि समाजवादी यथार्थवाद एक विचार है जो यथार्थवादी और कल्पनाशील है तथा सामाजिक अनुभव के ऊपर आधारित है।[१२] इस तरह यथार्थ और कल्पना के विलयन से समाजवादी यथार्थवादी कला नवस्वच्छन्दतावादी कला है। सामाजिक अनुभूतियों को यथार्थ और कल्पना के माध्यम से अभिव्यंजित करनेवाली कला स्वच्छन्दतावादी कला है जो निश्चित रूप से स्वच्छन्दतावाद के नूतन विकास नवस्वच्छन्दतावाद से अपने को जोड़ लेती है। लेकिन इच्छाओं, आशा-आकांक्षाओं तथा आवेशों-आवेगों का यह द्वन्द्व हवाई मानव का द्वन्द्व नहीं है। प्रत्येक मनुष्य का दोहरा व्यक्तित्व होता है, एक सामाजिक व्यक्तित्व और दूसरा व्यक्तिगत। इन दोनों में चाहे कितना ही द्वन्द्व क्यों न हो, लेकिन इकाई एक है, क्योंकि सामाजिक इतिहास वस्तुतः व्यक्तिगत इतिहास को प्रभावित करता है। व्यक्तिगत इतिहास वस्तुतः व्यक्तिगत आशा-आकांक्षाएँ, भूख और प्यास, प्रेम, ईर्ष्या और लालसाएँ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MD

सामाजिक धरातल को आलोकित करती हैं। इस तरह मार्क्सवादी कलात्मक चिंतन भी स्वच्छन्दतावाद से जुड़ा हुआ है।

मार्क्स ने भी गेटे के मानववाद की प्रशंसा की है पर उसका आग्रह समाजवादी मानववाद के प्रति है।[१३] मार्क्सवाद में स्वच्छन्दतावाद के प्रगतिशील पक्ष को जो समर्थन मिलता है, वह समाजवादी यथार्थवाद के अन्तर्गत आता ही है। संसार और मानव के विषय में समाजवादी आदर्श एक नई अवधारणा है जो यथार्थवाद का मूल रूप है और संसार के साहित्य में मानव-कल्याण को कलात्मक उपलब्धि है और साहित्य के विकास में पूंजीवाद से समाजवाद और साम्यवाद की ओर संक्रमण है, परिवर्तन है। यथार्थता का सम्बन्ध मनुष्य के व्यक्तित्व एवं अस्तित्व दोनों से है। यथार्थवाद यथार्थता का यथार्थतः चित्रण नहीं है, बल्कि कला की एक प्रवृत्ति है जो यथार्थ के प्रस्तुतीकरण के साथ-साथ अनुभव करनेवाले कृति के मस्तिष्क की भी एक झलक देती है। यथार्थवाद ऐसी मानवीय क्रिया है जिसके अन्तर्गत सम्पूर्ण मनुष्य द्वारा अपने सर्वांगीण अस्तित्व का सर्वांगीण ढंग से ग्रहण होता है।[१४] सम्पूर्ण मनुष्य की धारणा वस्तुगत यथार्थता को सामूहिक प्रत्यक्षीकरण एवं सामाजिक चेतना से जोड़ देती है और उसे झुकावपरक बना देती है। अतः यथार्थवाद—वस्तुगत सामाजिक यथार्थवाद—ऐतिहासिकता और सोद्देश्यता से मंडित है और यह जीवन तथा समाज एवं आदर्श का भी प्रत्यक्षीकरण करता है। यह एक तात्कालिक क्षण को ऐतिहासिक अवस्था से संबद्ध करके, 'सुपरिगठन' (संस्कृति) को नया आयाम देता है। संस्कृति को नया आयाम प्रदान करने में स्वच्छन्दतावाद एवं यथार्थवाद का मिलन होता है। भूत, वर्तमान एवं भविष्य से सम्बद्ध होने से भी यह स्वच्छन्द प्रवृत्ति का हो जाता है। यथार्थवादी चेतना में भी स्वच्छन्दतावादी चेतना होती है। इस संदर्भ में इलिया एहरेनवर्ग का कथन उल्लेखनीय है—"यह पूरी तरह स्वाभाविक है कि सभी लोगों की तरह कलाकार कुछ चीजों से प्रेम करें और कुछ से घृणा। यदि वह अपने समसामयिकों से किसी प्रकार भिन्नता रखता है तो उसे उसका मुँहफटपन कहने के बजाय अनुभूतियों की जिज्ञासा कहेंगे।"[१५] कलात्मक अभिव्यंजना के अन्तर्गत संवेगों से आवेगों में छलाँग की दशा में जितनी ऊँची भूमिका विचारों की होती है, उतना ही गहरा रेला रुझानों का होता है। रुझान (मार्क्स के शब्दों में) 'अन्तर्निहित सोद्देश्यता' के विधायक हैं। रुझान संज्ञानात्मक मूल्यों से संबद्ध है तथा कलाकार की इच्छाओं-आस्थाओं एवं अन्तर्दृष्टि की वैयक्तिकता में प्रस्फुटित होते-होते सामाजिक चेतना से संस्कारित होकर प्रवृत्त्यात्मकता और सोद्देश्यता, विचारधारा और दर्शन आदि में पल्लवित-पुष्पित हो उठते हैं।[१६] डॉ० मेघ कलात्मक यथार्थ को दो भागों में विभाजित करते हैं—(१) भौतिक वस्तुओं एवं इन्द्रियप्रदत्त अनुभवों द्वारा अर्थान्वयन होता है और दूसरे में संस्कृति ही विषयवस्तु बन जाती है।[१७] कलात्मक यथार्थ में इंद्रिय-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रदत्त अनुभवों द्वारा अर्थान्वियन होता है एवं संस्कृति की सीमारेखा में लोक-जीवन, लोक-संस्कृति भी आती है। फलतः कवि की चेतना यथार्थवादी सर्जन में भी स्वच्छन्द वृत्तियों को लेकर कलात्मक धरातल पर परिभ्रमण करती है। क्योंकि मानवीय जीवन की व्याख्या स्वच्छन्दतावाद की मूल चेतना है। यथार्थवादी सर्जन में मानवीय अनुभूतियाँ सहज एवं स्वाभाविक रूप में अभिव्यक्त होती हैं। कवि अपने विचार-दर्शन को प्रस्तुत करने के लिये सक्रिय कल्पना से जीवनानुभूतियों की प्रस्तुति करता है। यथार्थवादी साहित्यकार निरीक्षण एवं अनुभव के आधार पर अपनी सर्जनात्मक चेतना को रूपायित करता है। इस प्रक्रिया से नवस्वच्छन्दतावादी कवि को भी यात्रा करनी पड़ती है। स्वच्छन्दतावादी कवियों की तरह मात्र वायवीय होना इनका उद्देश्य नहीं है। वस्तुतः इनका जीवन-बोध यथार्थ के धरातल पर ही रहता है।

कांट ने यूरोप में व्यक्तिवादी और समष्टिवादी चिंतन-धाराओं में समन्वय किया है। समन्वय की यह प्रक्रिया वस्तुतः नवस्वच्छन्दतावादी चेतना को जन्म देती है। नवस्वच्छन्दतावाद में जो वैयक्तिकता एवं सामाजिकता का समन्वय दिखाई पड़ता है, इस प्रक्रिया पर कांट के दर्शन का प्रभाव है।[१८] मार्क्सवादी आलोचक फॉक्स का कहना ठीक ही है कि साहित्य में जीवन की तस्वीर चाहिए। इस रूप में कवि को कविता में मानवीय सौन्दर्याकांक्षा एवं वैयक्तिक प्रेमानुभूतियों को भी अंकित करना चाहिए। और ऐसी स्थिति में कवि अपनी चेतना को स्वच्छन्द धरातल पर प्रतिष्ठित करता है। यह कलाकार की रंगीनी भाव-बोध की प्रस्तुति है। वस्तुतः साहित्य में जीवन की तस्वीर उतारने में साहित्यकार को मानव के अन्तः/बाह्य, चेतन/अचेतन की अनुभूतियों को अभिव्यंजित करना होता है। मानव के अन्तजगत् की रंगीनी एवं मनोवैज्ञानिक झाँकियों की प्रस्तुति में कवि या लेखक अपने पात्रों के निजी एवं वैयक्तिक मनोभूमियों का चित्रांकन करता चलता है। जहाँ कहीं भी कवि इन विन्दुओं को उभारता है, वहीं उसकी चेतना स्वच्छन्द धरातल पर संक्रमण करती हुई दिखाई पड़ने लगती है। सहज मानवीय अनुभूति की संवेदनात्मक रूपरेखाएँ भी खींचता है और यहीं वह स्वच्छन्दतावाद की सीमारेखा में आ जाता है। दूसरा रूप सामाजिकता का है, इसमें भी वह टाइप पात्रों की नवीन कल्पना की प्रस्तुति और उसकी विचार-धारा के द्वारा संभावित भविष्य का स्वप्न देखना भी स्वच्छन्दतावाद से जुड़ जाता है। फॉक्स ने बाह्य जीवन की परिस्थितियों के साथ आंतरिक जीवन, उसके भावलोक का अंकन करने पर भी बल दिया है। फॉक्स की महत्त्वपूर्ण मान्यता यह भी है कि भाव-जगत् और बाह्य संसार में कोई अन्तर्विरोध नहीं है। दोनों के समन्वय से ही यथार्थ-वाद का विकास हो सकता है। इस बिन्दु पर साहित्य या कला नवस्वच्छन्दतावादी हो जाती है। इस भरे-पूरे यथार्थवाद के विकास को नवस्वच्छन्दतावाद कहते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी और यथार्थवादी चेतना के समन्वित रूप के सीमा-विस्तार से नवस्वच्छन्दतावाद का क्षेत्र बनता है। वस्तुतः यह चेतना साहित्य में अन्तः/बाह्य, वैयक्तिकता/सामाजिकता की स्वीकृति है। कला व साहित्य की उत्कृष्टता इसी बिन्दु पर दिखाई पड़ती है। काव्य-कला इस प्रक्रिया में हमारे सामने अपनी पूर्णता में आती है। समाजवादी यथार्थवादी कवि या लेखक समाज का चित्र जैसा है वैसा ही चित्रित करता है, किन्तु वह उसकी संभावनाओं को भी निश्चित रूप से संकेत देता है। इस द्वन्द्व को वह टाइप चरित्रों के द्वारा अभिव्यंजित करना चाहता है क्योंकि टाइप चरित्र वर्तमान और भविष्य के निर्माण का सेतु बनता है। विशिष्ट (टाइप) चरित्रों के सर्जन के द्वारा कवि या लेखक की मौलिक एवं आत्मपरक दृष्टि की ही अभिव्यंजना है। कविता में वस्तुनिष्ठ एवं आत्मनिष्ठ की विषमता का, जिसका संकेत हमें Schiller के निबन्ध Naive and sentimental Poetry में मिलता है, विशेष रूप से Friedrich Schlegel ने स्पष्ट किया। इनके अनुसार पुरखे, वस्तुनिष्ठ, अनासक्त, अव्यक्तिगत थे, और आधुनिक आत्मपरक, आसक्त और व्यक्तिगत हैं।[१६] गोर्की ने समाजवादी यथार्थवाद को क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद के नाम से अभिहित भी किया है। ब्रेख्त ने समाजवादी यथार्थवाद को जीवन के सत्य का पुनर्स्थापन तथा जीवन एवं मानवीय सम्बन्धों की समाजवादी स्थिति के रूप में कला से सम्बन्ध कहा है।[२०] समाजवादी परिवेश कला से मानवीय सम्बन्धों एवं जीवन-सत्य की पुनर्स्थापना को समाजवादी यथार्थ के लिए आवश्यक माना है। ये तीनों प्रवृत्तियाँ समाजवादी यथार्थवाद को स्वच्छन्दतावाद के नवीन विकास नवस्वच्छन्दतावाद के साथ जोड़ती हैं।

समाजवादी यथार्थवाद बीसवीं शताब्दी का नवीन चिंतन है, मानव-कल्याण के लिए एक क्रांतिकारी विकास है। सोवियत लेखकों की पहली कांग्रेस में गोर्की ने सर्व-प्रथम १९३४ ई० में समाजवादी यथार्थवाद नाम दिया।[२१] इसकी मूल चेतना समाज की वास्तविकता का अंकन ही नहीं, प्रत्युत यथार्थ जीवन का समाजवादी दृष्टि से मूल्यांकन भी है। समाजवादी साहित्यकार अपने सर्जन में पात्रों के अंतः/बाह्य, चेतन/अचेतन संघर्ष को चित्रित करता है तभी वह अपनी रचना में संघर्षरत मानव का चित्र उतार सकता है। अन्यथा कृत्रिम और यांत्रिक ढंग से आनेवाले निर्जीव मानव के अतिरिक्त उसकी कृति और कुछ प्रस्तुत न कर सकेगी।

समाजवादी यथार्थवादी कला ऐसे चरित्रों की प्रस्तुति पर बल देती है जो एक साथ ही टाइप और व्यक्ति दोनों हों। चेतन/अचेतन, अन्तः/बाह्य स्थितियों के अंकन से पात्रों के चरित्र में सहजता एवं स्वाभाविकता आती है। समाजवादी यथार्थवाद जहाँ वस्तुगत यथार्थ को उसकी सारी सजीवता, ईमानदारी से चित्रित करने का आग्रह करता है वहाँ इस बात पर भी जोर देता है कि यथार्थ का चित्र, उस यथार्थ के बीच संघर्परत मनुष्य का चित्र, उसकी सम्पूर्ण भूमिका में उभरे। संघर्षरत मानव

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

का चित्र सम्पूर्ण भूमिका में चित्रित करने के फलस्वरूप जीवन का रंगीन पक्ष भी आ जाता है। उसकी रचना, कल्पनाशीलता, भावुकता एवं प्रेम-सौन्दर्य के रोमानी रूप के साथ चित्रित होती है। अतः यहाँ कवि को स्वच्छन्द दृष्टि अपनानी पड़ती है। स्वच्छन्दतावादी दृष्टि के फलस्वरूप ही कवि या लेखक वास्तविकता का अंकन केवल सतही दृष्टि से न करके गहरी भूमिकाओं में करता है। वास्तविकता की गहरी अभि-व्यंजना के कारण समाजवादी यथार्थवादी साहित्यकार मात्र समाज की गन्दगी, भ्रष्टाचार, शोषण, अराजकता और अव्यवस्था को ही चित्रित न करे, बल्कि वास्त-विकता से संघर्ष करती हुई नयी चेतना को भी चित्रित करे, उस पर अधिक जोर दे और इस प्रकार भविष्य की उस दृष्टि का निर्माण करे जो विरोधी परिस्थितियों में इस संघर्ष को एक अपेक्षित और अनिवार्य परिणति प्रतीत हो, इस संघर्ष का सम्बन्ध सृजन की नयी भूमिकाओं से हो। इस प्रकार जो कृति सृजन की नयी भूमिका वास्तविकता के चित्रण में भविष्य का रूपायन करना चाहती है। वस्तुतः भविष्य को रूपायित करनेवाली यह दृष्टि ही स्वच्छन्दवादी दृष्टि है। इसलिए समाजवादी यथार्थवाद का सम्बन्ध स्वच्छन्दतावाद के उस क्रांतिकारी पहल के साथ जुड़ जाता है, जिसे समाजवादी यथार्थवादी लेखकों ने क्रांतिकारी स्वच्छ-न्दतावाद या समाजवादी यथार्थवाद या प्रगतिशील स्वच्छन्दतावाद नाम दिया है। यह एक ऐसा स्थल-बिन्दु है जहाँ यथार्थवाद और स्वच्छन्दतावाद की विरोधी प्रवृत्तियाँ अपनी-अपनी क्रांतिकारी तथा विकासमूलक भूमिकाओं के लिए मिलती हैं। और इस मिलन से साहित्य-सर्जन की नयी संभावनाओं के लिए साहित्यकार का क्षेत्र विस्तृत हो जाता है। समाजवादी यथार्थवाद यथार्थवादी चेतना का नवीनतम विकास है। समाजवादी यथार्थवाद की प्रवृत्तियों के क्रम में जैसा कि अलेक्जेण्डर फेडवे ने कहा है कि समाजवादी यथार्थवाद अपने में क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद को लिये हुए है। समाजवादी यथार्थवादी साहित्य के स्रोत की शक्तियाँ और उपयोगिताएँ सोवियत श्रमिकों का जीवन है। ऐसी स्थिति में स्वच्छन्दतावाद हमारे साहित्य का विरोधी नहीं बनता, बल्कि 'Affinity with people' के आधार पर इससे मिल जाता है। इस तरह बिना स्वच्छन्दतावाद के, जो मानव की अनुभूतियों पर विश्वास करता है, यह असम्भव है कि हम उसके जीवन को चित्रित कर सकें। सर्वहारा संस्कृति के चित्रण में कवि को अपनी स्वच्छन्दतावादी दृष्टि लेनी पड़ती है।[२२]

समाजवादी यथार्थ स्वच्छन्दतावादी कला है। इसमें सामाजिक यथार्थ और स्वच्छन्दतावादी रुझान को पृथक् करके नहीं देखते, बल्कि दोनों को मिलाकर एक भिन्न प्रकार का मिश्रण बनाते हैं। इसमें सामाजिक यथार्थ स्वच्छन्द प्रवृत्ति को वायवीय होने से बचाता है तथा स्वच्छन्द प्रवृत्ति कला के स्तर को उभारती है और

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

इन दोनों को अलग-अलग नहीं देखा जा सकता। दोनों को अलग-अलग देखने से कविता की अन्विति को आघात पहुँचता है।[२३] समाजवादी यथार्थवादी विचारधारा में भविष्य की कल्पना होती है। इसमें वस्तुगत यथार्थ की सम्पूर्ण कुरूपताओं के अतिरिक्त उभरनेवाली नयी जिन्दगी के रचनात्मक प्रारूप की प्रस्तुति है, युगीन यथार्थ में जिसकी चेतना बसती हैं। इसमें लेखक टाइप चरित्रों के द्वारा अपनी विचार-धारा का स्वप्न देखता है। यह पात्र लोक-जीवन का प्रतिनिधित्व करनेवाला होता है। इस टाइप चरित्र की एक सामाजिक भूमिका होती है, दूसरी स्थिति उसके स्वयं की होती है। दूसरी स्थिति का सहज अंकन भी इस कला में होता चलता है। इस सहज स्वाभाविक अंकन में कवि या कलाकार को स्वच्छन्द दृष्टि का सहारा लेना पड़ता है। गोर्की का कहना है कि बड़े "साहित्यकार में स्वच्छन्दतावाद और यथार्थवाद का भेद करना कठिन होता है क्योंकि उनके कृतित्व में इन दोनों ही प्रवृत्तियों का सामंजस्य हो जाता है। इस संमिश्रण के कारण उनकी रचनाओं में मौलिकता एवं शक्तिमत्ता आ जाती है। इस विचारधारा ने समस्त विश्व-साहित्य को प्रभावित किया है।[२४] यह उल्लेखनीय है कि यथार्थवाद और स्वच्छन्दतावाद के सिद्धान्त का विरोध गोर्की जीवन के अन्तिम वर्ष में कर रहा था। उसके द्वारा तब वह इस निष्कर्ष पर आया कि समाजवादी यथार्थवाद की व्यापकता अपने में एक तत्व क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद को लिये हुए है। इससे अधिक इसकी व्याख्या की आवश्यकता नहीं है।[२५]

अनातोली लोनाचास्की ने भी समाजवादी यथार्थ और स्वच्छन्दतावाद के अन्तर्सम्बन्ध पर विचार किया है। उनका कथन है कि हमारा स्वच्छन्दतावाद समाजवादी यथार्थवाद का अंग है। कुछ अंशों तक स्वच्छन्दतावादी तत्त्वों के अभाव में समाजवादी यथार्थवाद की कल्पना नहीं की जा सकती। यही तत्त्व इसे मात्र तटस्थ चित्रण होने से बचाता है। लेकिन यह स्वच्छन्दतावाद बुर्जुआ स्वच्छन्दतावाद से भिन्न होता है। बुर्जुआ स्वच्छन्दतावाद में कल्पित एवं अप्राप्य आदर्श के प्रति आसक्तिभाव होता है, जबकि समाजवादी यथार्थवाद में प्रेरित आदर्श और कर्तव्यपरायणता के प्रति।[२६] यूरी बाराबायस (Yuri Barabash) समाजवादी यथार्थ के सन्दर्भ में कहते हैं कि यह सोवियत-साहित्य की एकमात्र साहित्यिक प्रणाली है, परन्तु इस प्रणाली के अनेक रूप हैं जिनमें से एक रूप इसका स्वच्छन्दतावाद का है।[२७] रेने वेलेक का इस संदर्भ में कथन है कि स्वच्छन्दतावाद से यथार्थवाद की तुलना बिना किसी मुश्किल से हो सकती है—यथार्थवाद निश्चित रूप में अहं के स्वच्छन्दतादी उठान से टूटता है, जिसका बल कल्पना, प्रतीक-पद्धति, मिथक में रुचि, चेतन प्रकृति की स्वच्छन्दतावादी धारणा पर है।[२८]

सामाजिक चेतना से आक्रांत साहित्यकार विद्रोही होता है। समाजवादी यथार्थ-वादी साहित्य यथार्थ चित्रण का नहीं, अपितु यथार्थ भावना का साहित्य होता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

समाजवादी यथार्थवादी साहित्यकार जीवन के प्रति एक इतिहास-निर्देशित दृष्टि को स्वीकार करता है। इसलिए वह अपनी सर्जना में विशिष्ट (टाइप) चरित्र की नियोजना करता है। विशिष्ट चरित्र की जीवन-गाथा को सम्पूर्ण भूमिका में उतारना चाहता है। संपूर्ण भूमिका के चित्रांकन के फलस्वरूप उसकी चेतन एवं अचेतन वृत्तियों का चित्रांकन स्वाभाविक है। वृत्तियों के सहज आकलन में भी समाजवादी यथार्थवादी साहित्यकार को स्वच्छन्दतावादी दृष्टि अपनानी पड़ती है। इसके अतिरिक्त समाजवादी यथार्थवादी साहित्य संभावनाओं का साहित्य होता है। इसलिए इसमें स्वच्छन्दतावादी दृष्टि भी होती है।

विशिष्ट चरित्रों के द्वारा समाजवादी यथार्थवादी साहित्यकार अपनी विचारधारा का स्वप्न देखता है। स्वप्न देखने की यह प्रक्रिया स्वच्छन्दतावादी दृष्टि होती है। इसलिए समूचा मानव-जीवन विशिष्ट चरित्र का कार्यक्षेत्र होता है। यथार्थवादी दृष्टि के कारण कवि में मानव-जीवन को समझने की अद्भुत क्षमता होती है और वह जन-साधारण के कष्टों का चितेरा बन जाता है। समाजवादी यथार्थवाद का संबंध एक वैज्ञानिक दृष्टि से है। इस प्रकार इसका सम्बन्ध कोरी भावुकता एवं वायवीय कल्पना से नहीं जोड़ा जा सकता, यह दृष्टि ही उसमें ऐतिहासिक आशा के अंकुर उकेरती है जो कठिन स्थितियों में भी उसे आत्मसमर्पण नहीं करने देती, बल्कि उसकी सहज स्वाभाविक अकृत्रिम अंकन के द्वारा सारी सम्भावनाओं को अभिव्यंजित करता है। समाजवादी यथार्थवादी चेतना में भूत, वर्तमान, भविष्य सबका विवेचन किया जाता है, लेकिन उसकी दृष्टि भविष्य पर ही केन्द्रित होती है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि यथार्थवाद और स्वच्छन्दतावाद में बहुत घना सम्बन्ध है। यथार्थवाद अपने नये विकास के साथ हमारे सामने दो रूपों में उपलब्ध होता है। यथार्थवाद का वह रूप जिसे आलोचनात्मक यथार्थवाद कहा जाता है, वह वस्तुतः आन्तरिकता एवं वैयक्तिकता का मनोवैज्ञानिक धरातल है। मनोवैज्ञानिक धरातल होने के नाते आलोचनात्मक यथार्थवाद को स्वच्छंदतावाद के साथ जोड़ने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये। क्योंकि इसकी मूल चेतना आत्मपरकता एवं मनोवैज्ञानिकता ही है। इस संदर्भ में यह भी कहा जा सकता है कि आलोचनात्मक यथार्थवाद निश्चित रूप से स्वच्छन्दतावादी चेतना का विस्तार है। चेतना-प्रवाह, मन के नाटकीयकरण से उद्भूत है जो बाह्य वास्तविकता को विलीन कर देते हैं। चेतना-प्रवाह कलात्मक साधना को आत्मपरकता, प्रतीकात्मकता की ओर ले जाता है, जो आन्तरिक है और यथार्थवाद का दूसरा छोर है।[२६]

समाजवादी यथार्थवाद जो वास्तविक यथार्थवाद है, इसके अनेक रूप हैं। क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद उसका एक रूप है। समाजवादी यथार्थवादी और स्वच्छन्दतावादी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

दृष्टि में किंचित् विभेद भी है। स्वच्छन्दतावाद की अतिवैयक्तिक भावभूमि, वायवीय कल्पना और अतिशय स्वप्नशीलता आदि का विरोध समाजवादी काव्य या साहित्य में होता है। लेकिन उसके अन्य अनेक तत्त्वों को जो क्रांतिकारी आस्थाओं के प्रतिफलित होने में सहायक होता है, उन्हें स्वीकारा भी गया है। क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद में यथार्थ और स्वच्छन्द वृत्ति दोनों के मिलाप से स्वस्थ, संबल एवं जीवंतता आ जाती है। यह नवीन सर्जन किसी काल्पनिक दृष्टि, भावावेग एवं स्वप्नशीलता का परिणाम न होकर वैज्ञानिक दृष्टि से सम्प्रति गतिशील यथार्थ की तर्क-सम्मत परिणति होती है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावाद और यथार्थवाद अपनी प्रकृति में भिन्नता के बावजूद भी अनेक बिन्दुओं पर मिलते रहते हैं। ऐसी स्थिति में यथार्थवाद, स्वच्छन्दतावाद का विरोधी न होकर एक नवीन विकास है। वस्तुतः नवस्वच्छन्दतावाद के मूल में वैज्ञानिक एवं यथार्थवादी दृष्टि अन्तर्निहित है। अतः इसका सम्बन्ध कोरी भावुकता, स्वप्नशीलता एवं वायवीय कल्पना-लोक से नहीं है, बल्कि इसका सम्बन्ध ऐतिहासिक संदर्भ, इहलौकिक समाजवादी दृष्टि और समकालीन स्थितियों से है।

जिस तरह सामाजिक व्यथा से जाग्रत मानवी आत्मा यथार्थवादी हो जाती है, उसी तरह अपनी सम्पन्न परिस्थिति में अपनी भावनाओं के मनोहर कोष से चेतन मानवी आत्मा, भावना-प्रधान और कल्पना-प्रधान, जिसे रोमांटिक कहते हैं, हो जाती है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावाद और यथार्थवाद में केवल परिस्थितियों का भेद है। यथार्थवादी भी उतना ही भावना-प्रधान, ओजमय हो सकता है जितना कि रोमांटिक। परन्तु उसका दृष्टिकोण बहिर्मुख है, बाह्य वास्तविकता के संघर्ष से उत्पन्न उसकी भावनाएँ हैं और स्वच्छन्दतावादी कवि व कलाकार का दृष्टिकोण अपने आन्तरिक जगत् के प्रति है। वह स्वयं अपना ही चितेरा है। आज की बीसवीं शताब्दी में हम देखते हैं कि यथार्थवादी स्वच्छन्दतावादी के प्रति द्वेषभाव से देखता है, परन्तु यह गलत है। मनुष्य की प्रकृति में क्या रोमांस का स्थान नहीं है? रोमांस तो प्रवहमान जीवनधारा सेल्फ एसरसन है। जिस तरह वसंत ऋतु में वृक्षों के अन्दर तरुण ओज फूल-पत्तियों का सृजन करता है, वैसे ही वही तरुण ओज स्त्री-पुरुष के अन्तर्जगत् में रोमांस उत्पन्न करता है, उनके स्वस्थ शरीर में वह नव-जीवन बनकर बहने लगता है। परन्तु व्यक्ति जितना सामाजिक है, उतना ही वैयक्तिक भी। कभी-कभी यथार्थवाद को भी कविता लिखने की सूझती है और कल्पना-प्रधान कलाकार को कहानियाँ और लेख। जब भावना-प्रधान प्राणी बाह्य-वास्तविकता की ओर मुड़ता है और अपनी सहज ईमानदारी से वशीभूत होकर उसके प्रति अपने को जिम्मेवार ठहराता है, तभी से उस साहित्य की उत्पत्ति होती है जिसे हम आदर्शवादी साहित्य कह सकते हैं, क्योंकि वह जीवन पर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सोचने लगता है, जीवन की दुःखान्त घटनाएँ विरोध और विसंगतियाँ उसके मन में बैठ जाती हैं। वह उनके विचारों से किसी तरह छुटकारा नहीं पा सकता। वह उन पर सोचता है, कुछ निष्कर्षों पर आता है और उन सबका चित्रांकन करता है। इस विशेष प्रकार का कलाकार जीवन को समस्त रूप में ग्रहण करने को चेष्टा करता है और यही उसका महत्त्व है।[२०] इस तरह स्वच्छन्दतावाद और यथार्थवाद की स्थितियाँ परस्पर विरोधी नहीं हैं। यथार्थवादी साहित्यकार को भी अपने अंकन में स्वच्छन्दतावादी दृष्टि लेनी पड़ती है, जो सहज स्वाभाविक एवं मनोवैज्ञानिक है। प्रत्येक स्वच्छन्द वृत्ति अपने में यथार्थता की स्थिति को लिये होती है। यथार्थवाद के दोनों रूपों आलोचनात्मक यथार्थवाद एवं समाजवादी यथार्थवाद में स्वच्छन्दतावाद की स्थिति रहती है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि स्वच्छन्दतावादी कवि या लेखक यथार्थवादी होता है तथा यथार्थवादी कवि या लेखक स्वच्छन्दतावादी प्रकृति का होता है। इन दोनों के समन्वित कलात्मक साधना से ऊँची कला उभरती है और इसी बिन्दु पर आकर कलाकार व साहित्यकार नवस्वच्छन्दतावादी हो जाता है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि नवस्वच्छन्दतावाद न तो यह दावा ही करता है कि वह अपनी परिधि में सम्पूर्ण यथार्थवाद को घेर रहा है और न वह यथार्थवाद का समग्र रूप में विरोध ही करता है। वस्तुतः नवस्वच्छन्दतावाद यथार्थवाद को अपने में समाहित कर लेता है या एक विशेष प्रकार के यथार्थवाद को जन्म देता है। इस प्रकार आधुनिक काव्य व साहित्य में नवस्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ इस रूप में उभरती हैं :

(क) सामाजिक धरातल :

कल्पना / यथार्थ

अनुभूति / परिवेश

वैयक्तिकता / सामाजिकता

विद्रोह / क्रांति

आधुनिकता / रोमांटिक आयरनी

यथार्थवाद / समाजवादी यथार्थवाद

मानववाद / नवमानववाद

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

(ख) मनोवैज्ञानिक धरातल :

चेतन / अचेतन

संस्कृति / लोक-संस्कृति

प्रेम / सौन्दर्य

प्रकृति-प्रेम / देश-प्रेम

रहस्य-विस्मय / जिज्ञासा

आशा / निराशा

(ग) संरचना :

भाषा

बिम्ब

प्रतीक

मिथक

प्रगीतात्मकता

सन्दर्भ

१. Studies in Romanticism, Vol. 16, No. 4, Fall 1977, p. 474.

२. वही, पृ० ४७४।

३. Michael Lowy : Pour une sociologie des intellectuals revolutionaries : Levolution politique de lukacs, 1909–1929, (Paris : P. U. F. 1976)

४. "Gouldner's comment appears in the course of his wide-ranging essay." Romanticism and Classicism : Deep Structures in

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Social Science.—Alvin W. Gouldner, For Sociology : Renewal and Critique in Sociology To-day (New York Basic Books 1973), p. 339.

५. Studies in Romanticism, Vol. 16, No. 4, Fall 1977, p. 478.

६. H. Stuart Hughes—Consciousness and Society : The Reorientation of European Social Thought, 1890–1930, New York, Alfred A. Knopf, 1958.

७. Studies in Romanticism, Vol. 16, No. 4, Fall 1977, p. 478.

८. H. Stuart Hughes—Consciousness and Society : The Reorientation of European Social Thought, 1890–1930, New York, Alfred A. Knopf, 1958.

९. The last phase of Romantic Anti-capitalism : Lucaks' Response to the war, New German Critique, 10 (1977) 139–54. This is a part of a larger essay "At the crossroads of Romantic anti-capitalism."
—Lowy, Pour une Sociologie, p. 17–105.

१०. Finally, the neo-Romantic anti-capitalism was the chrysalis from which George Lukacs marxism sprung."
—Studies in Romanticism, Vol. 16, No. 4, Fall 1977, p. 479.

११. Studies in Romanticism, Vol. 16, Fall 1977, p. 487.

१२. "Socialist realism as a realistic, imaginative thought based on socialist experience." —A. Ovcharenko : Socialist Realism and Modern Literary Process, p. 86.

१३. कार्ल मार्क्स : फ्रैडरिक एंगेल्स लिटरेचर एण्ड आर्ट, पृ० ५३ ।

१४. कार्ल मार्क्स : इकानॉमिक एण्ड फिलासफिक मैनुस्क्रिप्ट आफ १८८४ (मास्को १९६१), पृ० १०५, उद्धृत डॉ० रमेशकुन्तल मेघ की पुस्तक 'साक्षी है सौन्दर्य प्रश्निक', प्र० सं० १९८०, पृ० ३५० ।

१५. इलिया एहरेनवर्ग : द राइटर एण्ड हिज क्राफ्ट (भारतीय संस्करण), पृ० १३, १५ ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: Mi

१६. डॉ० रमेशकुन्तल मेघ : साक्षी हैं सौन्दर्य प्रश्निक, पृ० ३५६ ।

१७. वही, पृ० ३६१ ।

१८. आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी : नया साहित्य, नये प्रश्न, पृ० १०५ ।

१९. "The contrast between objective and subjective poetry, implied also in Schiller's essay on Naive and sentimental poetry, was made particularly explicit by Friedrich Schlegel. The ancients, in his view, were objective, disinterested, impersonal, the moderns subjective, interesting, personal."—Rene Wellek : Concepts of Criticism, p. 247.

२०. A Ovcharenko : Socialist Realism and Modern Literary Process, p. 142.

२१. Gorki on Literature, p. 264.

२२. Yuri Barabash : Aesthetics and Poetic, p. 132.

२३. वही, पृ० १३३ ।

२४. Gorki on Literature, p. 28.

२५. Avnorzis : Foundation of Marxist Aesthetics, p. 282.

२६. A. Ovcharenko : Socialist Realism and Modern Literary Process, p. 160-161.

२७. वही, पृ० १७९ ।

२८. Concepts of Criticism, p. 253.

२९. Rene Wellek : Concepts of Criticism, p. 251.

३०. गजानन माधव मुक्तिबोध : नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ० ११० ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

५

सामाजिक धरातल

नवस्वच्छन्दतावादी चेतना स्वच्छन्दतावाद का ही विकास है। इसलिए इसमें स्वच्छन्दतावादी मूल चेतना की अभिव्यक्ति तो होती ही है, साथ ही ऐतिहासिक बदलाव एवं आधुनिकता के फलस्वरूप स्वच्छन्दतावाद का एक नया स्वरूप भी बनता है। स्वच्छन्दतावादी चेतना आंतरिक होती है। इस चेतना के मूल में अन्तः भावबोध ही प्रधान होता है। स्वच्छन्दतावादी साहित्य में व्यक्तित्व की प्रधानता होती है। वैयक्तिकता के फलस्वरूप भावप्रवणता एवं कल्पनाशीलता इस साहित्य में विशेष महत्त्व का बोधक है। यहाँ साहित्यकार न केवल विचारगत रूढ़ियों एवं परंपराओं का विरोधी होता है, बल्कि इस साहित्यिक प्रेरणा में रूढ़ियों के प्रति वह विद्रोह भी करता है। विद्रोह के बाद नवीन सर्जन के रूप में उसे परिवर्तित भी करता है। इस रोमाण्टिक साहित्य में व्यक्ति की स्वतंत्रता, सामाजिक-राष्ट्रीय भावना का नियोजन, आंतरिक संवेदनशीलता और अनुभूतियों की गहन अभिव्यक्ति होती है। साहित्यकार की तीव्र अनुभूतियों का विकसन संभवतः इस रूप में होता है—उस समय जब उसकी चित्त-वृत्तियों को (अन्तर्जगत् को) सहसा उन्मुक्त संचार की सुविधा मिलती है या उस समय जब बाह्य-बंधनों के कारण कुण्ठित हो जाते हैं। इस प्रकार अनुभूतियों के बाह्य आलम्बन की अपेक्षा साहित्यकार के अन्तर्जगत् की स्थिति पर कहीं अधिक निर्भर करता है। विशुद्ध स्वच्छन्दतावादी चेतना आंतरिक होती है। अभिव्यंजना में साहित्यकार हर बिन्दु पर अपनी आंतरिक अनुभूतियों से साहित्यिक चेतना को पागता है, लेकिन आधुनिक भावबोध, ऐतिहासिक बदलाव एवं वैज्ञानिक उपलब्धियों के फलस्वरूप उत्पन्न नवस्वच्छन्दतावादी चेतना वैयक्तिकता के साथ सामाजिकता की भी अभिव्यक्ति करती है।

आधुनिक युग का साहित्यकार अपने परिवेश एवं परिस्थितियों से कटकर सर्जन की उपादेयता सिद्ध नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में नवस्वच्छन्दतावादी साहित्यकार अपनी चेतना में स्वच्छन्दवादी चेतना को तो लेकर चलता ही है, साथ ही अपनी प्रतिभा से सामाजिक परिवेश से प्रसूत समस्याओं को भी कलात्मक अभिव्यंजना देता है। फलस्वरूप स्वच्छन्दतावादी चेतना अपने नवीन विकास में कुछ नूतन भावबोध को भी लिये चलती है। यही कारण है कि स्वच्छन्दतावादी चेतना इस विन्दु पर आकर अपने साथ कुछ नवीन भाव-बोध यथा सामाजिक धरातल को भी अपनी चेतना में समेटती चलती है। नवस्वच्छन्दतावादी चेतना का साहित्य वस्तुतः समाजशास्त्रीय कथ्य की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

स्वच्छन्दतावादी अभिव्यक्ति है। समाजवादी चेतना नवस्वच्छन्दतावादी साहित्य के लिए आवश्यक उपादान बन गया है। समाजवादी कथावस्तु की प्रस्तुति साहित्यकार स्वच्छन्दतावादी चेतना में घोलकर एक नवीन रूप में अभिव्यंजित करता है। सामाजिक परिवेश से उत्पन्न परिस्थितियों के फलस्वरूप स्वच्छन्दतावादी चेतना एक नवीन रूप में ढल जाती है। इसलिए इस मूल चेतना के साथ सामयिक परिस्थितियाँ भी स्वच्छन्द रूप में अभिव्यंजित होती हैं। इसलिए नवस्वच्छन्दतावादी साहित्यकार मात्र स्वच्छन्दतावादी नहीं रहा। नवस्वच्छन्दतावादी साहित्यकार वैचारिकता को अपनी चेतना में अभिव्यक्ति देता है। वैचारिक सजगता या प्रतिबद्धता ही स्वच्छन्दतावाद और नवस्वच्छन्दतावाद के बीच विभाजक रेखा है। विषय के साथ सहज सम्बन्ध ने वैचारिकता को पुष्ट किया और फलतः कवि या साहित्यकार विषय के प्रति ज्यादा भौतिकवादी हो उठा। भौतिकवादी होने के साथ-साथ यथार्थवादी एवं क्रांतिकारी भी। नवस्वच्छन्दतावादी चेतना ने स्वच्छन्दतावाद का विरोध किया और इस नये रूप में अपनी अभिव्यक्ति की। वैज्ञानिक उपलब्धियों के फलस्वरूप तथा सामाजिक वातावरण से प्रसूत हिन्दी कविता इस बिन्दु पर आकर यथार्थवादी चेतना से मिलती है। फलतः स्वच्छन्दतावादी और यथार्थवादी बोध के समन्वय से स्वच्छन्दतावाद नये रूप में उभरता है। इस बदलाव की व्याख्या के लिए 'नवस्वच्छन्दतावाद' नाम देना पड़ा।

नवस्वच्छन्दतावाद निश्चित ही एक परिवर्तित दृष्टि है। इसमें कहने और अनुभव के तरीके बदलते हैं। यहाँ यथार्थवाद एक शैली के रूप में आता है जो उसका एक प्रकार से स्वयं का स्वच्छन्दतावादी आयाम है। नवस्वच्छन्दतावाद में कवि जीवन से पलायन और सुदूर कल्पना-लोक के परिभ्रमण को अस्वीकार करता है। किन्तु यहाँ उसकी अपनी दृष्टि वर्तमान की अनुभूतियों पर अवश्य केन्द्रित रहती है जिसे वह रोमांटिक आयरनी द्वारा अभिव्यक्त करता है। यथार्थवाद में स्वच्छन्द प्रवृत्ति मूलतः रहती ही है, किन्तु उसे स्वच्छन्दतावाद-विरोधी कहा जाता है। यथार्थवाद की यह मूल स्वच्छन्द प्रवृत्ति नवस्वच्छन्दतावाद में 'व्यंग्य' के द्वारा अभिव्यक्त होती है और जिसकी पहचान आधुनिकता है। नवस्वच्छन्दतावादी साहित्य यथार्थवादी होने के फलस्वरूप संस्कृति / लोक-संस्कृति एवं लोक-चेतना की प्रस्तुति लोक-गीतात्मक शैली में करता है।

नवस्वच्छन्दतावाद आधुनिकता के विरोध (जो उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है) एक सांस्कृतिक वैमनस्य के चतुर्दिक् केन्द्रित है। नवस्वच्छन्दतावाद आधुनिकता के एक पक्ष के सांस्कृतिक विरोध में केन्द्रित है। इस पक्ष के अन्तर्गत आते हैं—शहरीकरण, बौद्धिकता, आर्थिक और सामाजिक जीवन का यंत्रीकरण, प्रत्यक्षवाद यांत्रिक भौतिक-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वाद के रूप में इन शक्तियों का बौद्धिक जीवन में अनुप्रवेश तथा मानवीय अनुभव में समागत आत्मपरकता, इच्छा-शक्ति और कल्पना-शक्ति के महत्त्व के तिरस्कार के प्रति सामान्य प्रवृत्ति के रूप में जो आधुनिकता है, उसके विपरीत सांस्कृतिक विद्रोह केन्द्र है-नवस्वच्छन्दतावाद का। इस प्रकार हम देखते हैं कि नवस्वच्छन्दतावाद में कल्पना / यथार्थ, अनुभूति / परिवेश, वैयक्तिकता / सामाजिकता, विद्रोह / क्रांति, आधुनिकता / रोमांटिक आयरनी, यथार्थवाद/समाजवादी यथार्थवाद, मानववाद / नवमानववाद आदि प्रवृत्तियों की समन्वित कलात्मक चेतना का विस्तार हैं। समकालीनता तथा यथार्थता के संयोग से स्वच्छन्दतावाद एक नवीन संदर्भ में बदल जाता है। यह इसका सामाजिक धरातल है। इसका मनोवैज्ञानिक धरातल चेतन / अचेतन, संस्कृति / लोक-संस्कृति, प्रेम / सौन्दर्य, प्रकृति-प्रेम / देश-प्रेम, रहस्य-विस्मय / जिज्ञासा, आशा / निराशा आदि प्रवृत्तियों की समन्वित कलात्मक चेतना का विस्तार है। मनोवैज्ञानिक धरातल की व्याख्या अगले अनुक्रम में है।

कल्पना / यथार्थ

स्वच्छन्दतावादी कविता सर्जनात्मक कल्पना से अपना रूप निर्मित करती है। यह स्थिति विशुद्ध स्वच्छन्दतावादी काव्य-चेतना के लिए ही कही जा सकती है। नव-स्वच्छन्दतावादी कवि अपनी अनुभूतियों को काव्यात्मक रूप देते समय मात्र सर्जनात्मक कल्पना से ही अपनी चेतना को विस्तारित नहीं करते, बल्कि वह सक्रिय कल्पना को भी अपनी अभिव्यंजना का माध्यम बनाता है। सक्रिय कल्पना की प्रक्रिया यथार्थ पर टिकी हुई है। इसमें कवि किसी वस्तु या दृश्य का निरीक्षण करता है। इसके बाद अनुभूति करता है। तदनन्तर अपने भाव-बोध को नवीन सर्जनात्मक ढलाव देता है। सक्रिय कल्पना के लिए निरीक्षण और अनुभव अपेक्षित सोपान हैं, जबकि सर्जनात्मक कल्पना में यह अनिवार्य नहीं है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि जहाँ पर अचेतन, चेतन के माध्यम से अभिव्यक्त होता है, वहीं सक्रिय कल्पना का जन्म होता है। चेतन मस्तिष्क जब अचेतन को स्थिति में जाता है, तभी सक्रिय कल्पना की उद्भावना सम्भव है। वैयक्तिक अचेतन से होकर ही सामूहिक अचेतन में पहुँचा जा सकता है और यह प्रक्रिया सक्रिय कल्पना की होती है। चेतन मन जब तक सामूहिक अचेतन में प्रवेश नहीं करता तब तक सक्रिय कल्पना की उद्भावना नहीं होती। चेतन मन को वैयक्तिक अचेतन के माध्यम से होकर यात्रा करनी पड़ती है, जो कि एक कठिन कार्य है। इसलिए यह स्थिति आकस्मिक भी हो सकती है और व्यवस्थित भी। कवि या साहित्यकार सतत साधना से इस प्रक्रिया में दक्षता प्राप्त करता है। इसलिए सक्रिय कल्पना की प्रक्रिया साहित्यकार की उच्चतर साधना का द्योतक है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

कलात्मक कला में राजनीतिक, धार्मिक, नैतिक, दार्शनिक इत्यादि गैर सौन्दर्य-तात्त्विक अभिप्रेरणाओं तथा मतों का भी समावेश होता है। किन्तु आवेगों एवं अनुभूतियों के माध्यम से आने पर ही वे कलात्मक एवं जीवन्त हो पाते हैं। इसलिए ऊँची कला सर्जनात्मक एवं सक्रिय कल्पना से समन्वित होकर यथार्थ को प्रस्तुत करती है। यह प्रस्तुतीकरण कला-जगत् में कल्पना और यथार्थ के सम्मिश्रण से अपना रूप निर्मित करता है। ऊँची कला की पहचान इन दोनों का समन्वित रूप ही है। प्रवृत्त्यात्मकता वस्तुतः अपने सर्जनात्मक उत्स पर स्वीय इच्छाओं से जुड़ी होती है और वास्तविक यथार्थता के प्रत्यक्षीकरण को एक प्राथमिक, किन्तु निर्णयात्मक वक्रता प्रदान करती है। प्रवृत्त्यामकता किस प्रकार की हो, इस पर मार्क्स-ऐंजल्स ने एक सूत्र दिया है—'शेक्सपियरकरण' अधिक करना चाहिए क्योंकि फिलहाल मैं समझता हूँ कि व्यक्तियों को सामयिक चेतना का मात्र रट्टू तोता बनानेवाला 'शिलरवाद' एक खास भूल है।········ शिलर के पीछे शेक्सपियर को नहीं भूलना चाहिए।[१]

यह सलाह फर्डीनेंड लासाले को दी गयी थी जो एक अकुशल कलाकार होने के नाते शिलरवादी रुझान को नहीं समझ सके थे। लेकिन उपर्युक्त मत से दो बातें स्पष्ट होती हैं। एक तो यह कि केवल कुशल कलाकार ही कामयाबी से शिलरकरण कर सकते हैं, दूसरे शिलरकरण को ग्रहण करने के साथ-साथ शेक्सपियरकरण भी किया जाय। अर्थात् शेक्सपियर के प्रमुख गुणों को ग्रहण किया जाय, जिनमें से पहला उनकी व्यापक मानवतावादी दृष्टि है और दूसरा सहिष्णुता की भावना। मार्क्स-ऐंजल्स के लिए शिलर-बोध और शेक्सपियर-बोध दो रुझानों के साथ-साथ, दो दृष्टिकोणों तथा दो कला व्यवहारों के प्रतिनिधि हैं।[२] हावर्ड फास्ट ने भी रचनाकार के व्यक्तित्व, उसके अनुभव और उसकी चेतना को युग तथा समाज की सीमाओं के भीतर ही देखा है। उनके कथनानुसार कोई भी साहित्यकार इन परिवेशगत भौतिक सीमाओं को अतिक्रांत नहीं कर सकता।[३] प्रस्तुत परिप्रेक्ष्य में हंगेरियन कला-समीक्षक जॉर्ज लुकाच का यह कथन द्रष्टव्य है—किसी कलाकार का व्यक्तित्व चाहे जैसा प्रतीत हो, किन्तु वह समयातीत एवं निरपेक्ष नहीं होता है। प्रतिभा और चरित्र नैसर्गिक हो सकते हैं, किन्तु जिस प्रकार ये विकसित होते हैं या अविकसित ही रह जाते हैं, इसका सम्बन्ध लेखक की अपने परिवेश के प्रति प्रतिक्रिया तथा अन्य मनुष्यों के साथ उसके सम्पर्क से होता है।[४] यहाँ जॉर्ज लुकाच ने प्रतिभा को नैसर्गिक मानकर भी उसे परिवेश-सापेक्ष्य माना है। यथार्थ से कटकर उसका अस्तित्व समाप्त हो सकता है। इसको बेलिंस्की ने कलाकार की चेतना का यथार्थ से सम्पर्क कहा है। जिस कला-चेतना का यथार्थ से सम्पर्क टूट जाता है, वह कुण्ठित, निष्प्रभ तथा निर्जीव होकर रह जाती है।[५]

शेली ने 'डिफेन्स ऑफ पोयट्री' में तर्क और कल्पना को मिलाने का प्रयास किया है। ऐसी स्थिति में वह कॉलरिज की विचारधारा से अलग हो जाता है। शेली

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

'डिफेन्स आफ पोयट्री' के अन्त में पाठकों से कहता है कि कविता की रक्षा के लिए कवि को आधुनिक स्वरूप, व्यवहार और विचारों को आदर्शीकृत करके रखना चाहिए। शेली का कहना है कि कवि का उद्देश्य इन विचारों की अच्छाई के लिए अनुभूति को कथ्य का विषय बनाना है। पी० बी० शेली कवि के लिए क्रान्तिकारी भाव की भी स्वीकृति देता है। कवि वर्तमान के आधार पर भविष्य का स्वप्न देखता है। पी० बी० शेली ने अपने अप्रकाशित 'डिफेन्स ऑफ पोयट्री' के द्वितीय भाग के प्रथम अध्याय में कवि को क्रान्तिकारी दायित्व का भार सौंपा है। इसलिए उन्होंने स्वातंत्र्य-संघर्ष को कविता के लिए अपेक्षित माना है। पी० बी० शेली द्वारा प्रतिपादित इन दो महत्त्वपूर्ण उपादानों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कवि को वर्तमान के आधार पर भविष्य की कल्पना करनी चाहिए एवं अपने स्वातंत्र्य-संघर्ष से भी अपने को जोड़ लेना चाहिए। पी० बी० शेली की इस विचारधारा ने वहाँ के कवियों को निश्चित रूप से प्रभावित किया होगा। यही कारण है कि पी० बी० शेली के बाद अंग्रेजी कविता में वर्तमान समस्याओं पर क्रान्तिकारी तरीके से कवियों ने तर्क एवं कल्पना को कविता के सर्जन का आधार बनाया। कवि का काम सत्य का प्रस्तुतीकरण ही नहीं होता, बल्कि वह अपनी सर्जनात्मक व सक्रिय कल्पना से यथार्थ को एक नवीन रूप देता है।[६]

कला का काम फोटो उतारना नहीं है, वह संभव भी नहीं है। यथार्थवादी अपनी रुचि एवं दृष्टि के अनुसार अनुभव-जगत् में से आवश्यक उपादानों का चयन करता है। सक्रिय एवं सर्जनात्मक कल्पना, यथार्थ लगनेवाले चित्र प्रस्तुत करती है। महाकवियों की वाणी में सबसे अधिक उपयोग सक्रिय कल्पना का होता है। प्रभावान्विति का कारण भी यही होता है। जीवन और जगत् की सीमाएँ वस्तुतः हमारे मन की सीमाएँ हैं और जब यह सीमा टूट जाएगी तब सारा कुछ केवल यथार्थ होगा। हमारे स्वप्न भी इन्हीं सीमाओं के कारण हैं। इसलिए उसे हम मूर्तिमान् करने में सक्रिय हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि कल्पना व स्वप्न की रंगीन-झीनी चादर के अभाव में यथार्थपरक साहित्यकार भी सर्जन करने में असमर्थ होता है। कल्पना और यथार्थ के समन्वित रूप का रूपायन उत्कृष्ट कविता की आत्मा है। कल्पना के अभाव में कविता का सर्जन संभव नहीं है। कल्पना-प्रसूत सर्जन वास्तविक जगत् द्वारा प्रस्तुत घटना-क्रम की अनुकृति मात्र होता है। प्रत्येक देश तथा क्षेत्र की एक सांस्कृतिक परम्परा होती है। उसकी भावनाएँ, शब्दावली, सर्जना के रूप, बिम्ब, प्रतीक, मिथक एवं प्रगीत आदि होते हैं। कवि अपनी सांस्कृतिक चेतना को छोड़ नहीं सकता, बल्कि उसके पास यदि दृष्टि और विचारधारा है तो वह उस परम्परा को बटोरकर भी उसमें नवीनता का स्पर्श दे सकता है। यह कार्य कवि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

अपनी कल्पना-शक्ति से करता है। परिवेश एवं यथार्थपरकता से प्रभावित कवि अपने सर्जन में सर्जनात्मक प्रतिभा से कुछ नये बिन्दुओं को उभारता है, जो कल्पना की उपज है। कल्पना एवं यथार्थ के समन्वय से कविता महान् बनती है। जो कवि इस कला में जितना दक्ष होगा वह उतना ही महान् कवि होगा। कल्पना और यथार्थ के सम्मिश्रण से कवि या साहित्यकार की सर्जना उत्कृष्टता, महानता एवं युग-संदेश का वाहक बन पाती है। उत्कृष्ट काव्य-सर्जन के लिए इसकी उपस्थिति कवि-मानस में अपेक्षित है। या यों कहें कि महान् कवि प्रकृति से कल्पना और यथार्थ के रंगीन भाव-बोध को अपने में लपेटे हुए रहते हैं। उनकी चेतना इनमें घुली-मिली-सी रहती है। महान् कवि की कलात्मक साधना कल्पना और यथार्थ की आँख-मिचौनी है।

कल्पना स्वच्छन्दतावादी कविता की मूल चेतना कही गयी है। इसीके द्वारा कवि या साहित्यकार स्वच्छन्दतावादी धरातल का निर्माण करता है। वैज्ञानिक उपलब्धियों एवं सामयिक परिस्थितियों के फलस्वरूप कवि या साहित्यकार अपनी रचना में यथार्थ चित्रण करने के लिये विवश होता है। नयी परिस्थितियों एवं परिवेश के फलस्वरूप कवि के चिन्तन में बदलाव की प्रक्रिया बनने लगती है। ऐसी स्थिति में मनुष्य की कलात्मक प्रतिभा की सबसे बहुमूल्य उपलब्धि यथार्थ या वास्तविकता का सच्चा अंकन है। इस प्रकार यथार्थ या वास्तविकता को प्रकट करने की लालसा प्रबल हो जाती है। परिवेश एवं परिस्थितियों के फलस्वरूप अर्थव्यवस्था, सामाजिक सम्बन्ध और सांस्कृतिक चेतना में आमूल परिवर्तन दिखाई पड़ने लगता है। ऐसी स्थितियों का अंकन भी साहित्यकार के ध्यान में रहता है। फलतः परिस्थितियों से प्रस्तुत नये मानव के सर्जन एवं उसकी समस्याओं को अभिव्यक्ति देता है। कला की व्याख्या सामाजिक चेतना के रूप में होने लगती है। ऐसी स्थितियों में कवि या साहित्यकार अपनी चेतना को विचार-तत्त्वों के साथ गठबन्धन कर लेता है। सामयिक परिवेश एवं परिस्थितियों के निदान के लिये कवि मानववाद एवं सामाजिक न्याय की उद्घोषणा करता है। सामाजिक चेतना वैचारिकता से सिक्त होती है। ऐसी स्थिति में यथार्थ अंकन करते हुए कवि या साहित्यकार विचार-दर्शन से अपने को बोझिल कर देता है। हिन्दी कविता सामाजिक चेतना के रूप में जब अपना रूप सँवारती है तो उसे दो स्थितियों से संघर्ष भी करना पड़ता है। ऐसी स्थितियों में कवि या साहित्यकार की चेतना और परिवेश के संघात से एक नयी स्थिति बनती है। उस स्थिति के प्रतिफलन के लिये द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद एवं ऐतिहासिक भौतिकवाद को अपने चिन्तन के लिये मार्गदर्शक मानता है।

समाजवादी कला यथार्थवादी कला होती है। अतः ऐतिहासिक दृष्टि से यथार्थ और बहुत ही कलात्मक रूप में वास्तविकता के प्रकट करने की अपेक्षा की जाती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

समाजवादी चेतना के फलस्वरूप कला में समाजवादी मानव के उभरने के साथ व्यष्टि और समष्टि के आपसी सम्बन्ध भी बदल जाते हैं। समाजवादी कला की सर्जनात्मक शैली समाजवादी यथार्थवाद है। जनता के साथ घना सम्बन्ध एवं उसकी पक्षधरता नवमानववाद राष्ट्रीय चेतना सचाई एवं वास्तविकता की गहरी जानकारी और पूंजीवाद के विरुद्ध एक विशेष लक्षण हैं। जनता के साथ समाजवादी कला के घने सम्बन्ध को ध्यान में रखकर लेनिन ने कहा है—"कला जनता के लिए है। व्यापक श्रमिक-समुदाय में इसकी गहरी जड़ें होनी चाहिए। यह जनता के समझने तथा अनुराग की चीज होनी चाहिए। उसे उसकी भावनाओं, विचारों एवं आकांक्षाओं के साथ बद्धमूल तथा विकसित होना चाहिए। इसे उसकी कलात्मक भावना को जागृत तथा विकसित करना चाहिए।"[७] लेनिन के इस कथन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि कला या साहित्य बाह्य परिस्थितियों से प्रभावित होती है और उसमें परिवेश का अंकन अनिवार्य तो है ही, साथ ही इसकी प्रस्तुति में साहित्यकार या कलाकार के अन्तः एवं बाह्य परिस्थितियों से प्रसूत काव्य या साहित्य की सहजता है। विशुद्ध स्वच्छन्दतावादी कवि या साहित्यकार आकाश और पाताल, सर्वत्र मुक्त और स्वच्छन्द विचरण करता है और जीवन के ऐसे तथ्यों से परिचित कराता है जिन्हें कोई नहीं जानता। यथार्थवादी अंकन में स्वच्छन्दतावादी कल्पना के इस रूप का अस्वीकार है। यथार्थवाद में कल्पना का एकदम त्याग नहीं है। बाह्य यथार्थ की पुनर्रचना सर्जनात्मक कल्पना के अभाव में हो ही नहीं सकती।

यथार्थवादी साहित्यकार या कलाकार चित्रण की फोटोग्राफी-पद्धति का विरोधी है। अतः वह कल्पनातत्त्व का विरोधी नहीं हो सकता। इस प्रकार साहित्यिक कृतियों की मूलचेतना में कल्पना का स्वीकार निहित है। वस्तुतः जो चित्र अथवा बिम्ब हम स्मृति से प्राप्त करते हैं उनके पीछे भी यथार्थ अनुभव और पदार्थ की स्थिति होती है।

अपने साहित्यिक चिंतन के क्रम में गोर्की ने कल्पना-तत्त्व को अपने ढंग से यथार्थ अंकन में भी आवश्यक बतलाया है। विशिष्ट चरित्रों और सामान्य चरित्रों के निर्माण में संलग्न साहित्यिक सृजन की कला कल्पना एवं आविष्कारपरकता की अपेक्षा रखती है। गोर्की ने कल्पना-तत्त्व को बिम्बों में सोचने की प्रक्रिया कहा है। गोर्की का यह भी कथन है कि अस्तित्व के संघर्ष में मनुष्य की आत्मरक्षा की प्रवृत्ति ने उसके भीतर दो शक्तिशाली कारयित्री शक्तियों को विकसित किया है, जो ज्ञान और कल्पना है। ज्ञान अवगति की शक्ति है, जिसका प्रयोजन निरीक्षण, संतुलन, प्राकृतिक जगत् और सामाजिक जीवन के तथ्यों का अध्ययन करना है। एक शब्द में ज्ञान का अर्थ है चिंतन। कल्पना भी वस्तुतः संसार के बारे में चिंतन का एक प्रकार है, किन्तु यह चिंतन बिम्बों के माध्यम से होता है। यहाँ तक कहा जा सकता है कि कल्पना वह

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

सामर्थ्य है जिसके द्वारा वस्तुओं तथा प्राकृतिक शक्तियों के ऊपर मानवीय गुणों, भावों और अभिप्रायों को आरोपित किया जाता है।[८] गोर्की का कथन कि कल्पना-तत्त्व बिम्बों में सोचने की एक प्रक्रिया है। और आगे कहते हैं कि साहित्य-सर्जन जिसका सम्बन्ध सामान्य तथा प्रतिनिधि-चरित्रों के निर्माण से है। कल्पनाशीलता एवं आविष्कारपरकता की अपेक्षा रखती है, जो चित्र अथवा बिम्ब हम पर्यवेक्षण तथा स्मृति से प्राप्त करते हैं। उनके पीछे भी यथार्थ अनुभूति और पदार्थों की स्थिति होती है। यथार्थ अंकन इस तथ्य की स्वीकृति देता है कि अन्तः एवं बाह्य-जगत् के पदार्थों को व्यवस्थित करके कलात्मक विलयन के रूप में प्रस्तुत करने का कार्य कल्पना का ही है। कल्पना यदि सच्ची कल्पना है तो यथार्थ अनुभूति से विलग नहीं रह सकती, और यथार्थपरक सर्जना यदि वह वास्तव में यथार्थवादी रचना है तो कल्पना-तत्त्व को छोड़कर अपना कलात्मक रूप स्थिर नहीं रख सकती। यूंग वैयक्तिककरण की धारणा पर स्वप्नों और सक्रिय कल्पनाओं से उत्पन्न बिम्बों के अर्थ निर्धारित करने के क्रम में वैयक्तिककरण की अवधारणा पर पहुँचा।[९] वैयक्तिककरण की प्रक्रिया कल्पनात्मक होती है। कल्पना का तात्पर्य होता है—वैयक्तिककरण। कल्पना वैयक्तिकता का विस्तार है। वस्तुतः कल्पना वैयक्तिक होती है। इस प्रकार कल्पना अन्तर्दृष्टि है, रहस्योद्घाटन है। इसलिए कॉलरिज ने पारस्परिक विरोधी अथवा समन्वित गुणों के बीच संतुलन अथवा समन्वय को कल्पना कहा है।[१०]

कवि या लेखक अपने वैज्ञानिक एवं समकालीन बोध के साथ जब यथार्थ अंकन करता है तो उसकी दृष्टि मनुष्य, समाज अथवा जीवन को उसके स्थिर रूप में न देखकर उसके क्रान्तिकारी विकास में देखता है। यथार्थपरक साहित्यकार जगत् तथा उसके सारे क्रियाकलापों को निरन्तर गतिशील स्वीकार करता है और ऐसी स्थिति में स्वभावतः उसकी दृष्टि वस्तु के वर्तमान रूप पर ही केन्द्रित न रहकर उस रूप को भी देखती है जो सम्भावित है। भविष्य की कल्पना भी अनिवार्य है, लेनिन भी इसकी स्वीकृति देता है—"We must dream"—इस तरह साहित्य में कल्पना के माध्यम से मानव-कल्याण की जो दृष्टि होती है, जो क्षितिज के उस पार देखने की दृष्टि देती है, यह दृष्टि साहित्य में कल्पना ही होती है। जहाँ भी कवि या साहित्यकार वर्तमान स्थितियों का अंकन करते समय संभावित भविष्य की रेखाएँ खींचता है वहाँ वह स्वच्छन्दतावादी होता है। समकालीन स्थितियों के अंकन के फलस्वरूप वह नवस्वच्छन्दतावादी हो जाता है।

यथार्थ सर्जन के अन्तर्गत कल्पना का जो रूप अस्वीकारा गया है वह ऐसी कल्पना का रूप है जो पदार्थ वस्तुओं के अभाव में भी कार्य करती है, जिसे तर्कबुद्धि से भी उच्च कोटि की मानसिक शक्ति माना गया है। इस तरह की कल्पना भौतिक जगत्

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

और मानवीय जीवन की अनुभूतियों से परे हो जाती है। यथार्थ अंकन इसी धरती की मानवीय अनुभूति से होता है। यथार्थपरक साहित्यकार अपनी सजगता के कारण ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से बाह्य जगत् से अपना सम्बन्ध जोड़ता है और अनुभूतियाँ प्राप्त करता है, तत्पश्चात् उसे सर्जनात्मक कल्पना के द्वारा अभिव्यंजित करता है। इस अभिव्यक्ति का सीधा लगाव बाह्य जगत् से होता है और जीवन का ठोस यथार्थ कलात्मक रूप में हमें प्राप्य होता है। कुल मिलाकर यथार्थ अंकन कल्पना-विरोधी न होकर केवल वायवीय कल्पना जो यथार्थ से कटी हुई है, का विरोधी है। और यथार्थ-वादी साहित्यकार जन-जीवन एवं धरती का प्रेमी होता है।

बाह्य जीवन की वे सभी वस्तुएँ जो मानव के मन में सौन्दर्य की चेतना उत्पन्न करती हैं यथार्थपरक विषय बन सकती हैं और इसके अनेक कलारूपों में ढली भी हैं। यथार्थ की उपयोगिता मनुष्य के पूरे व्यक्तित्व की प्रस्तुति में है और इसके अन्तर्गत उसकी कोमल मधुर भावनाएँ—प्रेम-प्रसंग भी आते हैं। यथार्थपरक साहित्यकार जीवन को उसकी समग्रता में रूपायित करता है, जिसके अन्तर्गत सौन्दर्य की स्थिति भी है। सामाजिक जीवन ही नहीं, निजी जीवन के मनुष्य के सुख-दुःख, जय-विजय इत्यादि के लिए भी यथार्थपरक अंकन में पूरी छूट है। यथार्थवादी कवियों ने सुन्दर प्रेम-कविताएँ भी लिखीं, सौन्दर्य की मोहक छवि की झाँकियाँ भी तथा प्रकृति के रम्य, मनोहर चित्र भी सँजोये। इस तरह जीवन की कोमल और रागात्मक अनुभूतियाँ भी यथार्थवादी साहित्य का अभिन्न अंग हैं। ज्ञान-विज्ञान की नई भूमिकाओं ने उसे निरन्तर निखरे हुए रूप में प्रस्तुत किया है। उन्नीसवीं शताब्दी में यथार्थ अंकन एक सशक्त आन्दोलन का आधार पाकर यथार्थवाद का रूप धारण करता है और कला-जगत् में यथार्थवाद के रूप में आता है और आगे चलकर बीसवीं शताब्दी में समाजवादी यथार्थवाद के रूप में अपना नया रूप निर्मित करता है।

इसके अंकन में साहित्यकार सामाजिक चेतना से आक्रान्त होकर यथार्थ की प्रस्तुति करता है, इस यथार्थपरक प्रस्तुति में तर्क का भी सहारा लेता है। परंपरा के प्रति आसक्ति किसी भी प्रगतिशील कवि को अन्ततः स्वच्छन्दतावादी बना डालती है। एक ही अमूर्त्तन का उपयोग स्वच्छन्दतावादी कवि भी करता है और नवस्वच्छन्दतावादी कवि भी करता है, परन्तु एक का क्षेत्र विशुद्ध कल्पना का संसार है और दूसरे का यथार्थपरक कल्पना का। जीवन अनुभूतियों की अभिव्यंजना नवस्वच्छन्दतावादी कवि कल्पना एवं जगत् की अभिव्यक्ति में यथार्थ अंकन को भी दृष्टि में रखता है। कविता कलात्मक अभिव्यंजना होती है इसलिए महान् कवि इन दोनों तत्त्वों को इतनी बारीकी से मिलाता है कि इनका एक सुन्दर विलयन या घोल बन जाता है और इसी बिन्दु पर कविता या कला उत्कृष्टता को प्राप्त करती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

अनुभूति / परिवेश

मनुष्य की चेतना अपने परिवेश से संचालित होती है। जाने-अनजाने कवि के मानस पर परिवेश अपना प्रभाव छोड़ता जाता है। परिवेश की सीमारेखा में वर्तमान और अतीत दोनों ही आ जाते हैं। ऐसी स्थिति में कवि या लेखक अपने परिवेश से अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ होता है। उसकी अनुभूति भी उसीकी उपज होती है। कवि या लेखक के परिवेश को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—एक उसकी वैंयक्तिकता या आन्तरिकता, दूसरी प्रवृत्ति उसका भौतिक परिवेश है। कवि या लेखक के आन्तरिक परिवेश का निर्माण संवेदना, भाव एवं विचार से होता है। कवि या लेखक का भौतिक परिवेश प्राकृतिक शक्तियों एवं बाह्य परिस्थितियों से संचालित होता है। इन दोनों के परस्पर संघात से मानवीय अनुभूतियों का इतिहास-चक्र गतिशील होता है। अनुभूति या भावना काव्य का प्रेरक तत्त्व है, उसकी मूलभूत सत्ता है। कल्पना अनुभूति का क्रियाशील स्वरूप है।······कल्पना का मूल स्रोत अनुभूति है और उसकी परिणति है काव्य की रूपात्मक अभिव्यंजना। इस प्रक्रिया में गतिमान् तत्त्व अनुभूति है और इस प्रकार कल्पना अनुभूति से अभिव्यंजना तक विस्तृत है। ········वह वस्तु जो कल्पना के विविध अंगों और मानस-छवियों का नियमन और एकान्वय करती है, अनुभूति कहलाती है। अतएव अनुभूति काव्य का निर्णायक और केन्द्रीय तत्त्व है जिसका सृजन और विन्यास काव्य-कल्पना तथा काव्यात्मक अभिव्यक्ति के रूपों में होता है। इस भावात्मक अनुभूति में मानव-व्यक्तित्व और मानवता के ऐसे श्रेष्ठ उपादान होते हैं जिनसे काव्य में मूल्य और महत्त्व की प्रतिष्ठा होती है।[११] स्वभावतः अनुभूति में निम्नांकित तत्त्वों का सन्निवेश होता है :—(क) वह वस्तु जो अनुभव का विषय है, (ख) विषयी या आत्मा जो अनुभव करती है, और (ग) विषय और विषयी के संघात से उत्पन्न अनुभव या संवेदन। अनुभूति के निर्माण में इन तत्त्वों का संयोग होने के कारण उसके स्वरूप और वैशिष्ट्य में असंख्य भेदों का होना स्वाभाविक है, परन्तु काव्यात्मक अनुभूति अत्यन्त उच्चस्तर का अनुभव होने के कारण बहुत कुछ समरस और समरूप भी हुआ करती है। उसमें देश और काल के अनुसार गतिशीलता का तत्त्व भी होता है और मानवात्मा की विकासावस्था के अनुरूप उसमें व्यापकता और वैशिष्ट्य की भी मात्राएँ रहती हैं।[१२] विलियम वर्ड्सवर्थ के शब्दों में कविता, मानव तथा प्रकृति की छाया है।[१३] इस प्रकार अनुभूति वर्ड्सवर्थ के लिए एक साधन है जहाँ से मानव-हृदय को संप्रेषित किया जाता है, जो वास्तविक सत्य है और उनकी कविता की वास्तविक खोज है।[१४]

यह सत्य है कि जब हम अनुभव करते हैं तो हम अपने कार्यों को, परिवेश को भी अनुभव करते हैं। कार्य का सम्बन्ध अपने अतिरिक्त किसी और से भी होता है,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वह उसका परिवेश होता है, आसपास की दुनिया होती है। अनुभूति उभरती है इन्हींके संघात से। इसका सीमा-क्षेत्र है अपनी आन्तरिकता से बाहर जाना। बाहर जाते ही समाज एवं परिवेश की सीमा रेखा में आ जाते हैं। इस प्रकार इस बिन्दु पर कवि या लेखक सामाजिक चेतना से अनुप्राणित होता है। सामाजिक चेतना से अनुप्राणित होने के फलस्वरूप साहित्यकार की चेतना सामाजिकता से जुड़ जाती है। परिवेश कोई जड़ या निष्क्रिय वस्तु नहीं, वह साहित्यकार या कवि की इच्छा के बावजूद भी अपना कार्य निरन्तर करती है। संसार के इतिहास में ऐसे आँकड़े भी ढूंढ़े जा सकते हैं जब सामाजिक आन्दोलन की आँधी ने विशुद्ध साहित्य की दुनिया में रहनेवाले साहित्यकारों को भी आन्दोलनकारी बना दिया। और जब शुद्ध साहित्यकारों में से किसीने वास्तविकता के इस दबाव के विरुद्ध विद्रोह किया तो शीघ्र ही उसे वेदना और निराशा के लोक में शरण लेनी पड़ी। लेकिन कुछ ऐसे भी कवि या लेखक होते हैं जो भावुकतावश परिवेश के प्रवाह में चले गये, लेकिन अपनी शक्ति और क्षमता के अनुसार उसे आत्मसात् न कर सके। वस्तुतः कुछ ऐसे भी साहित्यकार कवि या लेखक होते हैं जो अपने व्यक्तित्व को दो स्तरों में विभाजित कर लेते हैं, जिनमें से एक स्तर पर वे अपनी निजी अनुभूति की रचनाएँ करते हैं और दूसरे स्तर पर सामाजिक चेतना की। ऐसे ही कवि या लेखक महान् होते हैं और उनकी सर्जना उत्कृष्ट होती है। खंडित व्यक्तित्ववाला कवि या लेखक एक ही दिशा में भटकाव के फलस्वरूप न तो ठीक से अपनी रंगीन अनुभूतियों को सजा पाता है, न परिवेश से सम्पृक्त सामाजिक चेतना की प्रस्तुति ही। कुछ ऐसे कवि या लेखक भी होते हैं जो अपनी रचना में अन्तः एवं बाह्य, मनुष्य एवं प्रकृति को बड़ी बारीकी से गलाकर एक नवीन कलात्मक रूप में रखते हैं। ऐसी रचना ही समाज की चेतना बनती है। महान् कवि या लेखक अनुभूति और परिवेश को घोलकर सघन बना देता है। "अनुभूति एक रचनात्मक प्रक्रिया है। अपने जीवन और परिस्थितियों को बदलने के क्रम में हमारी अनुभूतियाँ भी बदलती चलती हैं—उनमें नवीनता आती है। वैज्ञानिक आविष्कारों के द्वारा प्रकृति पर विजय प्राप्त करने के कारण मनुष्य के राग-बोध के अनेक नये पहलू प्रकट हुए।"[१५]

कवि या लेखक को अपनी अनुभूति को अपने समसामयिक जीवन, परिवेश के साथ मिलाकर प्रस्तुत करना चाहिए। तभी उसके व्यक्तित्व एवं सर्जना में निखार आ सकता है। अपनी रचना को आत्मिक अनुभूति एवं परिवेश के साथ उसकी वास्तविक अनुभूति प्राप्त कर कलात्मक रूप में प्रस्तुति करनी चाहिए। इससे जो अनुभूति बनेगी उसमें ताज़गी होगी, नयापन होगा। जिसमें कवि की चेतना एवं बाह्य जगत् की ध्वनि प्रतिध्वनित होगी। "अनुभूति वास्तविकता नहीं, बल्कि वास्त-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

विकता-सम्बन्धी भावना है इसीलिए वह वास्तविकता का एक अंश अथवा पहलू है। अनुभूति वास्तविकता की जगह नहीं ले सकती, उसकी सार्थकता इसी बात में है कि वह वास्तविकता को रचनात्मक रूप दे सके।''[१६] महान् कवि या लेखक सृजनात्मक अभिव्यंजना में अनुभूति एवं परिवेश को मिला देता है। यही कारण है कि सभ्यता के विकास के साथ मानवीय अनुभूतियों का क्षेत्र विकसित होता जा रहा है और अनुभूतियों के विस्तार में परिवेश, यथार्थ जीवन एवं वास्तविकता पर काफी बल दिया जा रहा है। अनुभूति एवं परिवेश के मिलन-बिन्दु पर ही सच्ची कविता उभरती है।

वैयक्तिकता / सामाजिकता

कविता की रचना करते समय कवि अपनी चेतना का उपयोग करता है। रचना-प्रक्रिया में कवि की पूरी मानसिकता उभरती है। वस्तुतः कविता में वैयक्तिक भूमिका का रहस्य कवि की सामाजिक चेतना में निहित होता है। इस काल्पनिक पुनर्सर्जन के अन्तर्गत वैयक्तिक अनुभूतियाँ एवं सामाजिक परिवेश से प्रसूत प्रवृत्तियाँ अपना रूप निर्मित करती हैं। काव्य-प्रक्रिया में कवि काल्पनिक पात्रों तथा घटनाओं को ऐतिहासिक यथार्थता की लपेट में अपनी प्रतिभा से प्रसूत करता है। इस प्रवृत्ति में कवि का अन्तः एवं बाह्य का बड़ा सुन्दर विलयन हो जाता है। कवि अपनी सर्जना में अपने निजी और सामाजिक चेतना को अभिव्यंजित करता है। इस तरह कविता के निर्माण में कवि आत्मिक एवं सामाजिक आवेष्टन को वाणी देता है। अतः विशुद्ध काव्य-सर्जन के क्षण में अपना तथा पराया के विभेद को विस्मृत कर देता है। यूंग काव्य-प्रक्रिया का एक विशेष सिद्धान्त प्रस्तुत करते हैं। यूंग अचेतन को दो भागों में विभाजित करता है[१७]—वैयक्तिक अचेतन और सामूहिक अचेतन। इन दोनों को वह व्यक्ति की पूर्ण चेतना कहता है और इसका निर्माण ग्रन्थियों से हुआ है। काव्य-प्रक्रिया इनमें से एक ग्रन्थि का कार्य है और यह ग्रन्थि व्यक्ति के सामाजिक और ऐतिहासिक परिवेश में काफी स्वतंत्र है। इसलिए काव्य-सर्जना वैयक्तिक एवं सामाजिक भी होती है। आंतरिक व वैयक्तिक अनुभूतियों के अभाव में कविता संभव नहीं हो सकती। ऐतिहासिक और सामाजिक दृष्टि के प्रस्तुतीकरण को ही कविता नहीं कह सकते, यदि समाज और इतिहास की यथातथ्य अथवा रचनात्मक उपस्थापना ही कविता होती तो इन विषयों के विद्वान् ही सबसे बड़े कवि होते। लेकिन स्थिति इससे भिन्न है। सामाजिकता तथा ऐतिहासिकता से अलग होकर कविता नहीं लिखी जा सकती। मूलतः वह तो कवि की आत्मिक अभिव्यक्ति है। हाँ, इतना अवश्य है कि वह ऐतिहासिक सत्य और सामाजिक परिवेश को अपनी कविता का माध्यम बना सकता है। यूंग वैयक्तिक एवं सामूहिक अचेतन की अभिव्यंजना को स्वीकारते हुए कहता है कि कवि सर्जन के सात्त्विक क्षण में इन दोनों तत्त्वों को काव्य-सर्जना का माध्यम बनाता

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है। फलतः कवि या कलाकार की रचना में वैयक्तिकता एवं सामाजिकता की सहज स्वाभाविक अभिव्यंजना होती है। सामूहिक अचेतन अच्छी तरह मानवी समस्याओं का संकेत देता है जो हमेशा से समस्त विश्व में व्याप्त है।[१८]

अचेतन के दोनों रूपों की अभिव्यंजना में वैयक्तिकता एवं सामाजिकता की सुन्दर झाँकियाँ कवि के रचना-संसार में देखने को मिलती हैं। इसलिए कवियों की रचना-प्रक्रिया में वैयक्तिक एवं सामाजिक अनुभूतियों का अंकन सहज होता चलता है। दोनों का समन्वय भी होता चलता है। यही कविता की रचना-प्रक्रिया की सहजता एवं स्वाभाविकता है।

हिन्दी नवस्वच्छन्दतावादी कविता राजनीतिक एवं सामाजिक संक्रान्ति के दोआब में विकसित होती है। भारत में उद्योगीकरण के फलस्वरूप परम्परित अर्थव्यवस्था का ढाँचा चरमरा गया था। वैज्ञानिक उपलब्धियों के फलस्वरूप सामाजिक एवं नैतिक मानदण्ड टूट रहे थे। नवस्वच्छन्दतावादी काव्यधारा इन्हीं संक्रान्तिमय परिस्थितियों की उपज है, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के कारण कवियों का चिन्तन परिवर्तित हुआ। स्वच्छन्दतावाद में केवल वैयक्तिक अनुभूतियों का गायन हो रहा था, किन्तु सामाजिकता की लहर ने ऐसी तरंगें उद्वेलित कीं कि वैयक्तिकता के साथ-साथ कवि सामाजिक अनुभूतियों की भी बातें करने लगा। कविता व्यक्ति-मन की अनुभूतियों के साथ-साथ बाह्य स्थितियों, परिवेश एवं रोजी-रोटी की समस्याओं का अंकन भी करने लगी। कवि यहाँ पर सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं राजनीतिक रूढ़ियों से जूझता है और परिणामस्वरूप नया चिन्तन छनकर सृजन में ढलता है। वैयक्तिक धरातल भी इस धारा के कवियों का है, लेकिन इस काव्यधारा की कोई धार्मिक-आध्यात्मिक भावभूमि नहीं है, फलस्वरूप इस धारा की वैयक्तिकता मान्य आस्थाओं के प्रति संदेह एवं विद्रोह को लेकर चलती है। इस धारा की कविताओं में आध्यात्मिक आस्था के प्रति सन्देह एवं नैतिक एवं सामाजिक मान्यताओं के प्रति विद्रोह भी है। इसलिए प्रारम्भ में वह नकारात्मक जीवन-दर्शन लेकर चलता है। 'बच्चन' तथा उस समय के कवियों की रचनाओं में 'सन्देहवाद', नियतिवाद तथा यत्रतत्र निषेधवाद भी मिलता है। कालक्रम के साथ वैयक्तिकता भाग्यवाद से मानववाद की ओर प्रयाण करती है। नरेन्द्र शर्मा, रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', गोपालसिंह नेपाली, आरसीप्रसाद सिंह, बच्चन आदि कवि क्षयी रोमांस के गीतों को त्यागकर स्वस्थ मानवीय रोमांस के गीत गाने लगते हैं। क्षयी रोमांस के कवियों ने प्रेमानुभूति से विश्राम लेकर सामाजिक सर्जन की ओर अपनी रुझान केन्द्रित करते हैं। भगवतीचरण वर्मा की प्रसिद्ध कविता 'चरमर, चरमर, चूं, चररमरर', 'जा रही चली भैंसा गाड़ी',

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

काफी लोकप्रिय हुई। बच्चन के 'बंगाल का अकाल', 'सूत की माला', 'बुद्ध और नाचघर' आदि में सामाजिक चेतना की कविताएँ मिलती हैं। 'अंचल' मधूलिका एवं अपराजिता में रोमांटिक अंचल छोड़कर किरणवेला और करील तक जा पहुँचे। नरेन्द्र शर्मा 'हंसमाला', 'अग्नि शस्य', 'रक्त चन्दन' आदि में व्यक्तिवादी भूमिका से समाजवादी भूमिका में प्रवेश करते हैं। प्रो० केसरीकुमार का कहना है कि "साहित्यिक कृति प्रक्रिया में सभी कलाओं से अधिक वैयक्तिक पर स्वरूप और परिणाम में सर्वाधिक सामाजिक होती है।"[१६] इस तरह साहित्य का धरातल अपने में वैयक्तिकता की चहारदीवारी लाँघकर सामाजिक भावबोध को भी अपनी सीमारेखा में समेट लेता है। साहित्य प्रकृति से वैयक्तिक अनुभूतियों के साथ-साथ सामाजिक अनुभूतियों को अभिव्यक्ति देता है। कवि या कलाकार अपनी सर्जना के निर्माण में उपादानों के संचयन में रचना-शिल्प के समस्त घटकों के उपयोग में साहित्यकार पूर्ण स्वतन्त्र होता है। यही उसकी वैयक्तिकता है। वैचारिक संघात एवं भाषा के माध्यम से वह केवल वैयक्तिकता को ही प्रस्तुत नहीं करता, बल्कि यह स्वच्छन्द अभिव्यंजना की पद्धति उस समाजवादी आदर्श की है जिसके अन्तर्गत मानव-व्यक्तित्व एवं समाज के मानवीय पक्षों में पूर्ण स्वतन्त्रता होती है, जिसमें भौतिक एवं नैतिक आवश्यकताओं का पूर्ण समन्वय होता है और इसके द्वारा जीवन के आर्थिक एवं सांस्कृतिक लक्ष्यों के बीच एक नवीन रेखांकन करना है और इस अंकन में पीड़ित संसार की समस्याओं का निदान ढूंढ़ना है। ऐसी स्थितियों में साहित्य या कला प्रकृति से सामाजिक एवं वैयक्तिक अनुभूतियों से सिक्त होती है।

प्रगतिशील लेखक संघ के अध्यक्षीय भाषण के फलस्वरूप हिन्दी-साहित्य का रचना-संसार जो आदर्शवाद की सीमाओं के अन्दर यथार्थवाद का जो रूप विकसित हो रहा था वह अब छलाँग लगाकर सामाजिक यथार्थवाद की विचारधारा के रूप में उभरकर सामने आया। साहित्यिक रूढ़िवादिता, व्यक्तिवादिता, परम्परागत सौन्दर्य-चेतना आदि पर प्रहार और साहित्यकारों से क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद एवं समाजवादी यथार्थवाद की तरफ बढ़नेवाले साहित्यिक रुझान की माँग ने प्रेमचन्द के अध्यक्षीय भाषण के बाद हिन्दी के साहित्यकारों के मार्गदर्शन का कार्य किया। कामायनी की रचना पूरी करने के कुछ ही दिनों बाद प्रसादजी स्वर्गवासी हुए। उसीके आसपास स्वच्छन्दतावादी काव्य का भावबोध बदलाव की प्रक्रिया में था। पन्त 'युगान्त', 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' की रचना-प्रक्रिया में थे। 'निराला' अपनी बेटी सरोज के निधन के बाद आक्रोश में आ गये थे। निराला 'सरोज-स्मृति' में करुणा के साथ सामाजिक विद्रोह की अभिव्यक्ति दे रहे थे। सन् १९३७ में निराला की 'वह तोड़ती पत्थर' जैसी सामाजिक चेतना की कविता लिखी गयी जिससे सामाजिकता की भावना को बल मिला। सन् १९३८ में 'रूपाभ' का प्रकाशन हुआ। पन्त ने रूपाभ की मनोभूमि को

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्पष्ट करते हुए लिखा कि "इस युग की कविता स्वप्नों में नहीं पल सकती। उसकी जड़ों को अपनी पोषण-सामग्री ग्रहण करने के लिए कठोर धरती का आश्रय लेना पड़ रहा है।"[२०]

फलस्वरूप हिन्दी कविता की वैयक्तिकता की प्रवृत्ति जो स्वच्छन्दतावाद में सशक्त अभिव्यक्ति पा रही थी, उसका रूप थोड़ा ह्रासोन्मुख होने लगा। और यहीं से कविता सामाजिक अनुभूतियों से सिक्त होने लगी। परिवेश के परिवर्तन के फलस्वरूप स्वच्छन्दतावाद एक नयी करवट लेता है, और इस कविता-प्रवाह में वैयक्तिकता और सामाजिकता का सुन्दर समन्वित रूप देखने को मिलता है। कविता यहाँ यथार्थवादी चेतना को लेकर आगे बढ़ती है। यथार्थवाद का नवीन विकास तथा समाजवादी यथार्थवादी दृष्टि भी इस धारा के आयाम को बदलने में सहायक बनती है। इस कविता के नवीन संसार में नव-मानव की समस्याओं का आकलन होने के फलस्वरूप कविता सामाजिक धरातल को स्पर्श करती है।

वस्तुतः कविता की प्रस्तुति में कवि वैयक्तिक व आत्मपरक ही होता है। कवि की सर्जनात्मक एवं सक्रिय कल्पना यथार्थ जगत् से मीमांसात्मक ज्ञान के आधार पर उसकी रचना का ढलाव वैयक्तिक या आत्मपरक ही होता है। कवि अपने काव्य-संसार का निर्माता होता है। कविता के रचना-शिल्प में वह किसीके अंकुश को स्वीकार नहीं करता। उसकी चेतना सहज एवं अकृत्रिम ढंग से एक नवीन, सहज एवं अकृत्रिम रूप में ढल जाती है। स्वच्छन्दतावादी व्यक्तिवाद का ढलाव सर्जनात्मक कल्पना की अधिकता, प्रकृति का आत्मपरक अनुभव, अनुभूति की महत्ता एवं प्रतीकात्मक बिम्ब-विधान का प्रयोग ही है।[२१] ये प्रवृत्तियाँ जहाँ भी कविता में गुंफित होती हैं वहाँ स्वच्छन्दतावादी व्यक्तिवाद को देखा जा सकता है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावाद की यह व्यक्तिवादी प्रवृत्ति नवस्वच्छन्दतावाद में शिल्पगत वैशिष्ट्य के रूप में अपना रूप सँवारती है। वासरमैन ने स्वच्छन्दतावादी व्यक्तिवाद पर बल देते हुए कहा है कि काव्य की रचना वैश्वपूर्णता की भी रचना है, जो कविता को अर्थ प्रदान करती है। प्रत्येक कवि को स्वतंत्र होकर अपनी दुनिया की तस्वीर बनानी चाहिए तथा भाषा के अन्तर्गत अपनी निजी भाषा। यह विचारणा स्वच्छन्दतावाद के प्रतीक, मिथक के प्रति ललक को न्यायसंगत सिद्ध करती है, विशेष रूप से उस प्रतीक और मिथक को जो व्यक्तिगत और निजी हैं।[२२]

नवस्वच्छन्दतावादी वैयक्तिकता स्वच्छन्दतावादी वैयक्तिकता से किंचित् भिन्न होती है। नवस्वच्छन्दतावादी वैयक्तिक चेतना लोकतांत्रिक स्वतंत्रता के रूप में दिखाई पड़ती है। नवस्वच्छन्दतावादी वैयक्तिक चेतना के अंकन में कवि या लेखक समसामयिक जीवन-बोध को भी चित्रित करता है। वह अद्यतन समस्याओं को अपनी कविता में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

रूपायित करता है और इस बिन्दु पर कवि की चेतना क्रांतिकारी वैयक्तिक भावना से जुड़ जाती है।

वस्तुतः वैयक्तिकता पर यह आग्रह उन्नीसवीं शताब्दी की बुर्जुआ व्यक्तिवादी चिन्तन-रेखाओं से पृथक् है। वे चिन्तन-रेखाएँ व्यक्ति को केवल एक राजनीतिक 'वोट' मानती थीं, या श्रम करनेवाली या बिकनेवाली वस्तु। वस्तुतः आर्थिक सुविधा के अभाव में व्यक्ति की राजनीति या आर्थिक स्वतंत्रता की चर्चा करना एक बुर्जुआ भ्रम था। लेकिन आज पूर्वी और पश्चिमी वैयक्तिकतापरक दृष्टि में वैयक्तिकता के जिस पक्ष को विकास की पूर्ण स्वतन्त्रता देने का आग्रह कर रही है उसका एक आवश्यक प्रगतिशील सामाजिक महत्त्व है। मूनियर, बर्डो, कीट्स, मेरीटेन—सभी बुर्जुआ प्रतिक्रियापरक व्यक्तिवाद से अपने भौतिकवाद को पृथक् मानते हैं। सबसे पहले मूनियर नामक फ्रेंच विचारक ने १९३२ ई० में वैयक्तिकतावादी घोषणा-पत्र प्रकाशित किया। उसके बाद समस्त यूरोप और अमेरिका में साहित्य, अर्थशास्त्र, अध्यात्म-चिन्तन, राजनीति, समाजशास्त्र एवं ज्ञान के सभी क्षेत्रों में यह सिद्धान्त छा-सा गया। मूनियर का पत्र ही इसका मुख्य-पत्र था। मूनियर इसको वाद न कहकर एक दृष्टि कहता था।

वैयक्तिकता का स्फुरण मानवीय मूल की समग्रता की खोज और उसकी स्थापना में ही होता है। प्रत्येक विकासोन्मुख समाज एवं संस्कृति में कुछ ऐसे ही महान् कवि या लेखक होते हैं क्योंकि उसमें वैयक्तिकता की पूर्ण स्वतन्त्रता रहती है और अधिक-से-अधिक व्यक्ति मानवता के स्थायी मूल्यों की खोज, साक्षात्कार और स्थापना में तल्लीन रहते हैं। अपने ढंग से अपनी तात्कालिक ऐतिहासिक स्थिति में उस मूल की व्याख्या करते हुए सामूहिक प्रगति का विकास करने को स्वतन्त्र रहते हैं। अतः आज के सन्दर्भ में वैयक्तिकता की स्वतन्त्रता की माँग का अभिप्राय प्रगति की स्वतन्त्रता की माँग करना है। वैयक्तिकता की स्वतन्त्रता की उद्घोषणा बड़े साफ शब्दों में लुई मैकनिस ने अपनी कविता में की है, जहाँ एक अजन्मा शिशु जन्म के पूर्व अपनी कुछ शर्तें रखता है।[२९] वैयक्तिक स्वातन्त्र्य की इस घोषणा का अर्थ अराजकता, उच्छृङ्खलता, निरंकुशता और दायित्वहीनता नहीं है। उसके साथ एक दायित्व भी है—मूल्यों की खोज, उनकी मानववादी समाज की व्याख्या और आचरण में इसकी सक्रिय परिणति। हिन्दी कविता में सन् १९३७ ई० के बाद आंशिक स्वतन्त्रता की प्राप्ति एवं १९४७ ई० में जब देश गुलामी की जंजीर से पूर्णतः मुक्त हो जाता है तो वहीं से लोगों में स्वतन्त्रता की एक नवीन भावबोध की स्थिति बनती है। राष्ट्रीय चेतना, राष्ट्रीय भावना बलवती होती है और इसमें स्वातन्त्र्य की भावना की प्रधानता हो जाती है। १५ अगस्त, १९४७ में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

देश आजाद हुआ। इस प्रकार हमारे दायित्व-बोध का सीमा-विस्तार भी हुआ। आजादी मिलने के साथ ही हमारा दायित्व राष्ट्र के प्रति समाप्त नहीं हुआ, बल्कि अपने नये रूप में हमारे सामने उपस्थित होता है, दायित्व-बोध का सीमा-विस्तार भी हुआ। उदाहरण के रूप में गिरिजाकुमार माथुर की '१५ अगस्त' शीर्षक कविता ली जा सकती है।[२४]

हिन्दी की नवस्वच्छन्दतावादी कविता में लोकतान्त्रिक चेतना की अभिव्यक्ति मिलती है, साथ ही नागरिक अधिकारों, मानव-मूल्यों एवं दायित्व-बोध की नवीन चेतना की अच्छी प्रस्तुति भी हुई है। स्वच्छन्दतावादी स्वतन्त्रता में प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छा एवं न्याय के लिए संघर्ष करता है, लेकिन नवस्वच्छन्दतावादी साहित्यकार समानता को मानव-जीवन का सबसे उच्च एवं महत्त्वपूर्ण उद्देश्य स्वीकारता है। इस प्रकार समाजवादी आदर्श व्यक्ति एवं दुनिया के सन्दर्भ में एक नयी अवधारणा है जो नवयथार्थवादी विचारधारा के साथ मानव-कल्याण के लिए कलात्मक अभिव्यंजना है जो पूंजीवाद से समाजवाद एवं साम्यवाद की ओर प्रयाण है। आज का साहित्यकार इसी उद्देश्य के लिए निरन्तर संघर्षशील है।

नवस्वच्छन्दतावादी कवि समाज के प्रति दायित्व-बोध के लिए व्यक्ति को ही अधिक महत्त्व देता है और सामाजिक अनुभूतियों को भी आत्मसात् करता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार—"सच्चा कवि वही है जिसे लोक-हृदय की पहचान हो, जो अनेक विशेषताओं और विचित्रताओं के बीच मनुष्य-जाति के सामान्य हृदय को देख सके।"[२५] नवस्वच्छन्दतावादी कवि या साहित्यकार वैयक्तिक चेतना के प्रस्तुतीकरण से सामाजिक दायित्व को स्वरूप देता है। इन कवियों का रचना-संसार वैयक्तिकता तथा सामाजिकता की समन्वित मंजूषा है। लेखक अपने व्यक्तित्व के माध्यम से समाज को साहित्य का रूप प्रदान करता है। साहित्य-रचना की भावाकुलता में सर्जक अक्सर सब कुछ भूल जाता है। उसके भीतर प्रसव-वेदना की तरह केवल एक ही अनुभूति उमड़ती रहती है कि अपने को यथासंभव पूरा-का-पूरा अभिव्यक्त कर दे। रचना के समय वह केवल इतना ही सोचता है कि भीतर जो कुछ उमड़ रहा है, वह सबका सब बाहर आ जाए।[२६]

नवस्वच्छन्दतावादी कवि अपने सामाजिक दायित्व के निर्वाह में सचेत है। वस्तुतः अनुभूत क्षणों में भी कवि सामाजिक संवेदना को ही वहन करते हुए उसे दूसरों के लिए संवेदनीय एवं प्रेषणीय बनाता है। उसकी यह प्रक्रिया भी सामाजिकता का गत्यात्मक स्वरूप प्रस्तुत करती है। क्षण-क्षण अपनी चेतनानुभूतियों की प्रक्रिया में व्यक्ति तथा समाज की सीमा अभिन्न हो जाती है। वह सामाजिक जीवन के माध्यम से अपने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

व्यक्तित्व को व्यंजित करता है।[२७] समाज के प्रत्येक सदस्य की छोटी-से-छोटी चेतन-क्रिया किसी-न-किसी अंश में सामाजिक होती है, फिर कविता तो समाज के सर्वाधिक संवेदनशील व्यक्ति की चेतन-क्रिया है। उसकी सामाजिकता असंदिग्ध है।[२८] काव्य एक सांस्कृतिक प्रक्रिया है—मात्र व्यक्तिगत नहीं।[२९]

कवि अपने युग तथा समाज का सबसे अधिक चेतनासम्पन्न प्राणी होता है। युग-विशेष की मानवीय अनुभूतियों को पकड़ने की क्षमता कुछ थोड़े से व्यक्तियों में ही होती है और कोई महत्त्वपूर्ण कवि इसलिए महत्त्वपूर्ण माना जाता है कि वह उन थोड़े से व्यक्तियों में से ही होता है।[३०] लेखक अपने व्यक्तित्व के माध्यम से समाज को ही अभिव्यक्त करता है। अभिव्यक्ति के लिए वह जिस भाषा, छन्द अथवा रूप का आश्रय लेता है, वह स्वयं समाज की परम्परा से प्रसूत है।[३१] लेकिन साहित्यकार कलात्मक साधना में वैयक्तिकता एवं सामाजिकता को अत्यन्त समन्वित रूप में प्रस्तुति देता हैं। इससे कला में उत्कृष्टता आती है। वस्तुतः वैयक्तिकता के नष्ट होने से कला संतुलित रूप में नहीं उभर पाती। कलात्मक निखार के लिए कलाकार व साहित्यकार को वैयक्तिकता से परिवेशगत अनुभूति की अभिव्यंजना करनी पड़ती है। काव्य-प्रक्रिया पर विचार करते समय मुक्तिबोध का कथन प्रस्तुत संदर्भ में उल्लेखनीय है : "काव्य की मनोभूमिका आत्मपरक और वस्तुपरक अर्थात् उन दोनों से समन्वित जीवनपरक दृष्टि से तैयार की गई है तो उस कवि का क्या कहना! वह निःसन्देह समृद्ध करती है।"[३२]

विद्रोह / क्रांति

मानवसमाज को उत्पीड़ित करनेवाली सड़ी-गली जर्जर मान्यताओं को समाप्त करने एवं समाज में आमूल-चूल परिवर्तन करने हेतु मनुष्यों में नयी चेतना के उन्मेष के लिए नवस्वच्छन्दतावादी कवियों ने विद्रोह के साथ-साथ क्रांति को भी आवश्यक समझा। क्रांति मूलतः वर्तमान व्यवस्था के स्थान पर नयी व्यवस्था की आकांक्षा करती है। निर्भीक स्वर में वह अपने-आपको विप्लवकारी बताते हुए शोषित-वर्ग की क्रांति का संदेश सुनाता है :

> मैं विप्लवकारी संदेश लिए फिरता हूँ,
> मैं एक भयानक वेग लिए फिरता हूँ।
> मैं अखिल विश्व में इन्कलाब के युग का,
> प्रलयंकारी आदेश लिए फिरता हूँ।[३३]

नवस्वच्छन्दतावादी कवियों के एक वर्ग की क्रांति समाज में मनुष्यों के मिले-जुले प्रयासों की अपेक्षा रखती है। वह मानव-हृदयों का उद्बोधन करता है और

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

क्रांति के रूप में एक ऐसी नूतन लौ का वरण करना चाहता है जिसका स्वरूप वह 'अनिगिता' बताता है। नवस्वच्छन्दतावादी कविता का प्रतिपाद्य है कि उसकी क्रांति ऐसी क्रांति होनी चाहिए जो मानव-हृदयों में ज्वाला की तरह उद्दीप्त तो हो किन्तु, वह समाज में ऊपर से अनदेखी बनी रहे। वस्तुतः समाज के दोषों के निराकरण के लिए क्रांति के द्वारा वर्तमान सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था को परिवर्तित करके नूतन व्यवस्था की प्रतिष्ठा का सतत प्रयास है। नयी व्यवस्था के लिए समकालीन कवियों को क्रांति का मार्ग सुगम लगा, क्योंकि क्रांति वर्तमान व्यवस्था को समाप्त कर नवीन व्यवस्था को ला सकती है—

कवि प्रलय के गीत ला दे।
क्रांति के इस अमर युग में हृदय की ज्वाला जगा दे।[२४]

वस्तुतः क्रांति व्यवस्था में बदलाव के द्वारा नवीनता लाना चाहती है। विद्रोही कवि या साहित्यकार तथा क्रांतिकारी कवि व साहित्यकार में कुछ अन्तर है। वस्तुतः विद्रोही तथा क्रांतिकारी कवि व साहित्यकार कुछ भिन्न प्रकृति के होते हैं। विद्रोही कवि व साहित्यकार उसे कहते हैं जो समाज के अनुरूप नहीं चल सकता तथा जो अपने क्रियाकलापों में समाज का हस्तक्षेप सहन नहीं कर सकता। विद्रोही कवि व साहित्यकार अपनी स्वतन्त्रता चाहता है। इसके विपरीत क्रांतिकारी कवि व साहित्यकार अपनी स्वतंत्रता प्राप्त करके संतुष्ट नहीं हो जाता। क्रांतिकारी कवि व साहित्यकार चाहता है कि वह समाज को बदल दे और अपनी इच्छाओं से उसका निर्माण करे। क्रांतिकारी कवि व साहित्यकार कर्मठ एवं सक्रिय होता है जो अपने सिद्धान्तों को एक व्यवस्थित रूप देना चाहता है। विद्रोही कवि व साहित्यकार की अपेक्षा क्रांतिकारी कवि व साहित्यकार अधिक वस्तुगत होता है, साथ ही उसका लक्ष्य उन शक्तियों पर अधिकार प्राप्त कर लेना है, जो समाज का नियंत्रण करती है तथा समाज की गति को निर्धारित करती है। क्रांतिकारी कवि व साहित्यकार प्रभुसत्ता पर अधिकार करना चाहता है। इसके साथ ही साथ पूंजीवादी व्यवस्था को समाप्त करके समाजवादी कल्याणकारी व्यवस्था को लाना चाहता है।

वस्तुतः विद्रोही कवि व साहित्यकार विद्रोह का झण्डा खड़ा करते समय प्रायः अकेला रहता है। लेकिन क्रांतिकारी कवि व साहित्यकार के साथ एक विशेष राजनीतिक चेतना में विश्वास करनेवाले लोग होते हैं जो अपनी वैचारिकता, अभिलाषाओं को एक रूप देने की लड़ाई लड़ते हैं। विद्रोही कवि व साहित्यकार का लक्ष्य होता है अस्वाभाविक तथा अन्यायपूर्ण प्रतिबन्धों को हटाना, जबकि क्रांतिकारी कवि व साहित्यकार का लक्ष्य होता है विभिन्न मनुष्यों के लिए उपलब्ध अवसरों तथा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

साधनों का सही उपयोग। क्रांति की पहल तब होती है जब नये ज्ञान तथा नूतन परिवेश में अपने भीतर नयी आशायें जगाते हैं तथा सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक व्यवस्था में परिवर्तन चाहते हैं।

अंग्रेजी स्वच्छन्दतावाद का सम्बन्ध फ्रांस की राज्यक्रांति एवं इंग्लैंड की औद्योगिक क्रांति से था। अतः उसमें स्वतंत्रता एवं विद्रोह का भाव होना अपेक्षित था। उसमें न केवल भौतिक शक्तियों के अत्याचार और अन्याय के विरुद्ध ही, अपितु नीति, धर्म, साहित्यिक परम्पराओं और शास्त्रीय नियमों के विरुद्ध भी विद्रोह मिलता है। उदाहरण के लिए पी० बी० शेली का काव्य, विशेषतः 'प्रोमेथेयस अनबाउण्ड' इसका प्रमाण है। इस काव्य ने न केवल भाषा-शैली के क्षेत्र में विद्रोह किया, अपितु विश्व के क्षेत्र में भी नये ज्ञान का अनुसरण किया। उसके नये-नये साहित्यिक प्रयोग किये और सफल भी हुए। उन्होंने अभिजात के आधार पर सामान्य को भी अपना वर्ण्य-विषय बनाया। उनके लिए वस्तु का उदात्त होना आवश्यक नहीं था, साधारण-से-साधारण वस्तु खँड़हर, सूखी पत्ती, स्काई लार्क, वेस्ट विण्ड (पश्चिमी हवा), श्मशान आदि वस्तुएँ काव्यात्मक चित्रण के लिए उपयुक्त थीं। साधारण मानव के प्रति इनकी पूरी सहानुभूति थी। अतः इनकी कविता के पात्र अभिजात या कुलीन के स्थान पर साधारण और सामान्य स्तर के हुए हैं। उन्होंने बुद्धिवाद का भी विद्रोह किया। सामाजिक दायित्व और वैयक्तिक अनुभूतियों के बीच द्वन्द्व का अंकन भी हुआ है।

नवस्वच्छन्दतावादी हिन्दी कविता में व्यक्ति, सत्ता, नियति और अलौकिकता के प्रति व्यक्ति का विद्रोह मुखरित हुआ है। व्यक्ति की चेतना विद्रोह-भाव से सिक्त इस अस्वीकार में धर्म तथा ईश्वर को ललकारा गया है—

> प्रार्थना मत कर, मत कर, मत कर,
> युद्ध-क्षेत्र में दिखला भुज-बल,
> रहकर अविजित अविचल प्रतिपल,
> मनुज-पराजय के स्मारक हैं मठ, मस्जिद, गिरजाघर।[२५]

शील की कविताओं में भी ईश्वर तथा धर्म के प्रति विद्रोह-भाव का अंकन हुआ है।[२६] नवीनता और मौलिकता स्वच्छन्दतावाद की आत्मा है, साथ ही स्वच्छन्दतावादी कवि विद्रोही होता है। सत्ता, व्यवस्था एवं साहित्यिक व काव्यात्मक रूपों एवं अभि-व्यंजना शिल्पों से विद्रोह करना स्वच्छन्दतावादी कवियों एवं साहित्यकारों की सहजता है। क्योंकि परंपरा एवं रूढ़ियों को तोड़ना, उनसे घृणा करना, विद्रोह करना स्वच्छ-न्दतावादी कवि को अभीष्ट है। नवीन सर्जना के संदर्भ में योग देना इसका कार्य है, उसके उपादान चाहे नये हों या पुराने, परिणति नये में होनी चाहिए। विलियम ब्लेक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

से स्वच्छन्दतावादी काव्य-सिद्धान्त के विषय में पूछे गये प्रश्न के उत्तर में अपने मित्र लोवास से कहता है—

'मैं एक नियम का सृजन करूँगा या
दूसरे के बनाये हुए नियम पर
चलूँगा तो गुलाब हो जाऊँगा।
मैं तर्क और तुलना नहीं करूँगा,
मेरा उद्देश्य सृजन करना है।'[३७]

निराला का कथन भी इसी प्रकार का है—

'तोड़ो, तोड़ो, तोड़ो कारा
पत्थर की निकले फिर
गङ्गा जल-धारा।'[३८]

इसी विद्रोहात्मक भावना के फलस्वरूप स्वच्छन्दतावादी कवियों की उड़ान सामाजिक चेतना की दिशा की ओर बढ़ती है। इसका कारण परिवेशगत वैशिष्ट्य था। सन् १९१७ ई० में रूसी क्रांति ने विश्व के रचनात्मक साहित्य को पूंजीवाद से समाजवाद की ओर केन्द्रित किया। वस्तुतः नवस्वच्छन्दतावादी कवियों के कलात्मक वैभव में विद्रोह के साथ क्रांति के स्वर मुखरित होने लगे। 'क्रांति' नवस्वच्छन्दतावादी साहित्य में लोकतांत्रिक स्वतंत्रता के रूप में दृष्टिगोचर होती है। नवस्वच्छन्दतावादी साहित्यकार समकालीन जीवनानुभूतियों को चित्रित करता है, साथ ही समसामयिक जीवन एवं समस्याओं को साहित्य में रूपायित करना उनका अभीष्ट है। यही वह बिन्दु है जहाँ से नवस्वच्छन्दतावादी कवि व साहित्यकार की चेतना क्रांति की ओर पहल करती है। वस्तुतः 'क्रांति' पहले-पहल किसी एक व्यक्ति के मानस में विचार-बीज के रूप में स्थित रही है। जब कभी कोई आदर्श सदियों से जन-जीवन की चेतना में खोया हुआ है, करवट बदलता है, अंगड़ाई लेकर जाग उठता है और इस रूप में शक्ति संचित कर आगे बढ़ता है, जिसे कोई भी तटरेखा या बाँध रोक नहीं पाते। परिवर्तन की गति मन्द होती है, लेकिन जब इसकी गति तीव्र हो जाती है, तब उसे 'क्रांति' कहते हैं।

क्रांति सदैव जन-शक्ति उत्पन्न करती है, जिसके परिणामस्वरूप सामाजिक सम्बन्धों के मौलिक रूप उत्पन्न होते हैं।[३९] लेनिन ने एक बार कहा था कि क्रांति एक गंभीर, क्लिष्ट और संग्रथित विज्ञान है।[४०] क्रांति किसीके हुक्म फरमाने या चाहने से नहीं होती। क्रांति के लिए निश्चित ऐतिहासिक अवस्थाओं का, वस्तुगत और मनोगत पूर्व-उपकरणों का होना आवश्यक है।[४१] क्योंकि क्रांति का अर्थ सदैव इतिहासगत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

रचनात्मक प्रयास और राजनीतिगत जन, वर्ग और दलगत क्रियाशीलता है।[४२] वस्तुतः क्रांति का तात्पर्य विश्व में परिवर्तन लाना है क्योंकि यह चिन्तन नहीं, प्रत्युत ऐतिहासिक क्रियात्मकता है। इसके लिए किसी राजनीतिक पार्टी के रूप में एक नेता का होना तथा इसके साथ ही क्रांतिकारी वर्गों के गठबन्धन के रूप में यथार्थ शक्ति का होना आवश्यक है। इस प्रकार मूलतः राज्य-सत्ता किसी भी क्रांति का मूल उत्स है। इसके साथ ही इतिहास का पहला नजर-बदलाव ही क्रांति है।

सामाजिक क्रांति समाज के राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व बौद्धिक जीवन में बदलाव की प्रक्रिया का नाम है। सामाजिक क्रांति के फलस्वरूप ही एक शासक-वर्ग का स्थान दूसरा शासक-वर्ग हस्तगत कर लेता है। सत्ता में बदलाव आवश्यक हो जाता है। सामाजिक क्रांति पुराने उत्पादन-सम्बन्धों का उन्मूलन कर देती है, नये उत्पादन-सम्बन्धों को उद्घाटित करती है। फलतः सामाजिक अभिमतों एवं संस्थाओं में आमूल परिवर्तन करती है। सामाजिक क्रांति के समय जनता की सर्जनात्मक स्फूर्ति जाग्रत होती है और करोड़ों-करोड़ों लोग सक्रिय रूप से सामाजिक जीवन में उतर जाते हैं, जिसके फलस्वरूप सामाजिक विकास की प्रक्रिया गतिशील हो जाती है। इसलिए मार्क्स ने क्रांति के इतिहास को रेल का इंजन कहा है। सामाजिक क्रांति का स्वरूप पूंजीवादी क्रांति का है, जिसमें सामन्ती राजाओं के शासन की जगह पूंजीपतियों का शासन स्थापित होता है और तदनुसार सामन्ती सम्बन्धों के स्थान पर नये पूंजीवादी उत्पादन-सम्बन्ध स्थापित होते हैं।[४३] मानव-जाति के इतिहास में सामाजिक क्रांति का विशेष महत्त्व है। इसलिए कार्ल मार्क्स ने उन्हें विश्व-इतिहास का 'लोकोमेटिव' कहा था। क्रांतियाँ इतिहास की गति को असाधारण रूप से तेज कर देती हैं। वे समाज की नयी सामाजिक-राजनीतिक शक्तियों के तीव्र विकास में सहायक होती हैं और सदियों से एकत्र अन्तर्विरोधों को समाप्त कर ऐतिहासिक प्रगति का पथ प्रशस्त करती हैं। वे शोषणमूलक सम्बन्धों की प्रणाली से मानव-जाति को मुक्ति दिलाने का महान् ऐतिहासिक मिशन पूरा करती हैं, सामाजिक विरोधों को समाप्त करती हैं, सामाजिक विकास की अब तक अनिवार्य मानी जानेवाली स्वतःस्फूर्तता का अन्त करती हैं और समाज तथा संस्कृति से व्यक्ति की विसंगतियों के सभी रूपों को नष्ट करती हैं। इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद का सिद्धान्त समाजवादी क्रांतियों के सर्जनात्मक, रचनात्मक स्वरूप के प्रश्न पर, जिसका क्रांतिकारी व्यवहार के लिए बहुत बड़ा महत्त्व है, विशेष बल देता है। समाजवादी क्रांतियाँ मानव-जाति के प्रागैतिहास का अंत करती हैं। उनके साथ मुक्त मानव का, सचेतन रूप से कम्युनिस्ट-समाज का निर्माण और सर्वथा नयी सभ्यता का सर्जन करनेवाले मानव का वास्तविक इतिहास

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शुरू होता है।[४४] समाजवादी क्रांति हर प्रकार की पूर्ववर्ती सामाजिक क्रांति से सर्वथा भिन्न होती है। वस्तुतः इससे पूर्व की किसी क्रांति का लक्ष्य शोषण को समाप्त करना नहीं था। पहले की सभी क्रांतियों ने केवल शोषण के रूप को संशोधित किया है, परन्तु समाजवादी क्रांति सदा के लिए हर शोषण का अंत कर देना चाहती है, साथ ही वर्ग-विहीन समाज के निर्माण के युग का सूत्रपात करती है। वस्तुतः समाजवादी क्रांति एक नये समाजवादी अर्थतंत्र का सर्जन करती है। इसमें जनता की सक्रियता सर्वोपरि है। इस क्रांति में सर्वहारा-वर्ग पूंजीवाद के विरुद्ध तथा समाजवाद के लिए मेहनतकश जनता के व्यापक हिस्सों और जनतांत्रिक शक्तियों को अपने इर्द-गिर्द जुटाता है। मजदूर-वर्ग समाजवादी क्रांति की निर्णायक शक्ति है। समाजवादी व्यवस्था विश्व के विकास-क्रम पर गंभीर क्रांतिकारी प्रभाव डाल रही है। समाजवादी क्रांति सर्वहारा-वर्ग द्वारा राजनीतिक सत्ता को हस्तगत करना चाहती है। वस्तुतः मजदूर-वर्ग अपना ऐतिहासिक कार्य पूंजीवादी व्यवस्था के उन्मूलन एवं नये समाज की रचना अपना सर्वहारा-राज्य स्थापित करके ही पूरा कर सकता है। पूंजीवादी व्यवस्था को समाप्त करना और नये सर्वहारा-राज्य का निर्माण—समाजवादी क्रांति की मूल चेतना है। समाजवादी क्रांति में सर्वहारा की नेतृत्वकारी भूमिका की प्रधानता है, साथ ही पूंजीवादी व्यवस्था के प्रति आक्रोश भी है। पूंजीवादी क्रांति राजनीतिक दल के प्रयास से ही हो सकती है, किन्तु समाजवादी क्रांति के लिए किसान, मजदूर आदि वर्गों की सक्रिय भूमिका अनिवार्य होती है। समाजवादी क्रांति के लिए किसानों, मजदूरों तथा निम्न मध्यम-वर्ग आदि शोषित वर्गों का संगठन जरूरी है।

द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद विश्व-क्रांति के विकास में नूतन परिस्थितियों का आविर्भाव हुआ। पूंजीवादी व्यवस्था संसार में शक्तिहीन होती जा रही है तथा समाजवादी व्यवस्था अपना विस्तार करने में लगी हुई है। इसके साथ ही समाजवाद मित्र राज्यों की प्रणाली के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर सक्रिय हो रहा है। मानवता के विकास में सामाजिक प्रणाली का जन्म हुआ। समाजवादी क्रांति द्वारा घृणित प्रथाएँ और परम्पराएँ जो सदियों से अपने को निर्मित कर रही थीं, आज प्रायः लुप्त होने की प्रक्रिया में हैं। परिणामस्वरूप समाज एक नये रूप में बदल रहा है। उत्पादक शक्तियों के विकास के लिए मार्ग प्रशस्त हो रहा है और मानवता प्रकृति से नये संग्राम में जूझ रही है।

पूंजीवाद निश्चय ही पतन की दिशा में अग्रसर हो रहा है। रूस की महान् अक्तूबर की समाजवादी क्रांति ने विश्व के इतिहास में एक नूतन युग पूंजीवाद से समाजवाद और साम्यवाद में संक्रमण के युग का सूत्रपात किया। द्वितीय विश्व-युद्ध

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

में फासिज्म की हार तथा मजदूर एवं राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलनों की वृद्धि के फलस्वरूप मेहनतकश जनता ने महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं। संसार के इतिहास में सोवियत संघ की सहायता के फलस्वरूप समाजवादी राज्यों का उदय हुआ है। वस्तुतः एक विश्व समाजवादी-प्रणाली अस्तित्व में आयी है। इसकी स्थिति निरन्तर मजबूत होती जा रही है और पूंजीवादी व्यवस्था को आज समाज के सभी क्षेत्रों से खदेड़ा जा रहा है; और वह परास्त भी हो रही है। इसके अतिरिक्त विश्वव्यापी क्रांति की अन्य शक्तिशाली धाराएँ भी पूँजीवाद को कमजोर कर रही हैं। इस प्रकार विकसित पूँजीवादी देशों में मजदूर-आन्दोलन और समाजवादी देशों में राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन अधिकाधिक जोर पकड़ रहे हैं।

क्रांति के द्वारा पूंजीवादो व्यवस्था को बदल देने और उसकी जगह समाजवादी प्रणाली को लाने की समस्या उस समय सामने आयी, जब सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था के रूप में पूंजीवाद अपना प्रगतिशील महत्त्व खोने लगा और सामाजिक उत्थान के लिए व्यवधान बन गया। इस तरह समाजवाद की ऐतिहासिक उपयोगिता स्पष्ट तथा वैज्ञानिक ढंग से प्रतिपादित हुई और समाजवादी क्रांति के रूप में बदली। मार्क्स और एंगिल्स ने क्रांति का पूंजीवाद से समाजवाद की ओर संक्रमण का जो सिद्धान्त विकसित किया, उसने तात्कालिक नवजात मजदूरों को रास्ता दिखाया और वैज्ञानिक विश्लेषण के उज्ज्वल प्रकाश में क्रांतिकारी संघर्ष की संभावनाओं को आलेखित किया।

वस्तुतः १९१७ ई० की महान् रूसी अक्तूबर-क्रांति संसार के इतिहास में एक नूतन युग की ऐतिहासिक घटना है। यह नया युग पूंजीवाद के पतन तथा नयी समाजवादी व्यवस्था के उदय का युग है। प्रस्तुत ऐतिहासिक घटना के संदर्भ में लेनिन का कथन है—"आज से रूस के इतिहास में एक नये दौर का आरम्भ होता है, और यह दौर, रूस की तीसरी क्रांति, अन्ततः हमें समाजवाद की विजय तक पहुँचा सकता है।"[४५] मार्क्स का यह दृढ़ विश्वास था कि पूंजोवाद का अधिक-से-अधिक विकास होने पर उसका अंत क्रांति के हिंसापूर्ण साधनों से ही संभव है। मार्क्स जिस समाजवाद की कल्पना करता है, उसकी स्थापना के लिए संघर्ष और क्रांति का तात्पर्य परिवर्तन से है, जिससे समाज में उथल-पुथल हो जाती है, सामाजिक संगठन बदल जाता है तथा मौलिक नव-निर्माण होता है। सर्वहारा का एकाधिपत्य होता है, साम्यवादी दल की भूमिका सक्रिय होती है, वर्गरहित समाज का आदर्श सामने होता है तथा उपनिवेशवाद का विरोध भी इसकी मूल चेतना है। "भारत में सामाजिक चेतना का अभ्युदय स्वाधीनता-आन्दोलन की देन है। समाजवादी चेतना अभिन्न रूप से साम्राज्य-विरोधी चेतना से जुड़ी हुई है।"[४६] इस तरह हम देखते हैं कि आज समाजवादी चेतना विश्व के व्यापक फलक पर सशक्त एवं प्रभावशाली बनती जा रही है। विशेषकर महान् रूसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDR

क्रांति के वाद के सर्जनात्मक एवं आलोचनात्मक साहित्य का रूप बदलाव की प्रक्रिया में है। वस्तुतः इन दो विरोधी अवधारणाओं के द्वन्द्व में साहित्यिक व काव्यात्मक अभिव्यंजना अपना रूप निर्माण कर रही है। आज की बौद्धिकता पूंजीवाद से समाजवाद की ओर अग्रसर है। वस्तुतः इन द्वन्द्वों को नवस्वच्छन्दतावादी साहित्यकारों व कवियों ने अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा के द्वारा चित्रित किया है। परिवेशगत वैशिष्ट्य के कारण नवस्वच्छन्दतावादी चिंतन में यथार्थता का आग्रह है, साथ ही बौद्धिकता एवं चिंतनशीलता की अधिकता भी। यहाँ न यथार्थ का पूर्णतः राज्य है और न विशुद्ध कल्पना एवं भावुकता का साम्राज्य। वस्तुतः यहाँ रोमांस एवं यथार्थ का सहज संगम है और इसी मिलन के फलस्वरूप काव्यात्मक एवं साहित्यिक जगत् में एक चेतना उभरती है। साहित्य एवं काव्य की उत्कृष्टता प्रदान करने के लिए साहित्यकार व कवि को परिवेश एवं समकालीन जीवनानुभूतियों को अपने साहित्य व काव्य में अभिव्यंजना देनी पड़ती है। इसी विन्दु पर साहित्यकार व कवि अपनी चेतना की अभिव्यंजना में समकालीन यथार्थता से साहित्य व काव्य को महान् बना देता है।

आज संसार के एक-तिहाई से अधिक आबादी ने पूंजीवादी सामाजिक सामंतों को समाप्त कर दिया है और समाजवाद का निर्माण कर रही है। सभी विकसित पूंजीवादी देशों में प्रगतिशील शक्तियाँ समाजवाद की स्थापना की दिशा में कार्यरत हैं। औपनिवेशिक और अर्द्ध-औपनिवेशिक उत्पीड़न से मुक्त हुए एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के अधिकाधिक राष्ट्र पूंजीवाद-पथ को अस्वीकार कर रहे हैं और समाजवाद के लक्ष्य को अपना रहे हैं। आज सम्पूर्ण विश्व में समाजवादी व्यवस्था में गहरी अभिरुचि स्वाभाविक है।

इस प्रकार आधुनिक युग की सभी क्रांतियाँ—समाजवादी क्रांति और जनवादी क्रांति मजदूर-वर्ग के नेतृत्व में हुई हैं। विश्व के व्यापक फलक पर एक-तिहाई हिस्सों में समाजवादी क्रांतियाँ हुई हैं। वस्तुतः समाजवादी क्रांति की मूल चेतना मार्क्सवाद एवं लेनिनवाद है तथा मजदूर-वर्ग समाजवादी क्रांति की निर्णायक शक्ति है।

आधुनिकता / रोमांटिक आयरनी

आधुनिकता में मध्ययुग के प्रति प्रतिक्रिया है, विद्रोह है। यहाँ भगवान् को छोड़ दिया गया है और उसके स्थान पर मानव आ गया है। मानववाद आधुनिकता की एक प्रवृत्ति है। आधुनिकता में साहित्य का अंकन यथार्थपरक होता है। यथार्थ अंकन में मानवीय एवं इहलोक की अनुभूतियों की प्रधानता होती है।

आधुनिकता की विवृति के लिए मध्यकालीन बोध को समझना अपेक्षित है। डॉ० इन्द्रनाथ मदान ने 'मध्यकालीन बोध का स्वरूप' शीर्षक ग्रंथ के प्राक्कथन में यह

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

स्वीकार किया है कि आधुनिक, आधुनिकता, आधुनिकवाद, आधुनिक बोध, आधुनिक संवेदना आदि को समझने में मध्यकालीन बोध के स्वरूप को समझना अनिवार्य है। डॉ० इन्द्रनाथ मदान ने यह भी स्वीकार किया है कि मध्यकालीन बोध को समझे बिना आधुनिक बोध को समझना कठिन और अधूरा है।[४७]

मध्यकाल आधुनिक युग का पूर्ववर्ती काल है। यूरोपीय इतिहास में रोमन-साम्राज्य के बाद से लेकर आधुनिक वैज्ञानिक अभ्युदय के पूर्व तक के काल को 'मध्ययुग' या 'मध्यकाल' कहा जाता है। उन्नीसवीं शताब्दी को पाश्चात्य विचारकों ने साधारणतः सन् ४७६ ई० से लेकर १५५३ ई० तक के समय को मध्ययुग के नाम से सम्बोधित किया है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के शब्दों में ''मध्यकाल शब्द का प्रयोग काल के अर्थ में उतना नहीं होता, जितना एक खास प्रकार की पतनोन्मुख और बदली हुई मनोवृत्ति के अर्थ में होता हैं।''[४८] यही कारण है कि कामसूत्र की प्रेरणा मध्यकालीन काव्यों को चालित करती रही है। फलतः इसमें शारीरिक आकर्षण का बड़ा जोर है। स्त्री-सौन्दर्य का बड़ा ही मनोरम एवं आकर्षक चित्रण इन कवियों ने किया है। वस्तुतः नारी-सुषमा एवं कामदेव का आकलन मध्ययुगीन काव्य का प्रतिपाद्य है। मध्यकालीन कवि की रुझान विषय-वस्तु को सरस बनाने की थी और उसमें भी प्रायः श्रृङ्गार की ही अधिकता थी। मध्यकालीन कवियों ने नीति और अन्योक्तियों का ऐसा साहित्य-सर्जन किया कि वह संसार में इस विषय में अपना प्रतिद्वन्द्वी नहीं जानता। अन्योक्तियों का साहित्य इस युग की साहित्यिक चेतना का विशद दर्शन है। मध्यकालीन कवियों में उपास्य देवताओं की श्रृंगार-लीला-वर्णन की मनोवृत्ति उस समय चरमावस्था को पहुँची दिखाई देती है।[४९] कामदेवता की महत्ता से सम्पूर्ण भारतीय, विशेषकर मध्ययुग और उत्तरवर्ती मध्ययुग का साहित्य आक्रांत है। कामदेवता श्रृङ्गार-रस को ही नहीं, परवर्ती काल के भक्ति-रस को भी अपने तर्जनी-संकेत से चलाता है। मध्यकाल के कवियों ने इस देवता को बड़ा सम्मान दिया है। इस देवता की ही महिमा है कि मध्ययुग के साहित्य में उत्तान-श्रृङ्गार का बहुत ही व्यापक वर्णन है।[५०]

'अधुना' शब्द से निःसृत आधुनिक शब्द का अर्थ अत्यन्त नूतन है, जो कई अर्थों में अभिव्यक्त हुआ है। भाव प्रत्यय 'ता' शब्द से संयुक्त होने पर इस शब्द से गुण, अवस्था एवं परिणाम का बोध होता है। इस प्रकार प्राचीन एवं मध्ययुगीन गुण, अवस्था एवं परिणाम आदि विभिन्न परिस्थितियों एवं वातावरण के फलस्वरूप बौद्धिक कल्पनाएँ विभिन्न परिवर्तनों को ग्रहण करती हुई अत्यन्त नवीनतम रूप में दृष्टिगोचर होने लगीं। इसे आधुनिकता की संज्ञा दी गई। इसका प्रथम अर्थ है—प्राचीन एवं मध्ययुगीन भावबोध से भिन्न तथा नूतन इहलौकिक विचारधारा। पुरातन भावबोध आध्यात्मिकता, पारस्परिकता की कट्टरवादी अभिव्यंजनाओं के द्वारा अत्यन्त जटिल हो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

चुका था। परिणामस्वरूप आधुनिक जगत् के लिए यह बोधगम्य नहीं है। मध्यकालीन भावबोध अपने अवरोध, जड़ता और रूढ़िवादिता के लिए रूढ़ हो चुका था, ऐतिहासिक ने उसमें परिवर्तन प्रस्तुत किया। मध्यकालीन जड़ता और आधुनिक गत्यात्मकताता को काव्य और कला के द्वारा आत्मसात् किया जा सकता है। रीतिकालीन कविताओं में कथ्य, अलंकरण एवं शैली में तारतम्य की स्थिति थी। रीतिकालीन कवि घोर श्रृंगारिक भावना के धारा-प्रवाह में बह रहे थे, साथ ही एक ही प्रकार के छन्द, एक ही प्रकार के विन्यास में बँधे हुए भी। आधुनिकता की तरंगों ने जीवन की धारा को बिखेर दिया। अन्ततोगत्वा साहित्य को सुख-दुःख के साथ गठबन्धन भी हुआ। इसका द्वितीय अर्थ है—इहलौकिक दृष्टिकोण। इसमें धर्म, दर्शन, साहित्य, चित्र आदि सभी के प्रति नवीन विचारधाराएँ प्रवाहित हुई हैं। मध्यकाल में पारलौकिक विचारधारा से साहित्यकार इतना सिक्त था कि उसे अपने तथा सामान्य जीवन का बोध भी नहीं था। लेकिन आधुनिकता ने उसे अपने तथा सामान्य विषय में चिन्तन-मनन करने के लिए विवश किया। आधुनिक युग के पूर्व चिन्तन के केन्द्र में ईश्वर प्रतिष्ठित था, लेकिन आधुनिकता में मानववाद की प्रतिष्ठा इसकी अवधारणात्मक विशेषता बनी। मानवीय अनुभूतियों के आकलन की महत्ता आधुनिकता की पहचान है। मानववाद मानव-जीवन के अध्ययन को अग्रसारित करता है और इसमें मानवीय चेतना की महिमा वर्णित है। मध्यकालीन बोध का सम्बन्ध धार्मिकता एवं श्रृंगारिकता से था, लेकिन आधुनिकता में वह स्थान राजनीतिक चेतना को मिला। नूतन व्यवस्था की प्रक्रिया में ही आधुनिकता दिखाई देती है। वस्तुतः आधुनिकता लोकतांत्रिक चेतना का प्रतिनिधित्व करती है। आधुनिकता एक दृष्टि है, एक विशेष मानसिक रुझान है। यह रुझान परम्परागत संस्कृति और मूल व्यवस्था के विपरीत नवीन मार्ग अपनाती है। आधुनिक एवं वैज्ञानिक दृष्टि तभी कही जायगी जब समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान एवं इतिहास दर्शन से सम्बद्ध होगा। पुनर्जागरण की महती उपलब्धि यथार्थवादी मनोविज्ञान का अन्वेषण है जिसने एक रूप के अतिरिक्त अनेक अवधारणाओं का समाहार किया। फलतः मानव की प्रतिष्ठा, उसकी प्रकृति एवं उसकी अनुभूतियों को समझा गया। मानव-जीवन का एक नया क्षितिज दिखाई पड़ा। आधुनिकता का एक नया बिम्ब निर्मित हुआ। यह बिम्ब मनुष्य तथा समाज का बिम्ब है। इस बिम्ब के कुछ आवश्यक घटक हैं—समाजशास्त्र, इतिहास-दर्शन, यथार्थवाद और वैज्ञानिक संस्कृति। ये घटक आधुनिकता को अन्तः एवं बाह्य, यथार्थ एवं फैंटेसी पूर्ण अन्तर्विरोधों से गूँथकर उसकी समर्थ संभावनाओं को प्रकट करते हैं। इस तरह आधुनिकता अनेक विचार-सरणियों के पुंज हैं। डॉ० रमेश कुंतल मेघ का कथन है कि आधुनिकता कोई दर्शन तथा कल्पनालोक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

(यूतोपिया) नहीं है, बल्कि बहुविध विचारधाराएँ हैं, जो संस्कृति में समाज एवं सभ्यता को प्रक्षेपित करती है। इसलिए हम 'आधुनिकता' को विचार-विधि कह सकते हैं।[५१] आधुनिकता एक वैज्ञानिक दृष्टि है। इसे अनेक नामों से अभिहित किया जाता है, जैसे—आधुनिकता को नये बोध, सचेतनता, नयी संवेदना, नये संदर्भ, नयी कविता, नयी अभिरुचि, नयी कहानी, नये मूल्य आदि। डॉ० इन्द्रनाथ मदान का कथन है कि "आधुनिकता एक प्रक्रिया होने के कारण एक से अधिक दौरों से गुजरी है और आज भी वह जारी है। इसलिए इसके किसी एक दौर पर उँगली रखकर यह कहना कठिन है कि आधुनिकता यह है। इसकी पहचान अनेक पहलुओं से की गई है।"[५२] डॉ० मदान पुनः कहते हैं कि आधुनिकता को एक मूल्य के रूप में आँकने के बजाय एक प्रक्रिया के रूप में आँकना बेहतर जान पड़ता है।[५३] डॉ० बच्चन सिंह इसे एक बिन्दु पर स्थिति और गति दोनों मानते हैं।[५४] डॉ० बच्चन सिंह आधुनिकता को परिभाषित करते हुए कहते हैं—आधुनिकता न तो सपाटबयानी में होती है और न बिम्ब-योजना में। वह एक दृष्टिकोण में होती है।[५५] अन्त में डॉ० बच्चन सिंह का निष्कर्ष आधुनिकता के संदर्भ में यह है कि आधुनिकता तो आधुनिकता है ही, उसका अस्वीकार भी आधुनिकता है। आधुनिकता के स्वीकार-अस्वीकार के परे जाना भी आधुनिकता है।[५६] डॉ० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल के शब्दों में "आधुनिकता जीवन और जगत् को काल-बिन्दु से देखने-समझने की एक भिन्न स्थिति या दृष्टि-भंगिमा है, जो मुख्यतः हमारे बौद्धिक धरातल से सम्बद्ध रहकर हमारे जीवन-मूल्यों का निर्धारण व जीवन-प्रणाली का नियमन तथा रूपांकन करती है।"[५७] डॉ० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल का कथन है—" 'आधुनिकता' एक प्रत्यय या धारणा है जो जीवन व जगत् के प्रति हमारी दृष्टि (Attitude) या अभिगम (Approach) की द्योतक है।"[५८] डॉ० रामेश्वर-लाल खण्डेलवाल यह भी स्वीकार करते हैं कि आधुनिकता में नवीनता की गहरी आकांक्षा निहित है।[५९] "जिसे आधुनिक-बोध कहा जाता है, वह कोई शाश्वत-मूल्य नहीं है। मूल्य वह शायद है ही नहीं। मूल्यों के विघटन से उत्पन्न वह एक दृष्टि है, जिसमें घबराहट, निराशा, शंका, त्रास और असुरक्षा के भाव हैं।"[६०] "जीवन के प्रति आध्यात्मिक अथवा परम्परावादी दृष्टिकोण न रखकर यथार्थ की गतिशील शक्ति को स्वीकार करने का आग्रह आधुनिकता का एक लक्ष्य है।"[६१] वर्तमान युग में आधुनिकता-बोध समाजवादी विचारधारा से जरूर सम्बद्ध होगा तथा इसका सम्बन्ध समाजवादी तथा यथार्थवादी रुझान से जोड़ना चाहिए।[६२] आधुनिकता जीवन को समग्रता में देखने की शक्ति देती है। आधुनिकता अपने समस्त परिवेश का केन्द्र-स्थल मनुष्य को स्वीकारती है। मानव-जीवन प्रतिक्षण विकास की स्थिति में है। इसके प्रति आस्था रखकर ही आधुनिकता हमें दृष्टि देती है। फलतः हम अपने परिवेश एवं परिस्थितियों

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

के साथ-साथ अपनी गतिविधि को भी रेखांकित करते हैं। आधुनिकता साहित्यिक गतियाँ हैं जो विकासमान अवस्था में सदैव रहती है। ऐसी स्थिति में इसकी परिभाषा कठिन है। इसकी काल-सापेक्षता की दृष्टि से व्याख्या हो सकती है, लेकिन परिभाषा नहीं। आधुनिकता उस विकासमान पौधे की तरह है जो हर क्षण विकास की स्थिति में है और उसका रूप एवं सौन्दर्य भी क्षण-क्षण परिवर्तित हो रहा है। ऐसी स्थिति में उस विकासमान पौधे को परिभाषित करना कठिन कार्य है, उसे संकेतित किया जा सकता है, परिभाषित नहीं। आधुनिकता वैज्ञानिक दृष्टि है, वैज्ञानिक दृष्टि के अभाव में आधुनिकता विकसित नहीं हो सकती। इसीलिए आधुनिकता जीवन को वैज्ञानिक आधार देना चाहती है। "आधुनिकता इसीलिए कोई रूढ़ि नहीं है, वह एक ऐतिहासिक परिधि है जो इस युग के मानसिक धरातल को कुछ नई उपलब्धियों के अनुसार काटती-छाँटती है अथवा उसमें नये संदर्भ जोड़ती है और पुराने को या ऐसे को जो सतत गतिशील नहीं रह पाते, अपने से पृथक् भी करती है।"[६३] आधुनिकवाद का अर्थ कला की वृद्धि नहीं है, बल्कि कला को नकारना है।[६४] आधुनिकता जो वर्तमान सहित अतीत के आधुनिक प्रतीक के सहभागी जीवन के साथ जोड़नेवाला कला-सम्बन्धी विचार है।

आधुनिकता की भंगिमा मनुष्य की चेतना से जुड़ी है और मनुष्य के आत्मिक खोज को प्रश्रय देती है। इसमें मानव-मूल्यों के द्वन्द्व की प्रक्रिया में घिरे हुए मानव-बिंब उभरते हैं। मानव-मूल्य से उद्भूत द्वन्द्व की प्रक्रिया ही आधुनिकता की उद्भावना-भूमि है। आधुनिकता में मूल्यों के द्वन्द्व की प्रक्रिया है, इसीके फलस्वरूप प्रगति, विकास एवं क्रांति का प्रत्यय खोज सकी है। आधुनिकता को अवधारणाओं के द्वारा ही समझा जा सकता है। इसे समझने में ये अवधारणाएँ सहायक बन सकेंगी—समाजशास्त्र, दर्शन, राजनीति, मनोविज्ञान, विज्ञान इत्यादि। समाजशास्त्र, दर्शन, राजनीति, मनोविज्ञान, विज्ञान एवं साहित्य-कला आधुनिकता से जुड़कर मानवी कार्यकलापों को समझाने में सहायक बन रहे हैं। इसलिए आधुनिकता की दृष्टि कोई हवाई अथवा दिव्यदृष्टि नहीं है, बल्कि विचारों के इतिहास की उपलब्धि है। यह उपलब्धि मानवी-जीवन को समझने एवं समझाने का एक नूतन प्रयास है। वस्तुतः आधुनिकता जीवन-मूल्यों के द्वन्द्व की प्रक्रिया है। मूल्यों के द्वन्द्व ऐतिहासिक प्रणाली एवं प्रक्रिया की भी उपज है। इसमें मनुष्य की द्वन्द्वात्मक सत्ता को भी रेखांकित किया गया है। अतः आधुनिकता की पहचान में विचारों के इतिहास का संदर्भ और व्यावहारिक क्रिया-दर्शन अपेक्षित हो गया है। आधुनिकता में मनुष्य का इतिहास वस्तुतः उसके विचारों का इतिहास है।

आधुनिकता प्रत्येक युग और प्रत्येक देश में एक नूतन संदर्भ ग्रहण करती है। आधुनिक, आधुनिकता और आधुनिकवाद केवल कालसूचक शब्द ही नहीं हैं, प्रत्युत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

समयविशेष की भेदक दृष्टि-परिवर्तन की दिशा के सार्थक आयाम हैं। हर देश की आधुनिकता एक विशिष्ट समाज-व्यवस्था की उपज होती है। हमारी समाज-व्यवस्था विश्व-ऐतिहासिक सामाजिक रूपाकारों का ही एक विशिष्ट अंग है। प्रत्येक देश की आधुनिकता अलग-अलग होती है, जो परिवेश, परिस्थिति एवं संस्कृति के फलस्वरूप उद्भूत होती है।

डॉ० देवराज के अनुसार "जीवन और जगत् के यथार्थ का स्वीकार-भाव आधुनिक दृष्टि की खास पहचान है। आधुनिक दृष्टि मनुष्य को नितांत स्वतन्त्र अस्तित्व एवं गौरव प्रदान करती है और यह मानती है कि मनुष्य स्वयं अपनी नियति का निर्णायक और निर्माता है। आधुनिक दृष्टि में, जीवन में गहरी संलग्नता का भाव होता है। इसलिए आधुनिक होने के लिए अतीत को अस्वीकार करने की आवश्यकता नहीं है।"[६५] आधुनिकता के संदर्भ में गिरिजाकुमार माथुर का कथन है कि आधुनिकता को उसके वर्तमान संदर्भ में समझना होगा, वैज्ञानिक संस्कृति के ऐतिहासिक अर्थ में उसे पहचानना होगा।[६६]

डॉ० धर्मवीर भारती ने आधुनिकता की व्याख्या एक विशद फलक पर की है। आधुनिक दृष्टि सामाजिक संदर्भों से जुड़ी हुई है। आधुनिक युग में पूर्व और पश्चिम का विभाजन मिथ्या है, कारण यह है कि सम्पूर्ण विश्व में मनुष्य की नियति एक है। विज्ञान ने पश्चिम एवं पूर्व की जीवन-पद्धतियों को समान रूप से प्रभावित किया है। आज का युग अपने आधुनिक होने में कहीं अधिक सजग है तथा वर्तमान के प्रति अधिक सतर्क और जागरूक है। डॉ० धर्मवीर भारती का यह भी मत है कि आधुनिकता का बोध संकट के बोध से जुड़ा हुआ है। दोनों 'एक ही ऐतिहासिक अनुभूति के दो' पहलू हैं।[६७] आधुनिकता परिस्थिति, परिवेश तथा इस संसार में मनुष्य की नियति के प्रति अधिक जागरूक है। आधुनिकता की सार्थकता सार्थक मूल्यों के अन्वेषण और निर्माण में निहित है।

जी० एस० फ्रेजर ने ऐतिहासिक संदर्भ में आधुनिकता की बड़े विस्तार से व्याख्या की है।[६८] फ्रेजर के अनुसार किसी रचना के आधुनिक होने का अर्थ पाँच-दस, विगत पचास या साठ वर्ष या शायद पुनर्जागरण के बाद के प्रकाशन से नहीं है। किसी भी आधुनिक रचना में कुछ मूलभूत विशेषताएँ होती हैं। अतः किसी रचना को आधुनिक कहने का अर्थ है—उसकी मूलभूत आन्तरिक विशेषताओं की ओर संकेत करना।[६९] साहित्य में आधुनिकता का लक्षण है—अतीत में कल्पना-प्रवण अभिरुचि।[७०] आधुनिक साहित्य का मूल अंग्रेजी रोमांटिक आन्दोलन में ढूंढ़ा जा सकता है। कारण यह है कि उक्त आन्दोलन का एक पक्ष अतीत के प्रति श्रद्धा-भाव

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

से जुड़ा था। विगत का सही दिशा में किया गया अध्ययन मानव-व्यक्तित्व को एक नयी दिशा प्रदान कर सकता है। फ्रांस की राज्यक्रांति ने यह प्रमाणित कर दिया कि मनुष्य इतिहास की शक्तियों से नियंत्रित होता है। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से अपने को जोड़कर मनुष्य अपने व्यक्तित्व का विकास और विस्तार कर सकता है।

आधुनिकता के दो विरोधी आदर्श हमारे यहाँ अपनाये गये हैं। ये आदर्श प्रगतिशील एवं पाश्चात्य देशों के आदर्श कहे जा सकते हैं। आधुनिकता के ये दोनों आदर्श अपने-अपने ढंग से परंपरा का विरोध करते हैं। इन दोनों आदर्शों अथवा दृष्टिकोणों का द्वन्द्व ही आधुनिक हिन्दी कविता में त्रिकोणात्मक रूप लेता है।

परंपरागत आधुनिकता

●

प्रगतिशील देशों की आधुनिकता ● ● पाश्चात्य देशों की आधुनिकता

आधुनिक हिन्दी कविता में आधुनिकता इन त्रिकोणात्मक रूप में विकसित हो रही है। आधुनिक हिन्दी कविता में मार्क्सवादी विचार-धारा के फलस्वरूप आधुनिकता एक नयी चेतना के रूप में उभर रही है। कविता में यथार्थवाद अपने समग्र रूपों में अभिव्यक्त होता है। ये चिंतन प्रगतिशील देशों की आधुनिकता के फलस्वरूप ही हमारे आधुनिक हिन्दी काव्य में दिखाई पड़ रहे हैं। पाश्चात्य आधुनिकता के माध्यम से यौन एवं मनोवैज्ञानिक अवधारणाएँ भी काव्य-जगत् में दिखाई पड़ रही हैं। भारतीय चिंतन-दृष्टि भी पाश्चात्य एवं प्रगतिशील आधुनिकता के परिणाम-स्वरूप एक नवीन आयाम ग्रहण करती है। कबीर की रहस्यवादी दृष्टि एवं प्रसाद की रहस्यवादी भावना किंचित् एक नये एवं परिवर्तित रूप में अज्ञेय के काव्य-रचना-संसार में दिखाई पड़ती है, जिसे आलोचकों ने नव-रहस्यवाद के नाम से अभिहित किया। आधुनिक हिन्दी कविता में आधुनिकता इन त्रिकोणात्मक रूपों में देखी जा सकती है, जो हमारी संस्कृति, परिवेश का प्रतिफलन है। वस्तुतः आधुनिकता गतिशील संग्रथित प्रक्रिया है।

कविता में आधुनिकता की पहचान क्या हो सकती है? उन बिन्दुओं को विश्लेषित किये बिना आधुनिक हिंदी कविता में आधुनिकता को रेखांकित करना कठिन एवं दुस्तर कार्य है। आधुनिकता कविता में इन रूपों में अन्वेषित एवं रेखांकित की जा सकती है—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

आधुनिकता

१ आधुनिक प्रगीत (The Modernist lyric)

२ संक्रांतिकालीन भाषा (The crisis of language)

३ शहरी जीवन की कविता (The poetry of city)

४ गद्य कविता और मुक्त-छन्द (The prose poem and free verse)

५ कविताएँ तथा गल्पकथाएँ (Poems and fictions)

इन अवधारणाओं के आलोक में किसी भी देश की कविता में आधुनिकता की खोज की जा सकती है। आधुनिक कविता की पहचान आधुमिकता की दृष्टि से आधुनिक प्रगीत है। आधुनिक प्रगीत आत्मपरक कल्पना की लहर है। आधुनिक प्रगीतों में संवेदनात्मक एवं वैयक्तिवता के प्रारम्भिक आदर्श की रेखाएँ दिखाई पड़ती हैं। इसके अतिरिक्त कविता का रचना-संसार इन बिन्दुओं को लेकर आगे बढ़ता है—संक्रांतिकालीन भाषा, शहरी जीवन की कविता, गद्य कविता एवं मुक्त-छन्द एवं विचार-कविता। कविता में आधुनिकता के संचरण बिन्दु ये ही हैं। भूतपूर्व कला परम्पराओं, मूल्यों, प्रतीकों, पदार्थों, प्रकृति से सम्बद्ध थी जिसमें वर्तमान समय तक एक सापेक्ष स्थायित्व था। आधुनिक कला एक ऐसी दुनिया में संचरण करती है जिसमें ये सारे पहलू बदलाव की प्रक्रिया में हैं।[71] इस प्रकार हम देखते हैं कि आधुनिकता साहित्य व कविता में क्रांतिकारी अवधारणा के रूप में अभिव्यंजित होती है। साथ ही इसमें भूत और वर्तमान के तनाव का चित्रण है जिसकी प्रस्तुति आमूल परिवर्तन करना होता है। इसमें कलाकार व साहित्यकार भविष्य की रेखाएँ भी खींचता है।

हिन्दी कविता में भारतेन्दु-युगीन कविताओं में आधुनिकता की झलक पहली बार दिखाई पड़ती है। वस्तुतः भारतेन्दु-युगीन एवं द्विवेदी-युगीन कविताओं में राष्ट्रीयता की अभिव्यंजना के माध्यम से आधुनिकता पहली बार पहल करती है। इसके अतिरिक्त द्विवेदी-युगीन कविताओं में स्वच्छन्दतावादी चेतना के समस्त फलकों के द्वारा आधुनिकता संचरण करती है। विशेषकर पं० श्रीधर पाठक, पं० रामनरेश त्रिपाठी, पं० मुकुटधर पाण्डेय इत्यादि की कविताओं में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ विकास की स्थिति में आधुनिकता को लेकर आगे बढ़ती हैं। फलतः छायावाद का विशाल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

काव्य-भण्डार स्वच्छन्दतावादी चेतना के शक्ति-पुञ्जों को लेकर सामने आता है। स्वच्छन्दतावादी चेतना के कथ्यात्मक स्वरूप एवं शिल्पगत वैशिष्ट्य में आधुनिकता की रेखाएँ उभरती हैं। आधुनिकता के कई रंगों की छटा एक साथ छायावादी रचना-संसार में दिखाई पड़ती है। अनुभूतिपरक काव्य (वैयक्तिक) कविता में भाषा की सहजता के साथ संक्रांतिकालीन स्थितियाँ उभरती हैं। प्रगतिवादी काव्य-संसार आधुनिकता के नव यथार्थवादी चिन्तन-बिन्दुओं को लेकर आगे बढ़ता है। कविता की मूल चेतना मार्क्सवादी दृष्टि लेकर उभरती है। आधुनिकता इसके बाद प्रयोगवादी काव्य-संसार में मनोविश्लेषणवादी एवं भाषा एवं शिल्पगत संक्रांति को समेटती हुई, शिल्पगत निखार एवं अस्तित्ववादी दर्शन के रूप में नयी कविता में दिखने लगती है। वस्तुतः नयी कविता में आधुनिकता समग्र यथार्थवादी पहलुओं के साथ अभिव्यंजित हुई है। आधुनिकता की एक नयी चेतना यहाँ गद्यात्मक अभि-व्यंजना के रूप में दिखाई पड़ती है। मुक्त छन्द की रचना-धर्मिता भी आधुनिकता की अस्मिता बताई गई है। इसकी वास्तविक रेखा निराला की कविता से प्रारम्भ होकर आज तक उभरती रही है। अतः अवधारणा की दृष्टि से हिन्दी कविता में आधुनिकता निराला के 'कुकुरमुत्ता' (१९४१) से शुरू होती है। इसकी भाषिक संरचना में भी आधुनिकता है। इसमें लगभग समस्त स्वच्छन्दतावादी शब्दावली का परित्याग है। इस काव्य-कृति के द्वारा छायावादी कविता के परंपरागत संस्कारों से हटकर एक नयी चेतना उभरती है। हम देखते हैं कि 'कुकुरमुत्ता' में निराला ने 'सामान्य' की प्रतिष्ठा को स्थापित करने के लिए सारी रचना-प्रणाली, शिल्प और भाषिक संरचना को नूतन संदर्भ दिया है। यह संदर्भ लगभग विगत काव्य-कला का अस्वीकार है। 'कुकुरमुत्ता' स्वच्छन्द है। उसमें कवि ने कविता, संस्कृति, समाज, इतिहास, भूगोल····· सब कुछ घोल दिया है। इसमें अतीत, वर्तमान एवं भविष्य की रेखाएँ भी उभरी हैं। इस काव्य-कृति में व्यंग्य की भी प्रस्तुति हुई है। निराला यहाँ विद्रोही भी है। इसमें आधुनिकता कई रूपों में संचरण करती है। एक दृष्टि यह भी है कि गुलाब शोषक का संकेत देता है और 'कुकुरमुत्ता' शोषित का। दूसरी दृष्टि 'गुलाब' और 'कुकुरमुत्ता' संवाद 'अबे, सुन बे गुलाब' से शुरू होता है, जो वस्तुतः 'कुकुरमुत्ता' का एकालाप है, जिसमें निराला के उपेक्षित अहं की अभिव्यंजना है। इसमें गुलाब को कोसा गया है और 'कुकुरमुत्ता' को पोसा गया है, बल्कि इसके साथ ही इस पर व्यंग्य भी किया गया है। यही आधुनिकता की समाजशास्त्रीय दृष्टि है।

'तार-सप्तक' से भी आधुनिकता की कलगी निकलती है। मनोवैज्ञानिक एवं यथार्थवादी दृष्टि की अच्छी अभिव्यक्ति 'तार-सप्तक' की कविताओं में हुई है। इस प्रकार हम यह भी देखते हैं कि 'तार-सप्तक' के मंच से यथार्थवादी तथा मनोविश्लेषण-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

वादी व कवि अपनी रचना-धर्मिता की घोषणा के द्वारा अपनी कविताओं की प्रस्तुति भी देते हैं। वस्तुतः यह पहल हिन्दी कविता के इतिहास में आधुनिकता की पहल है। क्योंकि 'तार-सप्तक' में काव्य-रचना-संसार तथा आलोचना-संसार का क्षितिज मिलता है।

मुक्तिबोध की कविता 'अँधेरे में' में यथार्थवादी स्वच्छन्दतावादी बोध की अभिव्यंजना सशक्त रूप में हुई है। इसमें अन्तः एवं बाह्य, चेतन एवं अचेतन दो विरोधी तत्वों का विलयन हुआ है। इस कविता की कथा सामाजिक संदर्भों से निर्मित होती है, साथ ही इसका सम्बन्ध कवि की आत्मकथा से भी है। कवि की कथा कोई काल्पनिक नहीं है, बल्कि वह उसकी यातना, उसकी संवेदना, उसके चिंतन से उभरती हुई खण्डकथा है। कवि ने इस कथ्य की अभिव्यंजना के लिए स्वप्न एवं फैंटेसी की शैली अपनाई है। इस कविता की पहचान यथार्थवादी अंकन के फलस्वरूप स्वच्छन्दतावादी होते हुए भी नवस्वच्छन्दतावादी आधुनिकता का विस्तार है। मूलतः मुक्तिबोध ने अपनी सक्रिय फैंटेसी कला के विन्यास से हिन्दी कविता के इतिहास को एक नया आयाम दिया है। इसलिए 'अँधेरे में' शीर्षक कविता के संदर्भ में डॉ० नामवर सिंह का कहना है कि "अँधेरे में' कविता को पढ़कर भी कोई यह महसूस किए बिना नहीं रह सकता कि यह आज का भारत है। स्वप्नचित्र जैसी एक अयथार्थ कला के द्वारा यथार्थ की काव्यात्मक पुनःसृष्टि करके मुक्तिबोध ने एक विरोधाभास का ही चमत्कार पैदा नहीं किया, बल्कि आधुनिक हिन्दी कविता में एक कालजयी कृति की रचना की, जिसे निःसंकोच निराला की 'राम की शक्ति-पूजा' के बाद की सबसे बड़ी उपलब्धि माना जा सकता है।"[७२]

दुष्यन्त कुमार की काव्य-कृति 'एक कंठ विषपायी' में आधुनिकता नगर-बोध से जुड़ी हुई है। दक्ष प्रजापति की पुत्री का गठबन्धन शिव से संपन्न हो गया है और यह सब बिना पिता की अनुमति से हुआ है। वह इसे अपहरण मानकर शिव का शत्रु बन जाता है। इस रचना में पिता-पुत्री के स्नेह-बन्धन पर जो झटका लगता है, इस मनोवैज्ञानिक संकेत में भी आधुनिकता है।

नयी कविता में शिल्पगत वैशिष्ट्य एवं अस्तित्ववादी दर्शन की गहरी अभिव्यंजना के फलस्वरूप प्रयोगवाद से भिन्न इसका नामकरण होता है। अस्तित्ववाद मानवीय वैयक्तिक दर्शन है। इसकी खोज का विषय मानव-व्यक्तित्व है। अतः अस्तित्ववाद व्यक्ति की विशेषता की परख करता है, उसमें निहित उन विशेषताओं को परखना चाहता है जो उसकी विशेषता है। अस्तित्ववादी मानववादी दर्शन है। अस्तित्ववादी दर्शन के अनुसार यह दुनिया कम-से-कम इंसान के सत्य से भरी हुई है। घोर वैयक्तिकता इसका मूल भाव है। मानव से जुड़े रहने के कारण अस्तित्ववादी दर्शन नवस्वच्छ-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

न्दतावादी चेतना से जुड़ता है। इसमें ईश्वर की सत्ता के स्वीकार-अस्वीकार के फलस्वरूप हिन्दी कविता में आधुनिकता नवीन रूप में पहल करती है। इसके अतिरिक्त किसी भी दर्शन या सिद्धान्त को अस्वीकारना तथा मन में जो आये उसे ही मानना इसकी एक विशेषता है। वस्तुतः अस्तित्ववादी दर्शन से, प्रयोगवाद से नई कविता अलग हो जाती है। इस दर्शन में मानवीय अनुभूतियाँ ही सर्वोपरि हैं। इस दर्शन के फलस्वरूप कवि या साहित्यकार किसी दर्शन या सिद्धान्त को अस्वीकृत कर अपनी इच्छाओं की अभिव्यक्ति करता है। इस स्वीय अनुभूति की अभिव्यक्ति में स्वच्छन्दतावादी चेतना एक नवीन रूप लेती है। वस्तुतः 'नयी कविता' की आत्मोन्मुखता, व्यक्तिवादिता, क्षणवादी भावना एवं मानववाद के आवरण में मनुष्य के स्वातंत्र्य तथा उसके अपने निर्णय, विवेक की महिमा के अंकन में इसी दर्शन की प्रेरणा बोलती है। अस्तित्ववादी दर्शन धर्म और ईश्वर को नहीं मानता है, किन्तु उसके समस्त चिंतन का केन्द्र मानव है।

यथार्थवादी चिन्तन की रेखायें आधुनिकता को विस्तार देती हैं। आलोचनात्मक यथार्थवाद तथा समाजवादी यथार्थवाद के द्वारा आधुनिक कविता विशेषकर प्रगतिवाद नयी कविता तथा नवगीत में आधुनिकता के कई चरणों की प्रस्तुति मिलती है। आलोचनात्मक यथार्थवाद में मनोवैज्ञानिक एवं प्राकृतिक दृश्यावली की अभिव्यंजना होने के कारण इसकी मूल चेतना रोमांटिक है। साथ ही समाजवादी यथार्थवाद को गोर्की ने क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद कहा है। क्योंकि सर्जन के स्तर पर यथार्थ एवं रोमांस मिलकर एक हो जाते हैं। ऐसा विलयन कवि सक्रिय कल्पना के द्वारा करता है। यही स्वच्छन्द वृत्ति उसे महान् कवि व साहित्यकार बनाने में सहायक बनती है। सक्रिय कल्पना के द्वारा कवि व साहित्यकार अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा से युगीन परिवेश को वाणी देता है।

सर्वहारा संस्कृति की प्रस्तुति में कवि अपनी सर्जनात्मक व सक्रिय कल्पना से सर्जन करता है। मजदूर, किसान का जीवन कवि का जीवन नहीं है, लेकिन वह उसका अंकन अनुभूति एवं कल्पना के सहारे करता है। युगीन परिस्थितियाँ, ऐतिहासिकता एवं सामाजिक महत्त्व को नवस्वच्छन्दतावादी कवि अपनी दृष्टि में रखता है। वस्तुतः समाजवादी कवि व साहित्यकार युगीन परिस्थितियों को देखता है और उसकी विकृतियों से विद्रोह कर उसके स्थान पर नयी व्यवस्था का स्वप्न देखता है, उसकी स्थापना करना चाहता है।

अति-यथार्थवाद भी आधुनिकता की अभिव्यंजना ही है। अति-यथार्थवादी रचना का सम्बन्ध मुख्य रूप से स्वप्नों तथा व्यक्ति की अर्द्धजाग्रत अवस्थाओं से है। अति-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

यथार्थवादी आन्दोलन का घोषणा-पत्र प्रस्तुत करनेवाले फ्रांसीसी लेखक आन्द्रे ब्रेतन ने अति-यथार्थवादी कृतित्व में स्वतःचालित लेखन को प्रमुखता दी है। अति-यथार्थवादी चेतना कला के क्षेत्र में स्वच्छन्दतावादी सिद्धान्त है। अति-यथार्थवादी सृजन में कल्पना का अत्यधिक प्रयोग कदाचित् स्वच्छन्दतावादी परम्पराओं से ही आया है। जिस सामन्तवादी एवं पूंजीवादी व्यवस्था का विरोध स्वच्छन्दतावादी काव्यान्दोलन ने किया था, उस व्यवस्था का विरोध अति-यथार्थवाद ने भी किया था। अंग्रेजी कविता में डायलन थामस की कविताओं में अति-यथार्थवाद के दर्शन होते हैं।[७३] हिन्दी कविता में अति-यथार्थवादी दौर 'अकविता' काव्यान्दोलन में देखा जा सकता है। इस तरह आधुनिक कवियों ने आधुनिकता की चुनौती का अपने-अपने परिवेश और अपने-अपने स्तर पर सामना किया है। निराला से लेकर आज तक की कविताओं में आधुनिकता की प्रक्रिया एक से अधिक दौर से गुजर चुकी है। आधुनिकता की प्रक्रिया में दो परस्पर विरोधी दृष्टियाँ सामने आती हैं। इनमें विरोध एवं तनाव भी है। वस्तुतः आधुनिकता शहरी जीवन से जुड़ी हुई है।

रोमांटिक आयरनी

आयरनी व्यंग्य का विकसित रूप है, जिसका सम्बन्ध परिष्कृत व्यंग्य से है जो बौद्धिक विकास का परिणाम है। इसका जन्म यूनानी कामदी से माना जाता है जिसमें eiron नाम का पात्र अपने को छिपाता था, अपने को कम समझदार दिखाता था और उस पात्र पर विजय पाता था जो अहमक और शेखोखोरा था।[७४] इस तरह आयरनी का मूल-बोध छिपाव का है या अन्तर का है जो कहने और होने में है। शाब्दिक आयरनी एक ऐसा कथन है जिसके अर्थ उससे भिन्न होते हैं जिसे कहा जाता है। कवि जब आयरनी का प्रयोग करता है तो वह अपने पाठकों को समझदार मानता है। इस प्रकार रोमांटिक आयरनी स्वीय अनुभूति की अभिव्यंजना की एक प्रक्रिया है। इसके द्वारा कवि, दार्शनिक एवं सौंदर्यशास्त्री दृष्टि से हटकर ऐतिहासिक एवं सामाजिक दृष्टि से सामाजिक अनुभूतियों को चित्रित करता है। सामाजिक व्यवस्था पर व्यंग्य करता है। निराला, नवीन, नागार्जुन वगैरह को उदाहरण के रूप में लिया जा सकता है। इसकी प्रकृति स्पष्टतः स्वयंनिर्मित कथा से है। इसके अलंकार अपने में क्रान्तिकारी भावना को लिये हुए हैं। रोमांटिक आयरनी में सर्जनात्मक 'स्व' न तो एकीभूत है और न स्थिर है, बल्कि यह स्वयं को सर्जन करने की एक प्रक्रिया है। रोमांटिक आयरनी का कवि अपने को स्वयं दावा करता है कि वह क्रांतिकारी स्वतन्त्रता समय की माँग की शक्ति की चेतना है। रोमांटिक आयरनी का समय क्षणिक और आत्मपरक होता है, एक क्षण में मनुष्य अपने मस्तिष्क को बदल सकता है और सभी चीजों को अपने सिर पर लिये हुए होता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

इस तरह रोमांटिक आयरनी में दो स्वीय की अभिव्यक्ति होती है। वर्तमान इतिहास और समाज एक गतिशील विरोधी शक्तियों के फैलाव और संकुचन, सामंतवाद और लोकतन्त्र का परस्पर खेल है। हम अपनी दृष्टि इसमें दार्शनिक या सौन्दर्यशास्त्रीयता से हटाकर ऐतिहासिक और सामाजिक महत्त्व की ओर ले जाते हैं। वस्तुतः आत्मसजगता और बदलते हुए विचार की श्रृंखलाएँ यही रोमांटिक आयरनी का कार्य है और इसका परिणाम एक व्यवस्था नहीं है, और न एक संयोजक चेतना ही है। रोमांटिक आयरनी की समाप्ति कुंतलाकार आत्म-चेतना में है।

आधुनिक हिन्दी कविता में व्यंग्य और आयरनी की शुरुआत भी निराला की कविताओं से ही होती है। इनकी कविताओं को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि विसंगति के मूल में व्यंग्य का पुट है और आयरनी का बोध व्यंग्य-बोध पर हावी है। 'नये पत्ते' की कविताओं–खजोहरा, मास्को डायलाग्स, चरखा चला ही, गर्म-पकौड़ी, प्रेम-संगीत, झिंगुर झटककर बोला इत्यादि अधिकतर कविताओं में व्यंग्य का स्वरूप राजनीतिक है, शोषक-शोषित के सम्बन्ध पर व्यंग्य है। आधुनिक हिन्दी कविता में व्यंग्य की परम्परा को नागार्जुन ने अपने ढंग से सम्पन्न किया है। इनके व्यंग्य का प्रतिपाद्य राजनीतिक है, शोषक और शोषित में, विशिष्ट और सामान्य में अन्तर को व्यंग्य के माध्यम से उजागर करना है। रघुवीर सहाय ने आयरनी का उपयोग जीवन में विसंगतियों का सामना करने के लिए किया है। वे चाहे वैयक्तिक हों, चाहे सामाजिक हों या राजनीतिक। इस आत्मसजगता के मूल में आधुनिकता है। जहाँ तक व्यंग्य आयरनी को उजागर करने की भाषा का सवाल है, सपाट और सधी हुई है। 'आत्महत्या के विरुद्ध' की अधिकतर कविताओं में आयरनी राजनीतिक स्तर पर है। 'एक अधेड़ भारतीय आत्मा' शीर्षक[७५] लम्बी कविता में आयरनी आसपास की कविता को समेटती और काटती चली जाती है।

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की कविताओं में व्यंग्य-यात्रा वैयक्तिक धरातल से राजनीतिक धरातल की ओर जारी है। 'लिपटा रजाई में'[७६] वैयक्तिक व्यंग्य है। इनकी कविताओं में व्यंग्य वैयक्तिक धरातल से राजनीतिक धरातल पर गर्म हवाओं में आने लगता है।

आधुनिक कवियों में धूमिल ने व्यंग्य और आयरनी का उपयोग सच्चे रूप में किया है और अधिकांश व्यंग्य राजनीतिक हैं। बौद्धिकता व्यंग्य और आयरनी के मूल में और संवेदना के चयन में है। 'मोचीराम' की कविता में इसे देखा जा सकता है—

बाबूजी ! सच कहूँ—मेरी निगाह में
न कोई छोटा है

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

न कोई बड़ा है
मेरे लिए, हर आदमी एक जोड़ी जूता है
जो मेरे सामने
मरम्मत के लिए खड़ा है[७७]

धूमिल की कविता में सब कुछ नींद में होता है जो एक तरह की फैंटेसी है। 'पटकथा' में व्यंग्य उभरता है :

'समाजवाद
उनकी जबान पर अपनी सुरक्षा का
एक आधुनिक मुहावरा है
मगर मैं जानता हूँ कि मेरे देश का समाज
मालगोदाम में लटकती हुई
उन बालटियों की तरह है जिन पर आग लिखा है
और उनमें बालू भरा है।'[७८]

इसका सारा रचना-शिल्प रोमांटिक आयरनी पर आधारित है। इस प्रकार 'मोचीराम' के माध्यम से कवि नैतिक असंगति को उजागर करते हैं जबकि 'पटकथा' में राजनीतिक असंगति को उभारा गया है और दोनों में व्यंग्य एवं आयरनी का सहारा लिया गया है।

श्रीकांत वर्मा की कविताओं में जिनका संकलन 'जलसाघर' में है, जिसमें रोमांटिक आयरनी की बड़ी सुन्दर नियोजना हुई है। युद्ध और शांति की समस्या को 'युद्धनायक' शीर्षक कविता में उभारा गया है :

मैं ही हूँ अश्वत्थामा, जिसे नर या कुंजर
मारा जाना है
हर युद्ध में।[७९]

यहाँ मिथक निर्माण के द्वारा युद्ध की समस्या को उठाया गया है और शान्ति के बारे में व्यंग्यात्मक भाव को आत्मसात् किया गया है।[८०]

कुमार विकल की कविताओं में सपाटबयानी में व्यंग्य है, जो तनाव को लिये हुए है। इनकी कविता में आधुनिकता विसंगति और अजनबीपन के अस्तित्ववादी बोध से गुजर चुकी है। अजनबीपन, परायापन, बेगानापन में आधुनिकता की प्रक्रिया का प्रतिफलन है। कुँवरनारायण की कविता 'चक्रव्यूह' में आज अभिमन्यु का रूप बदला

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

हुआ है, जिसमें आधुनिकता भी है। इसमें अभिमन्यु के मिथक को नवीन धरातल पर रखा गया है।[८१] यहाँ मिथक की पुनर्व्याख्या में नवस्वच्छन्दतावादी बोध भी आधुनिकता से उद्भूत दिखाई पड़ता है।

आधुनिक हिन्दी कविता में आधुनिकता की प्रक्रिया निराला से लेकर आज तक अनेक दौरों से गुजर चुकी है। स्वच्छन्दतावादी बोध से विद्रोह कर आधुनिकता अपना रूप सँवारती है। इसके मूल में नगरीकरण की प्रक्रिया है। वस्तुतः आधुनिकता नगर-बोध से जुड़ी हुई है। यत्र-तत्र कविता में यह आधुनिकता 'व्यंग्यों' के द्वारा, कभी आयरनी के द्वारा अपना रूप दिखाती है। इसमें निरन्तरता और अनिरन्तरता का बोध है तो कभी अपरम्परा की बात है तो कभी परम्परा के नये स्तर पर जुड़ने की। इस तरह आधुनिकता एवं रोमांटिक आयरनी के फलस्वरूप हिन्दी कविता अपने में स्वच्छन्दतावादी / नवस्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों को लिये चलती है। युग-संदर्भ के कारण स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति एक नवीन रूप में परिवर्तित हुई है। यथार्थता के कारण इसकी पहचान नवस्वच्छन्दतावादी हो गई है।

यथार्थवाद / समाजवादी यथार्थवाद

यथार्थवाद (Realism) शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग फ्रांस के कोरबेट्स (Courbets) की चित्रकला में सन् १८५० ई० में हुआ था। इसके अनन्तर शीघ्र ही साहित्य में प्रयुक्त हुआ।[८२] यथार्थवादी स्कूल का नेता कोरबेट्स जो एक किसान का लड़का था, वह किसान और धरती का प्रेमी था। यथार्थवाद शब्द की अवधारणा की उत्पत्ति 'Realis' शब्दसे हुई है, जिसका अर्थ है—ठीक (Real), वास्तविक (Actual), पदार्थ (Matter)। यथार्थवाद का उद्भव उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ था। इसके पहले इसकी स्थिति एक 'वाद' के रूप में न होकर चित्रण के रूप में परिवेश को अधिक जीवन्त और कला को सार्थक और सहज बनाने की एक रुझान के रूप में थी। यथार्थवाद समकालीन यथार्थता को चित्रित करता है। १९वीं शताब्दी में यथार्थ अंकन एक सशक्त आन्दोलन का आधार पाकर यथार्थवाद का रूप धारण करता है और आगे चलकर बीसवीं शताब्दी में समाजवादी यथार्थवाद के रूप में अपना नूतन रूप निर्मित करता है। यथार्थवादी कला में साहित्यकार सामाजिक चेतना से आक्रांत होकर प्रस्तुति करता है, तर्क का भी सहारा लेता है। कल्पना के अभाव में यथार्थ अंकन संभव नहीं है। रूप और वस्तु का सही समन्वय ही सही यथार्थवाद है। हम पूरी तरह जागरूक रहकर ही रूप और वस्तु को अधिक सृजनात्मक और व्यवहारगम्य अर्थ दे सकते हैं, लेकिन जन-जीवन और जन-संघर्षों की तह में झाँकने की हमारी सामर्थ्य और सीमा ही इस प्रश्न का सही उत्तर देगी। जन-जीवन और जन-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MF

संघर्षों की वास्तविक पहचान ही हमें साहित्य में यथार्थ की सही पकड़ कराने में समर्थ होती है।[८३] यथार्थवादी कवियों ने प्रेम-कविताएँ भी लिखी हैं। इनकी कविताओं में सौन्दर्य की लुभावनी अभिव्यंजनाएँ भी हैं। यथार्थवाद यूरोप में स्वच्छन्दतावाद के विरोध में आया था। इसलिए वास्तविक जीवन से इसका गहरा सम्बन्ध है। यथार्थवादी साहित्यकार मानवीय जीवन के अंकन से अपनी कलात्मक यात्रा प्रारम्भ करता है। उसके लिए नायक की परिकल्पना, चयन, समकालीन जीवित मानवीय चरित्र से करता है, जिसकी चेतना सामाजिक चेतना होती है। अपने युग का इंसान जो संघर्षरत है, जो क्रांति की इच्छा करनेवाला है, वही यथार्थवादी साहित्य में नायकत्व ग्रहण करता है। सबसे पहले इस चरित्र का प्रारूप 'टिपिकल' बनाया जाता है। इसकी चेतना सामाजिक चेतना से सिक्त होती है। वस्तुतः इसकी चेतना द्वन्द्वात्मक एवं ऐतिहासिक भौतिकवाद को लिये हुए होती है। इसके अतिरिक्त इसकी चेतना में लोक-चेतना निहित होती है। लोक-परिवेश, लोक-संस्कृति की अभिव्यंजना के लिए वह लोकगीतात्मक शैली को अपनाता है। लोककला यथार्थवादी कला की अद्यतन उपलब्धि है। यथार्थवादी कला में नव-मानव की प्रतिष्टा मिलती है। यथार्थवाद मानववाद है। इसमें मानव-अनुभूतियाँ सर्वोपरि हैं। इसमें जीवित मानव की कथा चित्रित होती है। मनुष्य के पूर्ण व्यक्तित्व की अभिव्यंजना यथार्थवाद में है। इसमें मानव की अंतरंग एवं वहिरंग दोनों पक्षों की सुन्दर झाँकियाँ मिलती हैं। यथार्थवादी कला में चित्रित चरित्र प्रारूप भी है और व्यक्ति भी है। ये उद्देश्य भी रखते हैं और मानवीय दुर्बलताएँ भी। इस प्रकार जीवन्त और प्रारूप चरित्रों के चित्रण के लिए कलात्मक उड़ान अपेक्षित है। परन्तु वह समाज से, जीवन-तथ्यों से, ऐतिहासिक घटनाओं से अलग न हो, कृती ऐतिहासिक प्रकाश में जीवन के तथ्य और घटनाएँ चुनकर अपनी काल्पनिक उड़ानों की प्रतिभा का परिचय दे।

यथार्थवादी लेखक का काम उपदेश झाड़ना नहीं है, बल्कि जीवन का एक वास्तविक और भरा-पूरा चित्र प्रस्तुत करना है। उसे हाड़-मांस के स्त्री-पुरुषों का सृजन करना चाहिए, कठपुतलियों का नहीं। जब तक लेखक जीवन की सम्पूर्ण प्रक्रियाओं को नहीं समझता, तब तक वह यथार्थवादी लेखक कहलाने का अधिकारी नहीं।[८४] सत्य और वास्तविकता निरन्तर बदलते हुए मूल्य हैं। यथार्थवाद इनका सही परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन है।[८५] यथार्थवाद को हंगरीयन मार्क्सवादी आलोचक जार्ज लुकाच[८६] ने दो भागों में विभाजित किया है :

१. आलोचनात्मक यथार्थवाद (Critical Realism)।

२. समाजवादी यथार्थवाद (Socialist Realism)।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

१. आलोचनात्मक यथार्थवाद

यथार्थवाद के उदय के साथ उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में प्रकृतवादी चेतना से भिन्न वास्तविक जीवन और वस्तुपरकता में ईमानदारी के साथ अवलोकन करने और जीवन को चित्रित करनेवाले जिस साहित्य का जन्म हुआ, उसे निहित यथार्थ दृष्टि को 'आलोचनात्मक यथार्थदृष्टि' के नाम से सम्बोधित किया। आलोचनात्मक यथार्थवाद की व्याप्तियाँ तो साहित्य के सभी रूपों में दिखाई देती हैं। समाजवादी यथार्थवाद के नाम से यथार्थवाद का नया नामकरण हुआ। इसी क्रम में यह भी आवश्यक समझा गया उसे समाजवादी दृष्टिकोण से प्रकृतवाद से विभेद करने के लिए, अलगाने के लिए, उसकी विशिष्ट पहचान के लिए उस प्रस्तावित यथार्थवाद को किसी नूतन नाम से सम्बोधित किया जाय। उसे ही आलोचनात्मक यथार्थवाद का नाम दिया गया। इस नामकरण के द्वारा यह स्वीकारा गया कि इसमें समाजवादी दृष्टि की सक्रियता नहीं है। दूसरी बात यह रही कि यह जीवन, समाज एवं परिवेश की विकृतियों तथा विरूपताओं के प्रति सहज एक आलोचनात्मक दृष्टि ही रखता है। किन्हीं रचनात्मक सम्भावनाओं को अपनी चेतना में उजागर नहीं करता। मार्क्सवादियों ने आलोचनात्मक यथार्थवाद को बुर्जुआ यथार्थवाद के नाम से भी पुकारा है। गोर्की ने समाजवादी यथार्थवाद को बुर्जुआ यथार्थवाद से अलग करते हुए कहा है कि बुर्जुआ यथार्थवाद के अन्तर्गत दो तरह के लेखक होते हैं, प्रथम वर्ग में वे लेखक आते हैं जो अपने कर्म-चरित्र को न छोड़ सकने के कारण अपने वर्ग-हितों से जुड़े हुए हैं और जिन्होंने अपनी रचना में अपने वर्ग को प्रतिष्ठित किया है। दूसरे प्रकार के वे लेखक हैं, जिन्होंने अपने वर्ग-स्वार्थ या वर्ग-कल्याण की उपेक्षा करते हुए अपने वर्ग की कटु आलोचना की है। ऐसे ही लेखकों को गोर्की ने आलोचनात्मक यथार्थवाद, क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद का स्रष्टा कहा है।[८७] और उनकी असाधारण प्रतिभा की उसने प्रशंसा की है। इस प्रशंसा में उनका कथन है कि इन लेखकों की रचनाएँ न तो समाजवादी वैयक्तिकता के निर्माण में सहायक रहीं और न उससे कोई नयी सम्भावनाएँ की जा सकती हैं, क्योंकि इन लेखकों ने जहाँ प्रत्येक वस्तु की आलोचना की है वहाँ किसी वस्तु की प्रतिष्ठा नहीं कर सके हैं। यहाँ तक कहा जा सकता है कि ये लेखक जिन तथ्यों का समर्थन दे रहे थे उन्हें वे अस्वीकृत भी कर चुके थे। गोर्की का यह इशारा उन लेखकों में सृजनात्मक दृष्टि के अभाव से है।[८८]

आलोचनात्मक यथार्थवाद में शुरू से ही स्वच्छन्द भाव-बोध की प्रतिक्रियाएँ मिलती हैं। ऐसी स्थिति में स्वच्छन्दतावाद और यथार्थवाद को एकदम एक-दूसरे का विरोधी और विपरीत नहीं माना जा सकता। अर्न्स्ट फिशर का कहना है कि स्वच्छन्दतावाद को वस्तुतः आलोचनात्मक यथार्थवाद का आरम्भिक दौर मानना चाहिए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

आलोचनात्मक यथार्थवाद में दृष्टिकोण के स्तर पर उससे कोई आधारभूत भिन्नता नहीं दिखाई पड़ती। हाँ, तरीके या पद्धति, समय में जरूर अन्तर आ गया है। वह पहले से अधिक वस्तुपरक, अधिक तटस्थ और अधिक दूरवर्ती हो गयी है।[८९]

अर्न्स्ट फिशर की यह मान्यता वस्तुतः वास्तविकता को उसकी सम्पूर्णता में प्रस्तुत नहीं करती है। आलोचनात्मक यथार्थवाद ने जिन लेखकों और जिन रचनाओं को जन्म दिया है उसके एक प्रारम्भिक अंश में स्वच्छन्दतावादी विद्रोह एवं आवेष्टन की असंगतियों तथा पीड़न के प्रति भावुक, तीखी तथा निर्मम प्रतिक्रियाएँ अवश्य हैं और यहाँ पर वह स्वच्छन्दतावाद की सीमाओं में भीतर तक प्रवेश करता है, लेकिन आलोचनात्मक यथार्थवाद के लिए ऐसा निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता।[९०] "आलोचनात्मक यथार्थवाद समाजवादी यथार्थवाद जैसी ऊँचाई तक नहीं पहुँचता, किन्तु आज के वैचारिक संघर्ष में वे एक-दूसरे के विरोधी तथा प्रतिध्रुवस्थ भी नहीं हैं। २०वीं शती के आलोचनात्मक यथार्थवाद का सामाजिक सार वही नहीं है, जो कि समाजवादी यथार्थवाद का है, किन्तु आलोचनात्मक यथार्थवाद समाजवादी यथार्थवाद के विरोध में भी नहीं खड़ा हो सकता, क्योंकि सुसंगत, जीवन के सत्यपरक चित्रण में पीछे न हटनेवाला यथार्थवाद और उसके विकास का तर्क कला को अनिवार्यतः समाजवादी कला-विचारधारा से सन्निकटन की दिशा में ही ले जाते हैं।"[९१]

समाजवादी यथार्थवाद को आलोचनात्मक यथार्थवाद से जो बात मूलतः भिन्न करती है, वह समाजवादी यथार्थवाद में निहित समाजवादी दृष्टि है, जिसका आलोचनात्मक यथार्थवाद में अभाव है। इस विभेद का पार्थक्य करने पर आलोचनात्मक यथार्थवाद की कलात्मक उपलब्धियों एवं मूलचेतना से समाजवादी यथार्थवाद का कोई अलगाव नहीं है। 'जार्ज लुकाच' ने तो दोनों के सहज मिलाप में यथार्थवादी कला का भविष्य देखा है। आलोचनात्मक यथार्थवादी कृति भी अपनी महत्ता एवं विशिष्टता के लिए याद की जाती है। बाल्जाक की कोमेडी 'ह्यूमैन' नाम से लिखी गयी उपन्यास-शृङ्खला आलोचनात्मक यथार्थवाद को उसकी चिरस्मरणीय देन है।[९२] एंगिलस का कहना है कि उस युग के बारे में जो ज्ञान मुझे बाल्ज़क के उपन्यासों के माध्यम से प्राप्त हुआ है, वह उस युग के समस्त राजनीतिज्ञ, इतिहासकार, अर्थशास्त्री, सांख्यिकीविद् मुझे मिलकर भी नहीं दे सके। किसी कलाकार की महानता का और इससे बड़ा उद्घोष क्या हो सकता है?[९३] बाल्ज़क ही नहीं, रोमारोलां, स्टैंडल, गोनकोड बन्धु एवं आलोचनात्मक यथार्थवाद के अन्य अनेक लेखक भी हमारे सामने अपनी रचना के इसी प्रकार के वैशिष्ट्य के कारण मान्य हैं। इस प्रकार आलोचनात्मक यथार्थवाद की उपलब्धियों का क्षेत्र व्यापक एवं विस्तृत है। सत्य के प्रति निष्ठा, सूक्ष्म पर्यवेक्षण, सम्पूर्ण आकलन, वस्तुगत यथार्थ का मार्मिक अंकन, अन्तर्मन का यथार्थतः अंकन व्यवस्था की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

विकृतियों का सही प्रस्तुतीकरण, गहरी सामाजिक निष्ठा तथा अकृत्रिम मानवीय संवेदना, सजीव और जीवन्त मानव-चरित्र-चित्रण के अन्तर्गत 'टाईप' की सृष्टि और उसे दुहरी भूमिका पर उसके वैयक्तिक तथा सामाजिक इतिहास के साथ मूर्त करना महाकाव्यात्मक औदात्य-दृष्टिकोण तथा चित्रण दोनों धरातलों पर, निष्क्रिय तटस्थता से हटकर युगजीवन की गतिविधियों का सजग और सचेष्ट 'इनवाल्मेंट', ये कुछ ऐसी खास बातें हैं जो आलोचनात्मक यथार्थवाद को महनीयता प्रदान करती हैं तथा इसे यथार्थवादी कला की धरोहर सिद्ध करती हैं।[६४]

आलोचनात्मक यथार्थवाद की इन्हीं विशेषताओं के परिप्रेक्ष्य में जार्ज लुकाच ने आलोचनात्मक यथार्थवाद और समाजवादी यथार्थवाद के गहरे मिलन की आवश्यकता प्रतिपादित की है।[६५] समाजवादी यथार्थवाद के प्रवर्त्तक गोर्की ने भी समाजवादी यथार्थवाद की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए नयी पीढ़ी के समाजवादी आस्थावाले लेखकों से आग्रह किया था कि वे आलोचनात्मक यथार्थवाद की उपलब्धियों को एक मूल्यवान् विरासत के रूप में स्वीकार करें।[६६] आलोचनात्मक यथार्थवाद अपनी सारी विशेषताओं के बावजूद भी अपने सर्जन में भविष्य का कोई नक्शा नहीं बना सकी, जिसे समाजवादी यथार्थवादी लेखकों ने अपनी रचना में समाजवादी दृष्टि को निरूपित किया है। यहाँ इस दृष्टि का अभाव है। वस्तुतः कोई भी सच्चा यथार्थवादी साहित्यकार जब अपनी सर्जना में यथार्थवादी बिन्दुओं को उभारना चाहता है तब उन सारी प्रवृत्तियों को आलोचनात्मक यथार्थवादी साहित्यकार भी अपनी कृतियों में प्रस्तुत करता है, लेकिन उसके परिणामस्वरूप जो निष्कर्ष सामने आता है उसकी कोई वैचारिक भूमिका नहीं है। वैचारिकता के अभाव के कारण ही आलोचनात्मक यथार्थवादी साहित्यकार में आगत भविष्य को देखने की शक्ति नहीं होती, वह वर्तमान की चहारदीवारी में ही घूमते रहते हैं।

भविष्य की कल्पना की कोई निश्चित प्रतिमा नहीं होती। भविष्य के स्वप्न तथा वर्तमान की अव्यवस्था के मूल कारणों को वैज्ञानिक दृष्टि के अभाव में न देख पाने के कारण ही अधिकतर लेखकों का विद्रोह इनके अन्तर्मन में उबल-उबलकर शान्त हो गया है। वैज्ञानिक दृष्टि के अभाव में भी आलोचनात्मक यथार्थवाद अपने युग को उसके अन्तः/बाह्य परिवेश की अमानवीय समाज-व्यवस्था को अच्छी तरह प्रस्तुत कर देना जीवन की वास्तविकता की ईमानदारी, जीवन्तता एवं प्राणवत्ता के साथ चित्रित कर देना तथा अपने समय के मनुष्य की पीड़ा तथा उसके निजी और सामाजिक जीवन को पूरे परिवेश के परिप्रेक्ष्य में इसकी अपनी विशेषताएँ हैं। इन बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए आलोचनात्मक यथार्थवाद के प्रति मन में सम्मान का भाव बना रहेगा। साहित्यकार की रचना को उत्कृष्टता प्रदान करने के लिए आलोचनात्मक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

यथार्थवाद और समाजवादी यथार्थवाद का सहज मिलाप अपेक्षित है। वस्तुतः यथार्थवादी साहित्यकार अपने अंकन में तथा अंकन के द्वारा एक भावी समाज की तस्वीर खींचना चाहता है। आलोचनात्मक यथार्थवाद में इस दृष्टि का अभाव है। समाजवादी यथार्थवाद एक भावी समाज की तस्वीर का निर्माण करता है।

२. समाजवादी यथार्थवाद : क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद

समाजवादी यथार्थवाद एक नये प्रकार का कलात्मक विचार है। वस्तुतः इसे विगत यथार्थवादी कला से अलग नहीं किया जा सकता जिससे इसने जन्म लिया है। समाजवादी यथार्थवाद नये विचार का प्रतिनिधित्व करता है, यह कला समूह के संघर्षों से जन्म लेती है, जिससे संसार समाजवादी विचारधारा को प्राप्त करता है। इस कला में सर्वहारा-वर्ग की समस्याओं का चित्रांकन मिलता है। इसमें शोषित-वर्ग के ऐतिहासिक चेतना की कलात्मक स्वीकृति की अभिव्यंजना मिलती है। समाजवादी यथार्थवाद मानव-कल्याण के लिए एक क्रांतिकारी विकास है। यथार्थतः इस कला में नव-मानव के जीवन एवं जीविका, जो क्रांतिकारी जीवन-निर्माण में संघर्षरत है, उसके चरित्र, उसकी प्रकृति एवं नैतिक सिद्धान्तों के बदलाव के तरीके की झाँकियाँ मिलती हैं। वस्तुतः इहलोक और संघर्षशील मानव के विषय में समाजवादी कला एक नयी अवधारणा है जो यथार्थवाद का मूल रूप है। संसार के साहित्य में मानव-कल्याण की कलात्मक उपलब्धि है और साहित्य के विकास में पूंजीवाद से समाजवाद और साम्यवाद की ओर संक्रमण है। यथार्थता का सम्बन्ध मनुष्य के व्यक्तित्व एवं अस्तित्व दोनों से है।

समाजवादी यथार्थवादी कला सबसे पहले सोवियत कला में दिखाई पड़ती है। लेकिन अब इसने अपने को अन्य समाजवादी देशों की कला में भी प्रतिष्ठित कर लिया है। पूंजीवादी देशों में भी प्रगतिशील साहित्यकार अपनी कला की नियति को समाज के लिए क्रांविकारी समाजवादी दिशा में परिभ्रमण कराता है। इस नये बिन्दु पर विचार करता है। प्रसिद्ध चीली कवि पेब्ला नेरूदा की कविताओं में सर्वहारा क्रांति का स्वर मुखरित है। समाजवादी यथार्थवादी कला वस्तुतः आज अन्तर्राष्ट्रीय घटना है। परन्तु हर पुरानी चीज, अधिकतर–बिम्बों, चरित्रों, आदर्श स्थापना, संघर्षों, संघातों–ये सभी समाजवादी कला में नये रूपों में दिखाई पड़ती है। गोर्की सर्वहारा चेतना का सबसे महान् साहित्यकार है। 'माँ' उपन्यास में इस चेतना का विस्तार मिलता है। लेनिन का कहना है कि यह समाजवादी यथार्थवादी कला की पहली कृति है। गोर्की समाजवादी यथार्थवाद का जनक कहा जाता है।[६७]

२३ अप्रैल, सन् १९३२ ई० के रूसी लेखक संघ के प्रस्ताव में सर्वप्रथम समाजवादी यथार्थ का उल्लेख मिलता है। समाजवादी यथार्थवाद समाजवादी कला की सर्जनात्मक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

शैली है। सर्वहारा के साथ घना सम्बन्ध एवं उसकी समस्याएँ उसके जीवन, उसकी संस्कृति की अभिव्यंजना, क्रांतिकारी मानववाद पूंजीवादी वैचारिकता के विरोध अंकन इसके विशेष लक्षण हैं। इसके अतिरिक्त अर्थव्यवस्था, सामाजिक सम्बन्ध, सांस्कृतिक जीवन में आमूल परिवर्तनों के आधार पर समाजवाद पूंजीवाद के अन्तर्गत श्रमिक जन में पैदा हुए मानवीय गुणों को विकसित करता है। समाजवादी यथार्थवाद नये समाजवादी मानव को ढालता है। नव-मानव के सृजन के फलस्वरूप इस विचारधारा का सम्बन्ध नवस्वच्छन्दतावादी दृष्टि से भी जुड़ जाता है। समाजवादी यथार्थवाद की एक महती समस्या क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद या समाजवादी यथार्थवाद है। "एक सच्चा मार्क्सवादी स्वच्छन्दतावाद और छायावाद को एकदम अस्वीकृत नहीं करता है, बल्कि वह यह देखता है कि स्वच्छन्दतावाद सक्रिय और क्रांतिकारी भी है या कि आदर्शवादी और कल्पनाशील ही है। क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद क्रांति और उसके उद्देश्यों के प्रति मनुष्य की उत्सर्ग-भावना, उत्कण्ठा और भावजन्य वैभव को व्यक्त करता है।"[९८] इसे ही गोर्की ने क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद या समाजवादी यथार्थवाद कहा है। गोर्की का यथार्थवाद तटस्थ या मात्र चित्रात्मक नहीं है। गोर्की इस बात पर बल देते थे कि यथार्थवाद और कल्पना के सजीव सम्मिश्रण से जो कृति साँचे में ढलेगी वह निश्चय जनता की आशा, आकांक्षाओं को मूर्त्तरूप देने की दिशा में महत्त्वपूर्ण प्रेरणा बन सकेगी। संघर्षरत मानव समाजवादी यथार्थवादी रचनाओं का नायक होता है। रूसी अक्तूबर महान् क्रांति ने संसार के हर कोने में एक परिवर्तन उपस्थित किया। ऐसी स्थिति में जीवन और इतिहास भी बदला तथा नव-मानव की अवधारणा निर्मित हुई। नव-मानव नूतन अवधारणा के साथ कला-जगत् में अवतरित होता है। नव-मानव अपने जीवन-अंकन में क्रांतिकारी विकास की ओर गतिशील है। गोर्की ने समाजवादी यथार्थवाद के सीमा-विस्तार की व्याख्या में कहा है कि समाजवादी यथार्थवाद ऐसे सम्पूर्ण साहित्य के विकास में एक नई दिशा था जो साहित्य संसार के क्रांतिकारी पुनर्निर्माण के विचार से प्रेरित था। ये विचार समाजवादी मानववाद के विचार हैं। यह ऐसे साहित्य के विकास में नई दिशा थी जो साहित्य मनुष्य का वर्णन उसके स्थिर रूप में नहीं करता, बल्कि उसके सदैव गतिशील, क्रियाशील, पारस्परिक संघर्ष, वर्गसंघर्ष और समूह-संघर्ष और व्यक्तिगत रूपों में करता है।[९९]

अनातोली लुनाचार्स्की का कहना है कि समाजवादी यथार्थवाद एक प्रवृत्ति है जो वर्तमान युग में एक महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति बन जायगा और समाजवादी मानवता की कलात्मक विधाओं का विशेष गुण तक भी बन सकता है। अर्थात् वास्तविक मानवीय कला की अन्तिम और सर्वोच्च विधाएँ हैं।[१००] जर्मन कवि पाल विन्स (Paul Wiens) का कथन है कि समाजवादी यथार्थवाद संवेगात्मक सत्य की यथार्थतः अभिव्यक्ति

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

है।[१०१] इस परिभाषा के माध्यम से हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि संवेगात्मक अनुभूति का यथातथ्य अंकन हमें स्वच्छन्दतावादी चेतना के साथ जोड़ती है, क्योंकि स्वच्छन्दतावादी साहित्य मानवीय अनुभूतियों की संवेगात्मक, आवेगात्मक अभिव्यक्ति है।

समाजवादी यथार्थवादी विचारधारा के सीमा-विस्तार की चर्चा के साथ-साथ गोर्की ने समाजवादी यथार्थवाद की एक व्यवस्थित परिभाषा भी दी है—"समाजवादी यथार्थवाद एक विचार है, जो यथार्थवादी और कल्पनाशील है तथा सामाजिक अनुभव के ऊपर आधारित है।"[१०२] गोर्की की इस परिभाषा में यथार्थपरक, काल्पनिक विचारधारा जो समाजवादी अनुभूतियों पर आधारित है, का वर्णन है। यथार्थ और कल्पना के समन्वय से समाजवादी यथार्थवादी कला भी नवस्वच्छन्दतावादी कला है। यथार्थ और कल्पना के माध्यम से सामाजिक अनुभूतियों की अभिव्यंजना के क्रम में स्वच्छन्दतावादी कला निश्चित रूप से स्वच्छन्दतावाद के नये आयाम नवस्वच्छन्दतावाद के साथ जुड़ जाती है।

अलेक्जेण्डर फेडवे का कथन है कि समाजवादी यथार्थवाद अपने में क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद को लिये हुए है। समाजवादी यथार्थवादी साहित्य के स्रोत की शक्तियाँ और उपयोगिताएँ सोवियत श्रमिकों का जीवन है। ऐसी स्थिति में स्वच्छन्दतावाद हमारे साहित्य का विरोधी नहीं बनता, बल्कि 'Affinity with people' के आधार पर इससे मिल जाता है। इस तरह बिना स्वच्छन्दतावाद के जो मानव की अनुभूतियों पर विश्वास करता है, यह असम्भव है कि हम उसके जीवन को चित्रित कर सकें। सर्वहारा संस्कृति के चित्रण में कवि को अपनी स्वच्छन्दतावादी दृष्टि लेनी पड़ती है।[१०३] समाजवादी यथार्थ स्वच्छन्दतावादी कला है। इसमें समाजवादी यथार्थ और स्वच्छन्दतावादी रुझान को पृथक् करके नहीं देखते, बल्कि दोनों को मिलाकर एक भिन्न प्रकार का मिश्रण बनाते हैं। इसमें समाजवादी यथार्थ स्वच्छन्द प्रवृत्ति को वायवी होने से बचाता है तथा स्वच्छन्द प्रवृत्ति कला के स्तर को उभारती है और इन दोनों को अलग-अलग नहीं देखा जा सकता है। दोनों को अलग-अलग देखने से कविता की अन्विति को आघात पहुँचता है।[१०४] अनातोली लुनाचार्स्की ने भी समाजवादी यथार्थवाद और स्वच्छन्दतावाद के अन्तःसम्बन्ध पर विचार किया है। उनका कथन है कि हमारा स्वच्छन्दतावाद समाजवादी यथार्थवाद का प्रमुख अंग है। कुछ अंशों तक स्वच्छन्दतावादी तत्त्व के अभाव में समाजवादी यथार्थवाद की कल्पना नहीं की जा सकती। यही तत्त्व इसे तटस्थ चित्रण मात्र होने से बचाता है।[१०५] यथार्थवाद और स्वच्छन्दतावाद के मिश्रण के सिद्धांत का विरोध गोर्की जीवन के अन्तिम वर्ष में कर रहा था। इसके द्वारा तब वह इस निष्कर्ष पर आया कि 'समाजवादी यथार्थवाद' की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

व्यापकता अपने में एक तत्त्व क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद को लिये हुए हैं और इससे अधिक इसकी व्याख्या की आवश्यकता नहीं है।[१०६] वस्तुतः कवि या लेखक सर्वहारा-संस्कृति की प्रस्तुति में स्वच्छन्द दृष्टि व कल्पना के द्वारा ही सर्जन करता है। मानववाद सबल रूप में इस बिन्दु पर दिखाई पड़ता है। मानववाद का क्रांतिकारी रूप भी इसे बल देता है। समाजवादी यथार्थवाद जो वास्तविक यथार्थवाद है, इसके अनेक रूप हैं। क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद इसका एक रूप है। स्वच्छन्दतावाद या क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद में यथार्थ और कल्पना व स्वच्छन्द वृत्ति के मिलाप से कला में जीवन्तता आती है। यह क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद जीवन और आधुनिक जगत् से पृथक् नहीं है। इसके विपरीत जीवन-दृष्टि के द्वारा देखी हुई यह जगत् की एक कलात्मक अभिव्यक्ति है।[१०७] इस प्रकार प्रतिक्रियावादी स्वच्छन्दतावाद अस्तित्व में पहले भी था और किन्हीं परिस्थितियों में आज भी विद्यमान हो सकता है। किन्तु, प्रगतिशील स्वच्छन्दतावाद भी सम्भव है। इसके अतिरिक्त सोवियत संघ तथा साम्यवादी देशों में अपने सर्जनात्मक विकास के प्रक्रिया-क्रम में किसी विशेष अवस्था पर जाकर अथवा अपने समूचे जीवन में व्यक्तिगत लेखक स्वच्छन्दतावादी हो सकते हैं, अर्थात् स्वच्छन्दतावाद विशेष रूप से प्रगतिशील स्वच्छन्दतावाद पर स्थिरता प्राप्त कर सकते हैं।[१०८]

"समाजवादी यथार्थवाद जिस भौतिकवादी दर्शन पर जोर देता है, यह दर्शन बुद्धितत्त्व, योजना, कला और विज्ञान पर जोर देता है। यह दर्शन आत्मिक मूल्यों, बौद्धिक और कलात्मक आनन्द का तिरस्कार नहीं करता, पर यह परलोकवाद का विरोधी है, क्योंकि परलोकवादी दार्शनिक धाराएँ निराशावादी होती हैं।"[१०९]

"समाजवादी यथार्थवाद मानव-जाति की कला-संस्कृति के विकास में एक महान् प्रगतिशील कदम ठीक इसलिए है कि वह जीवन के क्रांतिकारी रूपांतरण के पथ पर अग्रसर जनता के 'कार्यों और दिनों' का चित्रण करता है, उसके कारनामों की महत्ता, सौन्दर्य तथा उदात्तता का बखान करता है तथा नये मानव के चरित्र, मानसिकता तथा नैतिकता के निर्माण को प्रतिबिम्बित करता है।"[११०]

मानववाद नव-मानववाद

मानववाद विज्ञान की तरह एक विचारधारा है। पाश्चात्य जगत् मध्यकाल को समाप्ति करने में जिन विचारधाराओं ने विशेष योग दिया, उनमें से मानववाद एक प्रमुख विचार-प्रवाह है। मध्यकाल में धार्मिक भावना के बाहुल्य के फलस्वरूप समस्त मूल्यों और प्रतिमानों का स्रोत कोई न कोई देवता या दिव्यशक्ति ही होती थी। मनुष्य का दर्जा उससे नीचे था। मानववाद के कवियों ने इस सिद्धान्त को अस्वीकार

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

किया। मानववाद के कवियों तथा लेखकों ने मनुष्य की महत्ता का आकलन किया। वस्तुतः आधुनिक मानववाद मध्ययुग के अनेक मान्य विचारों के प्रति एक तीव्र विद्रोह है। उसने मनुष्य की प्रतिष्ठा तथा उसकी पूर्णता पर बल दिया है।[११] मानववाद की केन्द्रीय भावना यह है कि पृथ्वी का मानव ही सब कुछ है और वह वस्तुओं का अन्तिम माप है। इस पृथ्वी पर मानव से बढ़कर और कोई नहीं है।[११२] गोर्की का कथन है कि "मेरे लिए मनुष्य से बाहर कोई भी भाव या विचार अपना अस्तित्व नहीं रखते। मनुष्य ही सारी वस्तुओं, सारे भावों एवं विचारों का स्रष्टा है, वही प्रकृति की सम्पूर्ण शक्तियों का भावी स्वामी है। संसार में जो कुछ भी सुन्दर तथा श्रेष्ठ है, वह सब मानव-श्रम की उपज है, श्रम की प्रक्रिया ही समस्त भावों एवं विचारों का उद्‌गम है। कला, विज्ञान तथा शिल्प का समूचा इतिहास हमें उक्त तथ्यों के प्रति आश्वस्त करता है। मैं इस मनुष्य के प्रति पूरी तरह समर्पित हूँ। यह संसार उसीकी कल्पना, उसीके विवेक और उसीके अनुमान का मूर्तरूप है। स्वतः संसार भी उसीके मानस का आविष्कार है।"[११३] मानववाद मनुष्य के विषय में कल्पना का संकेत देता है कि प्रत्येक मानव की अपनी प्रतिष्ठा है। यह प्रतिष्ठा जन्म से ही मानव को मिली है। इसकी रक्षा अपेक्षित है। मानववादी विचारधारा मानवीय भावनाओं को महत्त्व देती है। वस्तुतः मानववाद, देवतावाद, परलोकवाद के बदले मनुष्य केन्द्रित बुद्धिवादी, भौतिकवादी, विज्ञानवादी जीवन-दर्शन है, जो मानव-कल्याण का झण्डा फहराता है। विज्ञान की सहायता से मानव प्रकृति के रहस्यों को ज्यों-ज्यों समझने लगा त्यों-त्यों उसमें आत्मनिर्भरता, स्वावलम्बन, विश्वास, आस्था एवं विवेकसम्मत तर्क की प्रवृत्तियाँ पनपने लगीं। मनुष्य ने असंख्य देवी-देवताओं की उपासना और अज्ञात सत्ता की प्रभुसत्ता को छोड़कर अपनी शक्ति और सामर्थ्य पर आस्था रखना आरम्भ किया। बीसवीं शताब्दी के मनुष्य में जिस नूतनबोध और जागृति ने जन्म लिया उसके कारण उसने धार्मिक रूढ़ियों का उच्छेदन कर दिया और परम्परा से चले आते हुए अन्धविश्वासों को तोड़ दिया। मानववाद एक ऐसा दृष्टिकोण है जो जीवन को दैवी-विधान से युक्त मानते हुए मानव-आचरण की एक नैतिक अवधारणा को स्वीकारता है तथा जिसने नैतिकता एवं सामाजिक आदर्शवाद की उन महत्त्वपूर्ण मान्यताओं को समाहित कर लिया है जो उदार चिन्तन के फलस्वरूप विकसित हुई। मानववाद मानवीय सम्बन्धों में कल्याण की महत्ता एवं सम्भावनाओं के प्रति आग्रह करता है। इतना ही नहीं, मानववाद सम्पूर्ण मानवता के कल्याण का दर्शन प्रस्तुत करता है।

आज का युग विज्ञान का युग है। विज्ञान की प्रगति ने संसार में एक आकस्मिक परिवर्तन ला दिया। यह परिवर्तन था—मानव के चिन्तन-क्रम में जीवन-व्यवहार-प्रणाली

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

में, चेतना के गतिमान् स्वरों में, समाज की व्यवस्था में, राष्ट्रों की संचालन-शक्ति में और संसार की सांस्कृतिक गतिविधियों में मानववादी विचारधारा की स्वीकृति मिली। फलस्वरूप आर्थिक शोषण के विरुद्ध आवाज उठाई गयी। राजनीतिक अधिकारों की माँग की गयी, समानता, स्वतंत्रता एवं विश्वबन्धुत्व का नारा बुलन्द किया गया। इन सारी गतिविधियों का प्रभाव साहित्य पर पड़े बिना नहीं रहा। साहित्य में भी मानव की महत्ता का स्वर मुखरित हुआ और नव-साहित्य-चेतना मानव के मंगल-गान के लिए व्यंजित हुई। वस्तुतः मानववादी विचारधारा चिन्तन-जगत् की श्रेष्ठतम उपलब्धि है। राजनीति, दर्शन, अध्यात्म और संस्कृति की नवीनतम और उत्कृष्ट विचार-सम्पदा द्वारा मानववादी चिन्तन पुष्ट और समृद्ध हुआ है। इस विचारधारा के परिणामस्वरूप साहित्य में नये प्रतिमान स्थापित हुए हैं, जीवन के प्रति नयी धारणाओं ने जन्म लिया है, सामाजिक मान्यताओं में भी परिवर्तन आया है और कला-जगत् में सृजन की समस्याएँ बढ़ी हैं। वर्तमान विश्व-जीवन की संकटापन्न दारुण स्थिति से मुक्ति का उपाय आज मानवीय विश्वास और आस्था द्वारा ही सम्भव है, कल्पित अज्ञात सत्ता के द्वारा नहीं। विश्व-युद्धों के आतंक के निवारण होने पर मनुष्य-मनुष्य में विश्वास-भाव के बढ़ने का ही मानववादी विचारधारा के अपेक्षित महत्त्व को और भी गहराई से समझा जा सकता है। मानववादी साहित्य की मूल भावना 'न्यायशीलता के सुनहले युग' को मनुष्य के कोमल हृदय में जागृत रखने की है जिसका साधन सौन्दर्य है।

ऐतिहासिक बदलाव एवं सामाजिक परिवेश के कारण हिन्दी के नवस्वच्छन्दतावादी साहित्य में मानववाद किंचित् अपने नये रूप में परिणत दिखाई पड़ता है। यहाँ मानव ही नव-मानव हो गया है और उसकी अपनी खास पहचान भी है। नव-मानव के रूप में किसान, मजदूर, पीड़ित, शोषित एवं संघर्षरत मानव हिन्दी-साहित्य-जगत् में चित्रित, अभिव्यंजित दिखाई पड़ते हैं। यह नव-मानव अपने क्रियाकलापों से अपनी विचार-धारा को व्यवस्थित रूप देना चाहता है। इसी क्रम में पन्त का 'युगान्त' एवं 'ग्राम्या' तथा निराला के 'कुकुरमुत्ता', 'वेला', 'नये-पत्ते' के रचना-संसार में नव-मानव का अंकन मिलता है। सन् १९३७ में प्रकाशित निराला की कविता 'वह तोड़ती पत्थर' को भी लिया जा सकता है। पंडित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की कविताओं में भी नव-मानव का चित्रण मिलता है। नव-मानव के रूप में हिन्दी कविता के इतिहास में राष्ट्रीय चेतना के उद्घोष के रूप में भी एक नया बोध उभरता है। सन् १९३७ में कुछ राज्यों में आंशिक रूप से कांग्रेस की सरकार गठित हुई, परिणामतः हिन्दी कवियों में राष्ट्रीय चेतना अपना नवीन रूप ग्रहण कर रही थी। एक दशक के बाद स्वतन्त्रता हासिल होती है और हमारी चेतना में स्वतन्त्र नागरिक के रूप में नव-मानव का अपना एक रूप निर्मित होता है। उसकी अपनी समस्याएँ, उनके समाधान की दिशाएँ उभरती हैं। यहाँ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

केवल मानव की प्रतिष्ठा की महत्ता की ही बात नहीं है, बल्कि एक खास तरह के मानव के विषय की परिकल्पना की गयी है और यह मानव एक विशिष्ट 'टाइप' चरित्र है। 'टाइप' चरित्रों से साहित्यकार अपनी वैचारिकता को एक नया आयाम देना चाहता है, समाज को बदलना चाहता है और एक नवीन भविष्य की कल्पना करता है। नव-मानव के प्रयत्नों से समाज को एक नया रूप देना चाहता है। यथार्थवादी चेतना यहाँ एक नया विकास करती है और उसे समाजवादी यथार्थवादी नाम से सम्बोधित किया जाता है। समाजवादी यथार्थवादी चेतना के फलस्वरूप हिन्दी-काव्य में नये-मानव का रूप स्पष्ट होता है। सर्वहारा-वर्ग की समस्याएँ, उसकी सांस्कृतिक चेतना के अंकन के फलस्वरूप कथ्य में समाजवादी चेतना लोक-परिवेश, लोक-संस्कृति एवं लोक-चेतना को लोक-गीतात्मक शैली में कवि ने नव-मानव की अनुभूतियों को चित्रित किया है। नयी दुनिया का साहित्य व काव्य एक साथ नव-मानव की समस्याओं को लेकर आगे बढ़ रहा है। वस्तुतः नव-मानव समाजवादी विचारधारा में विश्वास करनेवाला है तथा मानववादी, मानव-प्रेम एवं लघु-मानव का प्रेमी है। नव-मानव ऐतिहासिकता को महसूस करता है, मनुष्य की प्रतिष्ठा की समझ उसमें है। नव-मानव की वैचारिकता में मार्क्स, लेनिन की विचारधारा की प्रस्तुति है। नव-मानव समाजवादी क्रांति का प्रेमी है। समाजवादी क्रांति के द्वारा वह जनवादी आन्दोलन को गतिशील करता है।

मानवेन्द्रनाथ राय ने एक नवीन मानववादी दर्शन प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया, जिसे नव-मानववाद अथवा सहज नव-मानववाद के नाम से पुकारा गया। नव-मानववाद या सहज मानववाद स्वतन्त्रता का एक दर्शन है जो आधुनिक वैज्ञानिक ज्ञान पर आधारित है। 'राय' अपने मानववादी दर्शन को वैज्ञानिक दृष्टिकोण देते हुए कहते हैं—"उन्नीसवीं शताब्दी के क्रांतिकारी विचारकों ने व्यक्तिवाद के मानववादी सिद्धान्त से प्रेरित होकर एक धर्मनिरपेक्ष बुद्धिवादी नैतिकता की सम्भावना महसूस की। अतः उन्होंने मनुष्य और समाज के अध्ययन में भौतिक विज्ञानों के सिद्धान्तों और प्रणालियों का व्यवहार किया था। चेतन और अचेतन प्रकृति का ज्ञान सौ वर्ष पहले की तुलना में आज इतना अधिक है कि मानव-जीवन अन्तर-सम्बन्धों के प्रति सहज वैज्ञानिक दृष्टि निश्चय ही लाभप्रद सिद्ध होगी।" एम० एन० राय की इस विचारधारा को नव-मानववाद के नाम से सम्बोधित किया गया।

मनुष्य विवेकशील प्राणी है। उनके अनुसार मनुष्य की अन्तर्निहित बौद्धिकता सन्तुलित व्यवस्था के लिए एकमात्र गारन्टी है, जो कि नैतिक व्यवस्था भी होगी क्योंकि नैतिकता एक बौद्धिक व्यापार है। अतएव सम्पूर्ण सामाजिक उद्योगों का लक्ष्य मनुष्य को अपनी अन्तर्निहित बौद्धिकता के प्रति उत्तरोत्तर अधिक सचेत करना चाहिए।[११४] एम० एन० राय का कथन है—"साम्यवाद और समाजवाद

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के साधन के रूप में ही विचारणीय है। अनुभव द्वारा यह जाना जा सकता है कि किस हद तक इससे इस उद्देश्य की प्राप्ति होती है। एक ऐसी राजनीतिक प्रणाली या आर्थिक प्रयोग को, जिससे रक्त-मांस का मानव एक काल्पनिक सामाजिक अहं के अधीन हो जाता है। स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए सम्भवतः उचित साधन नहीं बनाया जा सकता। एक ओर यह तर्क एक बेहूदगी है कि स्वतन्त्रता का निषेध स्वतन्त्रता की ओर ले जायगा और दूसरी ओर एक काल्पनिक सामाजिक अहं की वेदी पर व्यक्ति की बलि देनेवाली वस्तु स्वतन्त्रता हो ही नहीं सकती।" इसी क्रम में राय का कथन है कि "मूल विचारधारा न राष्ट्र को लेकर चलती है, न वह वर्ग को, इसका सम्बन्ध मनुष्य से है। यहाँ स्वतन्त्रता का अर्थ व्यक्ति की स्वतन्त्रता है, इसे नव-मानववाद कहा जा सकता है, क्योंकि यह ऐसा मानववाद है जिसे वैज्ञानिक ज्ञान और आधुनिक सभ्यता की शताब्दियों, सामाजिक अनुभवों ने समृद्ध और उदार बनाया है।"[११५]

नव-मानववाद रेडिकैलिज्म के प्रवक्ताओं के अनुसार यह विज्ञान को सामाजिक संगठन से सम्बद्ध करता है, वैयक्तिकता का सामाजिक जीवन के साथ समन्वय करता है। यह स्वतन्त्रता को नैतिक, बौद्धिक और सामाजिक आधार प्रदान करता है। यह सामाजिक प्रगति का एक ऐसा पूर्ण-सिद्धान्त है, जिसमें आर्थिक निर्णयवाद की द्वन्द्वात्मक और विचारों की गतिशीलता दोनों को उचित महत्त्व मिलता है और सामाजिक क्रांति की एक पद्धति और कार्यक्रम को प्रस्तुत करता है।

'नव-मानववाद' पुस्तक के द्वितीय संस्करण की भूमिका में एम० एन० राय का कथन है—"नव-मानववाद यहाँ एक राजनीतिक दर्शन के रूप में प्रस्तुत है। नव-मानववाद का अभिप्राय एक पूर्ण व्यवस्था उत्पन्न करना है। सतत विकासमान, वैज्ञानिक ज्ञान के ऊपर आश्रित होने के कारण यह कहीं भी विराम लेनेवाली व्यवस्था नहीं होगी, यह एक ऐसी परम्परावादी व्यवस्था भी नहीं होगी जो आत्यन्तिकता और एकांत त्रुटि साहित्य का अभिमत रखेगी। यह अस्तित्व के विविध पक्षों से सम्बद्ध ज्ञान का तर्कपरक एकीकरण होगा, जो यह प्रदर्शित करेगा कि आदमी की विवेकपरकता ओर नैतिकता मनुष्य का स्वभाव है। अतएव यह एक स्वतंत्र, समन्वित और न्यायपरक सामाजिक व्यवस्था देने में समर्थ होगा।[११६]

राय ने अपने नव-मानववाद के आधार पर नई विश्वजनीन मानवता के उदय की घोषणा की है, स्वतंत्र नर-नारियों का एक विश्व-कुल संभव है। आर्थिक नीतिवाद अस्वीकार करके मार्क्सवादी परिकल्पना को वे संशोधित करते हैं। उनकी मान्यता है कि जीवन के विभिन्न व्यापार अपने में स्वतन्त्र भी हो सकते हैं। उनके अनुसार मार्क्स की द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया इतिहास के निर्माण में मानवीय इच्छा और सक्रियता की भूमिका को नजरन्दाज कर देती है।[११७]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

राय वैज्ञानिक मानववाद को अस्वीकृत करते हैं, क्योंकि उसका आधार व्यक्तिपरक आस्थाएँ होती हैं। तथ्य के प्रति वैज्ञानिक दृष्टि से प्रेरित न होने के कारण ऐसी आस्थाएँ अन्धविश्वासमूलक होती हैं। इस प्रकार नव-मानववाद मानवीय अनुभूतियों को ही यथार्थ के धरातल पर देखता है। इसके चरित्र 'टाइप' चरित्र होने के कारण विगत चरित्रों का विरोध तो इससे होता ही है और उसकी विचारधाराओं के द्वारा एक नवीन भविष्य की कल्पना की दिशा भी उभरती है। साथ ही विशेष 'टाइप' चरित्रों की वैचारिकता के अतिरिक्त उनकी मानवीय इच्छाओं को भी प्रस्तुति मिलती है।

ऐसी स्थिति में मानववाद की तरह नव-मानववाद भी स्वच्छन्दतावाद के नवीन विकास के साथ एक प्रवृत्ति के रूप में दिखाई पड़ता है। राय के इस मानववाद में भी मानवीय इच्छा एवं सक्रियता पर बल होने के कारण नवस्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति के रूप में नव-मानववाद को भी स्वीकार करने में आपत्ति नहीं होनी चाहिए। मार्क्स के विचारों से भी मानववादी चिन्तन में एक नया क्षितिज दिखाई पड़ता है। समाजवादी कला नव-मानववादी चेतना की अभिव्यक्ति में सहायक बनती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

सन्दर्भ

१. मार्क्स : फर्डीनेंड लासाले को प्रेषित पत्र, १९ अप्रैल, १८५९ ।
२. डॉ० रमेशकुन्तल मेघ : साक्षी है सौन्दर्य प्राश्निक, पृ० ३५७ ।
३. Literature and Reality, p. 53.
४. The Meaning of Contemporory Realism, p. 54.
५. Science and Society, Summer 1949, Vol. XIII, No. 3, p. 208.
६. R. L. Brett : Fancy and Imagination, p. 63-64.
७. वैज्ञानिक समाज के मूल तत्त्व, पृ० ३२२ ।
८. Gorki : On Literature, pp. 25-26.
९. Satya Prakash Singh : Sri Aurobindo and Jung, p. 147.
१०. Rene Wellek : A History of Modern Criticism 1750–1950, p. 3.
११. आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी : नया साहित्य, नए प्रश्न, पृ० १६९-७० ।
१२. वही, पृ० १७० ।
१३. William Wordsworth—"Poetry is the most philosophic of all writing : its object is truth, not individual and local, but general and operative, not standing upon external testimony, but carried alive into the heart by passion, truth which is its own testimony .... Poetry is the image of man and nature" — Preface to lyrical Ballads in poetical works, pp. 1394-5.
१४. L. R. Furst : Romanticism in Perspective, p. 229.
१५. डॉ० नामवर सिंह : इतिहास और आलोचना, पृ० ६५ ।
१६. वही, पृ० ६६ ।
१७. "Poetic faculty is an autonomous complex within the psyche of the poet, split off from his total personality, his social and historical being." Edited by Malcolm Brandbury and James Mefarlane : Modernism, p. 322.

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

१८. Ruth L. Munro : School of Psychoanalytic Thought, p. 558.

१९. प्रो० केसरी कुमार : साहित्य के नये धरातल : शंकायें और दिशाएँ, पृ० १४।

२०. रूपाम, अंक १, १९३८।

२१. L. R. Furst : Romanticism, p. 60.

२२. Romanticism Reconsidered : Ed. by Northrop Frye, p. 127.

२३. लुई मैकनिस—अजन्मे शिशु की प्रार्थना (प्रेयर आफ अनबोर्न चाइल्ड) कविता—

"खून चूसनेवाले ये चमगादड़ चूहे,
कब्र खोदनेवाली नरभक्षी छायाएँ
कतई मेरे पास न आएँ !
अभी नहीं मैं ले पाया हूँ जन्म।
मुझको दो आश्वासन, दो आश्वासन मुझको,
जिसके बिना न मैं इस धरती पर आऊँगा।
मुझको भय है
तथाकथित यह मानव नायक जाति
ऊँची दीवारों के अन्दर मुझको करेगी कैद।"
—सं० धर्मवीर भारती : देशान्तर, पृ० ७०।

२४. आज जीत की रात
पहरुए सावधान रहना
खुले देश के द्वार
अचल दीपक समान रहना
... .
जनगंगा में ज्वार,
लहर तुम प्रवहमान रहना
पहरुए सावधान रहना !
—धूप के धान, पृ० ३५-३६।

२५. चिन्तामणि भाग १, पृ० २२६।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

२६. डॉ० नामवर सिंह : इतिहास और आलोचना, पृ० ५२।
२७. डॉ० रघुवंश : साहित्य का नया परिप्रेक्ष्य, पृ० ४६।
२८. सं० अज्ञेय : तीसरा सप्तक, पृ० ११७। (डॉ० केदारनाथ सिंह का अभिमत)
२९. मुक्तिबोध : एक साहित्यिक की डायरी, पृ० १३३।
३०. F. R. Leavis : New Bearing in English Literature, pp. 16-17.
३१. डॉ० नामवर सिंह : इतिहास और आलोचना, पृ० ५४।
३२. गजानन माधव मुक्तिबोध : एक साहित्यिक की डायरी, पृ० १४२।
३३. श्यामविहारी शुक्ल 'तरल' : 'विप्लव' शीर्षक कविता, विप्लव, लखनऊ, १९३९, पृ० ३९।
३४. शील : अँगड़ाई, पृ० २५।
३५. हरिवंशराय बच्चन : आधुनिक कवि, पृ० ६३।
३६. शील : उदयपथ, पृ० ४।
३७. C. M. Bowra : The Romantic Imagination, p. 22.
'I Must Create a system, or be enslaved by another man's.
I will not reason and compare, I business is to create.'
३८. अनामिका, पृ० १३७।
३९. Yu Krasin : The Contemporary Revolutionary Process, p. 5.
४०. वही, पृ० १४२।
४१. वि० अफनास्योव : मार्क्सवादी दर्शन, पृ० ३११।
४२. Yu Krasin : The Contemporary Revolutionary Process, p. 189.
४३. वि० अफनास्योव : मार्क्सवादी दर्शन, पृ० ३१०, ११, १२।
४४. द्वन्द्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवाद की रूपरेखा, पृ० ४३५।
४५. लेनिन : संगृहीत रचनाएँ, खण्ड २६, पृ० २७९।
४६. डॉ० रामविलास शर्मा : भारत में अंग्रेजी राज और मार्क्सवाद, खण्ड १, पृ० २३२।
४७. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी : मध्यकालीन बोध का स्वरूप (प्राक्कथन डॉ० इन्द्रनाथ मदान)।
४८. वही, पृ० १८।
४९. वही, पृ० ८१।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MH

५०. वही, पृ० ११४।
५१. आधुनिकता-बोध और आधुनिकीकरण, पृ० ३१३।
५२. आधुनिकता और हिंदी साहित्य, पृ० १९।
५३. वही, पृ० २१६।
५४. आलोचना, त्रैमासिक, अप्रैल–जून '७३, पृ० ११३।
५५. वही, पृ० ११४।
५६. वही, पृ० ११४।
५७. संभावना, वर्ष १, अंक २, पृ० ८६।
५८. भारतीय हिन्दी परिषद् के उनतीसवें अधिवेशन के अवसर पर काशी विद्यापीठ, वाराणसी में आयोजित निबन्ध-गोष्ठी में आधुनिक साहित्य : कविता पर अध्यक्ष-पद से अभिभाषण, पृ० ७।

५९. वही, पृ० ८।
६०. डॉ० रामधारी सिंह 'दिनकर' : शुद्ध कविता की खोज, पृ० २१६।
६१. डॉ० लक्ष्मीकांत वर्मा : नयी कविता के प्रतिमान, पृ० २५६।
६२. सं० नामवर सिंह : आलोचना, अक्तूबर–दिसम्बर १९६७, पृ० ६, (संवाद रोमांटिक बनाम आधुनिक, वक्तव्य डॉ० रामविलास शर्मा)।
६३. डॉ० लक्ष्मीकांत वर्मा : नयी कविता के प्रतिमान, पृ० २५८।
६४. George Lukacs : The Meaning of Contemporary Realism, p. 46.
६५. कल्पना १३२, जुलाई-अगस्त १९६२, पृ० २६–२८।
६६. त्रैमासिक आलोचना, अक्तूबर–दिसम्बर १९६७, पृ० १६।
६७. कल्पना ११८, फरवरी १९६१, पृ० ६५।
६८. G. S. Fraser : The Modern Writer and His World (Modernity and the Historical Sense), pp. 11–20.
६९. वही, पृ० १२।
७०. वही, पृ० १२-१३।
७१. Stephen Spender : The Struggle of the Modern, p. 143.
७२. कविता के नये प्रतिमान, पृ० १६०।
७३. John Bayley : The Romantic Survival, pp. 186–225.
७४. डॉ० इन्द्रनाथ मदान : हिन्दी की हास्य-व्यंग्य विधा का स्वरूप और विकास, पृ० ३।
७५. रघुवीर सहाय : आत्महत्या के विरुद्ध, पृ० ८४–९०।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

७६. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना : काठ की घंटियाँ, पृ० ३२८-३२९ ।
७७. धूमिल : संसद् से सड़क तक, पृ० ४१–४४ ।
७८. वही, पृ० १३९ ।
७९. श्रीकांत वर्मा : जलसाघर, पृ० ७० ।
८०. वही, पृ० ७१ ।
८१. चक्रव्यूह, पृ० १२७ ।
८२. Robert C. Binkley : Realism and Nationalism, p. 42.
८३. डॉ० कुंवरपाल सिंह : मार्क्सवादी सौन्दर्यशास्त्र और हिन्दी कथा-साहित्य, पृ० ३९ ।
८४. वही, पृ० ३७-३८ ।
८५. George Lukacs : Studies in European Realism, p. 35.
८६. The Meaning of Contemporary Realism, p. 93.
८७. डॉ० शिवकुमार मिश्र : यथार्थवाद, पृ० ४० ।
८८. Gorki : On Literature, p. 242.
८९. The Necessity of Art, p. 103.
९०. डॉ० शिवकुमार मिश्र : यथार्थवाद, पृ० ४५ ।
९१. आल्नेर ज़ीस : कला के वैचारिक और सौन्दर्यात्मक पहलू, पृ० १९१-९२ ।
९२. रैल्फ फाक्स : उपन्यास और लोकजीवन, पृ० १११ ।
९३. एंजिल्स : लेटर्स टु मिसमार्गेरेट हार्कनेस, पृ० १११-१२ ।
९४. Marks : New York Tribune, 1954 Statement of Karl Marks.
९५. George Lukacs : The Meaning of Contemporary Realism, p. 108.
९६. Gorki : On Literature, p. 242.
९७. Lenin : Collected Works, Vol. 16, p. 207.
९८. डॉ० कुंवरपाल सिंह : मार्क्सवादी सौन्दर्यशास्त्र और हिन्दी कथा-साहित्य, पृ० २२ ।
९९. For Gorki, socialist realism was a new direction in the development of all literature that was inspired by the idea of a revolutionary reconstruction of the world, by the idea of a socialist humanism. It was a new direction in the development of literature that depicted people, not statically, but "in constant flux, in action, in endless classes, among

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MH

themselves, in the struggle of classes, groups, individuals." —A. Ovcharenko, Socialist Realism and Modern Literary Process, p 68.

१००. A. Ovcharenko : Socialist Realism and the Modern Literary Process, p. 69.

A. V. Lunacharsky : Collected Works in eight volumes, Vol. 8, pp. 518-19 (in Russian) quoted in the aforesaid book.

१०१. वही, पृ० १३० ।

१०२. वही, पृ० ८६ ।

१०३. Yuri Barabash : Aesthetics and Poetics, p. 132.

१०४. वही, पृष्ठ १३३ ।

१०५. A. Ovcharenko : Socialist Realism and the Modern Literary Process, pp. 160-61.

१०६. Avnerzis : Foundations of Marxist Aesthetics, p. 282.

१०७. A. Ovcharenko : Socialist Realism and Modern Literary Process, pp. 160-61.

१०८. वही, पृ० २०१ ।

१०९. डॉ० कुंवरपाल सिंह : मार्क्सवादी सौन्दर्यशास्त्र और हिन्दी कथा-साहित्य, पृ० २३ ।

११०. आन्नेर ज़ीस : कला के वैचारिक और सौन्दर्यात्मक पहलू, पृ० १९१ ।

१११. Humanism represented an open break with a good many of the standard ideas of the middle ages, It emphasized the dignity of man and his perfectability; The Readers Companion to World Literature, p. 219.

११२. डॉ० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल : जयशंकर प्रसाद : वस्तु और कला, पृ० १०५.

११३. Gorki : On Literature, p. 67.

११४. New Humanism, pp. 35-36.

११५. वही, पृ० ३६-३७ ।

११६. M. N. Roy : New Humanism, Preface, Second edition.

११७. M. N. Roy : Reason, Romanticism and Revolution, Vol. II, p. 183.

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

६

मनोवैज्ञानिक धरातल

साहित्यकार का एक व्यक्तित्व होता है जिसे अभिव्यक्त करने के लिए वह रचना करता है। साहित्यकार की विशेषताओं के निराले योग को व्यक्तित्व कहते हैं और यह किसी भी रचना में दिखाई पड़ता है, चाहे वह व्यक्तित्व बाह्य हो या आन्तरिक। वस्तुतः साहित्यकार को अपनी रचना में अपने व्यक्तित्व की अभिव्यंजना ईमानदारी से करनी होती है। इसीलिए साहित्यकार अन्तः एवं बाह्य अन्तर्विरोधों को समन्वित करके प्रस्तुति देता है। "बाह्य से प्राप्त ज्ञान-निधि और भाव-परंपरा लेखक के अन्तर्जगत् में स्थान पाकर, उसके (लेखक के) व्यक्तित्व की आन्तरिक आवश्यकताओं की पूर्ति की दिशा में, अपने विभिन्न रूप (उसके हृदय में) गठित करती हुई उसकी अपनी ज्ञान-निधि और भाव-परंपरा बन जाती है। बाह्य से प्राप्त ज्ञान और भाव लेखक के अंतर्व्यक्तित्व में ऐसे घुल-मिल जाते हैं कि वे उसके निजी हो जाते हैं। इसलिए कोई भी लेखक अपने युग से केवल प्रभावित नहीं होता, वह अपने युग का अंग होता है।"[1] कविता चेतन/अचेतन मन की भावनात्मक अभिव्यंजना है। कवि का अन्तःमन बाह्य-जगत् के संघात से आक्रान्त होकर अभिव्यंजित होता है। काव्य-प्रक्रिया में कवि की पूरी मानसिकता उभरती है। वस्तुतः कविता में वैयक्तिक भूमिका का रहस्य कवि की सामाजिक चेतना में निहित होता है। इस प्रकार काव्य-प्रक्रिया में कवि काल्पनिक पात्रों तथा घटनाओं को भी ऐतिहासिक यथार्थता के संदर्भों में देखता है। फलतः काव्य-कला चेतन / अचेतन, अन्तः / बाह्य का विलयन है। साहित्यकार अपनी रचना में वैयक्तिक एवं सामूहिक अचेतन की प्रस्तुति करता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि काव्य-प्रक्रिया में कवि आत्मिक एवं बाह्य परिवेश को चित्रित करता है। "साहित्यकार के मन में जब तक कि चेतन के किसी भाग का अवचेतन से आवयविक सम्बन्ध न हो तब तक उस चेतन-शक्ति की साहित्यिक अभिव्यक्ति असंभव है। इसी अर्थ में यह ठीक है कि चेतन मन की जो सृजनशील धारा होगी, उसके अनुकूल ही अवचेतन शक्तियाँ भी होंगी। चेतन मन की सृजनशीलता अवचेतन शक्ति की प्राकृत-धारा के बिना असंभव है।"[2] अचेतन मानवी प्रकृति की आन्तरिक धारा है। इसलिए अचेतन की शक्ति व्यक्तिगत होते हुए भी वह बाह्यगत और समाजगत होता है। "आज की नयी कविता के भीतर जो मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया लक्षित होती है, वह निःसन्देह छायावादी या प्रगतिवादी अथवा उसके पूर्व की काव्य-प्रक्रिया से बिलकुल भिन्न है। रोमैंटिक कवियों की भाँति आवेशयुक्त होकर, आज का कवि भावों के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MH

अनायास, स्वच्छन्द अप्रतिहत प्रवाह में नहीं बहता। इसके विपरीत, वह किन्हीं अनुभूत मानसिक प्रतिक्रियाओं को ही व्यक्त करता है। कभी वह इन प्रतिक्रियाओं की मानसिक रूपरेखा प्रस्तुत करता है, कभी वह उस रूपरेखा में रंग भर देता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि वह व्याकुलता या आवेश का अनुभव नहीं करता। होता यह है कि वह अपने आवेश या व्याकुलता को बाँधकर, नियन्त्रित कर, ऊपर उठाकर, उसे ज्ञानात्मक संवेदन के रूप में या संवेदनात्मक ज्ञान के रूप में प्रस्तुत कर देता है।"[३] इस प्रकार हम देखते हैं कि नयी कविता / नवस्वच्छन्दतावादी कविताओं में मुक्तिबोध मनोवैज्ञानिक चित्रण की अनिवार्यता पर बल देते हैं।[४] प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक पाश्चात्य समीक्षक आई० ए० रिचर्ड्स का कथन है कि साहित्यकार को पूर्ण सावधानी से रचना करनी चाहिए और उसमें उसे अपनी सहज प्रेरणाओं का सुसंगत और ससन्तुलित समन्वय करना चाहिए। अमेरिकी 'नई समीक्षा' में स्पिनगार्न ने इस बात पर बल दिया है कि काव्य-रचनाओं का परीक्षण सौन्दर्यात्मक दृष्टि से होना चाहिए। 'नई समीक्षा' के प्रभाव से काव्य में मनोवैज्ञानिक तत्त्वों की अभिव्यंजना पर बल दिया जाने लगा जबकि इसके पूर्व रूसी महान् अक्टूबर क्रांति ने संसार के साहित्य को अवधारणात्मक बना दिया था। सौन्दर्यवृत्ति के द्वारा साहित्यकार कलाकृति को संजीवनी देते हैं। वस्तुतः हम उसमें स्वयं अपनी प्रकृति के प्रश्न को उभारते हैं। यह वृत्ति ऐसी है जिसे हम न स्वीकार करते हैं, न अस्वीकार कर सकते हैं और न उसमें संदेह कर सकते हैं, क्योंकि उस कलाकृति की वास्तविकता कोई प्रत्यक्ष वास्तविकता नहीं है। इस प्रकार काव्यगत मूल्यांकन के संदर्भ में मनोवैज्ञानिक घटकों को भी विश्लेषित करने की आवश्यकता है। अवधारणात्मक एवं मनोवैज्ञानिक घटकों की व्याख्या के आधार पर काव्यात्मक विश्लेषण पूर्णता को प्राप्त करता है।

चेतन-अचेतन

कवि-मानस एवं व्यक्तित्व की व्याख्या से काव्य-प्रक्रिया को सरलता से समझा जा सकता है।

'व्यक्तित्व' शब्द अंग्रेजी के 'पर्सनैलिटी' शब्द का पर्याय है, 'पर्सनैलिटी' शब्द लैटिन शब्द 'पर्सना' से लिया गया है। 'पर्सोना' का तात्पर्य वेष बदलने के आवरण में था। नाटक के पात्र इसको पहनकर तरह-तरह के रूप बदला करते थे। इस तरह प्रारम्भ में 'पर्सोना' शब्द का अर्थ बाह्य आवरण में किया जाता था, परन्तु रोमन-काल में विशेष गुणयुक्त पात्र को 'पर्सोना' कहा जाने लगा। यह दूसरा अर्थ ही आधुनिक मनोविज्ञान की 'पर्सनैलिटी' से लिया गया है। जन-साधारण में 'व्यक्तित्व' का अर्थ व्यक्ति के बाह्य रूप से लगाया जाता है, परन्तु मनोविज्ञान में व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति के रूप-गुणों की समग्रता से है। दर्शनशास्त्र में व्यक्तित्व को आन्तरिक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

तत्त्व 'जीव' माना जाता है। मनोविज्ञान में व्यक्तित्व न तो बाह्य आवरण ही है और न आन्तरिक तत्त्व, बल्कि दोनों ही है। व्यक्तित्व कोई स्थिर अवस्था न होकर एक गतिशील समग्रता है जो कि परिवेश के प्रभाव से बदलती रहती है। यह व्यक्तित्व व्यक्ति के आचार-विचार, व्यवहार, क्रियाओं, गतिविधियों सभी बातों में झलकता है। व्यक्तित्व व्यक्ति के परिवेश से अनुकूलन करने की प्रक्रिया है। व्यक्ति का समस्त व्यवहार परिवेश से अनुकूलन करने के लिए होता है। अपने-अपने व्यक्तित्व के अनुसार यह व्यवहार भिन्न-भिन्न प्रकार का होता है। जो व्यक्ति परिवेश से अनुकूलन के लिए जिस प्रकार से व्यवहार करता है वही उसका व्यक्तित्व है। अनुकूलन के इस रूप से व्यक्ति का व्यक्तित्व दिखाई पड़ता है। वस्तुतः व्यक्तित्व व्यक्ति के भीतरी गुणों का गतिशील संगठन है जो परिवेश के प्रति होनेवाले उसके अपूर्ण अभियोजनों का निर्णय करते हैं। वस्तुतः व्यक्तित्व व्यक्ति के रूपों, गुणों, प्रवृत्तियों, सामर्थ्यों आदि का एक समन्वित रूप है। वह व्यक्ति और परिवेश की परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया का परिणाम है। वह उसके विशेष लक्षणों का योगमात्र न होकर उसका विशेष संगठन है। वह व्यक्ति के व्यवहार का समग्र गुण है। व्यक्तित्व दूसरे पर प्रभाव डालता है। वह विभिन्न परिस्थितियों, व्यक्ति की प्रतिक्रियाओं में उपस्थिति का प्रतिमान है। इस प्रकार उसके व्यक्तित्व में आन्तरिक एवं बाह्य दोनों प्रकार की क्रियाओं का संगठन सम्मिलित है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि व्यक्ति के व्यवहारों, रूपों, रुचियों, सामर्थ्यों आदि बाह्य एवं अन्तःलक्षणों के प्रतिमानों का संकलित समग्र रूप है, जो कि परिवेश में उसके विशिष्ट व्यवहार में प्रकट होता है।

फ्रायड ने मानव-व्यक्तित्व में अचेतन प्रक्रियाओं पर बड़ा जोर दिया है। उसके अनुसार समस्त मानसिक जीवन अचेतन शक्ति से परिचालित होता है। अचेतन अतृप्त प्रेरकों का भंडार है। उसमें बचपन की समस्त दमित अतृप्त यौन इच्छाएँ रहती हैं। मनुष्य की दमित इच्छाएँ अचेतन में चली जाती हैं और वहीं से अभिव्यंजना के लिए सुअवसर ढूंढ़ा करती हैं। इनमें से अधिकतर इच्छाएँ कामुक होती हैं। ये काम-इच्छाएँ ही मनुष्य के अनेक कार्यों का कारण हैं। इस काम-शक्ति को फ्रायड ने लिबिड़ो कहा है। लिबिड़ो ही मानव-व्यक्तित्व की प्रेरक शक्ति है। मानव-व्यक्तित्व के तीन तत्त्व हैं—इद, इगो और सुपर इगो।

(१) इद (Id)—फ्रायड के अनुसार मानव की अन्तरंग मूल प्रवृत्तियों, अतृप्त इच्छाओं और दमित अनुभूतियों का भंडार है। यह परिवेश के सम्पर्क में नहीं है। इसको फ्रायड ने इद, काम-तत्त्व कहा है। इद में मानव की प्रेरक शक्तियाँ रहती हैं। आरम्भ में फ्रायड इद को केवल सुखोन्मुख मानता था, किन्तु बाद में उसमें मृत्यु मूल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MH

प्रवृत्ति का भी अस्तित्व स्वीकार करता है। इस तरह इद में मानव के जीवन तथा मृत्यु दोनों से सम्बद्ध प्रवृत्तियाँ रहती हैं। ये प्रवृत्तियाँ विशेष इच्छाओं का रूप धारण कर लेती हैं, जो कि परिवेश की ओर उन्मुख होती हैं और इस प्रकार व्यक्ति के चेतन जीवन को प्रभावित करती हैं। इद अन्दर की इन इच्छाओं में अधिकतर काम-सम्बन्धी होती हैं। इद की मूल चेतना इच्छा उत्पन्न करना है, काम-भावना को उत्तेजित करना है।

(२) अहं (Ego)—प्रारम्भ में फ्रायड अचेतन और अहं को चेतन मानता था और इन दोनों के संघर्ष की अचेतन और चेतन के संघर्ष के रूप में व्याख्या करता था। बाद में उसने इस चेतन-अचेतन के द्वन्द्व के विचार में संशोधन किया। इस संशोधित मत के अनुसार अहं अंशतः चेतन और अंशतः अचेतन होता है। चेतन की स्थिति में वह परिवेश के सम्पर्क में रहता है। परिवेश से अहं का सम्पर्क इन्द्रियों के द्वारा होता है और वह परिवेश से प्रभावित होता है, वह मानव के अन्तःमन से भी सम्बद्ध होता है। अहं के इससे सम्पर्क प्रमाण चेतन दुःख-सुख से मिलता है। फ्रायड के अनुसार चेतना के स्तर और अचेतन स्तर में परस्पर संघर्ष रहता है। अंशतः चेतन और अंशतः अचेतन होने के कारण अहं इन दोनों जगत् में मध्यस्थता करता है। फ्रायड का कहना है कि "अहं जगत् में इद मध्यस्थता करने का, इद द्वारा जगत् की माँगों को पूरा करने का पाशविक क्रियाओं द्वारा जगत् तथा इद की इच्छाओं से अनुकूलन करने का प्रयास करता है।"[४] इद सुख की खोज में रहता है। वह सुख के सिद्धान्त के अनुसार अन्धा होकर सुख की खोज करता है। अहं व्यक्तित्व का वह भाग है जो बाह्य वास्तविकता से सम्पर्क रखता है। यह व्यक्तित्व का केन्द्र है जो इद इच्छाओं और बाह्य जगत् में सम्बन्ध स्थापित करता है। यह काम-तत्त्व तथा अहं में समन्वय स्थापित करता है। स्मरण तर्क प्रत्यक्षीकरण एवं विचार के आधार पर अहं इस प्रकार व्यवहार करता है कि इद की इच्छा-पूर्ति बिना किसी अंतर्द्वन्द्व के समाप्त हो जाय। बाह्य वातावरण के फलस्वरूप इद का एक अंश अहं के रूप में विकसित होता है।

(३) अति अहं (Super ego)—यह एक नैतिक पक्ष है जो व्यक्तित्व में निहित रहता है। इसका विकास इद तथा अहं के विकास के बाद होता है। माता-पिता, गुरुजन एवं नैतिक मूल्यों में इसकी अभिव्यक्ति होती है। यह विशेषकर आदर्श को व्यक्त करती है। सुपर इगो का कार्य मूल प्रवृत्तियों की सन्तुष्टि पर रोक लगाना है। सुपर इगो के प्रधान कार्य इस प्रकार हैं—(१) इद के कामुक तथा आक्रामक आवेगों का अवरोध करना। (२) इगो को यथार्थ लक्ष्यों के स्थान पर नैतिक लक्ष्यों की प्राप्ति की ओर ले जाना। (३) पूर्णता की प्राप्ति हेतु प्रयास करना। अति अहं तथा इद में समानता तथा विरोध दोनों हैं। समानता इस अर्थ में है कि तर्क का सहारा दोनों ही नहीं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

लेतीं और भूतकाल के व्यवहारों का सहारा लेती हैं। विरोध इस अर्थ में है कि अति अहं नैतिक आदर्शों से प्रभावित होती है जबकि इद सुख के नियम से। ठीक इसी प्रकार अति अहं तथा अहं में सम्बन्ध एवं विरोध है। अहं की तरह मूल प्रवृत्तियों पर इसकी सन्तुष्टि पर रोक लगाती है, किन्तु इनकी रोक स्थायी होती है।

इद, अहं तथा अति अहं में घटित गतिशीलता है। इनमें आपस में अन्तर्द्वन्द्व मचा रहता है। इद सुख के नियम से संचालित होती है जबकि अति अहं नैतिकता के नियम से संचालित होती है। अहं एक तरफ इद को सन्तुष्ट रखना चाहता है तथा उसी समय अति अहं को सन्तुष्ट करना चाहता है, जिससे दानों में आपसी संघर्ष मचा रहता है। उदाहरण के लिए किसी सुन्दरी को देखकर चुम्बन लेने की इच्छा इद है। ऐसा करने पर दण्ड मिलेगा, अहं तथा ऐसा करना अनैतिक है, अति अहं है। इसमें चेतन संघर्ष स्पष्ट प्रमाण है। इस प्रकार इन तीनों की एक संगठित इकाई माना जा सकता है। इस प्रकार इद, इगो और सुपर इगो एक ही रंग के तीन शेड के समान हैं।

इद की स्थिति व्यक्ति-मन में रोमांटिक वृत्ति को उभारती है। ऐसे क्षणों में कवि रोमांटिक साहित्य की सर्जना करता है। ऐसी स्थिति में जब वह इसमें उत्कर्षता को प्राप्त करता है तो उसके मन-मस्तिष्क पर इगो (अहं) का प्रतिबन्ध लगना शुरू हो जाता है और इसी बिन्दु पर कवि-मन में क्लासिक वृत्तियाँ उभरने लगती हैं और वह क्लासिकल साहित्य की सर्जना में प्रवृत हो जाता है। इस कला में जब कवि या साहित्यकार उत्कृष्टता को प्राप्त करता है त्यों ही उस पर सुपर इगो का अंकुश लगना शुरू हो जाता है और यहीं पर सुपर इगो अपना कार्य करने लगती है और सर्जन में यथार्थवादी चेतना उभरने लगती है। इस तरह मानव-व्यक्तित्व में साहित्य की ये शाश्वत प्रवृत्तियाँ सदैव विद्यमान रहती हैं। समय-समय पर उसकी अभिव्यंजना कवि-मन, कवि-व्यक्तित्व के द्वारा होता चलता है। इसलिए महान् कवि सर्जन के क्षण में इन्हीं क्रमागत गतियों के अनुरूप अपनी वृत्तियों को प्रस्तुत करता है। इस कला में जो कवि जितना ही पटु होगा उसकी सर्जना उतनी ही उत्कृष्ट होगी।

व्यक्तित्व-एकीकरण के लिए इद, इगो और सुपर इगो में सन्तुलन और समन्वय रहना चाहिये। व्यक्तित्व-एकीकरण में संवेगात्मकता और सामाजिकता का बड़ा महत्त्व है।

फ्रायड ने मानसिक प्रक्रिया को तीन भागों में विभाजित किया है—चेतन, अर्द्ध-चेतन तथा अचेतन। उनके अनुसार चेतन वह है जिसके बारे में हम चैतन्य हैं। इसमें प्रत्येक वस्तु स्पष्ट तथा अन्य वस्तुओं से पृथक् देखी जा सकती है, यही ध्यान का क्षेत्र भी कहलाता है। इसमें मानसिक व्यापार की गति तीव्र होती है। इनमें केन्द्रीय

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MH

चेतना स्पष्ट होती है। उदाहरणार्थ—चन्द्रमा को देखते समय चन्द्रमा तारों से अलग साफ दिखाई पड़ता है।

अर्द्ध-चेतन—अर्द्ध-चेतन वह है जिसके बारे में हम चैतन्य नहीं, किन्तु जो हमारी चेतना में है, उदाहरण के लिए किताब का पढ़ना चेतन हुआ तथा कमरे में घड़ी की टिक-टिक ज्यों ही बन्द हुई हमारा ध्यान तुरन्त ही उस पर चला जाता है, यही अर्द्ध-चेतन है।

अचेतन—वह है जिसके बारे में हमें कुछ भी ज्ञान नहीं है, किन्तु, जो स्वप्न, सम्मोहन आदि अवस्थाओं में व्यक्त होता है। यह अतीत अनुभूतियों और संस्कारों का संग्रहालय है। इसकी चेतना प्रत्यक्ष नहीं होती। "अचेतन वह आध्यात्मिक भूमिका है, जहाँ से चेतना और अहं भावना आविर्भूत होती है। इसका अपना एक व्यक्तित्व होता है तथा इसे सर्जनात्मक विचारों का उद्गम माना गया है।"[६] मस्तिष्क का बहुत बड़ा भाग अचेतन मस्तिष्क है। प्रायः ७/८ भाग अचेतन तथा १/८ भाग चेतन है। अचेतन में हमारी समस्त दमित इच्छाएँ, अभिलाषाएँ हैं जो कि पहले चेतन में थीं, किन्तु किसी कारणवश अचेतन मस्तिष्क में रहने के लिए दमित कर दी गयी हैं। किन्तु, दमित इच्छाएँ सदैव अचेतन में नहीं रहतीं, बल्कि वेष बदलकर वे स्वप्नों, मानसिक रोगों, दिन-प्रतिदिन की भूलों में व्यक्त होती हैं। फ्रायड ने स्वप्न को इसलिए राजपथ भी कहा है। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि मन समग्र रूप में कार्य करता है। मानसिक क्रियाओं के स्थानीकरण सम्बन्धी खोजों से ज्ञात हुआ है कि मस्तिष्क के किसी विशेष भाग में आघात पहुँचने पर बहुधा अन्य भाग उसके कार्य को करने लगते हैं।

मन केवल एक समग्र ही नहीं, बल्कि गतिशील पूर्ण है। मन परिवर्तनशील है। मानसिक शक्तियों और क्रियाओं में परिवेश के प्रति क्रिया-प्रतिक्रिया के कारण बराबर विकास होता रहता है। व्यक्तित्व की व्याख्या के क्रम में फ्रायड ने जिन तीन तत्त्वों इद, इगो तथा सुपर इगो की परिकल्पना की है, उनमें इगो और सुपर इगो दोनों परिवेश में विकसित होते हैं। मन के चेतन-अचेतन की सीमाएँ कठोर नहीं हैं और इन दोनों में बराबर क्रिया-प्रतिक्रिया होती रहती है। इस प्रकार मन एक चेतन-अचेतन गति संयुक्त पूर्ण है। वस्तुतः चेतन-अचेतन की गत्यात्मकता से पूर्ण है इसलिए कवि या लेखक सर्जन करते समय अपने पूर्ण मस्तिष्क से साधनारत होते हैं। ऐसी स्थिति में कवि की सर्जना में कवि चेतन-अचेतन का समन्वित रूप दिखाई पड़ता है। इसलिए कोई भी उत्कृष्ट सर्जन में साहित्यकार अन्तः एवं बाह्य की अभिव्यंजना सहजता से करता है। और ऐसी कविता निश्चित रूप से उत्कृष्ट एवं मानव-जीवन की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

अभिव्यंजना से पूर्ण होगी। मानव-जीवन की अभिव्यंजना में चेतन, अचेतन दोनों रूपों की अभिव्यंजना भी स्वाभाविक ढंग से होती चलती है।

एडलर के विचार—फ्रायड की तरह एडलर भी दमित इच्छाओं को रचना-प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण स्थान देता है। लेकिन वह फ्रायड से इस बात से सहमत नहीं है कि अचेतन में दबी पड़ी इच्छाएँ काममूलक ही हैं। एडलर कामवासना लिबिडो की अपेक्षा अधिकार-भावना पर जोर देता है। मनुष्य अपने को दूसरे से हीन समझकर अपनी क्षति को पूर्ण करने की चेष्टा करने लगता है। वह यह क्षति-पूर्ति या तो अपनी हीनता के क्षेत्र में परिश्रम के द्वारा प्राप्त करता है या किसी और क्षेत्र में परिश्रम करने लगता है। इन्होंने मूल प्रवृत्तियों की अपेक्षा सामाजिक चेतना पर अधिक बल दिया है। इनके लिए मानव-जीवन में सामाजिक रुचि का विशेष महत्त्व है। मनुष्य मुख्यतः सामाजिक प्राणी है, न कि कामुक प्राणी। इन्होंने चेतन पर विशेष बल दिया है, चेतन व्यक्तित्व का आधार-बिन्दु एवं केन्द्र है। जीवन-शैली की अवधारणा भी मनोविज्ञान के लिए एडलर का महत्त्वपूर्ण योगदान है। शैशवकाल में शिशु को एक निश्चित तरह का व्यवहार करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। प्रारम्भ में माता-पिता, भाई-बहन या परिवार के अन्य सदस्य जिस तरह का वातावरण निर्मित करते हैं शिशु की जीवन-शैली उसीके अनुकूल होती है इसलिए प्रत्येक व्यक्तित्व एक-दूसरे से भिन्न होता है, क्योंकि सभी पर अलग-अलग भिन्न परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है। शिशु का व्यक्तित्व उसके परिवार की एक झलक होता है, प्रतिबिम्ब होता है। प्रत्येक व्यक्ति की जीवन-शैली एक तरह की नहीं होती है, परिवेश एवं परिस्थितियों के बदलाव के कारण यह अन्तर आ जाता है। एडलर वर्तमान और चेतन पर विशेष बल देता है। एडलर के व्यक्तित्व-सिद्धान्त की एक मुख्य उपलब्धि उसके सृजनात्मक आत्म की अवधारणा है। लेकिन इस अवधारणा को स्पष्ट करने में वह सफल नहीं हो सका है। जीवन की प्रत्येक गति एवं व्यवहार का निर्माण इसके द्वारा होता है। वंशानुक्रम एवं अनुभव इसके कच्चे माल हैं, जिनके आधार पर वह जीवन को अर्थ प्रदान करता है, साथ-साथ उसको दिशा भी दिखलाता है। यह मनुष्य-जीवन का सक्रिय विभाग है जो जीवन आदर्शों मूल्यों की प्राप्ति के साधनों को निर्मित करता है। व्यक्ति स्वयं अपना सृजन करता है। यह उनकी मौलिक विशेषता है। इसके पीछे कौन सी शक्ति कार्य करती है, इसको स्पष्ट करने में एडलर असमर्थ रहे हैं। प्रायः उनका यह दृष्टिकोण दर्शन की आत्मा की तरह लगता है जिससे आत्मा या ब्रह्म स्वयं को प्रकाशित करता है उसी तरह व्यक्ति भी अपनी आन्तरिक भावनाओं को अभिव्यंजित करना चाहता है। व्यक्तित्व-संरचना के लिए एडलर सामाजिक समायोजन, सामाजिक इच्छा, उच्चता-प्राप्ति, हीनता की भावना एवं सृजनात्मक आत्मा को व्यक्तित्व का मूल आधार

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

मानता है। इसके अतिरिक्त वह शक्ति-प्राप्ति की इच्छा एवं सामाजिक यथार्थता के बीच संघर्षों पर विशेष बल देता है। व्यक्ति जीवन में इनका जितना ही समायोजन ठीक होगा, उसका व्यक्तित्व उतना ही अधिक संघटित होगा। इस प्रकार इनके मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों में भी कहीं न कहीं सामाजिक परिवेश एवं अन्तःमन के संघात से समन्वित व्यवितत्व ही पूर्ण व्यक्तित्व हो सकता है। इन तत्त्वों के आधार पर यह स्वीकार करने में हमें कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि व्यक्ति का पूरा व्यक्तित्व चेतन-अचेतन का समन्वित रूप है।

युंग ने अचेतन को दो भागों में विभाजित किया है—(१) वैयक्तिक अचेतन और (२) सामूहिक अचेतन।[७] युंग सामाजिक परिस्थितियों से प्राप्त ज्ञान को 'पर्सोना' या 'इगो' कहता है। अर्थात् चेतन स्थितियों के लिए उसने 'पर्सोना' या 'इगो' का प्रयोग किया है। युंग का यह भी कहना है कि आत्मा के बिम्ब में दो तत्त्वों का होना आवश्यक है। मानव-व्यक्तित्व इन तत्त्वों के संगठन से निर्मित हुआ है। इसकी चेतना अचेतन में होती है। ये मूलतः कामुक होती हैं। हर पुरुष की चेतना में एनीमा होती है, जिसके कारण वह स्त्रियों की तरफ आकर्षित होता है तथा हर नारी में एनीमस होती है जो नारी को पुरुषों की ओर आकर्षित करती है।[८] एनीमा और एनीमस के फलस्वरूप नर-नारी एक-दूसरे के प्रति आकर्षित होते हैं। शैडो (छाया) अचेतन का प्रतिनिधित्व करता है। इस प्रकार शैडो (छाया) उच्चतम व्यवितगत सर्जना है। ये सांसारिक मानव अनुभूतियों की ओर वैयक्तिक आदिम मानवीय अनुभूतियों को भी अभिव्यंजित करती हैं। इस प्रकार युंग अचेतन के द्वारा वैयक्तिकता और सामाजिकता दोनों तत्त्वों की उपस्थिति मानव-व्यक्तित्व में स्वीकार करता है। फलतः सर्जन के क्षण कोई भी कवि इन तत्त्वों को अपनी चेतना में लाए बिना नहीं रह सकता। यह उसकी स्वाभाविकता है, सहजता है।[९]

युंग अपने सैद्धान्तिक विश्लेषण के क्रम में स्वप्न एवं प्रतीक-निर्माण की व्याख्या करते समय स्वप्न-विश्लेषण और सामूहिक अचेतन के क्रम में सामाजिक चेतना के घटक के रूप में मूलवृत्तियाँ, आद्य-बिम्ब, प्रतीक, मिथक एवं फैन्टेसी को विश्लेषित करते हैं। ये मानव-वृत्तियाँ हैं, लेकिन ये घटक सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन-मूल्यों को अपने ढंग से प्रस्तुति देते हैं।

मूल वृत्तियाँ मूल भावना से जुड़ी होती हैं। ये शाश्वत होती हैं। मानवीय चरित्र, धर्म, सामाजिक रीति-रिवाज के अतिरिक्त कला और साहित्य की दुनिया में मूल वृत्तियाँ अपना प्रमुख स्थान रखती हैं। वस्तुतः मूल वृत्तियाँ नैसर्गिक होती हैं, जिनसे प्रेरित होकर मनुष्य उनकी ओर आकृष्ट होता है। ये समस्त प्राणियों में न्यूनाधिक मात्रा में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

होती हैं। मूल वृत्तियों के अतिरिक्त युंग आद्य-बिम्ब को सामूहिक अचेतन का एक अंश स्वीकारते हैं। आद्य-बिम्ब युंग के अनुसार मनुष्य की आत्मिक शक्ति के उच्चतम मूल्यों में से एक है।[10]

आद्य-बिम्ब चेतन मस्तिष्क में स्वप्न तथा फैन्टेसी के द्वारा लाये जाते हैं। ये मिथक में भी मिलते हैं। आद्य-बिम्ब अचेतन मस्तिष्क की उपज हैं तथा ये स्वचालित होते हैं। ये चेतन मस्तिष्क के नियंत्रण में नहीं होते हैं। मानवीय चित्ति में आद्य-बिम्ब उच्चतम मूल्यों में से एक है। ये आद्य-बिम्ब ही हैं जो देवी-देवताओं के रूप में दिखाई पड़ते हैं। वस्तुतः मूल वृत्तियों के साथ आद्य-बिम्ब अचेतन का एक हिस्सा है। जब मूल वृत्तियाँ अचेतन के शारीरिक रूप में गठित होती हैं तब आद्य-बिम्ब उसका आध्यात्मिक रूप होता है।

फैन्टेसी मानव-मस्तिष्क का काल्पनिक क्रिया-कलाप है। इस प्रकार फैंटेसी आत्मिक एवं काम-भावना से प्रसूत होती है। वस्तुतः फैंटेसी एक प्रकार का काल्पनिक क्रिया-कलाप है जो मूलतः आत्मिक प्रक्रिया के साथ संग्रथित है। वस्तुतः फैंटेसी विरोधी तर्कों के लिए एक प्रकार की शक्ति है। इस प्रकार कल्पनात्मक अनुभूति की काव्यात्मक अभिव्यंजना फैंटेसी है।

युंग ने फैंटेसी को दो भागों में विभाजित किया है—

(क) निष्क्रिय फैंटेसी (Passive Phantasy)

(ख) सक्रिय फैंटेसी (Active Phantasy)

निष्क्रिय फैंटेसी विशुद्धतः अचेतन मस्तिष्क की उपज है। वे बिना पूर्व-संकेत के स्वतः दिखाई पड़ते हैं। वस्तुतः उसके निर्माण में चेतन-मस्तिष्क का कुछ भी योग नहीं होता है। मन की एक सहज, काल्पनिक प्रवाह है जिसे कवि बड़ी सहजता से चित्रित कर देता है। ऐसी काव्य-रचना युग-सापेक्षता की उत्कृष्टता को स्पर्श नहीं कर पाती। इसके विपरीत सक्रिय फैंटेसी आत्मिक चेतना की सक्रियता से समझी जाती है। फैंटेसी की पहचान वस्तुतः आदिम है, जिसे युंग ने मूल वृत्तियाँ कहा है। फैंटेसी एक प्रकार से अचेतन की सच्ची अभिव्यंजना है। युंग का कहना है कि सक्रिय फैंटेसी कल्पनात्मक मानसिकता का एक सैद्धान्तिक तत्त्व है। वह इस बात पर जोर देता है कि सक्रिय फैंटेसी में वैयक्तिकता से भी अधिक कुछ और होती है। कवि वस्तुतः जो फैंटेसी सर्जन करता है, जिसकी उपयोगिता व्यक्ति-हित से अधिक है। फैंटेसी संकेतों एवं प्रतीकों से निर्मित होती है। सक्रिय फैंटेसी सकारात्मक चेतना का अंश है। युंग ने इसे 'इन्सटीटीव' कहा है जिसे उसने प्रतिपादित किया है कि यह सीधे अचेतन

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

भाव की अनुभूति एवं दृष्टिकोणात्मक प्रवृत्ति है। इस संयोग के फलस्वरूप लिबिडो अचेतन से शीघ्र ही चेतन-स्तर पर आकर निश्चित तरीके से चेतन-मस्तिष्क से जुड़ता है। वस्तुतः सक्रिय फैंटेसी अपने में चेतन/अचेतन के सहयोग और मिलाप के द्वारा पुनर्मिलन है। इस तरह सक्रिय फैंटेसी पूर्ण व्यक्तित्व की रचनात्मक अभिव्यंजना है तथा व्यक्ति संगठन की उदात्त अभिव्यक्ति है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि सक्रिय फैंटेसी पूर्णतया सर्जनात्मक अभिव्यंजना है।

मुक्तिबोध का कथन है : "कला का पहला क्षण है जीवन का उत्कट तीव्र अनुभव-क्षण। दूसरा क्षण है इस अनुभव का अपने कसकते-दुखते हुए भूलों से पृथक् हो जाना और एक ऐसी फैंटेसी का रूप धारण कर लेना मानों वह फैंटेसी अपनी आँखों के सामने ही खड़ी हो। तीसरा और अन्तिम क्षण है इस फैंटेसी के शब्दबद्ध होने की प्रक्रिया का आरम्भ और इस प्रक्रिया की परिपूर्णावस्था तक की गतिमानता। शब्दबद्ध होने की प्रक्रिया के भीतर जो प्रवाह बहता रहता है वह समस्त व्यक्तित्व और जीवन का प्रवाह होता है। प्रवाह में वह फैंटेसी अनवरत रूप से विकसित परिवर्तित होती हुई आगे बढ़ती जाती है। इस प्रकार वह फैंटेसी अपने मूलरूप को बहुत कुछ त्यागती हुई नवीन रूप धारण करती है। जिस फैंटेसी को शब्द-बद्ध करने का प्रयत्न किया जा रहा है वह फैंटेसी अपने मूल रूप में इतनी दूर चली जाती है कि यह कहना कठिन है कि फैंटेसी का यह नया रूप अपने मूलरूप की प्रतिकृति है। फैंटेसी को शब्दबद्ध करने की प्रक्रिया के दौरान जो-जो सृजन होता है—जिसके कारण कृति क्रमशः विकसित होती जाती है—वही कला का तीसरा और अन्तिम क्षण है।"[११]

फैंटेसी की मूल चेतना के विषय में मुक्तिबोध पुनः कहते हैं कि "जो फैंटेसी अनुभव की व्यक्तिगत पीड़ा से पृथक् होकर अर्थात् उससे तटस्थ होकर अनुभव के भीतर की ही संवेदनाओं द्वारा उत्सर्जित और प्रक्षेपित होगी, यह एक अर्थ में वैयक्तिक होते हुए भी दूसरे अर्थ में नितान्त निर्वैयक्तिक होगी। उस फैंटेसी में अब एक भावात्मक उद्देश्य की संगति आ जायेगी। इस भावात्मक उद्देश्य के द्वारा ही वस्तुतः फैंटेसी को रूप-रंग मिलेगा। किन्तु यह होते हुए भी वह फैंटेसी यथार्थ में भोगे गये वास्तविक अनुभव की प्रतिकृति नहीं हो सकती। वैयक्तिक से निर्वैयक्तिक होने के दौरान ही उस फैंटेसी ने कुछ ऐसा नवीन ग्रहण कर लिया कि जिससे वह स्वयं भी वास्तविक अनुभव से स्वतन्त्र बन बैठी। फैंटेसी अनुभव की कन्या है और उस कन्या का अपना स्वतन्त्र विकासमान व्यक्तित्व है। वह अनुभव से प्रसूत है इसलिए वह उससे स्वतन्त्र है।"[१२] मुक्तिबोध ने यह भी स्वीकारा है कि फैंटेसी में संवेदनात्मक ज्ञान और ज्ञानात्मक संवेदनाएँ मिली रहती हैं।[१३] फैंटेसी की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया के पीछे भाषा की अगाध निरन्तर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

साधना-शक्ति है। भाषा फैंटेसी को काटती-छाँटती है और इस प्रक्रिया के विपरीत फैंटेसी भाषा को समृद्ध और सम्पन्न भी करती है।[१४] "कवि की यह फैंटेसी भाषा को समृद्ध बना देती है, उसमें नये अर्थ-अनुषंग भर देती है, शब्द को नये चित्र प्रदान करती है। इस प्रकार, कवि भाषा का निर्माण करता है, विकास करता है, वह निःसन्देह महान् कवि है।"[१५]

भाषा परम्परागत रूप में फैंटेसी की मूल चेतना को फैलाती है, उस फैंटेसी में संशोधन भी उपस्थित करती जाती है और ऐसी स्थिति में कवि के अन्तःमन में भाषा एवं भाव के बीच द्वन्द्व की स्थिति बनी हुई रहती है। यह द्वन्द्व अपनी अभिव्यक्ति के लिए भाषा पर दबाव डालती है। उसके शब्दों एवं मुहावरों में नयी अर्थमत्ता, नयी अर्थक्षमता एवं नयी अभिव्यक्ति भर देती है।

संस्कृति लोक-संस्कृति

'संस्कृति' शब्द का मूल अर्थ साफ करना या परिष्कृत करना है। नरविज्ञान के अनुसार संस्कृति समस्त सीखे हुए व्यवहार अथवा उस व्यवहार का नाम है, जो सामाजिक परम्परा से प्राप्त होता है। इस अर्थ में संस्कृति को सामाजिक प्रथा का पर्याय भी कहा जाता है।[१६] 'संस्कृति' मानवीय आन्तरिकता का विकास है। इस प्रकार संस्कृति का विकास अन्तः एवं बाह्य स्तर पर होता है। अतः संस्कृति किसी जाति, समुदाय, समाज और राष्ट्र की आत्मा होती है। इस प्रकार मनुष्य के क्रिया-कलाप, सांस्कृतिक चेतना के मूल बिन्दु हैं। वस्तुतः सृष्टि-चक्र में मनुष्य ही सांस्कृतिक ऐतिहासिक प्रक्रियाओं का मूल आधार है।

हर्षकाबिट्स के अनुसार "संस्कृति मनुष्य का सीखा हुआ व्यवहार है, अर्थात् वे चीजें जो मनुष्य के पास हैं, वे चीजें जो वे करते हैं और वह सब जो सोचते हैं, संस्कृति है।"[१७] संस्कृति की सार्थकता इसमें है कि वह पदार्थ को मानवीय व्यक्तित्व के गुणों से सम्पन्न करती है। इसलिए इसकी पहचान मानवीय है। मानवीय जीवन-मूल्यों एवं क्रिया-कलापों के फलस्वरूप इसकी चेतना रोमांटिक है। डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल का कथन है—"संस्कृति मनुष्य के भूत, वर्तमान और भावी जीवन का सर्वांगपूर्ण प्रकार है। हमारे जीवन का ढंग हमारी संस्कृति है। संस्कृति हवा में नहीं रहती है, उसका मूर्त्तमान रूप होता है। जीवन के नानाविध रूपों का समुदाय ही संस्कृति है।"[१८] डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी का कथन है कि "संस्कृति मनुष्य की विविध साधनाओं की सर्वोत्तम परिणति है। धर्म के समान वह भी अविरोधी वस्तु है। वह समस्त दृश्यमान विरोधों में सामंजस्य स्थापित करती है।"[१९] इसी संदर्भ में पुनः डॉ० द्विवेदी का कथन है, "मनुष्य की श्रेष्ठ साधनाएँ संस्कृति है।"[२०] "सभ्यता का आन्तरिक प्रभाव

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIT

संस्कृति है। सभ्यता समाज की बाह्य व्यवस्थाओं का नाम है, संस्कृति व्यक्ति के अन्तर के विकास का। सभ्यता की दृष्टि वर्तमान की सुविधा-असुविधाओं पर रहती है। संस्कृति भविष्य या अतीत के आदर्श पर, सभ्यता नजदीक की दृष्टि रखती है, संस्कृति दूर की ओर, सभ्यता के निकट कानून मनुष्य से बड़ी चीज है, लेकिन संस्कृति की दृष्टि में मनुष्य कानून से परे है। सभ्यता बाह्य होने के कारण चंचल है, संस्कृति आन्तरिक होने के कारण स्थायी।"[२१] "असत्य में संस्कृति जिन्दगी का एक तरीका है और यह तरीका सदियों से जमा होकर उस समाज में छाया रहता है, जिसमें हम जन्म लेते हैं। इसलिए, जिस समाज में हम पैदा हुए हैं, अथवा जिस समाज से मिलकर हम जी रहे हैं, उसकी संस्कृति हमारी संस्कृति है।"[२२] "आर्थिक व्यवस्था, राजनैतिक संघटन, नैतिक परम्परा और सौन्दर्य-बोध को तीव्रतर करने की योजना ये सभ्यता के चार स्तम्भ हैं। इन सबके सम्मिलित प्रभाव से 'संस्कृति' बनती है। सभ्यता मनुष्य के बाह्य प्रयोजनों को सहज लभ्य करने का विधान है और संस्कृति प्रयोजनातीत अन्तर आनन्द की अभिव्यक्ति।"[२३] "सभ्यता वह चीज है जो हमारे पास है, संस्कृति वह गुण है जो हममें व्याप्त है। मोटर, महल, सड़क, हवाई जहाज, पोशाक और अच्छा भोजन ये तथा इनके समान सारी अन्य स्थूल वस्तुएँ संस्कृति नहीं है, सभ्यता के सामान हैं। मगर पोशाक पहनने तथा भोजन करने की जो कला है, वह संस्कृति की चीज है।"[२४] आदान-प्रदान की प्रक्रिया से संस्कृति विकसित होती है। यही संस्कृति की आत्मा है। वस्तुतः संस्कृति आदान-प्रदान के सहारे अपने को जीवित रखती है। क्योंकि संस्कृति में जो कुछ विकास या प्रगति है वह मनोवैज्ञानिक स्तर पर चेतना का विस्तार है। अतः प्रगति सदैव वैयक्तिककरण के साथ आरम्भ होती है।[२५] वस्तुतः संस्कृति का निर्माण मानव द्वारा होता है। यह मनुष्य की ऊर्जा-शक्ति का पुंज है। इसमें सांस्कृतिक गतिविधियों का लेखा-जोखा होता है। इस तरह यह मानववाद/नवमानववाद भी है।

रूसो से प्रारम्भ करके रोमांटिक आन्दोलन के समूचे काल में समागत यह आक्रमण संस्कृति के एक महत्त्वपूर्ण वैकल्पिक अर्थ का आधार था। वह अर्थ है बाह्य-विकास से भिन्न आन्तरिक अथवा आध्यात्मिक प्रक्रिया। इसी अर्थ के परिणामस्वरूप 'संस्कृति' शब्द का विस्तार आभ्यन्तर विकास से आगे चलकर उन साधनों और कार्यों तक व्याप्त हो गया जो इस विकास में सहायक थे। और इस प्रकार संस्कृति से तात्पर्य कलाओं के वर्गीकरण, धर्म, संस्थाओं और प्रयोगों तक व्याप्त हो गया, जिनसे कुछ अर्थों और मूल्यों के व्यवहार-पक्ष का बोध होता है।[२६] फिर भी इस बीच संस्कृति में एक अन्य परिवर्तन आया, यह विशेष रूप से मुश्किल है। क्योंकि इसका परिणाम हुआ कि संस्कृति के सम्बन्ध में समाजशास्त्रीय अवधारणा–विशेष रूप से प्राचीन

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

मानव वैज्ञानिक और सामाजिक। इस विकासशील भाव और अन्य आभ्यन्तर प्रक्रिया तथा कला के बीच तनाव और क्रिया-प्रतिक्रिया से स्पष्ट तथा महत्त्वपूर्ण बन जाते हैं।[२७] इस प्रकार संस्कृति वैयक्तिक आन्तरिकता एवं बाह्य सामाजिकता के दोनों कुलों के योग को दर्शाती है। संस्कृति एक संग्रन्थित विज्ञान है। इस नाते ये अपने में अनेक अवधारणाओं को समेटती रहती हैं।

ई० टाईलर का कहना है, "संस्कृति वह जटिल तत्त्व है जिसमें ज्ञान, नीति, कानून, रीति-रिवाजों तथा दूसरी उन योग्यताओं और आदतों का समावेश है जिन्हें मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के नाते प्राप्त करता है।"[२८] पाश्चात्य समीक्षक टी० एस० इलियट ने जीवन के सम्पूर्ण क्रिया-कलाप को संस्कृति कहा है। इसी क्रम में इनका यह भी कहना है कि जीवन के अधिकांश क्रिया-कलाप अचेतन होते हैं।[२९] वस्तुतः संस्कृति इसी अचेतन क्रिया-कलाप की अभिव्यंजना होने के कारण इसकी मूल चेतना मनोवैज्ञानिक एवं आन्तरिक है। इसलिए इसकी पहचान रोमांटिक है। युंगीय मनोविज्ञान के क्रम में अचेतन वैयक्तिकता एवं सामूहिकता का विस्तार है। इसी सामूहिक अचेतन के क्रम में आदिम वृत्तियाँ, आद्य-बिम्ब, फैंटेसी, प्रतीक एवं मिथक की अभिव्यंजना सहज, स्वाभाविक एवं मनोवैज्ञानिक धरातल पर होती हैं।

किसी जन-समूह की आत्मा के शरीरधारी रूप में तथा सर्वोत्कृष्टता के सच्चे स्तर के रूप में संस्कृति इस शताब्दी में चलते-चलते उस न्यायालय के रूप में उपलब्ध हो गई जहाँ वास्तविक मूल्यों का निर्धारण होता था, उन कृत्रिम मूल्यों से भिन्न जो कि बाजार तथा उस प्रकार के अन्य सामाजिक व्यवहारों से उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार भारतीय एवं पाश्चात्य विचारकों की संस्कृति-सम्बन्धी मान्यताओं के विश्लेषण के आधार पर हम सारतः कह सकते हैं कि संस्कृति मानवीयता का विस्तार है। इसकी आधारशिला मानव-जीवन है। क्योंकि सम्पूर्ण समाज इससे प्रभावित होकर एक सांस्कृतिक चेतना में गुम्फित रहता है। इस प्रकार संस्कृति मानव-व्यक्तित्व के वे रूप हैं, जिन्हें हम मूल्यों के अधिष्ठान कहते हैं। इनमें मानव-जीवन-प्रणाली के चेतन-अचेतन रूप की अभिव्यक्ति होती है। इसमें अचेतन अभिव्यंजना की बहुलता रहती है। वैयक्तिक अचेतन के साथ सामूहिक अचेतन के रूप में संस्कृति, लोक-चेतना, लोक-परिवेश एवं लोक-संस्कृति से अपने को जोड़ती है।

लोक-संस्कृति

किसी भी युग का साहित्यकार अपनी चेतना का विस्तार लोक-साहित्य की सहायता से करता है। लोक-साहित्य में जन-चेतना व लोक-मानस की स्वाभाविकता की प्रधानता रहती है। इस तरह लोक-साहित्य लोक-मानस की अभिव्यंजना है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

लोक-साहित्य के द्वारा साहित्यिक अभिव्यंजना शिष्ट साहित्य में मिथकीय अभिव्यंजना का रूप लेती है। लोक-साहित्य मनोवैज्ञानिक एवं मानवीय होता है। संरचना में इसकी भाषा सहज, स्वाभाविक, आकर्षणमयी एवं मनोहारी होती है। इसलिए लोक-साहित्य की चेतना रोमैंटिक होती है। लोक-साहित्य का सम्बन्ध सीधे लोक-भाव से जुड़ा हुआ है। भारतीय साहित्य का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग लोक-साहित्य पर आधारित है। लोक-साहित्य की आधारशिला लोक-मानस है। इसलिए लोक-संस्कृति में लोक-चेतना की अभिव्यंजना होती है। लोक-संस्कृति का अभिप्राय जीवन की संस्कृति से है।

डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल का कथन है कि "लोक हमारे जीवन का समुद्र है, उसमें भूत, भविष्य, वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है। यह राष्ट्र का अमर स्वरूप है।"[३०] डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी का कथन है कि 'लोक' शब्द का अर्थ 'जनपद' या 'ग्राम' नहीं है, बल्कि नगरों और गाँवों में फैली हुई वह सम्पूर्ण जनता है जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार नहीं है। ये लोग नगर में परिष्कृत रुचि-सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जानेवाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं। परिष्कृत रुचिवाले लोगों की समूची विलासिता और सुकुमारता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएँ आवश्यक होती हैं उनको उत्पन्न करते हैं।[३१] डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय 'लोक-संस्कृति' का अभिप्राय 'फोकलोर' मानते हैं। वे लोक-संस्कृति की सीमारेखा में जनजीवन से सम्बद्ध आचार-विचार, विधि-निषेध, विश्वास, प्रथा, परम्परा, धर्म मूढ़ाग्रह, अनुष्ठान आदि को समेट लेते हैं।[३२] इस प्रकार लोक-संस्कृति जन-संस्कृति होती है जो एक ही देश में अधिकांश लोगों के रहन-सहन और रीति-रिवाज से प्रसूत चेतना को लोक-संस्कृति कहते हैं। लोक-साहित्य वस्तुतः लोक-भाषा का साहित्य है, जो अपनी अभिव्यंजना में लोक-संस्कृति के विभिन्न संदर्भों को प्रस्तुत करता है। 'लोक' मनुष्य-समाज का वह वर्ग है, जो अभिजात-संस्कार, शास्त्रीयता और पांडित्य की चेतना और पांडित्य के अहंकार से शून्य है और जो एक परम्परा के प्रभाव में जीवित रहता है। ऐसे लोक की अभिव्यंजना में जो तत्त्व मिलते हैं, वे लोक-तत्त्व कहे जाते हैं।[३३] इसलिए लोक-तत्त्व के निर्धारण में अचेतन की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। युंग ने अपने सामूहिक अचेतन के क्रम में इन बिन्दुओं को विश्लेषित किया है।

लोक-गीत मानवीय अनुभूतियों की एक सहज प्रस्तुति है जो अपने को लोक-मानस से जोड़ता है और समस्त लोक-व्यक्तित्व उसमें अभिव्यंजित होता है। लोक-गीतों में लोक-संस्कृति के विविध रूपों की अभिव्यक्ति है जिसमें जन-जीवन का मधुर स्पन्दन सुनाई पड़ता है। इसमें मानव-अनुभूतियाँ सहज, स्वाभाविक एवं मनोवैज्ञानिक धरातल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

पर दिखाई पड़ती हैं। 'लोकगीत' में संगीत की भाँति स्वर को कृत्रिम, आरोह-अवरोह, सरगम और स्वरग्राम तथा लयताल में नहीं बाँधा जाता, लोकगीत का ताल और लय, आरोह-अवरोह, संवृति-विवृति, समस्त बन्धन स्वाभाविक मनोवेगों के अनुकूल ढलता है।[३४] लोक-साहित्य की अभिव्यक्ति राष्ट्रीय चेतना की ओर एक महत्त्वपूर्ण कदम है। लोक-साहित्य, लोकगीत, लोकनृत्य तथा लोककला की ओर आकृष्ट होना, उनका पुनर्मूल्यांकन करना, उसके जीवित तत्त्वों से प्रेरणा लेना राष्ट्रीय चेतना का ही परिचायक है। लोक-साहित्य में मनुष्य की मूल भावना बोलती है। इसमें संस्कृति की आधारशिला लोक-संस्कृति प्रतिबिम्बित होती रहती है। सच तो यह है कि समस्त लोक-साहित्य विशेषतया लोकगीतों में उस देश की आत्मा बोलती है। लोक-गीतात्मक शैली में लोक-संस्कृति चित्रित है। लोकगीत में सहजता, स्वाभाविकता एवं मनोवैज्ञानिकता होती है।

ब्रेख्त और मैकाडायर मेड की सफलता का रहस्य लोक-गीतों के रूप-विधान की सिद्धि में निहित है। कविता के उत्तर रोमांटिक गतिरोध से निकालकर आगे जाने के लिए ही उन्होंने लोक-परम्परा का सहारा लिया। लोकगीतों की निर्वैयक्तिक पद्धति परवर्ती रोमांटिक गतिरोध के अतिक्रमण में सहायक तो हुई ही, उससे भी आगे बढ़कर उसने वामपक्षी लेखकों को जनता और साहित्य के बीच नयी कड़ी जोड़ने में विशेष योग दिया। जर्मनी के महान् स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अपनी प्रतिभा से प्रगीत को लोकगीत की शैली में ढाला है। इस प्रक्रिया में उन्होंने अपने परिवेश को भी चित्रित किया है। लोक-गीत की शैली सहज एवं स्वच्छन्द होती है। लोकगीत किसी निर्धारित बन्धन में बँधा नहीं होता। सामूहिक चेतना और लोक-भावना पर आधारित प्रगीतों में छन्द आदि की रूढ़िगत परंपरा को लेकर चलना संभव नहीं है। उन्मुक्त वातावरण लोकगीतों के लिए आवश्यक है। जहाँ लोक-भावना सभ्यता के आडम्बरिक बन्धनों को तोड़ देती है वहीं अभिव्यक्ति स्वच्छन्द होती है। लोकगीतों में समस्त रागात्मक वृत्तियों का चित्रण होता है। लोकगीत मानवीय अनुभूतियों की एक सहज प्रस्तुति है जो अपने को लोक-मानस से जोड़ता है और समस्त लोक-व्यक्तित्व उसमें अभिव्यंजित होता है। इसमें मानवीय अनुभूतियाँ सहज, स्वाभाविक एवं मनोवैज्ञानिक धरातल पर दिखाई पड़ती हैं।

लोक-साहित्य की व्यापकता मानव के जन्म से लेकर मृत्यु तक है। इसमें मानव-जीवन की व्याख्या मिलती है। इसलिए इसका सम्बन्ध मानवीय अनुभूतियों से अधिक है मानवीय अनुभूतियों से इसका गहरा सम्बन्ध होने के कारण इसकी मूल चेतना रोमांटिक है। लोक-साहित्य का प्रधान गुण स्वाभाविकता, स्वच्छन्दता एवं सहजता है। शिष्ट

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MH

साहित्य में सहज एवं स्वाभाविक अभिव्यंजना के लिए प्राकृतिक भावधारा की ओर ले जाने की आवश्यकता है। प्रस्तुत सन्दर्भ में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का कथन उल्लेखनीय है—"इस प्रकार के परिवर्तन को ही अनुभूति की सच्ची नैसर्गिक स्वच्छन्दता (ट्रू रोमांटिसिज्म) कहना चाहिये, क्योंकि यह मूल प्राकृतिक आधार पर होता है।"[३५] वस्तुतः लोक-साहित्य ऐसी अनुभूति के ज्यादा निकट है, जो सहज है, प्राकृतिक है एवं अकृत्रिम है। ऐसा होने से लोक-साहित्य शिष्ट साहित्य को जीवन देता है, गति देता है। "भारतीय हृदय का सामान्य स्वरूप पहचानने के लिए पुराने प्रचलित ग्राम-गीतों की ओर भी ध्यान देने की आवश्यकता है, केवल पंडितों द्वारा परिवर्तित काव्य-परंपरा का अनुशीलन अलम् नहीं है।"[३६] आचार्य शुक्ल का इसी क्रम में पुनः कथन है—"पंडितों की बँधी प्रणाली पर चलनेवाली काव्यधारा के साथ-साथ सामान्य अपढ़ जनता के बीच एक स्वच्छन्द और प्राकृतिक भावधारा भी गीतों के रूप में चलती रहती है—ठीक उसी प्रकार जैसे बहुत काल से स्थिर चली आती हुई पंडितों की साहित्य-भाषा के साथ-साथ लोक-भाषा की स्वाभाविक धारा भी बराबर चलती रहती है। जब पंडितों की काव्य-भाषा स्थिर होकर उत्तरोत्तर आगे बढ़ती हुई लोक-भाषा से दूर पड़ जाती है और जनता के हृदय पर प्रभाव डालने की उसकी शक्ति क्षीण होने लगती है, तब शिष्ट साहित्य समुदाय लोक-भाषा का सहारा लेकर अपनी काव्य-परम्परा में नया जीवन डालता है।"[३७] हिन्दी स्वच्छन्दतावाद से अधिक लोक-संस्कृति / लोक-परिवेश का सहज एवं स्वाभाविक अंकन हिन्दी के नवस्वच्छन्दतावादी कविताओं में हुआ है।

'छायावाद' के बाद कविता की ऐसी लहर आई जिसमें ग्रामीण वातावरण रच उठा। इस युग की शायद ही कोई जागरूक कविता हो जिसमें धरती, मिट्टी, फसल वगैरह का जिक्र न हो। यदि कविता-संग्रहों के ही नामों को लें तो 'ग्राम्या' से लेकर 'माटी की मुस्कान' जैसे बहुत से नाम ऐसे मिलेंगे जिनमें किसी न किसी प्रकार लोक-जीवन से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न दिखाई पड़ेगा।[३८]

नवस्वच्छन्दतावाद के विकास में लोक-जीवन, लोक-परिवेश, लोक-संस्कृति एवं लोक-गीतात्मकता दिखाई पड़ती है। वस्तुतः नवस्वच्छन्दतावादी चेतना लोक-चेतना का विस्तार है। आधुनिक हिंदी कविता के इतिहास में सन् १९३७ ई० में अपने-आपमें एक महत्त्वपूर्ण घटना-विन्दु है। इसके अनन्तर हिंदी कविता कल्पना के आकाश से उतरकर यथार्थ की धरती पर पाँव रखती है। यह धरती शहरों की धरती नहीं, बल्कि ग्रामीण जीवन का परिवेश है। धरती, मिट्टी, फसल जैसे शब्द लोक-जीवन और लोक-भाषा के रूप में प्रयुक्त हुए हैं। निराला, पंत, भवानीप्रसाद मिश्र, केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन, त्रिलोचन, शम्भूनाथ सिंह, केदारनाथ सिंह, अज्ञेय, धर्मवीर 'भारती', नरेश मेहता, रामदरश मिश्र इत्यादि की कविताओं में लोक-परिवेश, लोक-संस्कृति

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

एवं लोक-गीतात्मक शैली का अंकन मिलता है। इस तरह लोक-संस्कृति एवं लोक-गीतात्मकता हिन्दी कविता के नवस्वच्छन्दतावादी प्रवाह में विकसित होता है। वस्तुतः लोक-जीवन को चित्रित करनेवाला साहित्यकार आलंकारिक भाषा का प्रयोग नहीं करता है। लोकगीतों की लयात्मकता गरीबों को तिरस्कृत नहीं कर सकती है। हमें यह विस्मरण नहीं करना चाहिए कि लोक-साहित्यकार चमकदार, स्वस्थ और शुभ तत्त्वों से युक्त नायक के वर्णन करते समय चमकीले रंगों एवं उत्कृष्ट शब्दों से कभी भी विमुख नहीं हुए हैं। लोक-साहित्य निर्धन के अज्ञान एवं तुच्छता के ऊपर बल नहीं देता बल्कि उसके सर्वातिशायी, आध्यात्मिक एवं शारीरिक स्वस्थता, बुद्धिमत्ता, दक्षता और आत्मा की उदारता के ऊपर बल देता है। इस तरह नवस्वच्छन्दतावादी साहित्यकार लोक-साहित्य में लोक-संस्कृति एवं लोक-परिवेश की अभिव्यंजना लोकगीतात्मक रूप में प्रस्तुत करता है।

प्रेम / सौन्दर्य

प्रेम के स्वरूप और अर्थ के बारे में बहुत उलझन है। प्रेम मूलतः अज्ञात एवं अजेय होता है। फलतः प्रेम का स्वरूप मनुष्य की समझ से परे है। प्रेम की अवधारणा बहुत जटिल एवं कठिन है। प्रेम को जन्म देनेवाली परिस्थितियों में अधिकतर व्याख्याएँ मनोवैज्ञानिक धरातल पर हुई हैं। फ्रायड इसी विचारधारा का था। लक्ष्य कुंठित सेक्स ही प्रेम है। प्रेम एक आदर्शीकृत आवेश है, आवेग है, जो यौन (सेक्स) की विफलता से विकसित होता है। वस्तुतः प्रेम एक स्थूल अवधारणा है जिसका अर्थ-विश्लेषण अलग-अलग लोगों के लिए अलग-अलग हो सकता है। वस्तुतः प्रेम मनुष्य की मूलचेतना है। इसलिए मनुष्य में जन्मजात प्रेम की वृत्ति होती है। "प्रेम व्यक्तित्व का वैशिष्ट्य है और एक-दूसरे के प्रति इसमें आसक्ति होती है।"[३९] प्रेम नर-नारी में आसक्ति-भाव है जो एक-दूसरे के प्रति आकर्षण का कारण होता है। कला या साहित्य का सृजन प्रेम के अभाव में कठिन है। वस्तुतः प्रत्येक कार्य की कल्पना अपने में प्रेम-भाव को सँजोये रहती है।

'प्रेम' एक अत्यन्त व्यापक शब्द है, जिसकी परिभाषाएँ विद्वानों द्वारा भिन्न-भिन्न रूपों में दी गयी हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का कथन है—"विशिष्ट वस्तु या व्यक्ति के प्रति होने पर लोभ वह सात्त्विक रूप प्राप्त करता है, जिसे प्रीति या प्रेम कहते हैं।"[४०] पुनः आचार्य शुक्ल का कथन है—"प्रेम वास्तव में राग का ही पूर्ण विकसित रूप है। राग और द्वेष दोनों की स्थिति वासना के रूप में प्रत्येक प्राणी में होती है। वासनात्मक अवस्था में इन दोनों के विषय सामान्य रहते हैं। सामान्यतः सुख देनेवाली या चिरकाल से साथ रहनेवाली

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

वस्तुओं के प्रति राग और दुःख देनेवाली वस्तुओं के प्रति द्वेष का बीज सबके हृदय-क्षेत्र में ढँका रहता है। यही राग जब अंकुरित या व्यक्त होकर किसी व्यक्तिविशेष की ओर पहले-पहल उन्मुख होता है, तब 'लुभाना' कहलाता है और जब उस विशेष में जाकर स्थित हो जाता है, तब 'प्रेम' कहा जाता है। सीधी बात यह है कि वासनात्मक अवस्था से भावात्मक अवस्था में हुआ राग ही 'अनुराग' या 'प्रेम' है।"[४१] वस्तुतः प्रेम इच्छा, ज्ञान और क्रिया वृत्ति की त्रिवेणी है। ये तीनों मिलकर जब एक हो जाते हैं तो, इसी मिलन-स्थल को प्रेम कहा जाता है। प्रेम मूलतः इच्छा है जो ज्ञान के सहारे से एक प्रकार का रूप ग्रहण करता है। जब सहृदय व्यक्ति इच्छित वस्तु, व्यक्ति या दृश्य का अवलोकन करता है तो उसके प्रति अनायास ही रागात्मक सम्बन्ध हो जाता है। इस प्रकार सुन्दर वस्तु, व्यक्ति या दृश्य के प्रति द्रष्टा के रागात्मक सम्बन्ध को प्रेम कहते हैं। प्रेमी का वस्तु के प्रति दो प्रकार का दृष्टिकोण हो सकता है—१. व्यक्तिपरक, २. वस्तुपरक। वस्तुपरक दृष्टिकोण में दर्शनीय वस्तु या व्यक्ति के गुणों की प्रधानता रहती है और प्रेमी रमनेवाले के रूप में रहता है। ऐसी स्थितियों में दर्शनीय व्यक्ति या वस्तु के प्रति द्रष्टा की रागात्मक वृत्ति की चरमावस्था यही हो सकती है कि वह अपने व्यक्तित्व और अस्तित्व की सीमारेखाओं से मुक्त होकर दर्शनीय वस्तु के साथ पूर्ण तादात्म्य स्थापित कर ले। व्यक्तिपरक दृष्टिकोण ग्राहक ही नहीं, विधायक भी होता है। वह वस्तु या व्यक्ति के गुणों के ग्रहण तक ही सीमित न रहकर उसे अपने ही रंग में रँगकर प्रस्तुत करता है।

आलम्बन-भेद प्रेमी के दृष्टि-भेद के आधार पर प्रेम के दो रूप होते हैं—(क) वासनात्मक (ख) सात्विक। वासनात्मक प्रेम का आधार शारीरिक या स्थूल सौन्दर्य होता है। इसमें प्रेमी को ऐन्द्रिय दृष्टि भी मिलती है। आलम्बन का सूंघना, स्पर्श करना, सूंघकर आलिंगन करना आदि क्रियाएँ वासनामूलक प्रेम की ही अभिव्यक्तियाँ हैं। इसमें प्रेमी अपनी तुष्टि के लिए सुन्दर वस्तु का भोग करता है। सुन्दरता उसके लिए भोग की वस्तु बनकर रह जाती है। सात्त्विक प्रेम का उदय तब होता है जब प्रेमी ऐन्द्रिय दृष्टि के आधारभूत सौन्दर्य-तत्त्वों—रूप, रस, गन्ध, ध्वनि और स्पर्श से उठकर प्रेम-पात्र के अतीन्द्रिय आन्तरिक सौन्दर्य, आत्मिक पवित्रता की अनुभूति में रमने लगता है। ऐसी स्थिति में सौन्दर्य एक सूक्ष्म भावात्मक सत्ता मात्र रह जाता है। प्रेमी का अन्तःकरण उस सूक्ष्म अतीन्द्रिय असीम सौन्दर्य के ध्यान से पवित्र, असीम और दिव्य हो जाता है। देवी-देवता, परमात्मा आदि अशरीरी दिव्य सत्ता के प्रति भी उपासक का प्रेम अतीन्द्रिय और दिव्य हो जाता है।

प्रेम के आलम्बनों को सामान्यतः तीन क्षेत्रों में वर्गीकृत किया जा सकता है—(क) प्रकृति-क्षेत्र, (ख) मानव-क्षेत्र, (ग) अलौकिक-क्षेत्र। स्वच्छन्दतावादी प्रेम

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

में इन तीनों क्षेत्रों के प्रति आसक्ति-भाव होता है। स्वच्छन्दतावादी कवि या लेखक किसी न किसी कल्पना-लोक का सृजन करते हैं और वहाँ के दिव्य प्राणियों में चलनेवाले स्वच्छन्द एवं अनन्त प्रेम को व्यक्त करते हैं। स्वच्छन्दतावादी कवि अन्तर्जगत् में गहन आस्था रखने के कारण प्रेमी-प्रेमिका के प्रथम बार के रागोदय को प्रमाण मानते हैं। इसलिए संसार के प्रायः सभी स्वच्छन्दतावादी कवि प्रथम दर्शन से ही प्रेमोदय मानते हैं। यही पूर्वानुराग का परिणय परिपक्व होकर प्रेम में परिणत हो जाता है।

प्रेम-पात्र की उपस्थिति और अनुपस्थिति के आधार पर प्रेम के दो पक्ष होते हैं—संयोग और वियोग। संयोग में प्रेमी और प्रेमिका की पारस्परिक प्रणय-लीलाओं—चुम्बन, जल-विहार, वन-विहार, आलिंगन रति आदि का समावेश होता है। वियोग प्रेम-पात्र के प्रवास में होता है, वियोग में प्रेमी अथवा प्रेमिका के विरह-दग्ध हृदय के मार्मिक उद्गारों की प्रधानता होती है। अपनी कल्पित या वास्तविक प्रिया के स्वच्छन्दतावादी कवियों के प्रेमोद्गार प्रायः सभी देशों के स्वच्छन्दतावादी काव्य में सुनाई पड़ते हैं। स्वच्छन्दतावादी कविता में संयोगजन्य आनन्दानुभूति की अभिव्यक्ति के साथ-साथ विरहजन्य विवशता, विषाद और आकुलता के मार्मिक उद्गार भी सुनाई पड़ते हैं। विरह की अग्नि में तपकर प्रेम निष्कलुष और ज्योतिर्मय रूप ग्रहण करता है। विरह में ऐन्द्रिय वासना का तिरोभाव हो जाता है और विशुद्ध मानसिक अथवा आध्यात्मिक प्रेम का उदय होता है। स्वच्छन्दतावादी कविता में विरह के तीव्र एवं मर्मभेदी उद्गारों का बाहुल्य रहता है। जहाँ कवि की रागात्मक वृत्ति ऊर्ध्वमुखी होकर देश, काल की सीमाओं से परे मानव-मात्र के प्रेम से उमड़ पड़ती है वहाँ प्रेम के व्यापक स्वरूप का उदय होता है। स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम के इन सभी रूपों का सन्निवेश दिखाई पड़ता है। मूलतः प्रेम के इन सभी स्वरूपों में भी स्वच्छन्दतावादी कवियों में आत्माभिव्यक्ति की प्रेरणा ही क्रियाशील रहती है। प्रेम नये रूपों में अभिव्यक्त हुआ और व्यक्तिनिष्ठ बन गया है। स्वच्छन्दतावादी प्रेम आत्मपरक होता है, वैयक्तिक होता है, आत्मिक एवं वासनामय होता है। "प्रेम चाहे जितना पूर्ण क्यों न हो, शारीरिक आसक्ति के बिना उसमें लावण्य का अभाव माना जाने लगा। हजार धार्मिक, सामाजिक बन्धनों के बावजूद नारी नायिका बन गई। वह परिवारवालों की नजर से बचते हुए अभिसार करने लगी।"[४२]

स्वच्छन्द प्रेम की अभिव्यक्ति इन रूपों में हो सकती है—(१) किसी एक व्यक्ति के प्रति आसक्ति-भाव या लगाव जिसके साथ योन (सेक्स) की सचेतन इच्छा हो भी सकती है और नहीं भी, (२) अधिकार की भावना—यौन (सेक्स) सम्बन्धी निष्ठा और यौन-सम्बन्धी ईर्ष्या की क्षमता। (३) विषमता की मनःस्थितियाँ, कभी उल्लास और कभी अवसाद, (४) प्रेम-पात्र को आदर्श समझना। रोमांटिक प्रेम मुख्यतः

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MH

सामान्य प्रेम की गहन अभिव्यक्ति होती है जिसमें घनिष्ठ आत्मीयता की और समकालीन संसर्ग-प्रेम के विशेष लक्षणों से उत्पन्न होनेवाली विशेषताओं को प्राप्त करने का आग्रह होता है। विशेषकर रोमांटिक प्रेम इन चीजों को अतिरंजित कर देता है। रोमांटिक प्रेम संवेगात्मक आवश्यकताओं के साथ प्रेम की वैयक्तिक आवश्यकता की तुष्टि करता है। इस प्रकार रोमांटिक प्रेम, प्रेम के संवेग की जटिल अभिव्यंजना है। स्वच्छन्द प्रेम के लिए प्रेम की निर्विरोध अभिव्यक्ति आवश्यक है। प्रेम की अनुभूतियों को बिना संकोच के उसे व्यक्त करने से किसी व्यक्ति में जितनी गहराई और गहनता आती है, उतनी किसी और अनुभव में नहीं आ सकती। ऐसा स्वच्छन्द प्रेम उन्मुक्त परिवेश में ही सम्भव है। विशद स्वच्छन्दतावादी प्रेम में अद्यतन मनोविश्लेषणवादी सिद्धान्त की तरह मानवी आकर्षण के सारे प्रकारों को तत्त्वतः एक माना गया है तथा वस्तु एवं अनुपात की दृष्टि से एक-दूसरे से भिन्न। इसके अन्तर्गत प्रेमी और प्रेमिका, शिशु और माता-पिता, भाई-बहन, मित्र और मित्र तथा व्यक्ति और मानवता सभी प्रकार के प्रेम तत्त्वतः सदृश्य हैं। प्रेम की इस परिधि को प्रायः इतना विशद बना दिया गया है कि इसके अन्तर्गत मनुष्य का प्रकृति के प्रति प्रेम भी अन्तर्भूत हो जाता है।[४३]

संवेगात्मक प्रेम में परिवेश एवं वैज्ञानिक उपलब्धियों के फलस्वरूप प्रेम का केन्द्रबिन्दु आर्थिक धरातल पर आ जाता है, औद्योगीकरण के कारण प्रेम का आधार आर्थिक हो गया। काडवेल का कहना है कि यौनपरक प्रेम, प्रेम का परिष्कृत आर्थिक सम्बन्ध है।[४४] स्वच्छन्दतावादी प्रेम में धर्म, घृणा, देशभक्ति, फासिस्टवाद तथा भावुकता जो उनकी कविताओं में कल्पना से ही अंकित होती थी। प्रेम को उन्होंने जीवन में अनुभूत नहीं किया। यही कारण था कि वे न्यूरोटिक, उदास, बीमार रहा करते थे। प्रेम नवस्वच्छन्दतावादी कविताओं में यथार्थ की पुकार के रूप में दिखाई पड़ता है। यहाँ प्रेम क्रांतिकारी अभिव्यंजना का एक तत्त्व है। यहाँ क्रांति अपना राग सर्वत्र फैला रही है, पूरे समाज का ढाँचा एकदम बिखर गया है। सर्वत्र क्रांति ही दृष्टिगत होती है। अतः प्रेम में भी क्रांति का आगमन हो गया है। प्रेम आज एक मूल्य है और बदलते हुए मूल्यों के रूप में इसका आकलन आज के संदर्भ में आवश्यक है। नवस्वच्छन्दतावादी कवियों का प्रेम लौकिक, वासनात्मक है। इसमें आध्यात्मिकता का आवरण नहीं है। प्रेम के संयोग-वियोग-जन्य हर्ष-विषाद, उदासी, टूटन-घुटन, असंतोष, कुंठा आदि का सघन स्वर नवस्वच्छन्दतावादी कविताओं में मुखर हुआ है।

नवस्वच्छन्दतावादी कवि या लेखक प्रेम को आध्यात्मिकता एवं वायवीयता से मुक्त कर लौकिक धरातल पर प्रतिष्ठित करता है। ये कवि आध्यात्मिक एवं अलौकिक प्रेम की अभिव्यंजना प्रायः नहीं करते, यदि करते भी है तो मानवीय धरातल पर। इनकी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

प्रेमानुभूति घोर सांसारिक है। इन कवियों को प्रेम की प्रतीति दैहिक अथवा जैविक आकर्षणों के द्वारा होती है। ये प्रेम को जीवन की पूर्णता का साधन नहीं मानते। प्रत्युत उसे 'जैविक सत्ता' के रूप में स्वीकार करते हैं। वस्तुतः नवस्वच्छन्दतावादी कवियों के प्रेम में पूर्ववत् भावुकता एवं कल्पनात्मक उच्छ्वास नहीं है। बल्कि, यहाँ यथार्थता की प्रधानता है। प्रेम यहाँ सांसारिक है, मानवीय है, प्रत्यक्ष है और इसलिए इसका रूप बिल्कुल साफ है, उस पर किसी प्रकार का आवरण नहीं है। 'बच्चन' के 'निशा-निमंत्रण' और 'एकांत-संगीत' में प्रेम के अवसाद के घनत्व की अभिव्यक्ति मिलती है तथा 'मिलनयामिनी' में मिलन की मादकता और उमंग की प्रस्तुति। नरेन्द्र शर्मा के 'प्रवासी के गीत' में लौकिक विरह का आधिक्य है तो अन्य रचनाओं में प्रेयसी के मांसल सौन्दर्य का मादक चित्रांकन। यही बात अंचल, नवीन, दिनकर आदि कवियों की रचनाओं के विषय में भी कही जा सकती है।

नवस्वच्छन्दतावादी कविताओं का मुख्य स्वर मानवी प्रेम है। दिनकर 'उर्वशी' में कहते हैं—

"प्रेम मानवी की निधि है, अपनी तो वह क्रीड़ा है,
प्रेम हमारा स्वाद, मानवी की आकुल पीड़ा है।"[४५]

इन कविताओं में स्वच्छन्द वृत्ति सौन्दर्य और प्रेम की भूख लिये उड़ती है और स्वच्छन्द उड़ान सामाजिक प्रतिबन्धों से टकराकर विरह की रागिनी अलापने लगती है। प्रेम प्रथमतः शरीर में उत्पन्न होने के कारण शारीरिक एवं ऐन्द्रिय होता है और फिर ऊर्ध्वोन्मुख होने से शरीर की सीमा का अतिक्रमण करके आध्यात्मिक रूप ग्रहण करता है। इसलिए प्रेमानुभूति का आधार मानवीय धरातल है। नवस्वच्छन्दतावादी प्रेम वासनात्मक है, सांसारिक है, मानवीय है। 'कनुप्रिया' में राधा और कृष्ण का प्रेम मानवीय है। क्योंकि राधा और कृष्ण यहाँ साधारण नर-नारी हैं। 'उर्वशी' का प्रेम भी कामाध्यात्म है। अज्ञेय की कविताओं में चित्रित प्रेम का स्वरूप प्रायः वासनात्मक है। इस प्रेम की अभिव्यक्ति यौन-प्रतीकों के माध्यम से हुई है। नवस्वच्छन्दतावादी कवियों का प्रेम यथार्थवादी दृष्टि लेकर उड़नेवाला प्रेम है, उसमें कल्पना एवं भावुकता नहीं है। प्रेम यहाँ सांसारिक है, लौकिक है और एक नैसर्गिक भूख है, शरीर का भोजन है।

सौन्दर्य—सौन्दर्य एक उत्कृष्ट तत्त्व है, जो सृष्टि-विज्ञान की अन्तिम कड़ी है। यही विश्व-विज्ञान की प्रथम श्रृंखला भी है जिसे सृष्टि के आदि तत्त्व के रूप में नियंता ने अपनाया है। महाप्रलय के अन्धकार में अन्तर्निविष्ट जगत् को जब परमपुरुष ने वसुन्धरा पर उद्धृत किया तो उनके मस्तिष्क में तत्त्वों के अन्वेषण की प्रवृत्ति हुई, परिणामस्वरूप सत्य जैसा सर्वोत्कृष्ट तत्त्व अभिव्यक्त हुआ। समस्त जड़-चेतन जगत्

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

इसी सत्यात्मक तत्त्व पर प्रतिष्ठित किया गया। अभिप्राय यह कि 'सत्य' सृष्टि का आदि तत्त्व है, यही सौन्दर्य का आधार-स्तम्भ है। सौन्दर्य-तत्त्व के अभाव में यह अवस्थित नहीं रह सकता है। इसके अन्तः एवं बाह्य तत्त्व दोनों सत्य पर ही प्रतिष्ठित हैं।

सौन्दर्य का द्वितीय आधार-स्तम्भ जिस पर वह प्रतिष्ठित है—वह 'शिव' है। प्रथम तत्त्व की आधारशिला सत्य पर प्रतिष्ठित है, किन्तु इस सत्यात्मक तत्त्व की विशाल शाखाएँ एवं प्रशाखाएँ 'शिव' पर ही आसीन हैं। वस्तुतः समस्त जगत् जिसे तुच्छ मस्तिष्कसम्पन्न मानव दुःख का कारण मानता है वह शिवमय अर्थात् कल्याणमय है। दुःख में अन्तर्निहित जगत् भी कल्याणमय ही है। अतः सृष्टि का प्रथम तत्त्व यदि 'सत्य' है तो 'शिव' उसका विकसित रूप है। सौन्दर्य की द्वितीय श्रृंखला यही है जिसमें समस्त जगत् कल्याणमय प्रतीत होता है। 'शिवम्' जो नैसर्गिक जगत् की सुषमा का एक आधार है। इसलिए मानव को सुन्दरता के प्रति आकर्षण होता है। 'सुन्दरम्' सृष्टि का तृतीय तत्त्व है। इस प्रकार 'सत्यम्', 'शिवम्', 'सुन्दरम्'—ये तीनों तत्त्व सृष्टि की उत्पत्ति एवं विकास-परम्परा में सहयोग प्रदान करते हैं।

विश्व-विज्ञान एवं सृष्टि-विज्ञान के अध्ययन की परम्परा में विकसित तत्त्वों के रूप में महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त वह सिद्धान्त है, जिसमें सौन्दर्यशास्त्र की मीमांसा निहित है। सृष्टि का यह आदि तत्त्व है, यह मान्यता भारतीयों की है, परन्तु इस प्राचीन सैद्धान्तिक रहस्य का उद्बोध प्लेटो आदि दार्शनिकों को भी इसी आधार पर ही प्राप्त हुआ। जहाँ कहीं भी इस तथ्य की घोषणा और मीमांसा प्लेटो आदि ने की है वहाँ भारतीय प्राचीन विद्या का अनुकरण मात्र प्रतीत होता है। प्लेटो के अनुसार, "सौन्दर्य सृष्टि का मूलतत्त्व है और इसका सन्धान करना ही तत्त्वद्रष्टा का चरम लक्ष्य है। यह सत्य का पर्याय है और श्रेयस् में अभिन्न है। सौन्दर्य और प्रेम एक ही सत्य के वास्तविक पक्ष हैं।"[४६]

इस भावाभिव्यक्ति के स्थान पर प्लेटो को यह कहना चाहिए कि सौन्दर्य सृष्टि-तत्त्व का विकसित रूप है। सत्यं, शिवं, सुन्दरम् में सौन्दर्य सृष्टि-तत्त्व तृतीय प्रक्रिया का द्योतक है, सत्य सृष्टि का मूल तत्त्व है। इसका परिवर्तित एवं परिवर्द्धित रूप शिवमय है और पूर्ण विकसित रूप सौन्दर्य है। मेरी दृष्टि में सृष्टि के मूल तत्त्व के साथ रूप-सौन्दर्य की यह अभिव्यक्ति प्लेटो की अभिव्यक्ति का व्यतिक्रम रूप है। सौन्दर्य को भौतिक मानना, प्रेम के साथ उसका सम्बन्ध मानना और सत्य का पर्याय स्वीकारना श्रेयस् से अभिन्नता का स्थापना-सम्बन्धी प्लेटो का विचार एकांगी है। आध्यात्मिकता से उसका सम्बन्ध वहाँ प्रतीत नहीं होता है, जहाँ उन्होंने सौन्दर्य की स्थापना भौतिकता से की है। सौन्दर्य और प्रेम के परस्पर सम्बन्ध को स्थापित करना अकृत्रिम नहीं, बल्कि कृत्रिम है, जहाँ सौन्दर्य का सम्बन्ध प्रज्ञा से है। इस अभिव्यक्ति की व्यंजना प्लेटो ने की है,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

वहाँ एतत् सम्बन्धी उनकी गवेषणा महत्त्वपूर्ण हो सकती है। सौन्दर्य की विभिन्न कोटियाँ जिनका निर्देश प्लेटो ने किया है, सभी सौन्दर्य के चरम तत्त्व प्रज्ञा में अन्तर्निहित हो जाते हैं। प्लेटिनस के अनुसार जो हमारे अनुराग का विषय है, अन्ततः वही सुन्दर है। मानव-आत्मा अपने मूल उद्गम, उस परम तत्त्व में मिलने के लिए व्यग्र रहती है, जो शिव और सुन्दर का आधार-स्रोत है। उस परम सुन्दर के साथ तादात्म्य की यही अभिलाषा सौन्दर्य-चेतना का ही रहस्य है। अर्थात् सौन्दर्य की भावना मूलतः एक आध्यात्मिक या रहस्यानुभूति है। मूर्ति अथवा वास्तुकला का सौन्दर्य उसके मूर्त आधार में न होकर कलाकार की चेतना में सक्रिय मूल विचार या भावना में ही रहता है। मसीही सन्तों ने इस रहस्य-भावना को और भी स्पष्ट कर दिया है। सन्त आगस्टन एन्विनस ने सौन्दर्य को ईश्वरी तत्त्व माना है। उनका यह मत है कि ईश्वर शुद्ध और चरम सौन्दर्य का प्रतीक है। विश्व का सौन्दर्य उसीका आभास है, अतः सौन्दर्य मूलतः अपार्थिव ही होता है। रूप और आलोक उसके मूल तत्त्व हैं। वह आलोकमय रूप अथवा रूपायित आलोक है और यह आलोक स्रष्टा के तेज का ही प्रतिरूप है जो सृष्टि के विधान में क्रम, अन्विति और अनुपात आदि गुणों का सन्निवेश करता है। इसी आधार पर आगस्टन ने सौन्दर्य को रंग के आकर्षण से युक्त अंगी का समानुपात कहा है और एन्विनस ने उसके तीन तत्त्व माने हैं—अखण्डता, समानुपात और दीप्ति।[४७] आधुनिक युग में कान्ट, हीगेल इत्यादि पाश्चात्य विद्वानों की विचारधाराओं में कोई नवीनता नहीं प्रतीत होती है। निरपेक्ष सौन्दर्य और सापेक्ष सौन्दर्य का सम्बन्ध सत्य एवं शिव से ही है। सापेक्ष सौन्दर्य मेरी दृष्टि में सौन्दर्य का उत्कृष्ट रूप नहीं है और इसका सम्बन्ध सांसारिकता से है और इसी सौन्दर्य को आधुनिक व्यक्ति प्रेम कहते हैं। निरपेक्ष सौन्दर्य अनिवार्य सौन्दर्य है। हीगेल के अनुसार यही दिव्य चेतना या परमसत्ता का प्रतिरूप है और सृष्टि की प्रेरक शक्ति है। 'आँसू', 'झरना' और 'लहर' के कवि 'प्रसाद' ने सौन्दर्य की वास्तविकता को विस्मरण न करके उसे हृदय से सम्बन्धित स्वीकारा है—

"उज्ज्वल वरदान चेतना का
सौन्दर्य जिसे सब कहते हैं
जिसमें अनन्त अभिलाषा के
सपने सब जगते रहते हैं।"[४८]

प्रसाद के अन्तिम पद ने यह निश्चय कर दिया है कि सौन्दर्य अनेक अभिलाषाओं के प्रेरणा-स्रोत हैं और वे अभिलाषाएँ नित्य नवीन हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि प्रसादजी सौन्दर्य को स्थिर नहीं मानते हैं। निराला सौन्दर्य को चेतना कहते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

चेतना ही जीवन है इसलिए काव्य-कला का उद्देश्य सौन्दर्य का उन्मेष करना है।[४६] मेरी अपनी विचारणा में भी सौन्दर्य स्थिर नहीं है। स्थिर सौन्दर्य केवल रुझान की जड़ता हो सकती है, चेतना का उज्ज्वल वरदान नहीं हो सकता।

अपनी चेतना के सौन्दर्य में अटूट आस्था के कारण ही स्वच्छन्दतावादी कवि बाह्य वस्तुओं के वस्तुगत सौन्दर्य को भी अपनी ही आन्तरिकता से सौन्दर्य में रँग देता है और इस प्रकार सौन्दर्यानुभूति के साथ ही सौन्दर्य-सर्जन भी करता चलता है। उसकी भावना, कल्पना की समन्वित प्रवृत्तिशीलता ही सौन्दर्यानुभूति और सौन्दर्य सर्जन-प्रक्रिया को जन्म देती है। वह प्राकृतिक सौन्दर्य में आन्तरिक या आत्मिक सौन्दर्य की ही अभिव्यक्ति पाकर आनन्दमग्न हो जाता है। उसे प्रकृति से असीम अनुराग होता है। स्वच्छन्दतावादी कवि, मानव तथा प्रकृति से सर्वत्र आकृति सौन्दर्य से ही कहीं अधिक शील सौन्दर्य का दर्शन करता है। अनेक बार वह अपनी सौन्दर्यविधायिनी कल्पना से वास्तविक सौन्दर्य-बोध के आधार पर दिव्य-सौन्दर्य-लोकों की अवतारणा करता है। स्वच्छन्दतावादी कवि को प्रकृति, मानव और मानवेतर दिव्य प्राणियों और लोकों में सर्वत्र एक ही सौन्दर्य-सत्ता के दर्शन होते हैं। कवि को दृष्टि ही सौन्दर्य की ओर जाती है। वह जहाँ भी वस्तुओं के रूप-रंग में अथवा मनुष्य के मन, वचन और कर्म में "जिसे धर्मज्ञ अपनी दृष्टि के अनुसार शुभ या मंगल समझता है उसीको कवि अपनी दृष्टि के अनुसार सुन्दर कहता है।"[५०] वस्तुतः सौन्दर्य प्रेम की आत्मा है। उसी पर प्रेम की सत्ता सम्भव है। क्षण-प्रतिक्षण जिसमें नवीनता दिखाई पड़े वही सुन्दरता का आदर्श एवं उत्कृष्ट रूप है। सौन्दर्य की खोज प्रेम के भीतर ही होती है, दर्पण की मिथ्या प्रशंसा में नहीं। "प्रकृति मानव-जीवन तथा ललित कलाओं के आनन्ददायक गुणों का नाम सौन्दर्य है।"[५१] प्रकृति अथवा नारी-सौन्दर्य स्वच्छन्दतावादी कवियों की कल्पना को उद्वेलित करता है और वह अपनी सौन्दर्यानुभूति को अनायास कविता का रूप दे देता है। क्लासिक कवि भी सौन्दर्य-प्रेमी होता है, लेकिन सौन्दर्य की क्लासिक एवं रोमांटिक भावना में अन्तर है। सौन्दर्य की क्लासिक भावना में एक क्रम है जबकि उसकी रोमांटिक भावना में सौन्दर्य के साथ कौतूहल का मिश्रण होता है। अतः क्लासिकल सौन्दर्यानुभूति में बाह्य और सुडौलता की प्रधानता रहती है और स्वच्छन्दतावादी सौन्दर्यानुभूति का रहस्य कवि की आन्तरिक भावना में निहित रहता है।

सौन्दर्य-बोध की चिन्तन-प्रक्रिया वैज्ञानिकता के प्रभाव, औद्योगीकरण तथा आर्थिक पक्ष की प्रधानता के कारण एक नया रूप ग्रहण करता है। और इस अंकन का आधार भौतिकवादी हो जाता है। मानवीय एवं इसी दुनिया के सौन्दर्य का अंकन नवस्वच्छन्दतावादी कवि का प्रतिपाद्य है। दिव्य और अलौकिक सौन्दर्य का अंकन नवस्वच्छन्दतावादी साहित्यकार अपनी सीमा-रेखा में नहीं लेना चाहता। दिव्यता या

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

अलौकिकता को मानवीय धरातल पर लाता है तथा इसे यथार्थता का रूप देता है। काडवेल सौन्दर्य को एक सामाजिक भाव मानते हैं और उसकी परिभाषा देते हुए कहते हैं कि "जो कुछ असुन्दर है उससे भिन्न जो कुछ है, उसे सुन्दर कहा जा सकता है ··· ··· असुन्दर ही सुन्दर को नियत करता है और उसे एक निश्चित सीमा में बाँधता है ··· ··· सुन्दर का विरोधी असुन्दर नहीं, वरन् कुरूप है।[४२] मार्क्सवादी विचारक इस मत पर एकमत हैं कि सौन्दर्य की स्थिति व्यक्ति के मन में न होकर वस्तु में होती है। सुन्दर वस्तु पृथक् सौन्दर्य की सत्ता नहीं है।[४३] नवस्वच्छन्दतावादी सौन्दर्य-चेतना वस्तुपरक होती है। इसमें मानवीय एवं प्राकृतिक सौन्दर्य विशेषकर लोक-परिवेश एवं आंचलिकता के रूप में उसका आकलन होता है। स्वच्छन्दतावाद में सौन्दर्य व्यक्ति-मन की अभिव्यक्ति है, लेकिन नवस्वच्छन्दतावादी सौन्दर्य बाह्य वस्तुओं का यथार्थपरक अंकन भी है।

सौन्दर्य मूलतः ऐन्द्रियता का विज्ञान है। इसका उद्देश्य भी स्वतंत्रता तथा सुख-भोग है। यह भी मूलवृत्ति तथा नैतिकता का समन्वय करता है। वस्तुतः सौन्दर्य अपने-आपमें मानवीय चेतना-विस्तार है। यह सत्यं-शिवं-सुन्दरम् के रूप में संस्कृति द्वारा प्रभावित होता है। इस प्रकार संस्कृति सौन्दर्यबोध के विकसित होने की चेष्टा है।[४४] "सौन्दर्य-बोध एक संश्लिष्ट इकाई है। सौन्दर्य प्रकृति में है, मनुष्य के मन में भी उसकी अनुभूति व्यक्तिगत होती है, समाजगत भी।[४५] आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी सौन्दर्य को सौन्दर्य न कहकर 'लालित्य' कहना चाहते हैं तथा मानव-रचित सौन्दर्य को विशेष महत्त्व देते हैं। लालित्य वह इसलिए है कि मानव द्वारा लालित्य है। सौन्दर्य के संदर्भ में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की अवधारणा मानववादी है। इनकी सौंदर्य-दृष्टि मूलतः मानव-केन्द्रित है। क्योंकि सौन्दर्य का स्रष्टा मनुष्य है, बल्कि यह भी कि सौन्दर्य की सृष्टि करने के कारण मनुष्य मनुष्य है।

आचार्य द्विवेदीजी की लालित्य-मीमांसा का एक दूसरा रूप यह भी है कि वह "बन्धन के विरुद्ध विद्रोह है और बन्धनद्रोही व्याकुलता को रूप देने का प्रयास है।" आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की दृष्टि में कला और सौन्दर्य की सृष्टि विलासमात्र नहीं है, बल्कि बन्धनों के विरुद्ध विद्रोह है, जो शास्त्र-समर्थित न होते हुए भी उनकी क्रांतिकारी सौन्दर्य-दृष्टि का परिचायक है।

आचार्य द्विवेदीजी की लालित्य-मीमांसा का तीसरा सूत्र यह है कि सौन्दर्य एक सर्जना है—मनुष्य की सिसृक्षा का परिणाम है। इस संदर्भ में वे मनुष्य की सृजनशीलता पर सबसे अधिक बल देना चाहते थे। आचार्य द्विवेदीजी के शब्दों में "भाषा में, मिथक में, धर्म में, काव्य में, मूर्ति में, चित्र में बहुधा अभिव्यक्त मानवीय इच्छा-शक्ति का अनुपम विलास ही वह सौन्दर्य है जिसकी मीमांसा का संकल्प लेकर हम चले हैं।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

'लालित्य-मीमांसा' के सूत्रों को देखने से संकेत स्पष्ट है : "जीवन का समग्र विकास ही सौन्दर्य है। यह सौन्दर्य वस्तुतः एक सृजन-व्यापार है। इस सृजन की क्षमता मनुष्य में अन्तर्निहित है। वह इस सौन्दर्य-सृजन की क्षमता के कारण ही मनुष्य है। इस सृजन-व्यापार का अर्थ है बन्धनों से विद्रोह। इस प्रकार सौन्दर्य विद्रोह है—मानव-मुक्ति का प्रयास है।"[५६] इस प्रकार हम देखते हैं कि आचार्य द्विवेदी की सौन्दर्य-दृष्टि मानव-केन्द्रित है, बन्धन के प्रति विद्रोह है तथा एक सृजन-व्यापार है। इस प्रकार सौन्दर्य विद्रोह है। सौन्दर्य के ये सारे आयाम स्वच्छन्दतावादी तथा नव-स्वच्छन्दतावादी कला के मानदण्ड ही हैं।

यथार्थवादी चिन्तन के फलस्वरूप काव्य-प्रक्रिया में एक बदलाव आया। इस बदलाव के फलस्वरूप मानव भी बदलते हुए रूप में दिखाई देता है। मनुष्य इस प्रक्रिया में अपनी गतिशील चेतना को बदलता है और तदनुकूल वातावरण में परिवर्तन लाता है। फलतः मनुष्य का परिबोध एवं अवस्था नये सम्बन्धों को जन्म देता है। मनुष्य की मूलवृत्ति शारीरिक प्रतिबोध बहिर्मुखी होकर परिवेश में प्रविष्ट होती है। फलस्वरूप अपने को एवं परिवेश को परिवर्तित करते हैं। इस प्रकार सर्जना होती है। सामाजिकता की महत्ता के फलस्वरूप नया सौन्दर्य-बोध उभरने लगता है। वस्तुतः वैज्ञानिक या कलाकार विगत एवं वर्तमान परम्परा एवं अनुभूति की तनावपूर्ण स्थिति में रहता है। क्योंकि परम्परा विगत श्रम-प्रक्रिया का संचित रूप है जो उसमें सुरक्षित है तथा इसके अतिरिक्त उसके लिए अनुभव एक समसामयिक समाज का अनुभव है।[५७] विगत एवं वर्तमान समाज की अनुभूतियों के तनाव में कलाकार या वैज्ञानिक जीता है, इसके संघात में वैज्ञानिक चेतना या कला उभरती है। इस प्रकार विगतानुभूति एवं समसामयिक समाज की अनुभूतियों को कला अपने में बड़ी बारीकी से समेटती है। ऐसी ही कलात्मक साधना नवस्वच्छन्दतावादी साहित्यकारों की है। वस्तुतः उसकी कला में भूत, वर्तमान एवं भविष्य की झाँकियाँ भी मिलती हैं।

यथार्थवादी अंकन के फलस्वरूप मनुष्य की रोजमर्रा की जिन्दगी की आदतें, इच्छाएँ, भय, सुख, कामना, आशा, निराशा, नैतिक मान, आदर्श आदि भी होते हैं, जो अतीत की परम्परा एवं वर्तमान के अनुभव के बीच सामाजिक परिवेश की निधि बनते हैं। यद्यपि इन सबों का मिलन भी बदलाव की प्रक्रिया में है इसलिए निर्विकल्प, पूर्ण, शाश्वत तथा स्थायी सौन्दर्य की उपलब्धि कठिन है। वस्तुतः सौन्दर्य गतिशील होता है। प्रत्येक युग में मनुष्य नयी सौन्दर्य-सृष्टि का विकास करता है, पुरानी सुन्दर वस्तुओं से ऊबकर या वस्तु के किसी पक्ष या विशेषता को अपनी परिवर्तित दृष्टि के कारण रेखांकित कर देता है। यह भी एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि मनुष्य की इच्छाएँ उसके अनुभव के परिणाम हैं, अनुभवों का सम्बन्ध वर्तमान समाज से है, समाज में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

सम्पूर्ण समूह एक विशेष परिवेश में भाग लेता है और इच्छाओं के विशेष समूह से संचालित होता है। व्यक्ति की मनःस्थिति के कारण तथा विभिन्न व्यक्तियों के जीवित रहने की विभिन्न सामाजिक-ऐतिहासिक दशाओं के कारण इच्छाओं के विशेष चयन या विशेष इच्छा के प्रति विशेष ढंग में प्रतिबोध हो सकता है। यही कारण है कि कलात्मक सौन्दर्य भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न करता है। "सौन्दर्य में इच्छा और अनुभव के अन्तःसम्बन्धों का मिलन तो होता ही है, लेकिन संचित अनुभव समाज में ही प्राप्त होते हैं, जो प्रत्येक मानव में कमोबेश तीव्र-मन्द, प्रिय-अप्रिय आदि के रूप में घटते-बढ़ते हैं। इस प्रकार सौन्दर्य के अचल मानदण्ड नहीं हो सकते।"[४८] सौन्दर्य भूगोल एवं इतिहास (काल) से भी समझा जाता है। सांस्कृतिक बदलाव में भी इसका रूप स्थिर नहीं है। "सौन्दर्य एक गुण है जिसका सामाजिक चरित्र होता है, सौन्दर्य वस्तुगत तथ्य के रूप में समाज में अस्तित्वमान रहता है, सौन्दर्य मनुष्य के सामाजिक जीवन एवं ऐतिहासिक दशा की उपज है और मानवीय समाज के बिना सौन्दर्य की कल्पना भी नहीं की जा सकती। अन्ततः सौन्दर्य के सामाजिक चरित्र का उद्घाटन इन्सान करता है, आत्मगत होकर अर्थात् इन्सान मात्र ध्यानयोग में वस्तु को कामना से सम्बद्ध या असम्पृक्त करता हुआ उसका सुखद अनुभव करता है।"[४९]

सौन्दर्य-बोध की वेदना प्रखर बनाने के लिए यथार्थवादी शैली को अपनाया गया, साहित्य में इसका उपयोग प्रभाव को तीव्र बनाने के लिए किया गया। प्रखर वेदना की अभिव्यंजना के लिए देवलोकों की कल्पना नहीं करनी है, बल्कि आज के युग में यथार्थ ही सुन्दर है। यथार्थ ही आदर्श का निश्चय और निर्माण करता है। साहित्य मानवता की यथार्थ अभिव्यंजना है। वस्तुतः मानववाद साहित्यिक सौन्दर्य का निकष है। काव्य मानववादी दृष्टि से रहित सुन्दर नहीं हो सकता। इस नूतन आदर्श को आत्मसात् करने से साहित्य में कई नवीनता आई हैं—(१) भाषा और प्रयोग की सरलता की ओर झुकाव, (२) स्थूल इन्द्रिय-ग्राह्य तथा भोग योग्य कल्पना का उपयोग, (३) संक्षिप्त स्पष्ट सरल आश्चर्यजनक नूतनता की खोज, (४) साहित्यकार में संवेग की महत्ता, (५) नैतिक तथा धार्मिक भावनाओं का आर्थिक, सामाजिक तथा मानसिक समस्याओं से प्रतिद्वन्द्व और इनकी विजय।

साहित्य में बौद्धिकता का प्राधान्य हुआ, लेकिन भावना का अभाव नहीं हुआ, प्रत्युत उसका प्रभाव अपेक्षाकृत व्यापक हो गया। तर्क और भावना का संघर्ष आधुनिक काव्य व साहित्य की मूल चेतना है। साहित्य और जीवन का सम्बन्ध घना है। जीवन में एक ओर व्यक्ति है, दूसरी ओर समाज-जीवन की सामूहिक चेतना से आधुनिक साहित्य व काव्य प्रभावित है। यही कारण है कि आज का साहित्यकार सामूहिक अचेतन को अपनी अभिव्यंजना का आधार बनाता है। इस तरह आज साहित्य-जगत् में सौन्दर्यांकन

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

की दो दिशाएँ स्पष्ट हो चली हैं—(१) उपयोगितावाद—इसके अन्तर्गत कोई रूप योजना प्रयोग अथवा अलंकार एक सीमा तक सुन्दर लगता है जिस सीमा तक वह उपयोगी है। वस्तु की उपयोगिता ही आज के सौन्दर्य की मूल चेतना है। (२) दूसरी दिशा उपयोगितावाद की विपरीत दिशा में एक नवरहस्यवादी चेतना का उन्मेष भी है, जो सामयिक परिवेश में रहस्यवादी चिन्तन को प्रस्तुत करती है। आज हम किसी ऐसे सौन्दर्य-बोध को स्वीकार नहीं करते जिसका प्रभाव नितान्त वैयक्तिक अथवा असामाजिक हो। कलात्मक सौन्दर्य-चेतना सांस्कृतिक मूल्यों की तरह जीवन की देश-काल की बदलती हुई परिस्थितियों के संतुलन के व्यापक प्रतिमान के रूप में विकसित होती है। वस्तुतः कवि अन्तः और बाह्य, व्यक्ति और समाज के समुचित सामंजस्य के साथ जीवन को ऐसी सम्पूर्णता के साथ आत्मसात् करता है कि वह अपनी देशकालगत सीमाओं के बावजूद भी सर्वदेशीय एवं सर्वकालीन बन जाता है। "किसी वस्तु या दृश्य या भाव से मनुष्य जब एकाकार हो जाता है तब सौन्दर्य-बोध होता है। सब्जेक्ट और आब्जेक्ट—वस्तु और उसका दर्शन इन दो पृथक् तत्त्वों का भेद मिटकर जब सब्जेक्ट और आब्जेक्ट से तादात्म्य कर लेता है तब सौन्दर्य-भावना उद्बुद्ध होती है।"[६०] सौन्दर्य प्राकृतिक तत्त्वों में स्थित न होकर मनुष्य के अन्तःजगत् में अर्थात् मनुष्य की अन्तर्वृत्ति को प्रकृति के साथ जोड़ दिया जाता है तब वह सुन्दर हो जाता है। इस प्रकार प्राकृतिक सौन्दर्य भी आत्मगत एवं वस्तुगत का समन्वित रूप है। "सौन्दर्य एक वस्तु का बिम्ब है जो सौन्दर्यानुभूति का निश्चय करता है और बदले में, सौन्दर्य वस्तु के बिम्ब के निर्माण में प्रभाव भी डालता है। इसलिए सौन्दर्यानुभूति सौन्दर्य को भी प्रभावित करती है। यह एक अन्योन्याश्रित रिश्ता है।"[६१] इस प्रकार सौन्दर्यानुभूति सीधे ढंग से सौन्दर्य-तत्त्व के ऐतिहासिक विकास को भी प्रभावित करती है। आज कलात्मक सौन्दर्य के सृजन द्वारा लोक-जीवन या यथार्थता में ही सौन्दर्य का संवर्द्धन संभव है।

मध्ययुगीन सौन्दर्य-बोध में आध्यात्मिक सौन्दर्य-चेतना की अभिव्यक्ति हुई है, जिसमें मानव-शरीर एवं सौन्दर्य की रेखाएँ छिपाई गयी हैं, मानव-सौन्दर्य को अस्वीकारा गया है तथा जो मानवीय अस्तित्व से बाहर है, उसका अंकन है। स्वच्छन्दतावादी कवि पुनर्जागरण के समय सौन्दर्य की धार्मिक चेतना से विद्रोह करता है। साथ ही मानवीय चेतना को सौन्दर्य-निरूपण का आधार मानता है। मानवीय अनुभूतियाँ इनके लिए सर्वोपरि हैं। स्वच्छन्दतावादी सौन्दर्य-चेतना पुनर्जागरण-काल की सौन्दर्य-चेतना से भिन्न है। इसके लिए सबसे महत्त्वपूर्ण बात थी सौन्दर्य के आध्यात्मिक एवं आदर्श पहलू। नवस्वच्छन्दतावादी साहित्यकारों की सौन्दर्य-चेतना आध्यात्मिक नहीं है, बल्कि इसी संसार की मानवीय सौन्दर्य-चेतना की प्रस्तुति है। नवस्वच्छन्दतावादी साहित्यकार यथार्थवादी चेतना का विश्वासी होने के कारण मानव-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

अनुभूतियों एवं इसी लौकिक दुनिया की झाँकियाँ प्रस्तुत करता है। मानव-कल्याण सहानुभूति में सौन्दर्य-चेतना को अवलोकित करता है। सौन्दर्य यहाँ एक मूल्य है और जीवन की गति के साथ गतिशील भी।

नवस्वच्छन्दतावादी कवियों की सौन्दर्य-चेतना का सार आध्यात्मिक सौन्दर्य-निरूपण नहीं है, बल्कि मानवीय एवं इसी संसार की सौन्दर्य-चेतना का अंकन है। इस तरह यथार्थवादी साहित्य में सौन्दर्य का क्षेत्र विस्तृत है। मार्क्स, लेनिन की विचारधारा में आस्था रखनेवाला कवि व साहित्यकार सौन्दर्य को एक मूल्य के रूप में वैज्ञानिक विश्लेषण करता है। मार्क्सवादी, लेनिनवादी, सौन्दर्य-शास्त्री सौन्दर्य को एक मूल्य के रूप में आँकते है जो सामाजिक-ऐतिहासिक अनुभूतियों की उपज होती है।[६२] विशुद्ध सौन्दर्य की विचारधारा को मार्क्सवादी साहित्यकार अस्वीकृत कर देता है।

नवस्वच्छन्दतावादी साहित्यकार साहित्यिक जगत् में समाजवादी क्रांति का एक अच्छा खेल खेलता है, जो मानव-कल्याण के रूप में सैद्धान्तिक ज्ञान में वृद्धि करता है। वैचारिक संक्रान्ति की स्थिति में मानव-चेतना जब स्वतन्त्रता और सौन्दर्य की ओर मुड़ती है तो सर्वहारा क्रांति के फलस्वरूप लोक-कल्पना एवं लोक-जीवन की छवियों को भी सौन्दर्यानुभूति का क्षेत्र स्वीकार करती है। इस बिन्दु पर कवि व साहित्यकार सौन्दर्यांकन करते समय समस्त सामाजिक जीवन तथा मानव के समस्त दैनिक कार्य-कलापों को भी ले लेता है। यहाँ सौन्दर्यांकन का क्षेत्र विशद होता है। नवस्वच्छन्दतावादी कवि व साहित्यकार अपनी कलात्मक साधना में सापेक्ष सौन्दर्य को चित्रित करता है तथा निरपेक्ष सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के क्रम में सौन्दर्य को सांसारिक एवं मानवीय धरातल पर उतारकर एक नवीन एवं नये परिवेश में रख देता है। इस प्रकार नवस्वच्छन्दतावादी कवियों की सौन्दर्य-चेतना में शारीरिक एवं आकुल प्रणय-निवेदन की स्थिति होती है। सौन्दर्य-चेतना दैहिक धरातल पर विकसित होती है। कवि अपनी कल्पना से जिन बिम्बों-प्रतीकों का विधान सौन्दर्यांकन में करता है, वे सभी ऐन्द्रिय, लौकिक एवं अर्थव्यंजक होते हैं। वस्तुतः सौन्दर्य-बोध एवं सौन्दर्य-निरूपण दोनों ही स्थितियों में सौन्दर्य मनुष्य के वैयक्तिक एवं सामाजिक अनुभूतियों से सम्पृक्त रहता है।

"सौन्दर्य एक जीवन-मूल्य है। उसका उद्गम मनुष्य के भीतर मनोवेगों के उदात्तीकरण से है।"

प्रकृति-प्रेम / देश-प्रेम

स्वच्छन्दतावादी कल्पना प्रकृति-प्रेम के अभाव में संभव नहीं है। यूरोप में फ्रांस की राज्य-क्रांति तथा औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप नगर का जीवन नारकीय हो गया था।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

फलस्वरूप स्वच्छन्दतावादी कवियों की रुझान प्रकृति-प्रेम पर केन्द्रित होती है। इस तरह स्वच्छन्दतावादी साहित्यकारों की दृष्टि बार-बार प्रकृति के विशाल प्रांगण में परिभ्रमण करने लगती है। अठारहवीं शताब्दी में अंग्रेजी कवि नागरिक प्रकृति का वर्णन करता था, उसकी प्रकृति सुव्यवस्थित थी। लेकिन उन्नीसवीं शताब्दी के कवि ने प्रकृति के मुक्त प्रांगण में स्वच्छन्द भ्रमण किया। प्रकृति के प्रति उसका प्रेम अटूट था। वह उसके मन में छायी रहती थी। प्रकृति यहाँ पर आगस्टन या द्विवेदी-युग के समान इतिवृत्तात्मक वर्णन को साथ लेकर सामने नहीं आती। प्रकृति यहाँ पर सचेतन है, उसे सुख-दुःख की अनुभूति होती है। "छायावाद ने मनुष्य के हृदय में और प्रकृति के उस सम्बन्ध में प्राण डाल दिये जो प्राचीन काल से बिम्ब-प्रतिबिम्ब के रूप में चला आ रहा था, और जिसके कारण मनुष्य को प्रकृति अपने दुःख में उदास तथा सुख में पुलकित जान पड़ती थी।"[६३] वस्तुतः कवि की प्रतिभा उसी समय जागरूक तथा सक्रिय होती है जब उसका आभ्यन्तरिक आनन्द प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित करता है। इसे ही कालरिज तथा वड्‌सवर्थ दोनों ने मानव और प्रकृति का वैवाहिक सम्बन्ध कहा है। इसी से प्रकृति के अचेतन पदार्थ चैतन्य एवं गतिशील होते हैं; इसी भावाग्नि में पिघलकर वे एक-दूसरे से मिल जाते हैं और सारी सृष्टि बाह्य विभिन्नता में एकता का आभास दिलाती है।

मानवीकरण स्वच्छन्दतावादी कविता की एक प्रवृत्ति है। अचेतन जड़ पदार्थों को मानवीय भावनाओं और क्रिया-व्यापारो से संयुक्त देखने और अनुभव करने की प्रवृत्ति को मानवीकरण की प्रक्रिया कहते हैं। मानवेतर पदार्थों में मानवीय भावनाओं के आरोप करने की कला को मानवीकरण कहा जाता है। कला मानवीकरण के द्वारा प्रकृति को मानव-रूप में सचेतन बनाती है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी प्रकृति सचेतन बन गयी। वह मनुष्य की तरह ही गतिशील दिखाई पड़ने लगी। प्रकृति को मानव की तरह चेतन रूप में स्वच्छन्दतावादी कला में ही स्वीकृति मिली। इसके पूर्व इसका रूप जड़ ही था। डॉ० नगेन्द्र का कथन है : "प्रकृति पर चेतना का आरोप छायावाद की एक प्रमुख विशेषता हो सकती है। छायावाद में प्रकृति-चित्रों को प्रचुरता है। कुछ विद्वानों की तो यह धारणा है कि छायावाद का प्राण-तत्त्व प्रकृति का मानवीकरण अर्थात् प्रकृति में मानव-व्यक्तित्व का आरोप है।"[६४]

स्वच्छन्दतावादी कवियों में प्रकृति के प्रति एक अजीब आकर्षण रहा है। वस्तुतः प्रकृति का क्षेत्र ही इन कवियों की कविता का क्षेत्र है। डॉ० रामकुमार वर्मा ने छायावाद को 'प्रकृतिवाद' कहना अधिक युक्तिसंगत माना है।[६५] स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रतीकात्मक रूप में भी प्रकृति-वर्णन और उसकी सौन्दर्य-सुषमा का अंकन किया है। क्योंकि अपने भावों को अभिव्यक्ति के लिए जिस प्रकार रहस्यवादी कवि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

प्रतीकों का सहारा लेता है, उसी प्रकार स्वच्छन्दतावादी कवियों ने भी नवीन प्रतीकों को प्रकृति के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। स्वच्छन्दतावादी कवि मानवीय भावों, आशा-निराशा, हर्ष-विषाद, पीड़ा-वेदना, सुख-दुःख, इच्छा-आकांक्षाओं की अनुभूति प्रकृति के विशाल फैले हुए जीवन से करता है और अपनी कल्पना से मुक्त और स्वच्छन्द अनुभव का क्षेत्र प्रकृति में ढूंढ़ता है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी कलाओं में प्रकृति कवि-जीवन में घुल-मिल गयी है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रकृति और उसके जीवन से समान संवेद्य, अनुभूति तथा साक्षात्कार भी किया है।

एम० एच० अब्राम्स ने आधुनिक स्वच्छन्दतावाद के तीन रूपों में (ईश्वर, प्रकृति और मानव) के स्थान पर दो रूपों (मानव और प्रकृति) में चित्रित देखा है। ये आधुनिक स्वच्छन्दतावाद के लिए दो तत्त्वों की समन्वित साधना को आवश्यक मानते हैं। ये दो तत्त्व हैं : विषय एवं विषयी, अहं एवं शून्य, मानव-मस्तिष्क एवं चेतना जिसे प्रकृति के साथ जोड़ देते हैं। इस प्रकार नवस्वच्छन्दतावाद में मानव और प्रकृति एक महत्त्वपूर्ण उपादान हुए। आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवियों ने सामान्यतया अति-प्राकृतिक तत्त्वों को प्राकृतिक बनाया और दैवी तत्त्वों को मानवीय।[६६] नवस्वच्छन्दता-वादी कलात्मक सृजन में प्रकृति और मानव की छवियाँ प्रचुर मात्रा में देखने को मिलती हैं।

स्वच्छन्दतावादी कवि प्रकृति-प्रेमी होता है। अपने देश, अपनी धरती से सहज प्रेम होने के कारण इनकी कविताओं में देश-प्रेम, राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यंजना सहज ही अभिव्यंजित होती रहती है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी कवि अतीत प्रेमी होता है। वर्तमान की स्थिति से निराश होकर वह स्वर्णमय अतीत, विशेषकर मध्ययुग में रमने लगता है। मध्ययुगीन राष्ट्रीय चेतना की याद उसे विभोर कर देती है। वह अतीत की राष्ट्रीय सांस्कृतिक महिमा की स्मृति में लीन रहता है। हमारे देश की प्राकृतिक सुषमा है, वह अद्वितीय है। ऐसी सुषमा संसार के बहुत कम देशों को प्राप्त है। हिमालय की गिरिमाला को गोद से निकलनेवाले पवित्र और गुणकारी जल से परिपूर्ण नदियाँ, उनके समीप की सभी उर्वरा भूमि (द्वाब), अनेक प्रकार के फूलों से सुसज्जित वृक्ष और लताएँ एवं विविध ऋतुओं की नृत्यमयी शोभा हमारे देश की विशेषता है। यही कारण है कि अपने देश-प्रेम के कारण स्वच्छन्दतावादी तथा नवस्वच्छन्दतावादी कवि प्रकृति की ओर आकर्षित हैं। प्रकृति-प्रेमी होने के नाते देश-प्रेमी भी है। स्वच्छन्दतावादी तथा नवस्वच्छन्दतावादी कवि देश-भक्ति या देश-प्रेम की भावना को चित्रित करनेवाले अपने देश की धरती तथा जनता के प्रति आस्था एवं प्रेम को चित्रित करते हैं :

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

देश हमारा, धरती अपनी, हम धरती के लाल।
नया संसार बसायेंगे, नया इंसान बनाएँगे।[६७]

देश-प्रम के प्रति नागार्जुन की उक्ति देखिए :

खेत हमारे, भूमि हमारी, सारा देश हमारा है।
इसलिए तो हमको इसका चप्पा-चप्पा प्यारा है।[६८]

इसी देश-प्रेम की ज्वाला में राष्ट्रीय ज्योति जलानेवाले अपने देश और स्वतंत्रता के प्रेमी कवि पंडित केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' ने राष्ट्रीय भावना को स्वर दिया है। कवि की उक्ति लीजिए :

देश हमारा, हमें देश के
कण-कण से अनुराग है
हमें गर्व है, जन-जन में अब
लगी सुलगने आग है।
चाह रहे हैं हम स्वतंत्रता
यही हमारा मंत्र है
सेवा का संकल्प, साधना
स्नेह हमारा तंत्र है।[६९]

नवस्वच्छन्दतावादी कवियों में लोकतांत्रिक चेतना की अभिव्यंजना गहरी मिलती है। देश स्वतंत्र हो गया है। लेकिन अभी भी हम जीवन के हर मोड़ पर पराधीन हैं। आज भी हमारा शोषण हो रहा है। स्वतंत्रता की प्राप्ति के बावजूद भी हमारी आशाएँ पूरी न हो सकीं। फलस्वरूप आज का कवि निराशा के कगार पर एकान्त में बैठा हुआ उदास है। अपनी निराशामयी वाणी में समसामयिक समस्याओं को आन्तरिक दृष्टि से प्रस्तुति दे रहा है। यही युग-सापेक्षता कवि की वैयक्तिक निराशा का कारण है। देश में अलगाववाद, धर्मवाद, जातिवाद, प्रान्तीयतावाद एवं तरह-तरह की विघटनवादी प्रवृत्तियाँ उभर रही हैं। आज का कवि इन समस्याओं से जूझ रहा है। उसका स्वरूप जुझारू हो गया है। फिर भी समस्या का निदान नहीं मिल पा रहा है। इस प्रसूत समस्या का निराकरण नवस्वच्छन्दतावादी कवि व्यक्तिगत एवं समाजगत रूपों में ढूंढ़ता है। लेकिन हाथ कुछ भी नहीं आ पा रहा है। ऐसी विषम स्थिति में आज का कवि भँवर-जाल में फँस गया है। यही इसकी नियति है।

रहस्य-विस्मय / जिज्ञासा

स्वच्छन्दतावाद में रहस्य-विस्मय एवं जिज्ञासा एक सामान्य तत्त्व है, जिसकी चर्चा अधिकतर विद्वानों ने की है। इस रहस्य-विस्मय एवं जिज्ञासा भाव में कवि अतीत या

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

भविष्य के आदर्शों को स्वच्छन्दतावादी प्रस्तुत करते हैं, देवी-देवताओं की शक्ति की तरह, कला की प्रारम्भिक एवं आदिम सहज प्रकृति या संश्लेषण जो यथार्थ को चित्रित करने का यथासंभव प्रयास करती है, वही सदैव 'रहस्य' की स्थिति होती है। जहाँ कहीं भी स्वच्छन्दतावादी स्थिति बनती है, वहीं पर रहस्य/जिज्ञासाभाव की भी, और जहाँ कहीं भी रहस्य-विस्मय/जिज्ञासाभाव की स्थिति है, वहाँ प्रतीक मिलेगा। केवल प्रतीक ही रहस्य-विस्मय/जिज्ञासाभाव को अभिव्यंजित कर सकता है। जीवन-जगत् एवं अलौकिक सत्ता के संदर्भ में रहस्य-विस्मय/जिज्ञासाभाव की विवृति साहित्य या कलात्मक अभिव्यंजना में स्वच्छन्दतावादी हुआ करती है और आज की यथार्थवादी अभिव्यंजना में रहस्यात्मक भावना प्रतीकात्मक अभिव्यंजना का रूप ग्रहण करती है। इसलिए नवस्वच्छन्दतावादी कवि अपनी विस्मय एवं रहस्यानुभूति को प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करता है। और इसीलिए प्रत्येक युग में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति उभरती रहती है।

सांसारिकता से विमुख होकर जब किसी अज्ञात, रहस्यमय, अलौकिक शक्ति के प्रति उत्सुकता, विस्मय, जिज्ञासा, लालसा एवं मिलनानुभव व्यक्त किये जाने लगता है तब उस अनुभव की अवस्था को रहस्यानुभूति की अवस्था कहते हैं। यदा-कदा भावुक सहृदय कवि दृश्यमान जगत् में व्यक्त-सौन्दर्य में किसी अदृश्य सत्ता के दर्शन करने लगता है और इस प्रकार लौकिक सौन्दर्य के माध्यम से अलौकिकता तक पहुँचता है। वह उसी सर्वव्यापिनी, अज्ञेय और अव्यक्त सत्ता में पूर्ण विश्वास करता है, उसीके प्रति पूर्ण आत्मसमर्पण करता है, उसीके सान्निध्य के लिए व्याकुल रहता है और उसीके विरह में तड़पता हुआ मार्मिक विरह की अभिव्यक्ति करता है। रहस्यानुभूति वास्तव में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति की अत्यन्त वैयक्तिक परिणति है, जिसमें वैयक्तिक सत्ता देश और काल से परे, अनन्त और नित्य सत्ता के साथ तादात्म्य ग्रहण करता है।

स्वच्छन्दतावादी साहित्यकार व कलाकार अन्तर्मुखी होने के कारण आन्तरिक शक्तियों के अनन्त विस्तार की क्षमता रखता है, परन्तु जब वह अचानक ही किसी अलौकिक, औदात्य, अनन्त सुन्दर सत्ता का अवलोकन करता है, उसकी बुद्धि भ्रमित-सी हो जाती है। वह उनके अलौकिक सौन्दर्य, अपरिमित विस्तार और अनन्त वेग से विस्मय-विमुग्ध हो, उनके रहस्य-लोक में खो जाता है। उनकी कल्पना आनन्द-सागर में तल्लीन हो जाती है। "गरिमा आदर और विस्मय को जन्म देती है, और उदात्त का प्रभाव अत्यन्त प्रबल और दुर्निवार होता है।"[७०] रहस्यानुभूति वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति की ही अत्यन्त वैयक्तिक स्वाभाविक परिणति है, जिनमें

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

वैयक्तिक सत्ता देश और काल से परे, अनन्त और शाश्वत सत्ता के साथ तादात्म्य ग्रहण करती है। रहस्यानुभूति की स्थिति यथार्थपरकता एवं वैज्ञानिक उपलब्धियों के फलस्वरूप एक नवीन रूप लेती हैं। स्वच्छन्दतावादी रहस्यवादी अनुभूति बाद की नवस्वच्छन्दतावादी कविताओं में नवरहस्यवाद के रूप में परिवर्तित दिखाई पड़ती है। रहस्य, अध्यात्म की जगह नवस्वच्छन्दतावादी कवि नैतिकता, जीवन की यथार्थता को चित्रित करता है।

"जिज्ञासा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह वस्तु की तह में जाना चाहती है, अपने इच्छित विश्वासों को, अपनी इच्छित आशाओं को, उस पर लादना नहीं चाहती। वह किसी दुर्भावना से पीड़ित नहीं है, किसी आग्रह और दुराग्रह से ग्रस्त नहीं है। अनुमान और अन्दाज भटककर रास्ता पा जाने के लिए तैयार है, किन्तु वे खोज के आधार नहीं हैं। यथार्थवाद में—किसी भी यथार्थवाद में—जिज्ञासा बहुत रोल अदा करती है। जिज्ञासा निरीक्षण की ओर प्रवृत्त करती है, निरीक्षण के लिए हमें अपने आग्रहों और दुराग्रहों को छोड़ना पड़ता है। चरित्र-दर्शन तो हमें ठीक-ठीक नहीं हो सकता, जब तक हममें चरित्र-सम्बन्धी मूलभूत जिज्ञासा न हो। जिज्ञासा केवल एक स्थिति, एक परिस्थिति, एक व्यक्ति, एक चरित्र, की सीमा-रेखा में नहीं बँधी रहती। जब वह एक श्रेणी की अनेक स्थिति-परिस्थितियों, व्यक्तियों और चरित्रों का अध्ययन कर लेती है, तब वह उस श्रेणी के सम्बन्ध में न केवल अन्तर्दृष्टि प्राप्त कर लेती है, वरन् अनेक सत्य-सामान्यीकरणों को जन्म देती है। वह एक चरित्र या स्थिति के विश्लेषण के टुकड़ों को फिर से जोड़कर समन्वय और सामान्यीकरण करती है। किन्तु, वह इतना करके ही चुप नहीं रहती, चरित्र के विकास के मूल कारणों की खोज करती है, प्रश्नों के कारणों और अनुसंधान और उसका चित्रण करती है। और इस दृष्टि से, वह चित्रण और स्थिति दोनों के प्रति अधिक न्याय करती है। आज जब साहित्य मनुष्य के आध्यात्मिक उत्थान और सामाजिक परिवर्तन के एक अस्त्र के रूप में स्वीकृत हो चुका है, तब इन कारणों का, इन प्रश्नों का, मानव-चरित्रात्मक, जीवन-चित्रात्मक, निरूपण और अंकन महत्त्वपूर्ण नहीं है ?[७१] इस तरह हम कह सकते हैं कि रहस्य-विस्मय/जिज्ञासा भाव के माध्यम से भी यथार्थवादी जीवन की अभिव्यंजना नवस्वच्छन्दतावादी कवि करता है।

आशा / निराशा

आजीवन प्रेम, स्वतंत्रता, आशा/निराशा तथा आनन्द ये वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी शब्द हैं। वस्तुतः हर्ष व्यावहारिक धरातल पर आनन्द का ही एक रूप है। वस्तुतः हर्ष मानवीय व्यापार का जीवन्त रूप है। हर्ष ही जीवन है। जीवन

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

प्रेम और स्वतन्त्रता के विजय की भावनाओं को सँभालने के लिए आशा की आवश्यकता है। जीवन का मानदंड आनन्द है, हर्ष है, उल्लास है जिसका तात्पर्य यह नहीं है कि आनन्द मनुष्य की स्तरीय स्थिति है, बल्कि आनन्द या हर्ष या उल्लास या उमंग वह स्थिति है जिसके निमित्त जन्म हुआ है। यह इस बात का सूचक है कि मनुष्य अपनी शक्तियों के स्वतंत्र प्रयोग में पूरी तरह सजग है। यह जीवन और प्रेम के पारस्परिक मिलन की स्थिति है। वस्तुतः यह उत्कृष्ट कला का आदि और अंत दोनों हं।

आशा, निराशा, प्रेम, स्वतन्त्रता, जीवन और हर्ष या आनन्द ये गुण मानवीय हैं, क्योंकि उसकी नियति इस संसार में मानव के साथ बाँध दी गई है। इनमें आशा का विस्तार अधिक है। आशा अपनी सीमारेखा में इन सबको बाँध लेती है। आशा का प्रमुख आधार यह है कि कला उस जीवन को पुनः बाह्य-जगत् के साथ जोड़ सकती है जो कलाकार की एकाकी अन्तरात्मा में अन्तर्मुक्त कर दिया गया है। आशा वस्तुतः उन मनुष्यों के जीवन में क्रांति लाती है जो कि आधुनिक रचना की दृष्टियों को समझने के योग्य बनाती है। वस्तुत. आशा, निराशा, हर्ष व आनन्द तथा स्वतंत्रता स्वच्छन्द कला की पहचान हैं। ये जब अपनी व्याख्या में जीवन-यथार्थ एवं युग-सापेक्षता की अभिव्यक्ति देती हैं तब अपने यथार्थपरक चित्रण के आधार पर नव-स्वच्छन्दतावादी चेतना के साथ मिल जाती हैं।

सन्दर्भ

१. गजानन माधव मुक्तिबोध : नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ० ८२।

२. वही, पृ० १३।

३. गजानन माधव मुक्तिबोध : नयी कविता का आत्मसंघर्ष, पृ० २९।

४. वही, पृ० ९, १०, ११, १२, १३, १४।

५. Sigmund Freud : The Ego and the Id, (1952), p. 83.

६. Dr. Satya Prakash Singh : Sri Aurbindo and Jung, p. 28.

७. Ruth L. Munroe : Schools of Psychoanalytic Thought, p. 563.

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

८. "The soul-image (Anima and Animus). The soul-image lies deeper in the unconscious. Its determinates are sexual, or rather contra-sexual in origin. Everyman bears within his psyche an anima which represents the feminine aspects of his being. Every woman has her animus, the male component." वही, पृ० ५६० ।

९. वही, पृ० ५६२ ।

१०. Dr. Satya Prakash Singh : Sri Aurbindo and Jung, p. 53.

११. गजानन माधव मुक्तिबोध : एक साहित्यिक की डायरी, पृ० १८ ।

१२. वही, पृ० १९ ।

१३. वही, पृ० २१ ।

१४. वही, पृ० २७ ।

१५. वही, पृ० २७ ।

१६. डॉ० धीरेन्द्र वर्मा (सं०) : हिन्दी साहित्य कोश, पृ० ८६८ ।

१७. मैन इज़ हिज वर्क्स, पृ० ६२५ ।

१८. डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय (सं०) : निबन्ध नवनीत, पृ० १६५ ।

१९. डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी : ग्रंथावली, भाग ९, पृ० २९३ ।

२०. वही, पृ० २०० ।

२१. वही, पृ० १९५ ।

२२. डॉ० रामधारी सिंह 'दिनकर' : संस्कृति के चार अध्याय, पृ० ६५३ ।

२३. डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी : ग्रंथावली, भाग ९, पृ० २०४ ।

२४. डॉ० रामधारी सिंह 'दिनकर' : संस्कृति के चार अध्याय, पृ० ६५१ ।

२५. Dr. Satya Prakash Singh ; Sri Aurbindo and Jung, p. 157.

२६. Raymond Williams : Marxism and Literature, p. 14.

२७. वही, पृ० १५ ।

२८. Primitive Culture, Part I, p. 1.

२९. Raymond Williams : Culture and Society, p. 52.

३०. लोक-संस्कृति विशेषांक, सम्मेलन पत्रिका, पृ० ६५ ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

३१. जनपद, अंक १, वर्ष १, पृ० ६५।
३२. सं० राहुल सांकृत्यायन : हिंदी-साहित्य का बृहत् इतिहास, पृ० ११।
३३. सं० धीरेन्द्र वर्मा : हिन्दी साहित्य कोश, भाग १, पृ० ७४७।
३४. डॉ० सत्येन्द्र : लोक-साहित्य विज्ञान, पृ० ३९२-९३।
३५. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० ५७५।
३६. वही, पृ० ५७४।
३७. वही, पृ० ५७४।
३८. डॉ० नामवर सिंह : इतिहास ओर आलोचना, पृ० १०८-१०९।
३९. John Bayley : Characters of Love, p. 265.
४०. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : चिन्तामणि (भाग १), पृ० ६९।
४१. सं० नामवर सिंह : चिन्तामणि (भाग ३), पृ० २३२।
४२. गजानन माधव मुक्तिबोध : नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ० ११५।
४३. M. H. Abrams : Natural Supernaturalism, p. 297.
४४. Cristopher Caudwell : Studies in Dying Culture, p. 140.
४५. उर्वशी, पृ० १५।
४६. गिल्बर्ट एण्ड कून : ए हिस्ट्री आफ एस्थैटिक्स, पृ० ४५–५५। संभावना, वर्ष १, अंक २, पृ० १० से उद्धृत।
४७. वही, पृ० १०।
४८. कामायनी, पृ० ११२।
४९. गीतिका (समीक्षा–नन्ददुलारे वाजपेयी), पृ० २३।
५०. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : रस-मीमांसा, पृ० २६।
५१. डॉ० रामविलास शर्मा : आस्था एवं सौन्दर्य, पृ० २०।
५२. Further Studies in Dying Culture, p. 77.
५३. वही, पृ० ८४।
५४. जयशंकर प्रसाद : काव्यकला तथा अन्य निबंध, पृ० ५।
५५. डॉ० रामविलास शर्मा : आस्था और सौन्दर्य, पृ० ३३।
५६. डॉ० नामवर सिंह : दूसरी परम्परा की खोज, पृ० ९६-९७।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

५७. Cristopher Caudwell : Studies in Dying Culture, p. 113.

५८. डॉ० रमेशकुन्तल मेघ : अथातो सौन्दर्य जिज्ञासा, पृ० ९।

५९. वही, पृ० ९।

६०. मुक्तिबोध : एक साहित्यिक की डायरी, पृ० ६।

६१. डॉ० रमेशकुन्तल मेघ : अथातो सौन्दर्य जिज्ञासा, पृ० ४६।

६२. मुक्तिबोध : नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ० १३५।

६३. महादेवी वर्मा : सांध्यगीत, पृ० ८।

६४. आधुनिक कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ, पृ० १७।

६५. अनुशीलन, पृ० १९९।

६६. Studies in Romanticism, Vol. 21, No. 4, winter, 1982, p. 614.

६७. शील : उदय पथ, पृ० ११।

६८. हंस, अप्रैल, १९४८, पृ० ५२५।

६९. राष्ट्र-पुरुष, पृ० १५।

७०. डॉ० नगेन्द्र : काव्य में उदात्त तत्त्व, पृ० १०१।

७१. गजानन माधव मुक्तिबोध : नयी कविता का आत्मसंघर्ष, पृ० २२, २३, २४।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

७

संरचना

सर्जन कवि-व्यक्तित्व की अभिव्यंजना है। भाव और शिल्प कवि-व्यक्तित्व के दो पहलू हैं। स्वच्छन्दतावादी साहित्य विषयप्रधान न होकर व्यक्तिप्रधान है। वैयक्तिक भावना का उफान अपनी अभिव्यक्ति के लिए किसी प्रकार के बाह्य अलंकरण की अपेक्षा नहीं रखता। जिस प्रकार स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति किसी देश-काल, व्यक्ति या साहित्य तक ही सीमित नहीं है, इसी प्रकार वैयक्तिक भावना की अभिव्यक्ति भी किसी विशिष्ट शैली का अनुसरण नहीं करती। स्वच्छन्दतावादी काव्य की भाषा-शैली भी व्यक्तिप्रधान होती है। उसमें किसी प्रकार के अलंकार, रीति, वृत्ति आदि नियमों का परंपरागत पालन नहीं किया जाता। कवि की भावना अनायास ही अनुकूल शब्दावली में ढल जाती है। इस तरह कवि की अनुभूति की तीव्रता ही उसकी शैली के स्वरूप को निर्धारित करती है। स्वच्छन्दतावादी कवि अन्तर्मुखी प्रवृत्ति का होने के कारण संवेदनशील, भावुक एवं कल्पनाशील होता है। इस प्रकार वह भावावेश के क्षणों में अपनी संवेदनशीलता से ही निर्जीव पदार्थों को भी सजीव और संवेदनशील बना देता है। इसी तरह भावुक कवि निराकार तथा इन्द्रियातीत भावनाओं को भी अपनी रागात्मकता के संस्पर्श से गोचर एवं सहज संवेद्य रूप प्रदान करता है। इस तरह की प्रवृत्ति को बिम्ब-विधान कहते हैं। भाव का वेग नैसर्गिक रूप से अपने अनुकूल पदावली में ढलकर गीतिमय स्वरों में व्यक्त होता है। यदा-कदा कवि की भावुकता सीधे-सरल शब्दों में न ढलकर सांकेतिक या लाक्षणिक शैली को अपनाती है जिसे प्रतीक-विधान कहते हैं। इस तरह मिथकीय चेतना, बिम्ब-विधान, प्रतीक-विधान, प्रगीतात्मकता के माध्यम से कवि अपनी आंतरिक वृत्तियों को प्रस्तुत करता है।

अंग्रेजी स्वच्छन्दतावादी आन्दोलन केवल काव्य के विषयों एवं उपादानों तक ही सीमित न था। वह उसके रूप व शैली में क्रांति चाहता था। स्वच्छन्दतावादी आंदोलन के कवियों ने उस समय की प्रचलित काव्य-परम्परा के प्रति विद्रोह किया और 'हीरोयिक कपलेट' की जगह अपनी काव्यानुभूति की अभिव्यक्ति के लिए नूतन छन्दों का प्रयोग किया। सम्बोधनगीत (Ode), चतुष्पदी (Sonnet) आदि गीतिकाव्यों का प्रचलन होने तथा मुक्त-छन्द के द्वारा कवि को कल्पना के उन्मुक्त विकास का अवसर मिलने लगा। इसके साथ ही स्वच्छन्दतावादी कवियों ने १८वीं सदी की काव्य-भाषा का परित्याग तथा शब्दों-प्रतीकों-बिम्बों का नूतन विधान प्रस्तुत किया। उनकी भाषा में व्यंजकता, प्रगीतात्मकता व चित्रात्मकता का विशेष रूप से समावेश हुआ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

हिन्दी का स्वच्छन्दतावादी भाषा-शिल्प भी एक नवीन रूप में हमारे सामने आया था। उसी तरह हिन्दी के नवस्वच्छन्दतावादी रचनाकार भाषा-शिल्प के रूप में एक नवीन दिशा की यात्रा करते हैं। बीसवीं सदी का काव्य बौद्धिक एवं यथार्थपरक होने से काव्य की अभिव्यंजना क्लिष्ट होती गयी। आज की कविता अन्तः/बाह्य, चेतन/अचेतन, वैयक्तिकता/सामाजिकता के संघात से एक संश्लिष्ट रूप में हमारे सामने आती है। इस संश्लेषण की स्थितियों को अभिव्यक्त करने के लिए कवि अपनी चेतना के विकास की स्थितियों के अनुसार, मिथकों, बिम्बों, प्रतीकों एवं प्रगीतों को युगसापेक्षता से सम्पृक्त कर, अपनी सर्जनात्मक कल्पना से एक नवीन रूप में उसकी पुनर्व्याख्या भी करता चलता है। कवि शिल्प-तंत्र में आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की चेतना को भी कलात्मक रूप देता है। इस प्रक्रिया में नवस्वच्छन्दतावादी कवि व साहित्यकार हर बिन्दु पर वैयक्तिकता, आंतरिकता, आत्मपरकता एवं स्वीय चेतना को चित्रित करता है। इस चित्रण-प्रक्रिया में वह युगीन विरोधाभास को समकालीन जीवन-बोध की डोरी में लपेटकर अपनी सर्जनात्मक कल्पना से नवीन रूप में ढाल देता है। इसमें उसकी वैयक्तिकता, उसकी सर्जनात्मक क्षमता हर बिन्दु पर स्वच्छन्द उड़ान लेती चलती है। ऐसा लगता है कि नवस्वच्छन्दतावादी रचनाकार अपनी आंतरिक एवं वैयक्तिक चेतना जो कथ्यों की थी, उसकी हूबहू रक्षा शिल्प के रूप में करता है। हम यह भी कह सकते हैं कि स्वच्छन्दतावादी चेतना की वैयक्तिकता/आंतरिकता यहाँ शिल्पों में दिखाई पड़ती है। शिल्पों में नवस्वच्छन्दतावादी रचनाकार वैयक्तिकता की रक्षा करता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि स्वच्छन्दतावादी वैयक्तिकता या आंतरिकता नवस्वच्छन्दतावादी काव्य में शिल्पों के रूप में दिखाई पड़ती है। शिल्प-तंत्र में हर रचनाकार अपनी आंतरिकता से एक-दूसरे से अलग नजर आता है। यह अलगाव काव्य में स्वच्छन्द एवं सक्रिय कल्पना से अपना रूप निर्मित करता है। संरचना में भाषा, बिम्ब, प्रतीक, मिथक तथा प्रगीत इत्यादि उपकरणों के द्वारा कवि अपनी आंतरिकता को काव्य में नया संदर्भ देता है।

वस्तुतः नवस्वच्छन्दतावादी कविता अनुभूति की ईमानदारी पर खड़ी है और ये कवि स्वयं अपने को एक नवीन परिवर्तित दृष्टि से देखते हैं। ये कवि इसीके उपयुक्त शिल्प रचते हैं। क्योंकि प्रत्येक कवि की मानसिक संरचना दूसरों से भिन्न होती है। सामाजिक परिवेश और युगीन चेतना कवि-अनुभूतियों को सजग और प्रेरित करते हैं, फलतः उसकी अनुभूतियों में वैविध्य स्वाभाविक है। ऐसी स्थिति में प्रत्येक कवि के शिल्पों में उसकी वैयक्तिकता अलग से बोलने लगती है। समकालीन जीवन-बोध को रूपायित करने में उनका शिल्प-तंत्र निजी शिल्प-तंत्र बन गया है, जो सामान्य न होकर वैयक्तिक है। ये कवि स्वाभाविक रूप से नये बिम्ब-विधान, नूतन प्रतीक एवं नयी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

मिथकीय चेतना के माध्यम से यथार्थबोध को चित्रित करते हैं। ये कवि शिल्पगत वैशिष्ट्य में वैयक्तिकता को लिए हुए हैं। बिम्ब-विधान, प्रतीक-योजना एवं भाषा-शिल्प के रूप में ये कवि अपनी चेतना को वैयक्तिक धरातल पर रखते हैं। इनकी भाषा तो वैयक्तिकता का प्रथम बिन्दु है। इसमें कवि की वैयक्तिक संवेदना एवं जन-जीवन की सांस्कृतिक चेतना का सम्पूर्ण प्रतिफलन होता है। बोलचाल की भाषा के नूतन प्रयोग, नवीन शब्द-संगठन एवं अर्थ-लय पर निर्मित स्वच्छन्द भाव-प्रवाह आदि के द्वारा ये कवि अपने-आपको ही अभिव्यंजित करने का प्रयास करते हैं। अपने परिवेश एवं भाषागत रुझान के माध्यम से तत्सम, तद्भव, विदेशी, देशज एवं नूतन शब्दों के प्रयोग इनकी आत्मपरकता ही है। भाषा-शिल्प में कवि का पूरा व्यक्तित्व झलकने लगता है। इस प्रकार भाषा नवस्वच्छन्दतावादी काव्य की आत्मपरकता का जीवन्त रूप है, जिसमें युग-सापेक्षता के अनेक अनछुए, टटके एवं ताजे शब्दों का चयन निहित है। ये शिल्प-तत्त्व कवि की अनुभूति एवं व्यक्तित्व से सिक्त होकर आए हैं। नवस्वच्छन्दतावादी कवियों की शिल्पगत विशेषताएँ कवि की आंतरिकता की नितांत आत्मीय प्रतिक्रियाओं को मूर्तिमान् करती है। इस प्रकार भाषा, बिम्ब, प्रतीक, मिथक एवं प्रगीत के रूप में नवस्वच्छन्दतावादी कवियों की शैलीगत प्रवृत्तियाँ अपना रूप निर्मित करती हैं।

भाषा

नवस्वच्छन्दतावादी कवि काव्य-भाषा के क्षेत्र में एक नयी दृष्टि का प्रतिफलन करते हैं। भाषा-विकास की दृष्टि से ये कवि प्रगल्भ, अलंकृत और भावोच्छ्वसित भाषा का प्रयोग नहीं करते, प्रत्युत बोलचाल की भाषा में ही अपनी अनुभूति को चित्रित करते हैं। काव्य-भाषा के सरलीकरण और उसे जनभाषा के समीप पहुँचाने की दिशा में इन कवियों का योगदान उल्लेखनीय है। बच्चन, अंचल, दिनकर एवं नरेन्द्र शर्मा की काव्य-सर्जना से नवस्वच्छन्दतावाद का प्रवर्त्तन होता है। हिन्दी स्वच्छन्दतावाद की आध्यात्मिक चेतना का सूत्र छिन्न-भिन्न हो होता है। कविता बोलचाल की भाषा बनती है। नवस्वच्छन्दतावादी कवियों की भाषा सरल तथा जनजीवन के निकट है। वह छायावादी काव्य के विरोध में गतिशील हुआ था, क्योंकि छायावाद का काव्य जनजीवन से दूर तथा अपने-आपमें क्लिष्ट था। दूसरी ओर नवस्वच्छन्दतावादी कविताएं सहजाभिव्यक्ति को प्रक्रिया में थीं। वस्तुतः शब्द-योजना की सरलता पर इन कवियों की दृष्टि थी। कविता की संरचना में इन्होंने भाव के अनुसार भाषा तथा भाषा के अनुसार शब्दों का चयन किया है। काव्यसर्जन में सहज भाषा और सहज अभिव्यक्ति को अपनाया गया है। भाषा सरल, जनजीवन के निकट तथा सहजता मे लिपटी हुई है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

नवस्वच्छन्दतावादी काव्य-भाषा प्रगीतात्मक होती है, इसमें कवि अपनी अनुभूतियों की प्रस्तुति करता है। मानवीय तृष्णा की हूबहू अभिव्यंजना इन कवियों की रुझान होती है। कविता अतिशय कल्पना-लोक से धीरे-धीरे जन-जीवन की धरती पर पाँव रखती है। नवस्वच्छन्दतावादी काव्य की भाषा-शैली व्यंग्यों के माध्यम से एक नया संदर्भ देती है। २०वीं सदी का साहित्य विचारों का साहित्य है। कवि की रचना-प्रक्रिया आज संश्लिष्ट हो गयी है। वैचारिक संश्लिष्टता को कवि बिम्बों, प्रतीकों और मिथकों के माध्यम से हमारे सामने प्रस्तुत करता है। भाषा-शैली के प्रत्येक बिन्दु को कवि परम्परा से किंचित् हटकर एक नवीन दिशा की ओर ले जाता है। 'तारसप्तक' की कविताओं में नवस्वच्छन्दतावादी पद-लालित्य, बिम्बात्मकता तथा रहस्योन्मुखता मुक्तिबोध की कविताओं में मिलती है।

नवस्वच्छन्दतावादी कविता परम्परागत काव्यभाषा से विद्रोह कर नवीनता को अपनाती हुई आगे बढ़ रही है। अनुभूति की अभिव्यंजना सदैव व्यक्तिगत होती है। डॉ० इन्द्रनाथ मदान ने भी भाषा की आत्मपरकता की ओर संकेत करते हुए कहा है कि शब्द का वैयक्तिक प्रयोग भी होता है और यह प्रेषण का माध्यम भी बनता है।[1] वैयक्तिक प्रयोग के ही कारण नया कवि शब्दों को बीजों की भाँति फैलाकर भाषा की नयी फसल उगाना चाहता है, जो समाज के नये यथार्थ को प्रकाशित कर सके।[2]

नवस्वच्छन्दतावादी काव्य-भाषा वैचारिक बोझ को लेकर चलती है। वैचारिक गहनता के कारण कवि अपने कथ्य को बिम्बों, प्रतीकों एवं मिथकों में गुम्फित कर संश्लिष्ट रूप में हमारे सामने प्रस्तुत करता है। वासरमैन स्वच्छन्दतावाद में व्यक्तिवाद पर बल देते हुए कहते हैं कि काव्य की रचना वैश्वपूर्णता की भी रचना है, जो कि कविता को अर्थ प्रदान करती है। प्रत्येक कवि को स्वतंत्र होकर अपनी दुनिया की निजी तस्वीर बनानी चाहिए तथा भाषा के अन्तर्गत अपनी निजी भाषा की। यह स्वच्छन्दतावाद के प्रतीक, मिथक के प्रति ललक को न्यायसंगत सिद्ध करती है, विशेष रूप से उस प्रतीक और मिथक को जो व्यक्तिगत और निजी है।[3]

नवस्वच्छन्दतावादी काव्यभाषा अलंकृत नहीं होती है। इसकी भाषा अक्सर सपाटबयानी की भाषा हो जाया करती है। मुक्तिबोध, धूमिल, भवानीप्रसाद मिश्र, रघुवीर सहाय, नागार्जुन, त्रिलोचन, केदारनाथ सिंह आदि की भाषा इसी तरह की है। ये कवि बड़े ही सहज-स्वाभाविक ढंग से परिवेश से जुड़ जाते हैं तथा उन समस्याओं को चित्रित करते हैं, समस्याओं से जूझते हैं। इसलिए भाषा की सादगी के कारण इनकी भाषा जनता की भाषा होती है।

नवस्वच्छन्दतावादी काव्य की अभिव्यंजना बिम्बों, प्रगीतों, प्रतीकों एवं मिथकों में होती हैं। कल्पना की उड़ान यहाँ प्रखरतर नहीं है। ये कवि समकालीन जीवन-बोध

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

को मिथकों प्रगीतों, बिम्बों एवं प्रतीकों में प्रस्तुत करते हैं। ये प्रवृत्तियाँ नवस्वच्छन्दतावादी कविताओं में प्रचुर मात्रा में मिलती हैं। फलतः कवि को आधुनिक जीवन-बोध के अंकन में इन उपकरणों से पर्याप्त बल मिलता है। भाषागत प्रयोग में इन कवियों ने अपने-अपने ढंग से कल्पनात्मक अनुभूति के स्थान पर यथार्थ अनुभूति पर बल दिया है। रंगीन अभिव्यंजना के स्थान पर व्यावहारिक भाषा तथा कथन-भंगिमाओं की सार्थकता की प्रस्तुति भी इन कवियों की काव्यसम्पदा है। सौन्दर्य-बोध का नया संदर्भ, कलात्मक भाषा के नये मुहावरे और छन्द के नवीन विधान भी इन कवियों ने प्रस्तुत किये हैं। नये काव्य-मूल्यों के अन्वेषण और परम्परागत काव्य-मूल्यों के संशोधन के अत्यन्त सचेष्ट प्रयत्न किये गये। वस्तुतः बदलाव के फलस्वरूप कथ्य एवं शिल्प दोनों क्षेत्रों में नवीनता अवलोकनीय है। नूतनता के फलस्वरूप अभिव्यंजना-शिल्प का विस्तार भी हुआ। आधुनिक काव्य की भाषा-विषयक 'स्वीय' चेतना भी स्वच्छन्दतावादी चेतना का एक रूप है। आन्तरिकता एवं अन्तर्मुखी वृत्ति के कारण कवि का अनुभव क्रमशः रचना-क्रिया का अनुभव हो जाता है। इन्द्रिय-गोचर विश्व और उसकी पुनर्सृष्टि का प्रयास तथा भाषा के माध्यम से अपने-आपको अभिव्यंजित करने की साधना के द्वन्द्व के टूटने का खतरा हमेशा बना रहता है। ऐसी स्थिति में वे कविताएँ रचना की कविता होने की जगह कविता विषय कविता हो जाती है और इस प्रकार अन्ततः भाषा-विषयक कविता बन जाती है। किन्तु प्रत्येक स्थिति में कविता की संरचना वर्तुलाकार ही रहती है। इस प्रकार भाषा और विश्व के अन्तराल के संघर्ष ही आधुनिक काव्य का मूलाधार है।

बिम्ब

बिम्ब-विधान आधुनिक साहित्यशास्त्र का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय है। हिन्दी आलोचना-जगत् में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने सर्वप्रथम इस शब्द का प्रयोग किया था। बिम्ब-विधान वस्तुतः सर्जनात्मक एवं सक्रिय कल्पना का व्यापार है। काव्य-बिम्ब कवि की सम्पूर्ण चेतना का सर्जनात्मक रूपायन है, कवि सर्जनात्मक कल्पना से बिम्ब की रचना करता है। बिम्ब-विधान चेतन एवं अचेतन का व्यापार है। वास्तव में बिम्ब-विधान की मूल चेतना अचेतन मस्तिष्क का विस्तार है। फ्रायड का कथन है कि प्रेम एवं यौन-सम्बन्धी अनुभूतियाँ किन्हीं कारणों से अचेतन मस्तिष्क में दब जाती हैं, समय पाकर वे ही स्वप्नों एवं बिम्बों के रूप में अभिव्यंजित होती हैं।

किन्तु, परवर्ती मनोवैज्ञानिक युंग का इस संदर्भ में कहना है कि स्वप्न एवं बिम्ब-निर्माण में मात्र यौन एवं प्रेम की अनुभूतियाँ ही नहीं होतीं, वरन् सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना भी विद्यमान रहती है, जो बिम्बों एवं स्वप्नों में उभरती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MH

फलस्वरूप सांस्कृतिक एवं सामाजिक चेतना से प्रसूत बिम्ब, प्रतीक एवं मिथक अपना रूप संकेतात्मक रूप में प्रस्तुत करता है। युंग अचेतन मस्तिष्क के सीमा-विस्तार को विश्लेषित करते हुए उसके दो भेद करते हैं—वैयक्तिक अचेतन तथा सामूहिक अचेतन। कवि बिम्ब-विधान में इन दोनों क्षेत्रों को अपने सर्जन में रूपायित करता है।

मानव के समस्त क्रिया-व्यापार की शुरुआत बिम्ब से होती है। जब बाह्य जगत हमारी इन्द्रियों पर प्रभाव डालता है, तो चेतना में वस्तुगत विषय का प्रतिबिम्बन होता है। बिम्ब मानव की संवेगात्मक अनुभूति को सघन करता है। कलात्मक बिम्ब की रचना विशिष्ट, विलक्षण एवं प्रारूपित होती है। इस बिम्ब की परिधि में कवि एवं सहृदय दोनों एक हो जाते हैं। इसमें आत्मनिष्ठ और वस्तुनिष्ठ सिद्धान्तों का एकायन होता है। बिम्ब-निर्माण की प्रक्रिया वस्तुतः मानवीय रूप ग्रहण करती है। इसमें कविप्रतिभा उसे अपना-अपना, अलग-अलग आकार देती है।

बिम्ब नवीन, मौलिक परंपरा से कटा हुआ, मानवीय गुणों, भावों, विचारों अथवा व्यक्तियों के मध्य साक्षात् क्रिया-प्रतिक्रिया के द्वारा यह कार्य करता है। ऐसे बिम्बों का आलंकारिक वैशिष्ट्य उस नूतन ढंग में निहित है, जिसके अन्तर्गत सम्बन्ध प्रायः स्थूल पदार्थों के रूप में अनुभव किया जाता है अथवा सूक्ष्म विचारों के ऊपर क्रिया या जीवन के आरोपण के द्वारा। मानव-जीवन और गति बिम्ब की आत्मा है। कविता में वर्णित घटनाएँ, स्थान, उनमें निहित क्रियाएँ प्रतिनिधि रूप में मानवीय होती हैं। इनमें उन बिन्दुओं को उभारा जाता है, जो मनुष्य की प्रकृति, स्वभाव और उसके जीवन के विस्तार के साथ सम्बन्ध रख रहे हैं।

काव्य का बिम्ब-विधान संश्लेषणात्मक और संकेतात्मक होता है। कविता कल्पना की उद्भावना है। बिम्ब कल्पना की विशेषताओं को पुष्ट करता है, इसलिए बौद्धिकता से जुड़ा होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि जड़ पदार्थ में चेतना का आरोप जिसमें कल्पना एवं अनुभूतियों के आधार पर किया जाए, उसे ही बिम्ब कहते हैं। प्रयोग एवं परीक्षणों के आधार पर बिम्ब ही कालान्तर में प्रतीक का रूप धारण कर लेता है। इस प्रकार काव्य-बिम्ब शिल्प का एक प्रमुख और महत्त्वपूर्ण उपादान है। काव्य में बिम्ब-विधान एक शैली-विशेष ही है, जिसका अपना एक सर्जनात्मक पक्ष है। बिम्ब भाषाभिव्यंजन एवं भाव-सम्प्रेषण का एक सशक्त माध्यम भी है।

बिम्ब के स्वरूप को पाश्चात्य तथा भारतीय विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से स्पष्ट किया है। पाश्चात्य आलोचक सी० डी० लेविस के अनुसार काव्य-बिम्ब वस्तुतः अपने में व्यापकता को लिए हुए है। काव्य-बिम्ब एक ऐसा ऐन्द्रिय शब्द-चित्र है, जो कुछ अंशों तक अलंकृत तथा लाक्षणिक होता है, जिसके सन्दर्भ में मानवीय संवेदनाएँ निहित रहती हैं तथा जो पाठक के मन में विशिष्ट रागात्मक भाव उद्दीप्त करता है।[४]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

इस परिभाषा में चार विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं—

(क) काव्य-बिम्ब एक शब्द-चित्र है।

(ख) यह शब्द-चित्र ऐन्द्रिय होता है।

(ग) कुछ अंशों तक अलंकृत तथा लाक्षणिक होता है।

(घ) बिम्ब में भावोद्बोधन की शक्ति होती है।

एज़रा पाउण्ड का मत है कि बिम्ब वह है, क्षणविशेष में भावात्मक और बौद्धिक संश्लिष्ट प्रस्तुत करता है।[५] पाउण्ड के दृष्टिकोण से बिम्ब अनुभूत संवेगों का बिम्बन है। बिम्बात्मक कविता चित्र तथा मूर्तिकला के गुण से युक्त होने के कारण उत्कृष्ट कोटि की कविता होती है। बिम्ब प्रतीक नहीं है। प्रतीक का गणित के अंकों की तरह एक निश्चित अर्थ होता है, बिम्ब का अर्थ बीजगणित के संकेतों की तरह परिवर्तनशील होता है। ऐन्द्रिय प्रत्यक्षता बिम्ब का विशेष गुण है। बिम्बवाद का उद्देश्य अलंकरण की तरह बिम्ब का प्रयोग करना नहीं है। बिम्ब स्वयं भाषा है, उसमें सम्प्रेषण की अनेक संभावनाएँ हैं। वह रूढ़ भाषा से ऊपर है।

कलरिज का कथन है कि बिम्बों के लिए वासना एवं संवेग का स्पर्श अपेक्षित है।[६] बिम्ब को न केवल सज्जा का उपकरण मात्र, बल्कि मन की (सहज वृत्ति) भाषा का सार भी कहा जाता है।[७] बिम्ब एक ऐसा शब्द है, जो इन्द्रियानुभूति का बोध कराता है।[८]

भारतीय समीक्षकों में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने सर्वप्रथम बिम्ब के स्वरूप का सांकेतिक निरूपण किया। उन्होंने बिम्ब को नितान्त दृश्य नहीं माना है। उनका कथन है—काव्य का काम कल्पना में बिम्ब की मूर्त्तभावना उपस्थित करना है।[९] तात्पर्य यह कि बिम्ब आँख का विषय नहीं है, बल्कि वह काल्पनिक चक्षुओं से ही निहारा जा सकता है। उसका रूप सूक्ष्म या स्थूल किसी भी प्रकार का हो सकता है।

काव्य-बिम्ब शब्दार्थ के माध्यम से कल्पना द्वारा निर्मित एक ऐसी मानस छवि है, जिसके मूल में मानव की प्रेरणा रहती है। सर्जनात्मक कल्पना काव्य-बिम्ब का करण-तत्त्व है और ऐन्द्रिय अनुभव इसके मूल उपकरण-तत्त्व हैं। सामान्यतः प्रत्येक ज्ञानेन्द्रिय का अनुभव एक प्रकार का बिम्ब उद्भूत करता है, फिर भी चक्षु का योगदान सर्वाधिक रहता है।[१०]

इस प्रकार बिम्ब कल्पना का विस्तार है, लेकिन अनुभूति से भी यह जुड़ा होता है। अनुभूति के स्वच्छन्द प्रवाह में जो भी दृश्य, भाव अथवा वस्तु सामने आती है उसे ऐन्द्रियग्राह्य रूप में चित्रित कर देना ही बिम्ब-विधान की सहज प्रक्रिया है। आवेग

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

से बिम्ब में वैयक्तिक आंतरिकता आती है, जो बिम्ब को स्वच्छन्द धरातल पर प्रतिष्ठित करती है। बिम्ब सौंदर्यमय होते हुए भी आवेग से संचालित होता है। कवि की आंतरिक चेतना की अभिव्यंजना के लिए आवेग का होना आवश्यक है। इससे गतिशीलता आती है। इस प्रकार बिम्ब-विधान सर्जनात्मक एवं सक्रिय कल्पना-व्यापार है। उसमें बुद्धि का योगदान केवल यह है कि वह अव्याख्येय को व्याख्यायित करने में सहयोग देती है। जहाँ तक स्वच्छन्दतावादी बिम्बों का सम्बन्ध है, इनमें कवि एक नवीन अनुभूति प्रस्तुत करता है, जिसमें नवीनता, आवेग एवं ऐन्द्रियता का स्पर्श आवश्यक होता है। परस्परागत बिम्बों से विद्रोह और उनके स्थान पर मौलिक एवं नूतन आत्मचिन्तनात्मक बिम्बों की रचना स्वच्छन्दतावादी बिम्ब-सृष्टि की विशिष्टता है। स्वच्छन्दतावादी बिम्ब जीवन की गतिशीलता से जुड़ा होता है। इसमें रचनाकार अपने अनुभवों को मानवीय क्रियाओं के साथ चित्रित करता है। स्वच्छन्दतावादी बिम्ब-विधान में कवि सीधे विचार एवं अनुभूति के संघर्ष को व्यक्त नहीं करता, बल्कि बिम्बों की रचना शृंखलाबद्ध रूप में करता है। बिम्ब यहाँ विचार-प्रधान है, बौद्धिक है तथा संश्लेषणात्मक है।

स्वच्छन्दतावादी बिम्बों में दो विरोधी वस्तुओं—क्रियाशीलता एवं चिन्तनशीलता को एकीकृत किया जाता है। विरोधी तत्त्वों का यह समन्वय अच्छी तरह से स्वच्छन्दतावादी काव्य में ही उपलब्ध होता है। इसका उपस्थापन प्रतीकात्मक होता है। यह साहित्य-उपवन में खिलनेवाला एक ऐसा फूल है जिसे स्वच्छन्दतावादी बिम्ब कहा जाता है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी बिम्ब-विरोधी तत्त्वों की समन्वित अभिव्यक्ति है। इसीलिए आस्कर वाइल्ड कला में अनुकृति को अस्वीकार करते हैं। उनकी मान्यता है कि कलाकृति में अनुकृति तत्त्व के लिए कोई स्थान नहीं है। सभी सर्जनात्मक कृतियाँ नितान्त विषयिगत होती हैं। जिस प्राकृतिक दृश्य को करोट ने देखा था वह उसके अपने ही मन की एक वृत्ति थी।'[११]

बिम्ब एक संमूर्त्तन कला है। यह कल्पना से उत्पन्न होता है। कल्पना बिम्ब की जननी है। बिम्ब में कल्पना की अधिकता होती है। स्मृति बिम्ब-विधान के लिए आवश्यक है। इसलिए बिम्ब ऐन्द्रिय संवेदना है, जो व्यक्ति के मानस में स्थित होती है। वस्तुतः बिम्ब की मूल चेतना ऐन्द्रियता होती है। 'काव्य में जब यह मानस-प्रतिमा कवि की अनुभूति के संप्रेषण का शब्दार्थमय माध्यम बनती है तो उसे काव्य-बिम्ब कहा जाता है।'[१२] मूलतः कवि अपनी अनुभूति को बिम्ब-रूप में मूर्त्त करके अभिव्यंजित करता है। बिम्ब में अलंकृत भाषा के स्थान पर बोलचाल की सामान्य भाषा का प्रयोग होता है। काव्यात्मक अभिव्यक्ति में पूर्ण स्वतंत्रता होती है। बदली

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

हुई मानसिकता की अभिव्यक्ति के लिए वह नूतन लय की रचना करता है। इस प्रकार बिम्ब कवि के अचेतन मस्तिष्क की उपज है। इस प्रकार बिम्बों के निर्माण में कवि एक इंसान के रूप में कहता है, न कि एक कवि के रूप में। वस्तुतः बिम्ब-सर्जन की यह प्रक्रिया आत्मपरक है। ऐसी स्थिति में बिम्बों की रचना कवि की स्वीय अनुभूतियों का प्रकाशन होता है। बिम्बों के माध्यम से कवि की अनुभूतियों पर बल दिया जाता है। मूलतः बिम्बों में कवि अपने 'स्व' की अभिव्यंजना करता है।

कलाकार की समग्र परिस्थिति प्रासंगिक है। जहाँ तक कलाकार उसे भोक्ता है, वहाँ वह बिम्ब जीवन से सम्बद्ध है। यह जैसा कि इलियट ने कहा है, व्यक्तिगत बात है और अपने में पाठक से इसका कोई लगाव नहीं है। भोग्य के रूप में इसे कविता में नहीं आना चाहिए। किन्तु, प्रतीकात्मक बनकर यह कविता में आ सकती है। यह वर्ड्सवर्थ में यीट्स में, पाया जाता है, और बहुत कुछ इलियट में भी।[१३]

किन्तु यीट्स इस बात के लिए उत्सुक है कि दृष्टि-सृष्टि की सम्मिलित प्रक्रिया में कवि को अपनी बात कहने का अधिकार सुरक्षित रखना चाहिए। यह उसकी अपनी 'निजी आत्मा' होगी जो कि "व्यथा का एकमात्र स्रोत है।"[१४]

"सामाजिक वातावरण के अनुकूल, सौंदर्यात्मक आदर्शों के समतुल्य तथा अन्तर्दृष्टि की वैयक्तिकता के अनुसार ही कलाकार (विषयि) अपनी कलात्मक पद्धतियों के द्वारा प्रकृति की वस्तुओं का रूपान्तर करता है। वह प्रकृति की वास्तविकता का सामना स्वयं प्रकृति का ही मानवीयकरण (ह्यूमेनाइफिकेशन) करके करता है। प्रकारान्तर से इस प्रक्रिया में मनुष्य का प्राकृतिक अस्तित्व मानवीय अस्तित्व हो जाता है तथा दूसरी में वह ऐसा सामाजिक मनुष्य हो जाता है जिससे कला की सामाजिक प्रकृति का उन्मीलन होता है। फलस्वरूप कलात्मक प्रत्यक्षीकरण की उभयात्मक प्रक्रिया में प्रकृति का मानवीयकरण तथा सामाजिक मनुष्य का सौंदर्यतात्त्विक विषयीकरण होता है।"[१५] इस प्रकार बिम्ब में वैयक्तिक/सामाजिक तथा अन्तः/बाह्य अनुभूतियों का समन्वित रूप अभिव्यंजित होता है।

बिम्ब पहले एक रूपक के रूप में प्रयुक्त होता है, निरन्तर निश्चित अर्थ में आते रहने से प्रतीक का रूप धारण करता है। किसी वस्तु को अभिव्यंजित करने के लिए कवि / रचनाकार उपमान का चयन करता है। कवि / रचनाकार वस्तु (उपमेय) व उपमान दोनों का वर्णन करता है। बाद में अर्थ निश्चित होने पर जब केवल उपमान का उल्लेख होता है तो वही प्रतीक बन जाता है। प्रतीक की क्रिया आंगिक होती है और बिम्ब की क्रिया मानसिक होती है। इस प्रकार पदार्थ या वस्तु का सामान्य अर्थ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

की प्रस्तुति में तो बिम्ब होगा और अपने नितान्त बदले हुए तथा विशद अर्थ में प्रतीक होगा। बिम्ब अपने-आपमें साध्य है, प्रतीक-साधन है। प्रतीक में अर्थ-व्यंजना एवं अवधारणा अपेक्षित है। प्रतीक अपना अर्थ नहीं हो सकता। अभिधा, लक्षणा एवं व्यंजना में से प्रतीक का सम्बन्ध लक्षणा और व्यंजना से होता है। बिम्ब में अनुभूति का विस्तार है, कल्पना की शक्ति है तथा कल्पना की ज्वाला है। बिम्ब धीरे-धीरे प्रतीक का रूप ले लेता है।

प्रतीक

'प्रतीक' शब्द का तर्कशास्त्र, गणित, अर्थविज्ञान, मनोविज्ञान, धार्मिक कर्मकाण्डों, ज्योतिष, ललितकला तथा कविता के इतिहास में भी बहुत पहले से प्रयोग होता आ रहा है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि सभी प्रतीक एक-से होते हैं। वस्तुतः इनका स्वरूप भिन्नत्व लिये रहता है। काव्य के परिसर में 'प्रतीक' किसी भाव-सम्पदा को लेकर चलते हैं, जबकि अन्य क्षेत्रों में प्रयुक्त प्रतीक रूढ़ होते हैं अथवा किसी सांकेतिक अर्थ के बोधक होते हैं। किन्तु काव्य-कला के क्षेत्र में प्रतीक का विशेष महत्त्व है।

फ्रायड के अनुसार 'प्रतीक' का आदिम भाषा से सम्बन्ध है।[१६] अचेतन से उद्भूत होने के कारण 'प्रतीक' की भाषा स्वतः प्रकट होती है। यह मानव अभिव्यक्ति का एक आन्तरिक स्वाभाविक मार्ग है। यह अभिव्यक्ति के सभी सहज मार्गों में अभिव्यक्त होता है, उदाहरणार्थ—स्वप्न, फैन्टेसी, कविता, कला, मिथक और धार्मिक संस्कार। चाहे स्वरूप कुछ भी हो, अपने विषय-वस्तु में यह यौनपरक (Sexual) होता है। व्यक्ति के आन्तरिक तनाव को जब प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति अपना रूप निर्मित करती है तो उससे गहरा आनन्द प्राप्त करती है। यही कारण है कि आनन्दानुभूति के कारण मनुष्य प्रतीकात्मक भाषा का प्रयोग करता चला आ रहा है।

फ्रायड का कथन है कि प्रतीक की समूची प्रतीकात्मक अभिव्यंजना कथ्य में यौनपरक होती है। यह मत तर्कसंगत नहीं है। क्योंकि यौन के अतिरिक्त हमारे भीतर और भी मूल वृत्तियाँ हैं, वे प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति क्यों नहीं चाहेंगी?

युंग 'प्रतीक' को एक अनिश्चित अभिव्यक्ति कहते हैं, जिसके अनेक अर्थ हो सकते हैं और ये संकेत हैं कि ऐसे पदार्थ का जिसकी आसानी से परिभाषा नहीं की जा सकती जो पूरी तरह से ज्ञात नहीं हो सकती और जहाँ एक ही वस्तु से अनेक अर्थ हो सकते हैं, वही प्रतीकात्मक अभिव्यंजना होती है। प्रतीक लिबिडो को निम्नस्तर से उच्च स्तर पर ले जाकर रूपान्तरित करता है।[१७] युंग के अनुसार शक्ति दो प्रकार की होती है, पहली मूल प्रवृत्यात्मक शक्ति और दूसरी आद्य बिम्बात्मक शक्ति। प्रतीक मूल प्रवृत्यात्मक शक्ति को आद्यबिम्बात्मक शक्ति में परिणत करने का साधन है।[१८] मूल वृत्ति और आद्य बिम्ब–इन दोनों के संघर्ष से प्रतीक उभरता रहता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

फ्रायड की तरह युंग भी अधिकतर प्रतीक को यौनपरक बताते हैं क्योंकि यौन मनुष्य की एक प्रबलतम प्रवृत्ति है। लेकिन वे यौन को सभी प्रतीकों के निर्माण के कारण नहीं स्वीकारते। युंग फ्रायड के विरोध में यह भी कहते हैं कि प्रतीक मुख्यतः मूल वृत्ति से उद्‌भूत होती है, न कि दमित इच्छाओं से। युंग प्रतीक में मूल वृत्तियों तथा आद्यबिम्बों को स्वीकार करते हैं। अचेतन का सीमा-विस्तार करते हुए सामूहिक अचेतन की चर्चा करते हैं, जिसमें असंख्य मूल वृत्तियाँ तथा आद्यबिम्ब होते हैं। जब मूल वृत्तियाँ अपने ढंग से अभिव्यक्त होती हैं तो आद्यबिम्ब अपने ढंग से मूल वृत्तियों को बदल देते हैं। प्रतीकीकरण एक प्रक्रिया है जिसमें मूल प्रवृत्त्यात्मक कथ्य को आद्य-बिम्बात्मक रूप देते हैं।[१९]

ह्वाइटहेड के अनुसार प्रतीक-विधान का सबसे मौलिक रूप वह है जो वस्तु से उत्पन्न होनेवाले तरंग की संवेदना से समूची वस्तु की अवगति करते हैं। हमारी इन्द्रियों के सन्निकर्ष में वस्तु से उत्पन्न केवल तरंग मात्र होता है, किन्तु उससे हमें केवल तरंग का बोध न होकर समूची वस्तु का बोध होता है। अंश से अंशी का जो बोध होता है, प्रतीकात्मक होता है। ह्वाइटहेड ने इसे सबसे मौलिक और व्यापक प्रतीक-विधान माना है।[२०] ह्वाइटहेड के अनुसार इन्द्रिय प्रत्यक्ष में दो तत्त्व होते हैं—(१) निर्विकल्पक तत्त्व, (२) सविकल्पक तत्त्व। निर्विकल्पक तत्त्व का सम्बन्ध घटना की तात्कालिकता के साथ है। सविकल्पक तत्त्व में व्यक्ति का भूतकालीन अनुभव काम करता है, इससे ही प्रतीक-विधान होता है। निर्विकल्पक-सविकल्पक तत्त्वों को जो तत्त्व परस्पर जोड़ता है, इसे ह्वाइटहेड प्रतीकात्मक संदर्भ देते हैं और इन दोनों को जोड़ने से ही प्रतीकी-करण की क्रिया संपन्न होती है।[२१] जहाँ वर्तमान संदर्भ में घटित होनेवाली बातें भूतकाल की बातों का स्मरण कराती हैं, तो वहाँ प्रतीकीकरण का जन्म होता है।[२२]

प्रतीक अपने सम्बन्ध, सामंजस्य, रूढ़ि अथवा संयोग से किसी दूसरी वस्तु को संकेतित करता चलता है, किन्तु इससे यह नहीं समझना चाहिए कि प्रतीक का उद्देश्य समानता या सादृश्य होता है। वस्तुतः प्रतीक किसी अदृश्य वस्तु का दृश्य-संकेत भर है।[२३] इस व्याख्या के द्वारा यह स्पष्ट होता है कि प्रतीक में रूप, धर्म और प्रभाव का सादृश्य होता है, लेकिन यह उसका मूल उद्देश्य नहीं है।

अर्नेस्ट जोन्स ने 'प्रतीक' का तात्पर्य चिन्तन में स्थित एक विचार से माना है, जो अवचेतन में स्थित अन्य विचार का प्रतिनिधित्व करता है या उसके महत्त्व का संवहन करता है।[२४]

प्रसाद के अनुसार प्रतीकों का सम्बन्ध कवि की उस रहस्यानुभूति से है, जो युंग के अनुकूल अपने लिए विभिन्न आधार चुना करती है। प्रतीकों के सम्बन्ध में इनकी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

दूसरी मान्यता यह है कि कला-जगत् में सौंदर्य-बोध को मूर्त बनाने तथा संवेदना को आकार देने के लिए प्रतीकों की सृष्टि होती है अर्थात् प्रतीकों द्वारा कवि निबद्ध भावों को मूर्तता और वस्तुमत्ता प्रदान करता है।[२५] मुक्तिबोध का कथन है कि प्रतीकों द्वारा हम अपने-आपको प्रकट करते हैं।[२६]

प्रतीक शब्द का प्रयोग उस दृश्य (गोचर) वस्तु के लिए किया जाता है, जो किसी अदृश्य (अगोचर या अप्रस्तुत) विषय का प्रतिविधान उसके साथ अपने साहचर्य के कारण करती है अथवा कहा जा सकता है कि किसी अन्य स्तर की समानुरूप वस्तु द्वारा किसी अन्य स्तर के विषय का प्रतिनिधित्व करनेवाली वस्तु प्रतीक है।[२७] भाषा से सम्प्रेषण का आरंभ होता है, उसीसे अनुभव के आदान-प्रदान का आरंभ होता है, ज्ञान का आरंभ होता है, परम्परा का आरंभ होता है, विद्या का आरंभ होता है, विज्ञान का आरंभ होता है और विकास की सारी शृङ्खला की पहली कड़ी है—प्रतीक।[२८]

प्रतीकों का अभ्युत्थान मानसिक अवस्थाओं से होता है। अचेतन जगत् की इच्छाओं की अभिव्यंजना के लिए प्रतीक एक माध्यम है। प्रतीकों का प्रयोग अधिकांशतः भाषा, धर्म, मिथक, कला, संस्कृति, दर्शन, मनोविज्ञान और दैनिक क्रिया-व्यापारों में मिलता है। इस प्रकार विचार-विकास की प्रक्रिया अथवा अभिव्यक्ति में इसका योग स्पष्ट है। भाषा-वैज्ञानिकों की धारणा है कि भाषा के मौलिक एवं तात्त्विक आधार चिह्न प्रतीक रहे हैं, जिनसे विचार, उद्वेग, इच्छा आदि की निरंतर अभिव्यक्ति होती रही है। प्रतीक-योजना से गुम्फित पदावली काव्य की एक विशिष्ट शैली बन गयी है।

विविध प्रकार की धार्मिक कृतियों का सम्पादन धर्म की विशेषता कही जा सकती है। जिस प्रतिमा की पूजा की जाती है, वह ईश्वर नहीं, ईश्वर का प्रतीक है। इस प्रकार धार्मिक कृतियों का भी अपना प्रतीकात्मक महत्त्व होता है। मिथक को भी प्रतीकात्मक कथ्यों द्वारा अभिव्यंजित किया जाता है। प्रतीक मिथक का एक विस्तार है। किन्तु प्रतीक का भी एक विशिष्ट दृष्टिकोण है, जो कुछ अंशों में दार्शनिक है तथा कुछ में सौंदर्यशास्त्र की मान्यताओं से प्रभावित तथा अपनी परिधि में यथार्थता को समाहित किए हुए है। इसलिए स्वच्छन्दतावादी कविता में प्रतीकात्मक-बिम्ब की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

कला भी प्रतीकात्मक होती है। फ्रायड के मनोविश्लेषणवाद में प्रतीक को विशिष्ट स्थान दिया गया है। फ्रायड से अधिक इसकी महत्ता युंग के अचेतनपरक मनोविश्लेषण में मिलती है। प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति की प्रवृत्ति मनोविश्लेषण में प्रतीकवाद कही जाती है।[२९] युंग के अचेतन मस्तिष्क के द्वारा मूल वृत्तियां, आद्य-बिम्ब, प्रतीक, धार्मिक अनुष्ठान एवं सांस्कृतिक चेतना के अभिव्यंजना-क्रम मे मिथक एवं फैंटेसी भी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

मानव-समाज के अन्तः/बाह्य रूपों को व्याख्यायित करती चलती है। इन रूपों में वस्तुतः मनोविश्लेषणात्मक अभिव्यंजना प्रतीकात्मक होती हैं, जो स्वच्छन्दतावादी प्रकृति की होती है।

मनोविश्लेषण के व्याख्याता अर्नेस्ट जोन्स ने प्रतीक की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए कहा है कि यह अज्ञात मन की छिपी और दमित भावनाओं एवं इच्छाओं का प्रतिनिधि है। प्रतीकीकरण की प्रक्रिया स्वतः परिचालित होती है। प्रत्येक प्रतीक का अपना एक संवेगात्मक पहलू होता है। प्रत्येक प्रतीक काम-भावना से सम्बद्ध है। फ्रायड प्रतीक को काममूलक स्वीकार करता है। इस प्रकार प्रतीक आंतरिक संवेदना की अभिव्यक्ति है। अज्ञात मन की अभिव्यक्ति को प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति कहा गया है। प्रतीक का सम्बन्ध वस्तु से न होकर एक चित्तिमय तथ्य से होता है। प्रतीक का कार्य मानवीय स्वभाव का ही अंग है।[३०] प्रतीकात्मक अभिव्यंजना मानव की सबसे मौलिक विशेषता है और मनुष्य की आत्मचेतना के क्रमिक विकास में प्रतीकों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। मनोवैज्ञानिकों का कथन है कि प्रतीकों में कामेच्छा की अभिव्यंजना होती है। इस प्रकार प्रतीकात्मक अभिव्यंजना मानवीय मूल वृत्ति अनादि वासना से घनीभूत संवेदना के द्वारा उभरती रहती है।

चार्ल्स फिल्डसन ने 'प्रतीकात्मक प्रणाली' को 'पोस्ट रोमांटिक' आन्दोलन के लिए आवश्यक माना है।[३१] प्रतीकात्मक प्रतिभा मानव की आत्मिक क्रियाशीलता की प्रस्तुति है। प्रतीक विचार का एक प्रकार है। प्रतीक का निर्माण कवि कल्पनाशक्ति से करता है। उच्चतम स्वच्छन्दतावादी कविता कम-से-कम निरन्तर आदर्शों को जोड़ने का संघर्ष होती है जो कविता के मौलिक आन्दोलन की शुरुआत बनती है। प्रतीक-निर्माण की शक्ति वस्तुतः मनुष्य की सम्पूर्ण आत्मा को क्रियाशील करती है। मनुष्य की सम्पूर्ण चेतना को प्रस्तुत करने का दायित्व प्रतीक पर है। इसलिए इसमें चेतन/अचेतन के क्रिया-व्यापार भी सम्मिलित हैं। अचेतन के क्रिया-व्यापार के फलस्वरूप वैयक्तिक एवं सामूहिक अचेतन की भी अभिव्यक्ति होती है। युंग कहते हैं कि बिम्ब-विधान एवं प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति केवल प्रेम एवं यौन दमित अनुभूतियाँ ही नहीं होतीं, बल्कि, कवि अपनी अभिव्यंजना में सांस्कृतिक एवं धार्मिक मिथकीय चेतना को भी प्रस्तुत करता है। नर-नारी के आकर्षण का आधार-सूत्र मात्र प्रेम तथा यौन-भावना ही नहीं है, बल्कि नर-नारी एक-दूसरे के प्रति सहज ही आकर्षित होते रहते हैं। क्योंकि प्रत्येक नर में 'एनीमा' होती है जो नारियों के प्रति उन्हें आकर्षित करती है। साथ ही प्रत्येक नारी में 'एनीमस' होती है जो नर के प्रति उसे आकर्षित करती है। फलतः काव्य-सर्जन में सामूहिक अचेतन की भावना भी उभरती रहती है, धार्मिक सांस्कृतिक एवं मिथकीय चेतना का भी विन्यास होता रहता है। कवि अपनी कल्पना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

से इन विशद एवं व्यापक फलकों से जीवन एवं जगत् के विषय में जिज्ञासा, रहस्य-भावना एवं यथार्थता को प्रतीकात्मक रूप में प्रस्तुति देता है। आज का कवि आधुनिक जीवन की दुरूहता को कविता में संश्लेषणात्मक रूप में प्रतीक के द्वारा चित्रित करता है। द्वन्द्वों को नवीन एवं मानवीय धरातल पर प्रतीक के रूप में प्रतिष्ठित करता है और कवि इसमें विरोधी तत्त्वों को समन्वित कर प्रतीकात्मक अभिव्यंजना करता चलता है।

शिल्प तथा दृष्टिकोण दोनों ही में प्रतीक स्वच्छन्दतावाद का विस्तार है। अर्धचेतन की गवेषणा में निरत अतियथार्थवाद के सम्बन्ध में भी ऐसा ही कहा जाता है। प्रतीक स्वच्छन्दतावाद की आनुवंशिक (पैतृक) परम्परा है। इसके द्वारा कवि वर्तमान संसार के सम्बन्ध में, एक अति भौतिक धारणा में, सौंदर्य की आदर्शपरक अवतारणा में, प्रतीयमान जगत् के परे, अति भौतिक सत्ता के अस्तित्व में, रहस्यात्मक आस्था में तथा कवि की मीमांसात्मक सूझ-बूझ-प्रतीकों के माध्यम से, स्वच्छन्दतावाद को नवीन रूप में हमारे सम्मुख उपस्थित करता है। काव्यात्मक अभिव्यक्ति के दूसरे रूपों की अपेक्षा प्रतीक में यथार्थ के ग्रहण की शक्ति अधिक होती है। कवि जगत् एवं मानवीय अनुभव में समागत आत्यन्तिक एवं अनिर्वचनीय तत्त्व की अभिव्यक्ति प्रतीक के माध्यम से ही कर सकता है। स्वच्छन्दतावादी कविता की एक अन्यतम विशेषता यह है कि यह द्विविध जगत् के भाव को अभिव्यंजना देती है। इसलिए स्वच्छन्दतावादी दृष्टिकोण के अन्तर्गत दो लोक एक-दूसरे के सम्मुख होते हैं और एक-दूसरे से तत्त्व ग्रहण करते हैं। अतः इनका अंकन प्रतीक की पारदर्शी शक्ति की अपेक्षा रखता है, जिसके अन्तर्गत दोनों लोक एक ही दृष्टि के प्रकाश में दृष्टिगत हो सकें।

स्वच्छन्दतावादी कविता में प्रतीक किसी सीमित अर्थ में धार्मिक नहीं होता, यह मानवीय अनुभव में समागत सर्वातिशायी तत्त्व की अभिव्यक्ति तो कर सकता है, लेकिन वह साथ ही मानव-स्व की गहराई में विद्यमान पवित्र तत्त्व की अभिव्यक्ति का माध्यम भी है। आध्यात्मिकता के साथ-साथ उसकी चेतना मानवीय अभिव्यक्ति को भी अपने में समेटती है। प्रतीकोन्मुख कवि के लिए दोनों अनुभव समानतः पृथक् नहीं होते। मनुष्य सदैव अपने अस्तित्व को जहाँ कहीं से भी अभिव्यक्त करने की कोशिश करेगा तो प्रतीक उसकी अभिव्यक्ति का वाहन होगा। क्योंकि इस प्रकार का प्रयास न्यूनाधिक रूप से सतत चलता रहेगा। अतः किसी न किसी अंश में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति सदैव क्रियाशील रहेगी तथा मनुष्य की गंभीरतम कविता में प्रतीक का तत्त्व विद्यमान रहेगा। यही कारण है कि स्वच्छन्दतावादी चेतना काव्य-कला में निरन्तर क्रियाशील रहती है। क्योंकि मनुष्य की निरन्तर रुझान के कारण कवि अपनी आंतरिकता, वैयक्तिकता एवं सामाजिकता की समन्वित चेतना की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति करता रहता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

श्लेगल तथा कालरिज ने पूर्ववर्ती शताब्दी के विचारों को उस प्रतीकवाद की दिशा में विकसित किया था जो उन्नीसवीं शताब्दी के यथार्थवाद का विरोधी था। उनके अनुसार कलाकार प्रकृति का अनुकरण करता है तथा इस तरह प्रकृति जैसी शक्ति अर्जित करता है, जिसे वह सर्जनात्मक मस्तिष्क के द्वारा एक नया रूप देकर विकीर्ण करता है। श्लेगल का कथन है कि कलाकार को चाहिए कि वह जीवित कृतियाँ उत्पन्न करे, जिसके भीतर गति किसी बाह्य यंत्र से नहीं आती बल्कि, कृतियाँ सौरमण्डल की तरह से (स्वतः उत्पन्न होती हैं) आभ्यंतरजात होती है। बिम्ब-विधान एवं प्रतीक-योजना में आंतरिक चेतना अनिवार्य होती है।[३२] इसलिए प्रतीक की रचना-प्रक्रिया कवि की स्वच्छन्दतावादी रुझान होती है।

काव्य में प्रतीक-योजना के लिए पांच अवस्थाएँ आवश्यक होती हैं। ये अवस्थाएँ निम्न हैं—

(१) प्रक्षेपण (Projection)
(२) साहचर्य (Association)
(३) समता (Equation)
(४) प्रतिनिधान (Substitution)
(५) आत्मिककरण (Interojection)

प्रक्षेपण, साहचर्य, समता, प्रतिनिधान तथा आत्मिककरण की साधना काव्य में प्रतीक-योजना के निर्माण का आधार बनती है। इस सृजन-प्रक्रिया में रचनाकार को आत्मिककरण के द्वारा प्रतीकात्मक अभिव्यंजना करनी होती है। इस प्रकार प्रतीक-योजना में रचनाकार अपनी आन्तरिकता का मूर्तिकरण करता है। यही कारण है कि प्रतीकात्मक अभिव्यंजना की अस्मिता स्वच्छन्दतावादी होती है। डॉ० सत्यप्रकाश सिंह का निष्कर्ष है कि आत्मिककरण के अभाव में प्रतीक-योजना नहीं हो सकती है।[३३] मेरा इस संदर्भ में कहना है कि इसी बिन्दु पर प्रतीकात्मक अभिव्यंजना काव्य में स्वच्छन्दतावादी हो जाती है।

केन्द्रीकरण और विकेन्द्रीकरण इन दो प्रक्रियाओं के द्वारा मानव-चेतना क्रियाशील होती है। एक ओर यह बाह्य जगत् जिसे कि यह किसी क्षण में अपना विषय बनाती है और दूसरी ओर व्यक्तित्व के केन्द्रीभूत बिन्दु पर यह अपना केन्द्रीकरण करती है। ये दोनों प्रक्रियाएँ एक साथ चलती हैं तथा अपनी पहचान को सुरक्षित रखती हैं। परिधि केन्द्र के चारों ओर अपने स्वरूप को धारण करती है तथा केन्द्र परिधि की पृष्ठभूमि में अपने को पृथक् करता है। इस प्रकार पृथक्-पृथक् होते हुए भी दोनों एक-दूसरे को व्याप्त करते हैं। इन्हीं दोनों चैतन्य की प्रक्रियाओं के परस्पर व्याप्ति के माध्यम से प्रतीकों की उत्पत्ति होती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

चेतना के दोनों प्रकारों की पारस्परिक व्याप्ति प्रत्यक्ष, प्रत्यय और अन्तर्ज्ञान तीनों ही स्तरों पर घटित होती है। फलतः प्रतीक-तत्त्व इन सभी स्तरों पर पाया जाता है। हम बाह्य संसार को ठीक वैसा ही नहीं देखते हैं, जैसा वह है। प्रत्युत बहुत कुछ वैसा देखते हैं, जैसे हम हैं। हमारे भीतर कुछ स्वतःनिर्मित भावनाएँ और बिम्ब होते हैं जो ऐन्द्रिय संवेदनाओं के स्पर्श पाकर जाग उठते हैं। अतः प्रत्येक प्रत्यक्षीकृत पदार्थ द्रष्टा के भीतर से कुछ प्रक्षिप्त तत्त्व ग्रहण किये होता है। प्रक्षेपण एक वास्तविक प्रक्रिया के रूप में बहुत कुछ स्पष्ट हो जाता है, जब प्रत्यक्षीकृत पदार्थ को बिम्ब के रूप में अपने भीतर समेट लिया गया होता है। प्रत्यक्षीकृत पदार्थ में बद्धमूल होते हुए भी तथा बहुत कुछ विवरणों से रहित होते हुए भी बिम्ब उस पदार्थ से अधिक व्यापक और प्रभावशाली होता है। उदाहरण के लिए जहाँ किसी वृक्ष का प्रत्यक्ष प्रत्यय न केवल मूल की दृष्टि से, अपितु स्वरूप और अर्थ की दृष्टि से भी वृक्ष के साथ गहराई से जुड़ा होता है, वहाँ वृक्ष का बिम्ब न केवल वृक्षविशेष से स्वतंत्र होता है, अपितु उदारता, धैर्य इत्यादि कुछ ऐसी भावनाओं को प्रकट करता है जो वृक्ष की अपेक्षा मानव के सद्गुणों के बोधक हैं। इस सम्बन्ध में वस्तुस्थिति यह है कि इन मानवीय सद्गुणों को सबसे पहले-पहल प्रक्षिप्त करके वृक्ष में देखा जाता है और तब उसके बिम्ब से इन्हें जोड़ते हुए उसी बिम्ब के द्वारा इन्हें उपस्थापित करने की स्थिति पैदा की जाती है। इस स्वच्छन्दता के कारण जो कि प्रक्षेपण तथा आत्मिककरण की द्विविध प्रक्रिया के द्वारा प्राप्त की गई होती है, वृक्ष का बिम्ब और उसके माध्यम से वास्तविक वृक्ष भी प्रतीकात्मक हो जाते हैं।

मिथक

हिन्दी में 'मिथक' शब्द का प्रयोग अत्याधुनिक है। 'मिथक' शब्द डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी का दिया हुआ है। संस्कृत के 'मिथ' शब्द के साथ कर्त्तावाचक 'क' प्रत्यय जुडने से इसका निर्माण हुआ है। संस्कृत में 'मिथ' शब्द का अर्थ प्रत्यक्ष ज्ञान के लिए तथा दो तत्त्वों के परस्पर सम्मिलन के लिए भी होता है। मिथक के संदर्भ में दोनों ही अर्थ जुड़े हुए प्रतीत होते हैं। यह लौकिक तथा अलौकिक तत्त्वों का संमिश्रण है। कुछ विद्वानों का कहना है कि डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इसका निर्माण अंग्रेजी के 'मिथ' के आधार पर किया है। 'क' प्रत्यय जोड़कर उन्होंने इसे हिन्दी का शब्द बना दिया। हिन्दी में मिथक के लिए पुरावृत्त, पुराकथा, कल्पकथा, देवकथा, धर्मगाथा, पुराणकथा, पुराख्यान-तत्त्व, पौराणिक प्रसंग आदि अनेक शब्द प्रयुक्त हो रहे हैं।

'मिथ' शब्द यूनानी पद 'मिथोस' से अंग्रेजी में आया है, जिसका सरल अर्थ ही उपयुक्त प्रतीत होता है: मिथक एक कहानी है, कथा या काव्य है। सर्वप्रथम यह शब्द यूनानी संस्कृति की प्राक्-ऐतिहासिक कथाओं के लिए ही प्रयोग में लाया गया था।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

'मिथोलॉजी' ऐसी ही कथाओं के संग्रह और अध्ययन का शास्त्र है। सर्जनात्मक साहित्य में निश्चित रूप से मिथक की अभिव्यंजना होनी चाहिए। रिचर्ड्स चेज़ का कथन है कि हमारा सर्जनात्मक साहित्य मिथक के नजदीक होना चाहिए। ये मिथक को ही साहित्य कहते हैं।[३४] ऐतिहासिक दृष्टि से 'मिथ' शब्द धार्मिक अनुष्ठान से जन्मा है। धार्मिक अनुष्ठान मिथक का स्पष्ट रूप है। वस्तुतः मिथक में धार्मिक अनुष्ठान क्रियान्वित होता है।

काव्य की भाषा चित्र-भाषा होती है। शास्त्र से भिन्न, काव्य में कवि भाषा का सर्जनात्मक प्रयोग करता है। भाषा के सर्जनात्मक प्रयोग की यह प्रक्रिया मिथक-रचना की प्रक्रिया है और चित्र-भाषा मिथक-भाषा का ही नया नाम है।[३५] इस प्रकार काव्य की भाषा मिथक-भाषा होती है। मिथक-भाषा की तरह मनुष्य की रचना-धर्मिता भी है।

वस्तुतः मिथक वह दर्शन है, तात्त्विक अथवा प्रतीकात्मक विचार है, अर्थशास्त्र है, सिद्धान्त-संहिता या विश्व-दर्शन है, वह विज्ञान का प्रत्यक्ष विरोधी है—विज्ञान के सिक्के का दूसरा पहलू है।[३६]

सामान्यतः मिथक को आद्यबिम्ब की अभिव्यक्ति कहते हैं। वास्तव में 'आद्यरूप' मिथक की पूर्व-स्थिति है, जिसके आधार पर मिथक अस्तित्व ग्रहण करता है। आद्य-बिम्ब के अभाव में मिथक की रचना प्रायः असंभव है। क्योंकि प्रत्येक मिथक का कोई न कोई आद्यरूप हमारे अचेतन में अवश्य विद्यमान रहता है। मिथक आदिकालीन विज्ञान, इतिहास, धर्म, संस्कृति, दर्शन, कर्मकांड अथवा अचेतन कल्पनाओं अथवा इसी प्रकार की किसी अन्य प्रवृत्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

इस प्रकार मिथक एक ऐसी परम्परागत कथा है जिसका प्रतिपाद्य सांस्कृतिक मूल्यों को सम्प्रेषित करना है। अर्थात् मिथक एक ऐसी कथा है जो अपने समय के सांस्कृतिक मूल्यों की प्रस्तुति करती है। प्रत्युत वह प्रस्तुति प्रायः प्रतीकात्मक एवं लाक्षणिक होती है। अतः मिथक कदाचित् सांस्कृतिक अभिव्यंजना का प्राचीनतम माध्यम है। मिथक संस्कृति से विलग नहीं हो सकता। वह सांस्कृतिक चेतना का अभिन्न अंग है। हम ऐसे किसी भी मिथक की परिकल्पना नहीं कर सकते हैं जो किसी न किसी संस्कृति से जुड़ा हुआ न हो। मिथक की चेतना को उसकी संस्कृति से विलग करके समझना कठिन है। मिथक को जब हम उसके सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में रखते हैं तभी उसकी प्रकृति एवं स्वरूप को समझ पाते हैं। मिथक सदैव अपने सांस्कृतिक बोध से जुड़ा हुआ होता है। मिथक को आदिम मनुष्यों के मानसिक भौतिक जीवन का

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

प्रतीकात्मक कथा-संग्रह कह सकते हैं। इसका प्रचार वहाँ तक है जहाँ से इतिहास आरम्भ हो जाता है। मिथक ऐतिहासिक संदर्भों के भी बनते रहे हैं और सामयिक समस्याओं को भी लेकर मिथक रचनाएँ हो रही हैं।[२७]

मिथक ऐसा परम्परागत वृत्तान्त है जो अतिप्राकृत भावों एवं घटनाओं से जुड़ा होता है। मिथक वस्तुतः आदिम मानव के समष्टि मन की सृष्टि है जिनमें चेतन की अपेक्षा अचेतन मन की प्रधानता रहती है। समष्टि मन द्वारा प्राकृतिक उपादानों और घटनाओं के मानवीकरण की यह अचेतन प्रक्रिया मिथक-रचना का मूल है। इसका सत्य आत्मपरक एवं मनोवैज्ञानिक होता है। इस अर्थ में मिथक की अनुभूतियाँ उसी प्रकार यथार्थ हैं, जिस प्रकार प्रत्येक मनोवैज्ञानिक अनुभूति समाज के लिए यथार्थ होती है। मिथक वस्तुतः संवेग के कारण उत्पन्न होता है। इसका आवश्यक कार्य प्रयोगात्मक एवं सामाजिक है। इसमें मुख्यतः आदिम विचारों की अभिव्यंजना होती है। इसका सम्बन्ध आदिम कल्पनाओं से भी है। इसके द्वारा ऐतिहासिकता की रक्षा नहीं होती। केवल संवेग ही मिथक की अनुभूतियों की उत्पत्ति का कारण होता है, कैसिरर इस मत को स्वीकार नहीं करता। वह मिथक को केवल संवेग ही नहीं मानता, क्योंकि यह संवेग ही अभिव्यक्ति है। अनुभूति की अभिव्यक्ति स्वतः अनुभूति नहीं है। अनुभूति में संवेग बिम्ब बन जाते हैं।[२८] मिथक वस्तुतः आत्मनिष्ठ एवं मनोवैज्ञानिक होता है और वह सांसारिक यथार्थ को मानवीय अनुभूतियों की शब्दावली में प्रस्तुत करता है। मिथक की रचना में यद्यपि कवि कल्पनाशक्ति से काम लेता है, लेकिन ऐसा लगता है कि सत्य ही इसका आधार है। इस प्रकार कल्पना और सत्य या भावगत सत्य एवं वस्तुगत सत्य की अभेद प्रतीति मिथक की परिकल्पना का धरातल बिन्दु है। 'मिथक' शब्द का प्रयोग देवी-देवताओं अथवा अतिप्राकृत पात्रों और मानव-जीवन के अनुभव से परे, किसी (सुदूर) काल की असाधारण घटनाओं एवं परिस्थितियों से सम्बद्ध आख्यानों के लिए होता है।[२९] वस्तुतः मिथक अनुभूति व कल्पना पर आधारित होता है। इसलिए मिथक सार्वभौम कल्पना है। वह आदिम मनुष्य की सामूहिक अनुभूतियों की अभिव्यंजना है जिसमें मानव और प्रकृति की अभेद चेतना निहित रहती है। इसका रूप कथात्मक होता है तथा आदिम युग से प्राप्त परम्परागत मान्यताओं, संस्कारों एवं धार्मिक अनुष्ठानों की व्याख्या देता है। संसार का पुराना काव्य मिथक-प्रधान रहा है। आज का साहित्य भी प्रायः मिथक-प्रधान हो गया है। प्राचीन मिथक में सामूहिक अचेतन की अभिव्यंजना है। आधुनिकता में भी मिथक सामूहिक अचेतन का विस्तार है। आधुनिक साहित्य में मिथक एक प्रकार से फैंटेसी के रूप में दिखाई पड़ता है। मुक्तिबोध ने 'कामायनी' का स्वप्न-कथा के रूप में इसी आधार पर विवेचन किया है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

मिथक समुदाय-मस्तिष्क की अभिव्यंजना की अभिव्यंजना है, जो बहुत दिनों से प्राकृतिक विकास में सुरक्षित है। सांस्कृतिक, आध्यात्मिक चेतना से मिथक एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी के लिए अपनी सांस्कृतिक चेतना को जीवित रखता है। इसमें सामुदायिक वर्ग के प्रति प्रेम, अन्तर्दृष्टि, चिंतन एवं महत्त्व का विकास होता है, जो काव्य तथा प्रतिदिन के जीवन की महत्ता की संभावनाओं पर आधारित होता है। यह आत्मनिष्ठ एवं वस्तुनिष्ठ विचारप्रक्रिया के बीच की रेखाएँ विकृत कर यथार्थ के सही बिम्ब को बदल देता है। कल्पनाशीलता के फलस्वरूप मिथक सांस्कृतिक एवं धार्मिक चेतना को एक नये परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करता है। यथार्थता को भी मिथकीय चेतना बदल देती है। मिथकीय परिकल्पना ऐतिहासिक बोध को तो विस्मृत करती है, लेकिन अपनी प्रकृति से सामाजिक चेतना को जगाती भी है। ये आदिम सहज ज्ञान को जागृत करनेवाली धार्मिक, सांस्कृतिक चेतना है। ये आदिम मनुष्य के मानसिक जगत् की क्षमताओं तथा काव्य में कल्पना एवं फेंटेसी के रूपायनों की अनुभूति सिद्धान्त है। फ्रायड ने तो मिथक एवं स्वप्न की सर्जन-प्रक्रिया को लगभग एक जैसा पाया है। वस्तुतः मिथक काव्य में घनीभवन, स्थानान्तरण, रूपांतरण, प्रतीकीकरण आदि सिद्धान्तों से उभरता है। इसलिए मूल वस्तु एवं उसके कथा-बिंब के बीच में भी यथारूपता अनिवार्य नहीं होती। इस प्रकार मिथक फेंटेसी नहीं है, किन्तु यथार्थता का आधार लिये हुए है। उसमें कोई न कोई आदिम घटना या द्वन्द्व का बीज सुषुप्त होता है। इसलिए वे अतीत, वर्तमान एवं भविष्य की व्याख्या कर सकता है। मिथक कर्मकांड को प्रभावशाली बनाता है। इस तरह यह आदिम निष्ठा के व्यावहारिक चरित्र, कलात्मक बिंब तथा बौद्धिक स्पष्टीकरण का संयोजन करता है। इसकी मूल चेतना कर्मकांड एवं आनुष्ठानिकता से संबद्ध होता है। अतएव इसमें अपूर्ण इच्छा तथा व्यावहारिक आवश्यकता का द्वन्द्वात्मक संयोग होता है। मिथक वस्तुतः एक सांस्कृतिक कथा है, एक काल्पनिक कथा है, एक तर्कातीत कथा है, एक पौराणिक कथा है। सांस्कृतिक मूल्यों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक मिथकों द्वारा संप्रेषित किया जाता है। मिथक इस प्रकार सांस्कृतिक मूल्यों के संप्रेषण का एक माध्यम है। वे सभी अवधारणाएँ, जो मूल्यों को व्याख्यायित करती हैं, मिथक कही जाती हैं। मिथक से कवि सांस्कृतिक मूल्यों को सुरक्षित रखता है। मनुष्य का सर्जनात्मक जीवन सांस्कृतिक अनुभवों के प्रभाव-क्षेत्र से बाहर नहीं होता। फलतः कवि कविता में मिथकों को नये अर्थ देकर बार-बार प्रस्तुत करता है और इस तरह अपनी संस्कृति के संरक्षण के साथ-साथ उसे अधिक संपन्न एवं सर्जनात्मक बनाता है। कवियों ने रामकथा को प्रत्येक युग में विभिन्न रूपों में प्रस्तुत किया है जो सांस्कृतिक मूल्यों को संकेत देती है। किन्तु सबमें मिथक एक ही है और वही सर्जनात्मक चेतना का निर्देशक है। संस्कृति का वाहक,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MII

संरक्षक एवं निर्देशक होने के नाते मिथक विज्ञान का आलोचक भी है। विज्ञान का मुख्य काम प्राकृतिक घटनाओं और व्यवहार का तथ्यात्मक विश्लेषण है। परन्तु मिथक इस बात पर बल देता है कि वास्तविकता मात्र प्राकृतिक एवं तथ्यमूलक नहीं होती। तथ्यों की दुनिया से भिन्न एक संसार मानवी मूल्यों एवं आदर्शों का भी होता है। कल्पना और मूल्यों का यह संसार जिसकी निर्मिति मिथक करते हैं, इसके प्रभाव को वैज्ञानिक एवं तार्किक दृष्टि से नहीं समझा जा सकता। मिथक मनुष्य को एक सांस्कृतिक प्राणी के रूप में प्रतिष्ठित करता है। मिथक सांस्कृतिक मूल्यों की अभिव्यंजना सीधे नहीं करते। इसलिए उनका काल्पनिक होना भी अपेक्षित है। जीवन-मूल्य जिनकी प्रच्छन्न अभिव्यंजना मिथक करते हैं, मात्र मूल्यवान् हो सकते हैं, मानवीय हो सकते हैं, मिथ्या या असत्य नहीं हो सकते। मिथक जीवन-मूल्य एवं कल्पनाशीलता के साथ जुड़ने से स्वच्छन्द प्रकृति का हो जाता है। मिथकीय अनुभूति में संवेग, आवेग की अभिव्यंजना होती है। इसकी अभिव्यक्ति कल्पना के सहारे अपना रूप सँवारती है। इसकी चेतना में चिन्तन के बजाय अनुभूति का स्पन्दन होता है। मिथक मानव-जाति का सामूहिक स्वप्न एवं सामूहिक अनुभव है। इसलिए मिथकों के प्रतीकों का एक विशिष्ट तथा संकेतपूर्ण नाम है—आद्यरूप (आर्केटाइप)। मिथक का असली धरातल चिंतन का नहीं, बल्कि अनुभूति का है। मिथक का सम्बन्ध मनुष्य के बजाय मानवता के सामूहिक इतिहास से है। इसलिए वे सामूहिक चेतना की विरासत हैं। मिथकों के द्वारा हम प्रतीकों के माध्यम से मानवता के पुरातन इतिहास का ऐतिहासिक एवं आधुनिक अनुभवन करते हैं। इस तरह मिथक बिंब भी है और संवेग भी है। वे रूप और भाव, शब्द और अर्थ, बिंब और प्रतीक, भाव एवं कार्य के द्वन्द्व से बँधे हैं। मिथक एक ऐसी सांस्कृतिक विचारधारा है, जिसमें समाज के सभी सदस्यों की भावना सिक्त होती है और वह हमारे विचार-वैषम्य को समाप्त करके एकता की सृष्टि करता है। इसमें द्वन्द्वों की एकायन करने की प्रवृत्ति होती है, जो स्वच्छन्दतावादी वृत्ति होती है। मिथक एक आविष्कार है। आविष्कार का तात्पर्य है किसी प्रस्तुत वास्तविकता में से प्रमुख विचारों की अवतारणा और कल्पना के माध्यम से पुनः अभिव्यक्त करना। इसी विधि से यथार्थवाद तक पहुँचते हैं। किन्तु, इस प्रकार से अवतरित अवधारणा में जब हम अपनी इच्छाओं और संभावनाओं को जोड़ देते हैं और इस प्रकार प्रस्तुत बिंब को पूर्ण कर देते हैं तो हम उस स्वच्छन्दतावाद पर पहुँचते हैं जो मिथक का आधार होता है तथा वास्तविकता के प्रति क्रांतिकारी दृष्टिकोण उद्भावित करने के नाते अत्यधिक उपयोगी होता है। यह दृष्टिकोण जगत् में व्यावहारिक ढंग से परिवर्तन लाता है।[४०]

मिथक की अनुभूतियों के दो धरातल हैं—(क) प्रत्यक्षीकरण एवं (ख) अवधारणा। भारतीय तार्किकों की प्राचीन परंपरा के अनुकूल जहाँ पर प्रमाण-शास्त्र का

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

विवेचन-प्रसंग तार्किकों ने उपस्थित किया है, वहाँ इन्द्रिय और वस्तुओं के सन्निकर्ष से प्रत्यक्ष ज्ञान की उपलब्धि होती है। तत्पश्चात् भ्रम के निवारण के लिए निश्चयात्मक ज्ञान होता है। मिथक की ये कल्पनाएँ इन्हीं भारतीय परंपराओं की तार्किक अनुभूतियों का अनुकरण मात्र प्रतीत होता है। प्रत्यक्षीकरण की भूमि पर बिम्ब स्थित है एवं अवधारणा के धरातल पर 'प्रतीक'। इसलिए यह कहा जा सकता है कि मिथकरूपी जाल को बुनने के लिए बिम्ब एवं प्रतीकरूपी तन्तुओं की अपेक्षा रहती है। भारतीय नैयायिकों की काल्पनिक अनुभूतियों की नयी चेतना का प्रतिबिम्ब इनकी अनुभूतियों में प्रतीक के रूप में दृष्टिगोचर होता है। मिथक का कल्पनाजाल जिसकी आधारशिला कल्पित तो अवश्य है परन्तु कविता के क्षेत्र में नयी उद्भावना का एकमात्र केन्द्रबिन्दु है। "जब भी सामाजिक जीवन में द्वन्द्व उपस्थित होता है, तभी मिथक का प्रत्यक्षीकरण नये पक्ष को उद्घाटित कर देता है। इसलिए कहा जाता है कि मिथक मानवीय चिति (Human Psyche) की यथार्थता के संस्काररूप में सुरक्षित रहती है।"[४१] मिथक में मानवीयता ही सर्वोपरि होती है। मिथक दैवी भावना से मानवी भावना की यात्रा है। वस्तुतः मानवीयता मिथक की अस्मिता होती है।

आज अर्थ एवं अभिव्यक्तिप्रधान बौद्धिक भाषा से आदिम मिथक छूट गये हैं। लेकिन प्रतीकों के रूप में वे बार-बार नया जन्म लेते हैं, नये अर्थ पाते हैं, नये संदर्भ देते हैं। प्रत्येक ऐतिहासिक परिवर्तन अपने में 'मिथक' की परिकल्पना होता है। इससे यह विदित होता है कि इसका सम्बन्ध केवल आदिम युग से नहीं, बल्कि समकालीन जीवन-बोध से भी है। इस प्रकार यह भी कहा जा सकता है कि नये विश्वासों एवं ज्ञान की नयी किरणों के साथ नये मिथकों का सृजन होता है और साथ ही पुरातन मिथकों को आधुनिक जीवन-बोध के अनुरूप नयी व्याख्या एवं रूपान्तरण होता है। मिथक का एक अर्थ सामयिक भी होता है। लेकिन उसकी चेतना शाश्वत एवं सार्वभौम होती है। मिथक मानव-मन की सामूहिक अचेतन की तथा प्रतीयमान सत्य की अभिव्यक्ति करता है। इसलिए इसमें यथार्थ और कल्पना का योग होता है। वस्तुतः इसकी चेतना आत्मपरकता एवं वस्तुपरकता से संगुफित रहती है। इस प्रकार मिथक मानव की समस्त चेतना की झंकृति है। आधुनिक मिथक प्राचीन मिथकों की अपेक्षा अवधारणात्मक अधिक है। आज का मिथक ज्ञान और विज्ञान से सम्बद्ध है। कैसिरर ने ज्ञानमीमांसा के अन्तर्गत तर्क या बुद्धि के साथ-साथ मिथक और प्रतीकों को आवश्यक माना है। फलतः दो प्रकार की मानसिक प्रक्रियाओं का समानान्तर अस्तित्व स्वीकार किया है—पहली मिथकीय चेतना और दूसरी दार्शनिक चेतना। भाषा में ये दोनों प्रक्रियाएँ एक साथ चलती हैं। इस प्रकार कवि या लेखक ऐसी भाषा का सर्जन करते हैं जो ज्ञान और संवेदना के नये क्षितिजों को देखने में समर्थ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MII

होती है। भाषा मूलतः मिथकीय होती है, चाहे आधुनिक मिथकों या आदिम मिथकों को लिया जाय। अन्तर मात्र उनसे सम्बद्ध 'परिवेश' और 'दृष्टि' का है। आधुनिक मिथक ज्ञानात्मक एवं अवधारणात्मक अधिक होता है। इसके विपरीत आदिम मिथकों को समझने की दृष्टि उत्तेजना और प्राक्-तार्किक मनोभूमियों पर आश्रित मानी जाती है। इसका अर्थ केवल यह नहीं है कि आज के मिथकों में संवेदना और उत्तेजना का अभाव हो गया है। इसका अर्थ मात्र यह है कि इसमें निहित 'मात्रा' में विशेष अन्तर आ गया है। इस बदलाव की प्रक्रिया को परिवर्तित संवेदना और 'दृष्टि' से ही समझा जा सकता है। विकास एवं सृष्टि का मिथक, अति-मानव का मिथक, समाजवादी, यथार्थवादी और आधुनिक 'नायक' के मिथक आदि कुछ ऐसे नये मिथक विकसित होते जा रहे हैं जो ज्ञान और संवेदना के नूतन विकास से सम्बद्ध हैं। इन समस्त मिथकों के चारों ओर एक ऐसा प्रभामंडल एकत्र होता जा रहा है जो क्रमशः उन्हें एक मिथक के रूप में प्रतिष्ठित कर रहा है। इसी ऐतिहासिक संदर्भ में 'नायक' के मिथक का स्वरूप भी स्पष्ट होता है। प्रत्येक युग की विश्वास-रेखाएँ क्रमशः मिथक का रूप ग्रहण करने लगती हैं। मिथकों का आधुनिक स्वरूप भी क्रमशः विकसित हो रहा है। इस बदले हुए रूप को ज्ञान और संवेदना के नये धरातलों, नयी आस्थाओं एवं नयी मान्यताओं के परिप्रेक्ष्य में ही समझा जा सकता है। मिथक को नया रूप देना, उसकी पुनर्व्याख्या करना, मिथक की सर्जन-प्रक्रिया साहित्य के लिए नवस्वच्छन्दतावादी कवि या साहित्यकार की होती है। आज का नवस्वच्छन्दतावादी कवि या लेखक अपने सम-कालीन बोध के अनुरूप आध्यात्मिक चेतना या पुराण-कथा को नवीन रूप में रखता है। यह प्रक्रिया, मिथक के संदर्भ में नया है, क्रांतिकारी है। मिथकों को सर्जनात्मक कल्पना के द्वारा नवीन रूप में प्रस्तुति करना कवि या लेखक की स्वच्छन्द वृत्ति का ही व्यापार है। मिथक और रोमांस में परस्पर अन्तर होता है—विशुद्ध मिथकीय कथ्य का नायक दिव्य होता है, जबकि विशुद्ध रोमांस मानवीय धरातल पर प्रतिष्ठित है।[४२]

वैज्ञानिक उपलब्धियों के फलस्वरूप आज के जीवन में बौद्धिकता इतनी बढ़ गयी है कि भावना और विश्वास का स्थान गौण हो गया है। जीवन में उपयोगितावादी दृष्टिकोण तथा व्यावहारिकता ने सहज प्रसूत रागात्मक भावना को खंडित कर दिया है। इसलिए आज के कवि या लेखक को मूल वृत्तियों एवं संस्कारों की पुनःप्रतिष्ठा करना आवश्यक हो गया है। इसलिए आज का कवि या लेखक सहज ही मिथक के प्रति आकर्षित है और यह आधुनिक कलात्मक साहित्य का एक आवश्यक उपादान बन गया है। १८वीं शताब्दी की परिसमाप्ति एवं १९वीं शताब्दी के समारम्भ में स्वच्छ-न्दतावादी आन्दोलन में काव्य-मिथक को आदर की दृष्टि से देखा जाता था जो मानव-सभ्यता की प्रमुख धारा मानी जाती थी। इधर बीसवीं शताब्दी में अचेतन मन की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

अभिव्यंजना मियक की विवृत्ति के लिए आवश्यक धरातल है। फ्रायड और युंग ने अपने मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों की व्याख्या में मानव-मन की जिन चेतन-अचेतन की प्रस्तुति की है, उनमें स्वप्न तथा आद्य-बिम्ब, प्रतीक एवं फैंटेसी के साथ-साथ मिथक का भी अपना स्थान है।

प्रगीतात्मकता

स्वच्छन्दतावादी कविता की शैलीगत प्रवृत्ति के रूप में प्रगीत को आवश्यक उपादान स्वीकार किया गया है। आधुनिक प्रगीत को विश्लेषित करते हुए टी० एस० इलियट ने कहा है—प्रगीत कवि की ऐसी आवाज है, जो आत्मसम्बोधित होती है अथवा असम्बोधित होती है। यह एक आभ्यन्तर ध्यान है या प्राण की आवाज है, जो संभावित वक्ता एवं श्रोता के प्रति निरपेक्ष है।[४३] वस्तुतः प्रगीत में आन्तरिकता अपेक्षित है। प्रगीत की इस परिभाषा में आन्तरिकता, वैयक्तिकता की स्वीकृति दी गई है। प्रगीत में अन्तःजगत् की उद्भावना है और इसकी रेखाएं कवि की अनुभूति से उभरती हैं। इसमें कवि की आन्तरिकता झलती है। इसके आधार पर प्रगीत की आत्मा कवि की वैयक्तिकता होती है। इसलिए वैयक्तिकता आधुनिक प्रगीत की पहचान है। लेकिन इलियट को सामाजिक चेतना की चर्चा भी प्रगीत के आधुनिक स्वरूप के संदर्भ में करनी चाहिए थी। क्योंकि आधुनिक कवि सामाजिक चेतना के अभाव में अपनी चेतना को पूर्ण व्यवस्थित रूप कैसे दे सकता है?

एम० एच० अब्राम्स के अनुसार कवि के विचारों अथवा भावों को सीधे अभिव्यक्त करनेवाली छोटी कविता प्रगीत कही जाती है।[४४]

प्रस्तुत संदर्भ में ग्राह्म हक का कथन भी महत्त्वपूर्ण है—वह कविता जो प्रगीत को अपना मौलिक साँचा मानती है, वह सदैव व्यक्तिगत अनुभूति की दिशा का अनुगमन करती है।[४५] ये भी आधुनिक प्रगीत के लिए वैयक्तिक अनुभूतियों को आवश्यक मानते हैं। प्रगीत की पहचान आन्तरिकता ही हो सकती है। क्योंकि कवि अपनी आन्तरिकता से उसका सिंचन करता है।

स्वच्छन्दतावादी कविता के वैयक्तिक उद्गार को डब्लू० बी० यीट्स उदाहरण देकर निश्चयपूर्वक कहते हैं कि प्रगीतकार को पारंपरिक भूमिका पर प्रेमी, द्रष्टा, उन्मत्त, गड़ेरिया अथवा भिक्षुक के रूप में बोलना चाहिए। "मैं अपने संवेगों का विनियोग करता हूँ, ऐसा उसने अपने जीवन के अन्त में कहा था।"[४६] इस प्रकार इन्होंने प्रगीत के लिए आन्तरिकता जो स्वच्छन्दतावादी कविता के लिए भी अपेक्षित है, को स्वीकार करते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

प्रगीत मुख्यतः आन्तरिकता की व्याख्या करती है। इसमें अधिकांशतः कवि के स्वयं के विचार या भावना का बाहुल्य होता है, जो उससे सम्बद्ध हैं। वह उसके स्वयं का विषय ही होता है। ये अनुभूतियाँ जिससे गीति-काव्य सम्बद्ध है, वे कवि की हैं या कवि की स्वयं हैं। प्रगीत का विषय मुख्यतः कवि की अपनी भावनाएँ समझी जाती हैं। प्रगीत की प्रमुख विशेषताएँ हैं—

(क) आत्मपरकता (Subjectivity)

(ख) एकपक्षीय संवेग (Single Emotion)

(ग) स्वाभाविकता या सहजता (Spontaneity)

(घ) मीठी एवं सुरीली भाषा (Sweet and soniferous language)

इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्रगीत में विचार व अनुभूति की अभिव्यंजना प्रथम पुरुष में होती है, जिसमें कवि की भावनाएँ ही प्रधान होती हैं। इसमें कवि की वैयक्तिक अनुभूतियों / संवेगों को प्रधानता दी जाती है। वस्तुतः प्रगीत में कवि की स्वीय आन्तरिकता की अभिव्यंजना होती है। प्रगीत की अस्मिता यह भी है कि अनुभूति संवेद्य को वर्तमान काल में अभिव्यक्ति दी जाती है। इस प्रकार प्रगीत में कवि की स्वीय अनुभूतियों की अभिव्यंजना होती है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी कला में विषय-वस्तु का कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं होता है। मन की प्रक्रिया ही कला में घटना को आकार देती है और मानसिक क्रियारूपों की सृष्टि करती है। इस प्रकार वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी काव्य का सारा क्षेत्र ही मनोमय है। प्रगीत में व्यवितगत भावोच्छ्वास का होना आवश्यक होता है। आधुनिक युग का प्रधान काव्यरूप प्रगीत है जो व्यवित-वादी जीवन-दृष्टि का विस्तार है।

'लिरिक' में गीतितत्त्व, गीतात्मकता एक अनिवार्य और निर्णायक तत्त्व है, और रही गेयता, आरंभ में अनिवार्य और अनन्तर गौण हो गयी। उन्नीसवीं शती के रोमांटिक कवियों ने जब 'सांग' शोर्षक से गीत लिखे, तब उनमें भी निर्णायक तत्त्व 'गीतात्मकता' ही था। प्रायः सभी गेय थे। छायावाद के गीतों के बारे में भी यही बात कही जा सकती है।[५७] स्वच्छन्दतावादी अनुभूति अपनी तीव्रता के कारण रूपों में अभिव्यक्त होती रही है। स्वच्छन्दतावादी कवि सुख-दुःखमय निर्बाध अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए प्रगीत का दामन पकड़ता है। यह काम सरलतापूर्वक प्रगीत के द्वारा ही संभव है। प्रगीत की आत्मा भाव है जो किसी प्रेरणा से दबकर एक साथ गीत में बह जाता है। अतः प्रकृति से ही उसमें हार्दिकता का उपकरण रहता है। सच्चा प्रगीत एक सरल, क्षणिक एवं तीव्र मनोवेग होता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

अन्तर्निहित संगीतात्मकता और तीव्र अनुभूतिपूर्ण स्वानुभूतिमूलकता, यही दो गीतिकाव्य के तात्त्विक लक्षण हैं, जो उसकी आत्मा कहे जा सकते हैं। इन्हींके परिणामस्वरूप गीत में सहज उद्रेक, नवोन्मेष, सद्यःस्फूर्ति, स्वच्छन्दता, अनाडम्बर आदि विशेषताएँ आ जाती हैं।[४=] फलस्वरूप गीतिकाव्य की आत्मा प्रगीतात्मकता अथवा गेयता ही है। यही प्रगीतात्मकता या गेयता स्वच्छन्दतावादी कवि के लिए अपेक्षित है। स्वच्छन्दता गीतिकाव्य के लिए आवश्यक है। इसी प्रगीतात्मकता में तन्मय रहने के कारण स्वच्छन्दतावादी कवि मुक्त छन्द के प्रवाह में बहने लगता है, क्योंकि नये विषय को नया अभिव्यंजना शिल्प चाहिए। स्वच्छन्दतावादी काव्य मूलतः प्रगीतात्मक होता है तथा प्रगीत आज भी अनुभव की प्रामाणिकता के लिए सबसे उपयुक्त है।

कवि की वैयक्तिकता सामाजिक परिवेश से प्रभावित होकर वैयक्तिकता एवं सामाजिकता का रागात्मकता एवं बौद्धिकता का, अन्तः / बाह्य, चेतन / अचेतन का समन्वित एकीकरण या समन्वय प्रगीत के लिए अपेक्षित है। क्योंकि सामाजिक परिवेश से संवात कवि की चेतना अन्तर्मुखी एवं बहिर्मुखी, वैयक्तिक एवं सामूहिक, क्षणिक एवं कालजीवी, रागात्मक एवं बौद्धिक—इन सभी रूपों में हो सकता है। आधुनिक प्रगीत केवल वैयक्तिक परिस्थितियों का भावांकन मात्र नहीं है, मात्र परिवेश के बदलने से जीवन का रूप परिवर्तित नहीं होता। मानव-जीवन की कुछ परम्पराएँ ऐसी होती हैं जिनसे वह विमुख हो सकता है। उनके प्रति विद्रोह कर सकता है, किन्तु उनका उन्मूलन नहीं कर सकता। क्योंकि उसका विवेक इस कार्य को सम्पादित करने की अनुमति नहीं देता। इस प्रकार प्रगीत को परिभाषा से इसकी चेतना को आत्मसात् करने में कई अड़चनें सामने आ जाती हैं। किसीने भावात्मकता पर अधिक बल दिया है, तो किसीने प्रगीतात्मकता पर, तो किसीने वैयक्तिकता को ही प्रगीत की चेतना स्वीकार किया है। लेकिन आधुनिक प्रगीत के लिए जो कवि-चेतना की अभिव्यक्ति होती है उसमें सामयिक जीवन-बोध से आक्रान्त कवि अपनी चेतना में युग-बोध को भी चित्रित करता है। ऐसी स्थिति में आधुनिक प्रगीत वैयक्तिकता एवं सामाजिकता, रागात्मकता व बौद्धिकता, संगीतात्मकता एवं गेयता की एक समन्वित या एकीकृत अभिव्यंजना है। प्रगीतकार का कथ्य चाहे आंतरिक जगत् का हो अथवा बाह्य जगत् का, निरन्तर वैयक्तिकता से वह आत्मसात् करता है। वह अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों को ध्वनित करता है। "राग के क्षेत्र में लेखक का व्यक्तित्व सरोवर में कमलवत् होता है, कविता में कवि का व्यक्तित्व नौका के समान भाव की नदी में तैरता रहता है, आधा जल में डूबा हुआ, आधा जल के बाहर। लेकिन गीत में गीतकार का व्यक्तित्व बतासे की तरह पानी में पूरी तरह घुल जाता है।"[४६]

वस्तुतः प्रगीत केवल वैयक्तिक ही नहीं होता, बल्कि उसकी वैयक्तिकता सामाजिकता से जुड़ी होती है। सामाजिक-आर्थिक विसंगतियों की इस शताब्दी में गीतकार

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

एकान्त में, करील-कुंज में, कालिन्दी के तट पर प्रगीत का रोमांस-भरा स्वर कैसे छेड़ सकता है ? युगीन परिस्थितियों से आँखें कैसे चुरा सकता है ? प्रगीत व्यक्तिविशेष ने लिखा है, केवल इसी आधार पर उसे वैयक्तिक कहना ठीक नहीं है ।

प्रगीत स्वानुभूतिमयी अभिव्यंजना होती है । अनुभूति की सचाई प्रगीत के लिए आवश्यक उपादान है । वह अनुभूति यदि व्यक्तिगत प्रेम की है तब भी तीव्र-प्रभावशाली प्रगीत का जन्म हो सकता है, लेकिन यदि कवि लोक-जीवन की अनुभूतियों का है, तो प्रगीत और भी प्रभावशाली होगा । लोकरस, लोकचेतना, लोकजीवन की अनुभूतियों से पगा प्रगीत, सामाजिकता/वैयक्तिकता का घोल है जो आधुनिक प्रगीत की पहचान है । आज के प्रगीत में रागतत्त्व एवं बुद्धितत्त्व भी इतनी बारीकी से मिला हुआ है कि दोनों को अलगाना कठिन है । राग और बोध जीवन के दो अनिवार्य तत्त्व हैं । मानव-जीवन में इन दोनों की समरसता अपेक्षित है । इस प्रकार की रागात्मकता में युगबोध की उपस्थिति तो रहती ही है, साथ ही युग-परिवर्तन के साथ रागतत्त्व में भी बदलाव आता है ।

आधुनिक प्रगीतकार को यथार्थवादी अभिव्यक्ति के लिए प्रगीत-रचना में बौद्धिकता का भी सहारा लेना पड़ता है । लेकिन प्रगीत में बौद्धिकता को कलात्मक प्रणाली के रूप में अपनाया जाता है । इसलिए इसमें बौद्धिकता की स्थिति वहीं तक ग्राह्य है, जिससे प्रगीत की मूल चेतना घायल न हो । बौद्धिकता कलात्मक ढलाव में यहाँ अपना रूप सँवारती है । इसी कलात्मक ढलाव में प्रगीत वैयक्तिक एवं सामाजिक, राग एवं बुद्धि इत्यादि बिन्दुओं को अपनी चेतना में समेटता है, फलस्वरूप स्वच्छन्द वृत्ति समकालीन जीवन-बोधों को अपनी प्रगीतात्मक शैली में प्रस्तुत करती है । हेलेन वेंडलर का कहना है कि गीत, बौद्धिक चिन्तन प्रगीत के दो ध्रुव हैं । उनका यह भी कथन है कि ये दोनों ध्रुव एक-दूसरे से नितांत पृथक् नहीं रह सकते । गीत में हल्कापन होता है और चिन्तन में आवश्यकता से अधिक गाम्भीर्य होता है । गीत को विश्लेषण की आवश्यकता होती है और चिन्तन को कुछ संश्लिष्ट होने की आवश्यकता होती है । जब गीत और चिन्तन एक-दूसरे से सम्पृक्त होते हैं, तब प्रगीत का जन्म होता है ।[५०] हुगो फेडरिक के अनुसार पोस्ट रोमांटिक प्रगीत निर्वैयक्तिक इस अर्थ में होता है कि इसमें प्रगीतात्मक शब्द काव्य-चरित्र और विचारशील व्यक्ति के संमिश्रण से उद्भूत नहीं होता, जो संमिश्रण स्वच्छन्दतावादियों का लक्ष्य रहा है । अनेक शताब्दी पूर्व के कवियों के विपरीत अब कविता में भाव निहित होता है, न कि यथार्थ । यह स्थिति अध्ययन की पुनर्रचना की है, न कि भावविह्वल हृदय से उपलब्ध किसी संदेश की । सुसन लैंगर के शब्दों में यह निर्वैयक्तिक विषयिपरकता की स्थिति है ।[५१]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अपनी अभिव्यंजना का आधार प्रगीत को बनाया। इसमें कवि को अपनी निजी अनुभूति को सहज रूप में प्रस्तुत करने की सुविधा होती है। मानवीय तुष्टि की उपयुक्त अभिव्यक्ति स्वच्छन्दतावादी रचनाकारों की रुझान होती है। फलतः सहज अनुभूतियों की अभिव्यंजना होती है जिसमें कोई आवरण, दुराव एवं छिपाव नहीं होता। प्रगीत वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी भावमयता की सर्वोपरि स्थिति है। इसमें कवि की भावना वैयक्तिकता से रंजित होती है एवं वैयक्तिक न्याय व वैयक्तिक विश्लेषण को व्यंजित करती है। प्रगीत सृजनात्मक कल्पना के द्वारा, कलात्मक प्रक्रिया से प्रस्तुतीकरण को शक्ति के द्वारा नूतन विचारधारा को उभारता है। इन गीतों में वैयक्तिक अनुभूतियों की व्यंजना उपलब्ध होती है। जर्मन के महान् स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अपनी प्रतिभा से प्रगीत को लोकगीत की शैली में ढाला है। इस प्रक्रिया में उन्होंने अपने परिवेश को भी भलीभाँति चित्रित किया है। अंग्रेजी के कतिपय आलोचक लोकगीत को स्वच्छन्दतावाद की निम्नस्तरीय प्रवृत्ति मानते हैं। लेकिन रूसी विचारक लोक-परिवेश एवं लोकगीतात्मक शैली को प्रमुख स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति के रूप में स्वीकार करते हैं। हिन्दी के नवस्वच्छन्दतावादी काव्य में लोकगीतात्मकता प्रमुख रूप में अभिव्यंजित हुई है। इसके द्वारा कवि अपनी अन्तःचेतना तथा परिवेश को सहज और मर्मस्पर्शी रूप में चित्रित करता है। अर्थात् नवस्वच्छन्दतावादी कवि अपनी प्रगीतात्मकता के रूप में अन्तः एवं बाह्य, चेतन एवं अचेतन की अनुभूतियों का समन्वित रूपायन करता है। इसलिए यहाँ परिवेशगत यथार्थता का भी संस्पर्श विद्यमान रहता है। आज का प्रगीत मात्र वैयक्तिक ही नहीं है, वरन् वैयक्तिक तथा सामाजिक चेतना से सिक्त होकर नवीन भावबोध को समाहित किये हुए है।

सन्दर्भ

१. उत्तरछायावादी हिन्दी काव्य की प्रवृत्तियाँ और धाराएँ, पृ० ४६।
२. डॉ० देवीशंकर अवस्थी : आलोचना और आलोचना, पृ० ९७।
३. Northrop Frye (Ed.) : Romanticism Reconsidered, p. 127.
४. "The poetic image is a more or less sensuous picture in words, to degree metaphorical, with an undernote of some human emotion in its conrext, but also charged with and releasing into the reader a special poetic emotion or passion."

—The Poetic Image, p 22

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

५. "An Image is that which presents an intellectual and emotional complex in an instant of time."

—William J. Handimax Westbrook (Ed.) : Twentieth Century Criticism, p. 85.

६. S. T. Coleridge : Imagination, p. 35.

७. T. E. Hulme : Speculations, p. 125.

८. "An image is a word which arouses ideas of sensory perception."

—Robin Skelton : The Poetic Pattern, p. 90.

९. चिन्तामणि भाग १, पृ० २२८।

१०. डॉ० नगेन्द्र : काव्य-बिम्ब, पृ० ५-६।

११. Frank Kermode : Romantic Image, p. 45.

१२. प्रधान सम्पादक डॉ० नगेन्द्र : भारतीय साहित्य कोश, पृ० ८२०।

१३. Frank Kermode : Romantic Image, p. 164.

१४. वही, पृ० १६३।

१५. डॉ० रमेश कुंतल मेघ : साक्षी है सौंदर्य प्राश्निक, पृ० ३४५–४६।

१६. Complete Psychological Works of Sigmund Freud, Vol. XIX, p. 135.

१७. C. G Jung : The Collected Works, Vol. V, p. 232.

१८. Dr. Satya Prakash Singh : Upanisadic Symbolism, pp. 4-5.

१९. वही, पृ० ४।

२०. A. N. Whitehead : Symbolism : Its Meaning and Effect p. 5.

२१. A. N. Whitehead, Symbolism : Its Meaning and Effect p. 21.

२२. Dr. Satya Prakash Singh : Upanisadic Symbolism, p. 8.

२३. Webester, quoted by Tindall : The Literary Symbol, p. 6.

२४. What is Psycho Analysis, p. 151.

२५. जयशंकर प्रसाद : काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध, पृ० ३५।

२६. नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृ० ११९।

२७. संपादक डॉ० धीरेन्द्र वर्मा : हिन्दी साहित्य-कोश, भाग १, पृ० ५१५।

२८. स० ही० वा० अज्ञेय : आलवाल, पृ० ९३।

२९. पद्मा अग्रवाल : प्रतीकवाद, पृ० १३।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MD

३०. डॉ० रमेश कुन्तल मेघ : साक्षी है सौंदर्य प्राश्निक, पृ० ३२४।
३१. Symbolism and American Literature, p. 4.
३२. Frank Kermode : The Romantic Image, pp. 46-47.
३३. Upanisadic Symbolism, pp. 399-422.
३४. William J. Handimax Westbrook : Edited : Twentieth Century Criticism, pp. 245-45.
३५. डॉ० नगेन्द्र : मिथक और साहित्य, पृ० ३७।
३६. "That myth is a philosophy–that it is a system of metaphysical or symbolic thought, that is a theology, a body of dogma, or a world view, that is a direct opposition to science, is indeed the other side of the scientific coin."
—William J. Handimax Westbrook. (Ed.) : Twentieth Century Criticism, p. 245.
३७. डॉ० जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव : मिथकीय कल्पना और आधुनिक काव्य, पृ० २०।
३८. John B. Vicknery (Ed.) : Myth and Literature, p. 10.
३९. Encyclopaedia Britannica-Macropaedia, Volume XII. p. 793.
४० Raymond Williams : Culture and Society. p. 270.
४१. डॉ० रमेशकुंतल मेघ : मिथक और स्वप्न, 'कामायनी' की मनस्सौंदर्य सामाजिक भूमिका, पृ० २०६।
४२. "We have distinguished myth from romance by the hero's power of action; in the myth proper he is divine, in the romance proper he is human."
—Northrop Frye : Anatomy of Criticism, p. 188
४३. "The lyric is the voice of the poet talking to himself or to nobody. It is an interior meditation or it is the voice out of the air, regardless of any possible speaker or bearer."
—Malcolm Brahury and James Macfarlane (Ed.) : Modernism, p 313.
४४. M. H. Abrams (Ed.) : The Norton Anthology of English literature. p. 1,2559.

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

"A lyric is any short poem directly expressing the poets thought or feeling."

४५. Malcolm Brahury and James Macfarlane (Ed.) : Modernism, p. 320.
"Poetry which takes the lyrics as its primary model will always tend to follow the contours of individual experience."

४६. David Perkins : A History of Modern Poetry, p. 595.
"Romantic poetry of personal utterance, Yeats also asserted and exemplified that a writer of lyrics must speak in some traditional role as lover, seer, madman, shephered or begger : "I commit my emotions he said near the end of his life."

४७. स० ही० वा० अज्ञेय : आलवाल, पृ० ६२ ।

४८. डॉ० धीरेन्द्र वर्मा (सं०) : हिन्दी साहित्यकोश, भाग १, पृ० २९० ।

४९. 'लय' पत्रिका (गोपालदास 'नीरज' का निबन्ध) अगस्त–अक्टूबर, १९६७, पृ० १४ ।

५०. Studies in Romanticism : Volume 21, No. 4, Winter, 1982, p. 644.

५१. वही, पृ० ६४४ ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

८

अन्ततः

आधुनिक मानव-मस्तिष्क के क्रिया-कलाप के दो रूप हैं, जिसमें एक का कार्य है—प्रयोगसिद्ध निरीक्षण के द्वारा इन्द्रियबोध को अभिव्यंजित करना, दूसरे का कार्य सृजन है, जिसमें यथार्थ को रचनात्मक शिल्प के द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है। यही कारण है कि कहीं की भी पूर्व-स्वच्छन्दतावादी कविता में गम्भीर सादृश्य होता है, जिसे हम इन्द्रियबोध कहते हैं। प्रत्येक युग के कवि और संस्कृतियाँ बिम्बों और विचारों को संवेदनात्मक रूप में प्रस्तुत करती हैं। लेकिन पूर्व-स्वच्छन्दतावादी काव्य-बिम्ब प्रकृति-प्रदत्त होते हैं। स्पष्ट ही प्रकृति ईश्वर की कला है। यहाँ प्रकृति ईश्वर की कला के कार्य के रूप में दिखायी पड़ती है। इस प्रकार प्रकृति पूर्व-स्वच्छन्दतावादी कवि के लिए वस्तुगत-प्रणाली है, जिसका कवि अनुसरण करता है। कवि जो उपमाएँ और अलंकार ग्रहण करता है, वे दृश्य भी होते हैं और स्थूल भी। कवि की सर्जनात्मक शक्तियाँ बाह्य संरचना से प्रभावित होती हैं। प्रकृति का बाह्य रूप ही पूर्व-स्वच्छन्दतावादी कवि का आदर्श होता है, वह उसी का पर्यवेक्षण तथा यथातथ्य अभिव्यंजन करता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि पूर्व-स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ बाह्य होती हैं। लेकिन स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ अन्तः एवं बाह्य का विलयन हुआ करती हैं। वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी कवि की सर्जनात्मक क्षमता आन्तरिकता को ही आधार बनाती हैं और यही स्वच्छन्दतावादी काव्य की मूलभूत इकाई है। पूर्व-स्वच्छन्दतावादी कविता का मानव सभ्य, सुसंस्कृत एवं भद्र है, लेकिन स्वच्छन्दतावादी काव्य का इन्सान प्रकृतिरूप में आदिमानव है। पूर्व-स्वच्छन्दतावादी सर्जना मूलतः रूढ़िवादी होती है। लेकिन स्वच्छन्दतावादी काव्य का ढांचा क्रांतिकारी होता है। उसमें रूढ़ियों के प्रति विद्रोहभाव होता है। पूर्व-स्वच्छन्दतावादी कविता में स्वर्ग ईश्वर की अच्छाई का परिचायक है और यह ईश्वरीय अच्छाई ऊपर से इन्सान की आत्मा में उतरती है। स्वच्छन्दतावादी सृजन में अन्तः एवं बाह्य, गति और चेतना मिल जाते हैं। लेकिन जहाँ पर बाह्य और आन्तरिकता का समीकरण हो तथा अहं और वस्तु का एकीकरण हो, वही स्थिति स्वच्छन्दतावादी काव्य की है। जहाँ द्रष्टा और द्रष्टव्य का वैषम्य समाप्त हो जाय, वहीं स्वच्छन्दतावादी कविता का जन्म होता है।

स्वच्छन्दतावादी अनुभूतियों में इन्द्रियों के ऊपर बल नहीं दिया जाता, मस्तिष्क की सर्जनात्मक शक्ति पर बल दिया जाता है, जहाँ यथार्थ को अनुभव के आधार पर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

निर्मित किया जाता है। अतः स्वच्छन्दतावाद में भावात्मक या रंगीन विचारधारा का अंकन यथार्थ रूप में होता है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी कवि तीव्र प्रचण्डता के साथ बाह्य सत्यता को चुनौती देकर 'टोन' या 'मूड' की एकरूपता का सृजन करता है। इसी एकरूपता का सृजन अच्छी स्वच्छन्दतावादी कविता के विशेष उपादानों में से एक है। यह काव्य मनोवैज्ञानिक दृष्टि से जादूगर के निकट है। जादूगर की तरह स्वच्छन्दतावादी कवि अपनी दुनिया स्वयं बनाता है तथा उसमें व्यवधान उपस्थित करनेवाली चीजों को समाप्त कर देता है। विभिन्न आध्यात्मिक शक्तियाँ यथार्थ में परिवर्तित हो जाती हैं, जो विशेष केन्द्रीकरण के द्वारा खास अनुभव पर टिक जाती हैं। इस प्रकार का शब्द जादू के मूड की एकरूपता एवं जादूगर की झोली को इंगित करता है। ऐतिहासिक दृष्टि से स्वच्छन्दतावादी धारा रोमांस के निकट है, जिसका प्रयास आदर्श दुनिया को बनाये रखना है एवं विरोधाभास की घुस-पैठ को समाप्त कर देना भी है। जिसमें यथार्थ व्यंग्य का अतिक्रमण न हो, वही स्वच्छन्दतावादी विचारधारा है।

स्वच्छन्दतावाद एक कलात्मक आन्दोलन है, क्रान्ति है, परम्परा एवं रूढ़ियों के प्रति विद्रोह है तथा जीवन के प्रति एक विशेष प्रकार की रुझान है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावाद सर्वप्रथम एक विचारधारा है जिसका प्रकाशन साहित्य और कला के विभिन्न क्षेत्रों में क्रमशः होता आया है। कवि इसमें सौन्दर्यानुभूतियों के चित्र सक्रिय कल्पना के आधार पर प्रस्तुत करता है। इसमें स्वतन्त्रता की चेतना की प्रधानता रहती है। फलतः कवि रूढ़िगत विचारधाराओं एवं काव्य-शैलियों के विरोध में विद्रोह करता है। इसमें कवि क्रांतिकारी विचारधारा का समावेश करके स्वतन्त्रता, सामाजिक न्याय और व्यक्ति-स्वातन्त्र्य की भावनाओं का हृदय की मार्मिक एवं तीव्र अनुभूतियों के साथ गहराई से मनोवैज्ञानिक सम्बन्ध स्थापित करता है। इसमें कल्पना गतिशील एवं सूक्ष्म होती है जो कवि में भावावेश की स्थिति ला देती है। इस तरह स्वच्छन्दतावाद अन्तः एवं बाह्य अनुभूतियों की काल्पनिक प्रस्तुति है। इसमें जीवन एवं जगत् के प्रति भावात्मक क्रांतिकारी चेतना की सुन्दर अभिव्यंजना मिलती है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावाद भावना है, इसके मूल में क्रांति एवं अभिनव सृजन की प्रधानता है। इसलिए स्वच्छन्दतावादी चेतना की एक विशेष पहचान इसकी प्रस्तुति में विद्रोह, क्रांति एवं नवीनता है। स्वच्छन्दतावादी कवि सत्ता तथा परम्परा एवं रूढ़ियों का विरोधी होता है, चाहे वह राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक या साहित्यिक ही क्यों न हो?

स्वच्छन्दतावाद गतिशील है, किंचित् स्थिर नहीं। इसमें व्यवस्था की अपेक्षा अव्यवस्था अधिक होती है। बौद्धिक सफाई की अपेक्षा निरन्तरता पर बल होता है,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

जिसके अन्तर्गत तीव्र प्रकाशविन्दु की अपेक्षा धुंधले प्रकाश-विन्दु की अधिकता होती है। जिसमें बाह्य झुकाव की अपेक्षा आन्तरिकता अधिक हुआ करती है और जिसमें इस संसार की अपेक्षा दूसरे संसार की रुझान पर बल दिया जाता है। स्वच्छन्दतावादी काव्य में अस्पष्टता, धुंधलापन एवं आन्तरिक अनुभूति की अभिव्यक्ति स्वतः होती है। इस स्वच्छन्दतावादी कविता में अव्यवस्था, निरन्तरता के प्रति प्रेम और दूसरी दुनिया के प्रति प्रेमभाव की अभिव्यक्ति भी निहित है। इस काव्य-प्रवाह में अचेतन प्रवृत्तियों की बाढ़ होती है। साथ ही यह भी कहा जा सकता है कि पुरानी शैली की परिसमाप्ति ही स्वच्छन्दतावाद की प्रमुख विशेषता है। स्वच्छन्दतावादी कवि कथ्य एवं शिल्प के रूप में नवीनता का प्रेमी होता है।

मानव-मस्तिष्क की आंतरिक अभिव्यंजना स्वच्छन्दतावाद है। स्वच्छन्दतावादी कवि यथार्थ की दुनिया से हटकर स्वयंनिर्मित संसार में वापस आ जाता है और यहीं से प्रकृति की ओर लौटने की शुरुआत होती है। स्वच्छन्दतावादी कवि स्वीय अनुभूति को वाणी देता है। वह अपनी कविताओं में आध्यातिमक दुनिया को अभिव्यंजित नहीं करता, बल्कि अपने स्वयं और मानव-जीवन की अमरता की अनुभूति को वाणी देता है। मानवीयता एवं इहलौकिकता इसकी अपनी अस्मिता है।

स्वच्छन्दतावादी काव्य की गंभीर विवेचना के बाद निष्कर्षतः यही प्रमाणित होता है कि स्वच्छन्दतावाद के अन्दर सर्जनात्मक कल्पना, व्यक्तिवादिता, मिथक, फैंटेसी, बिम्ब, प्रतीक, प्रगीत और चेतन प्रकृति की व्याप्तता होती है। इसमें विषय एवं विषयि, स्वयं और दुनिया, चेतन और अचेतन के बीच की दूरी समाप्त हो जाती है। इस तरह स्वच्छन्दतावाद, विचार और अनुभूति का सुन्दर समन्वय है। निम्न साहित्यिक स्तर में भी स्वच्छन्दतावाद के अन्दर एकता मिलती है—पुनर्जागरण एवं रहस्यभावना, प्राचीन रोमांच, लोकगीत एवं मध्ययुगीन रुझान। स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ आज भी विविध विचारों में काफी उलझकर रह गयी हैं। इस तरह कहा जा सकता है कि स्वच्छन्दतावाद की शाब्दिक परिभाषा भ्रामक ही है। केवल इंगित किया जा सकता है कि रोमांटिकता क्या है? निश्चय ही यह प्रश्न आधुनिक कविता का ही प्रश्न नहीं है, समूचे हिन्दी-साहित्य का एक अन्तर्द्वन्द्व है। स्वच्छन्दतावाद एक प्रवृत्ति है लेकिन अपने मौलिक रूप में एक विचारधारा है, जिसके परिप्रेक्ष्य में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक परिस्थितियों का प्रमुख योगदान रहा है। स्वच्छन्दतावाद कविता का केवल प्रकार ही नहीं है, परन्तु कविता का एक तत्त्व भी है। इस अर्थ में सभी कविताएँ विशेषकर जो नूतन तथा विचित्र होती हैं, स्वच्छन्दतावादी होती हैं। इस प्रकार आधुनिक जगत् स्वच्छन्दतावादी आन्दोलन का ही सामान्यतः परिणाम है। आधुनिक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

साहित्यकार पुरातन कथा-प्रियता की जगह मनोवैज्ञानिक अधिक हो गया है और इस विन्दु पर साहित्यकार अपने सर्जन में स्वच्छन्दतावादी ही रहता है। स्वच्छन्द रुझान हर ऊँची कला तथा महान् कलाकार की अपनी विशेषता है। कला स्वच्छन्द वृत्ति से कटकर कलात्मक उत्कृष्टता को नहीं ला सकती। सर्जनात्मक एवं सक्रिय कल्पना कला को जन्म देती है। इसके अभाव में कला उभार की स्थिति में नहीं आ सकती। कम्युनिज्म भी अपने-आपमें एक प्रकार की स्वच्छन्दतावादी तरंग है, जिसके द्वारा एक कल्पित या आदर्श संसार का स्वप्न देखा जाता है। तथापि इसमें एक ऐसे समाज की कल्पना की जाती है, जो अस्तित्व में नहीं है। उसकी संभावनाओं को कवि कल्पना की आँखों से देखता है। देखने की यह कला और उस समाज में नव-मानव की परिकल्पना भी स्वच्छन्दतावादी चेतना का एक रूप है। प्रेम से मनुष्य वंचित नहीं रह सकता, सौन्दर्य के प्रति मानवीय आकर्षण तो होता ही है। क्रांति के द्वारा अपनी दुनिया को परिवर्तित करना चाहता है। क्रांति और क्रांतिकारी वैचारिकता के मूल में भविष्य का एक स्वप्न होता है। भविष्य के स्वप्न के द्वारा हम क्षितिज के उस पार भी देखते हैं। यह काम साहित्यकार स्वच्छन्दतावादी दृष्टि से ही कर पाता है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी चेतना के अभाव में रचनाकार ऐसा नहीं कर सकता। सामान्यतया लोग इस तथ्य से परिचित नहीं हैं कि स्वच्छन्दतावादी चेतना बिम्ब-विधान, क्रियाशक्ति एवं बौद्धिकता से समन्वित अनुभूति स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति को बनाती है। लेकिन जब विचार और अनुभूति एकीभूत हो जाते हैं तो काव्य-प्रक्रिया क्लिष्ट होने लगती है। अंग्रेजी की अठारहवीं शताब्दी की कविता एवं हिन्दी की द्विवेदी-युगीन तक की कविता समझने में आसान है। कथ्य एवं अनुभूति भी स्पष्ट है। लेकिन जब विचार और अनुभूति एकीभूत हो जाते हैं तो काव्य-प्रक्रिया क्लिष्ट होने लगती है। तब केवल कथनमात्र ही नहीं होता, बल्कि संश्लिष्ट 'प्रतीक' के द्वारा हम अनुभूति में स्वतः डाल दिये जाते हैं। वहाँ हमें संवेग ही नहीं मिलता, बल्कि कवि के निजी संसार के रहस्य के सम्बन्ध में स्वानुभूति अनुभव भी मिलता है और संभवतः अपना स्व ही। स्वच्छन्दतावाद में रहस्य-विस्मय एवं जिज्ञासा-भाव एक सामान्य तत्त्व है, जिसकी चर्चा अधिकांश आलोचकों ने की है। रहस्य-विस्मय एवं जिज्ञासा-भाव में कवि अतीत या भविष्य के आदर्शों का स्वच्छन्दतावादी ढलाव करता है। देवी-देवताओं की शक्ति की तरह कला की प्रारम्भिक एवं आदिम सहज प्रकृति जो यथार्थ को चित्रित करने का यथासमय प्रयास करती है, वही सदैव 'रहस्य' की स्थिति होती है। जहाँ स्वच्छन्दतावादी चेतना की प्राप्ति होती है, वहीं रहस्य-जिज्ञासा-भाव की भी और जहाँ कभी भी रहस्य-जिज्ञासा भाव की स्थिति है, वहाँ 'प्रतीक' मिलेगा। केवल 'प्रतीक' ही रहस्य-जिज्ञासा-भाव को स्पष्ट कर सकता है। 'प्रतीकीकरण' बीसवीं शताब्दी की कविता की केन्द्रीय प्रवृत्ति है इसलिए आज की कविता कवि-मन की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति है। प्रतीकात्मक अभि-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

व्यंजना के द्वारा आज स्वच्छन्दतावाद एक नया रूप ले रहा है। वस्तुतः प्रतीकात्मक अभिव्यंजना स्वच्छन्दतावादी होती है और इसलिए प्रत्येक युग में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति उभरती है। कलात्मक अभिव्यंजना के दूसरे रूपों की अपेक्षा 'प्रतीक' में यथार्थ को ग्रहण करने की शक्ति अधिक होती है। कवि मानव अनुभव में समागत आत्यन्तिक और अनिर्वचनीय तत्त्व की अभिव्यक्ति 'प्रतीक' के माध्यम से ही कर सकता है। 'प्रतीक' कवि की आत्मिक अभिव्यंजना होती है और इसी विन्दु पर प्रतीकात्मक अभिव्यंजना स्वच्छन्दतावादी हो जाती है।

स्वच्छन्दता के बारे में प्रायः कहा जाता है कि इसमें स्वतन्त्रता का एक नया बोध होता है। स्वतन्त्रता के इस नये बोध के अन्तर्गत कथ्य की स्वतन्त्रता आती है, चाहे वह राजनीतिक, व्यक्तिगत, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक अथवा किसी भी प्रकार की क्यों न हो, जिसके अन्तर्गत साहित्यिक संरचना की स्वतन्त्रता और विधा के एक नये रूप का अनावृत होना है। इसका तात्पर्य यह है कि कवि के गहरे व्यक्तिगत ढंग में संवेगों की अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता भी आती है। किन्तु एक स्वतन्त्रता जिसकी ओर सामान्यतया लोगों की दृष्टि नहीं गई है—'प्रतीकात्मक' अनुभवजन्य स्वतन्त्रता। यह स्वतन्त्रता पाठकों को कवि की ओर से दी जाती है। क्योंकि हम अनुभव में सीधे डाल दिये जाते हैं, न कि केवल उसके बारे में कह दिये जाते हैं जैसा कि रूपक आदि में होता है। हमें एकदम स्वतन्त्र छोड़ दिया जाता है, संभवतः आत्मान्वेषण के लिए और यह कोई छोटी-मोटी अभिप्राप्ति नहीं है। लेकिन जहाँ एक ओर 'प्रतीकात्मक' स्वच्छन्दतावादी कविता हमें स्वतन्त्रता का वरदान देती है, वहाँ यह उसके लिए हमसे मूल्य वसूल लेती है। यह मूल रहस्यात्मक ढंग से रहने के लिए स्वीय इच्छा का समर्पण है और ये रहस्य हैं—ज्ञात और अज्ञात के, शान्त और अनन्त के, अपने गहनतम स्व के तथा स्व-इतर के भी। अन्ततोगत्वा 'प्रतीक' कवि की ओर से व्यक्ति को मानवीय रहस्यों का सामना करने के लिए सुन्दर के साथ भयंकर स्वतन्त्रता भी देती है। 'प्रतीकात्मक' अभिव्यंजना वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी चेतना का ही स्पन्दन है, स्वच्छन्दतावाद न तो अकस्मात् पैदा होता है और न विलुप्त ही होता है। विगत कतिपय दशकों से हम देखते हैं कि जिसे हम स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति कहते हैं वे न्यूनाधिक एक तत्त्व हैं, प्रत्येक काल और प्रत्येक कलाकृति का। इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी तत्त्व मानव-जीवन की विविधता में कहीं-न-कहीं उलझे-सुलझे हुए रूप में मिलता ही रहता है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी चेतना जीवन की यथार्थता है। जीवन की यथार्थता के रूप में इसकी अभिव्यंजना होती रहती है।

स्वच्छन्दतावाद की यथार्थता वस्तुतः नवस्वच्छन्दतावाद की पहचान है। यथार्थ से कटा हुआ, मात्र कल्पना से जुड़ा हुआ काव्य व साहित्य नवस्वच्छन्दतावादी नहीं हो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

सकता। नवस्वच्छन्दतावाद में दैवी भावना एवं अतिमानवता को मानव-रूप में तथा अति-प्राकृतिकता को प्रकृति-रूप में अभिव्यंजित किया गया। इस अभिव्यंजना-प्रवाह में अब केवल प्रकृति एवं मानव-जीवन की झाँकियों की प्रधानता है। वैचारिकता एवं बौद्धिकता के फलस्वरूप कविता बोझिल है। नवस्वच्छन्दतावादी काव्य व कला मानव और प्रकृति की सुन्दर मंजूषा है। यथार्थवादी चिन्तन इतना गहरा हो गया है कि स्वच्छन्दतावाद को नवस्वच्छन्दतावाद कहा गया है। यथार्थता समकालीनता की अभिव्यंजना में सहायक बनती है। यही नवस्वच्छन्दतावादी काव्य-कला को जीवन्त बनाती है, गतिशील बनाती है और यही इसकी अस्मिता है। वस्तुतः नवस्वच्छन्दतावादी काव्य समाजशास्त्रीय कथ्य की स्वच्छन्दतावादी अभिव्यक्ति है।

आधुनिक हिन्दी कविता सामाजिक परिवेश से टकराकर नये रूप में करवट लेती है। हिन्दी स्वच्छन्दतावाद में रूढ़ियाँ निर्मित हो रही थीं और वह परम्परागत होता जा रहा था। कथ्य की स्वतन्त्रता के नाम पर भावुकता की अधिकता होने लगी थी। इस तरह कलात्मक नियम भी अधिकाधिक रूढ़ होते जा रहे थे। वस्तु और शिल्प की रूढ़िवादिता के कारण स्वच्छन्दतावादी चेतना यहाँ कमजोर दिखाई पड़ती है। लेकिन यहाँ स्वच्छन्दतावादी चेतना पूरी तरह समाप्त नहीं हो पाती और आधुनिकता-बोध के संस्पर्श से स्वच्छन्दतावादी कविता अपना विस्तार करती है। वैज्ञानिक उपलब्धियों के फलस्वरूप तथा सामाजिक वातावरण से प्रसूत हिन्दी कविता यहाँ आकर यथार्थवादी चेतना से मिलती है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी तथा यथार्थवादी बोध के समन्वय से स्वच्छन्दतावाद नये रूप से उभरता है। इस बदलाव की व्याख्या के लिए 'नवस्वच्छन्दतावाद' नाम देना पड़ा। यद्यपि यह एक परिवर्तित दृष्टि है और इसमें कहने और अनुभव करने के तरीके बदल जाते हैं। यहाँ यथार्थवाद एक शैली के रूप में विकसित होता है जो एक प्रकार का स्वच्छन्दतावाद है, जो जीवन से पलायन और सुदूर कल्पना-लोक के परिभ्रमण को अस्वीकार करता है। परन्तु इसके बदले अपनी दृष्टि को वर्तमान अनुभूतियों पर केन्द्रित करता है, जिसे वह 'रोमांटिक आयरनी' द्वारा व्यक्त करता है। वस्तुतः प्रत्येक यथार्थवाद में स्वच्छन्द प्रवृत्ति होती है, जिसे बाद में स्वच्छन्दता विरोधी कह देते हैं। यह स्वच्छन्द प्रवृत्ति यथार्थवाद में व्यंग्य के द्वारा अभिव्यक्त होती है और इसकी पहचान आधुनिकता है।

नवस्वच्छन्दतावादी कविता में युग-सापेक्षता एवं यथार्थता का स्वर मुखरित है। स्वच्छन्दतावादी-छायावादी कवि पंत, प्रसाद, निराला तथा महादेवी वर्मा का स्वच्छन्दतावादी-छायावादी युग समाप्त नहीं है, केवल उसकी दिशा में थोड़ा-सा परिवर्तन है। 'दूसरे-सप्तक' वाले नवीन भावनाएँ लेकर प्रयोगवाद में आए। 'दूसरा-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

समक्ष' रोमैंटिक परिधान की दृष्टि से अधिक मनोरम है। रोमांटिक भावनाएँ जीवन की यथार्थता है। यह सत्य है कि यथार्थता की रेखाएँ रोमांटिक भावनाओं के साथ उभरती रहती हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वच्छन्दतावाद का विकास युगानुरूप आज भी हो रहा है। वस्तुतः हिन्दी कविता के इतिहास में नवस्वच्छन्दतावादी चेतना की अभिव्यंजना परिवेशगत आवश्यकता थी। क्योंकि आधुनिकता-बोध के नये संदर्भों का आरम्भ ऐतिहासिक अनिवार्यता के कारण हुआ था। स्वच्छन्दतावादी वायवी कल्पना-युग-धर्म के लिए अनपयुक्त एवं बेकार हो चुकी थी। युग की यथार्थता के समक्ष उसकी अतिशय कल्पनाशीलता भावुकतापूर्ण स्वच्छन्दतावाद हास्यास्पद-सा प्रतीत होता था। फलतः यथार्थवादी युग के नये कवि के लिए सार्थक अभिव्यंजना के कथ्य एवं शिल्प की समस्याएँ थीं। इस तरह ये कवि आगे बढ़े भी। कविता का रचना-संसार समसामयिक चिंतन एवं यथार्थ से जुड़ गया।

नवस्वच्छन्दतावादी कविता की निराशा इहलौकिक है, पार्थिव है, कल्पना से अधिक उस पर यथार्थ जीवन का विषाद एवं निराशा का रंग है। इस धारा का रचनाकार समकालीन यथार्थता/जीवन-बोध को भी चित्रित करता है। नवस्वच्छन्दता-वादी धारा में स्वच्छन्दतावाद/यथार्थवाद एक समन्वित इकाई के रूप में परिवर्तित दिखाई पड़ता है। यह परिवर्तन वस्तुतः दोनों की सहजता से प्रसूत है। इस मिलन-प्रक्रिया में स्वच्छन्दतावाद/यथार्थवाद अपने सहज एवं विशुद्ध रूप में दिखाई नहीं पड़ते। इनके सहज मैत्री-भाव के आपसी मिलाप की प्रक्रिया नवस्वच्छन्दतावादी कला को उभारती है। समकालीन मानव-जीवन-बोध के फलस्वरूप नवस्वच्छन्दतावादी कवि लोकतांत्रिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक चेतना को चित्रित करता है। फलतः सामाजिक धरातल चरमरा जाता है, एक नवीन परिवेश उभरता है। युग-सापेक्षता से इन कवियों का चिन्तन सामाजिक चेतना के कारण नया रूप ग्रहण करता है। स्वच्छन्दतावाद में केवल वैयक्तिक एवं काल्पनिक अनुभूतियों का बखान हो रहा था, इसलिए उसे व्यक्तिवादी व काल्पनिक काव्य कहा गया, लेकिन नवस्वच्छन्दतावादी कला व्यष्टि के साथ समष्टि की समस्याओं को व्याख्यापित करती है, वस्तुतः व्यक्ति-मन के साथ-साथ बाह्य स्थितियों एवं समसामयिक समस्याओं का बखान भी करती है। ये कवि समाजवादी यथार्थवाद से प्रभावित होकर शोषितों के जीवन और उसकी समस्याओं के लिए क्रांति करना चाहता है। ये कवि सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक रूढ़ियों से जूझते हैं और परिणाम में नव चिन्तन छनकर आता है। वस्तुतः रचनाकार सामाजिक जीवन से कटकर नहीं चल सकता। मार्क्स-वादियों के अनुसार स्वच्छन्दतावाद का एक क्रांतिकारी रूप भी होता है। गोर्की ने सामा-जिक स्वच्छन्दतावाद/क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद को स्वीकार किया है। यथार्थवादी दृष्टि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

के कारण इन कवियों में मानव-जीवन को समझने की अद्भुत क्षमता होती है और वह जन-साधारण के कष्टों का चितेरा बन जाता है। जिस तरह सामाजिक व्यथा से जागृत मानवी आत्मा यथार्थवादी हो जाती है, उसी तरह अपनी सम्पन्न परिस्थितियों में अपनी भावनाओं के मनोहर-कोष से चेतन मानवी आत्मा, भावना-प्रधान और कल्पना-प्रधान, जिसे रोमांटिक कहते हैं, हो जाती है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावाद और यथार्थवाद में केवल परिस्थितियों का भेद है। यथार्थवादी भी उतना ही भावना-प्रधान, ओजमय हो सकता है जितना कि रोमांटिक। परन्तु उसका दृष्टिकोण बहिर्मुख है, बाह्य वास्तविकता के संघर्ष से उत्पन्न उनकी भावनाएँ हैं और स्वच्छन्दतावादी रचनाकार का दृष्टिकोण अपने आंतरिक जगत् के प्रति है। प्रत्येक स्वच्छन्द वृत्ति अपने में यथार्थता की स्थिति को लिये होती है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि स्वच्छन्दतावादी कवि या लेखक स्वच्छन्द प्रकृति का होता है। गोर्की का यह भी कहना है कि महान् कलाकारों में यह बतलाना कि वे कहाँ तक स्वच्छन्दतावादी अथवा यथार्थवादी हैं, कठिन है, कारण उनमें यथार्थवाद और स्वच्छन्दतावाद के तत्त्व दूध-पानी के रूप में घुले-मिले रहते हैं। लोक-साहित्य को गोर्की ने नयी सर्जना के एक महत्त्वपूर्ण प्रेरणा-स्रोत के रूप में स्वीकार किया है। लोकगीतों, पुराण-कथाओं आदि का निर्माण कल्पना के ताने-बानों से होता है। कल्पना के अर्थ हैं यथार्थ के अन्तर्गत निहित किसी बुनियादी भाव या विचार का अमूर्तीकरण कर उसे एक बिम्ब में मूर्त कर देना, और यह प्रक्रिया ही हमें यथार्थवाद की उपलब्धि करा देती है। परन्तु यथार्थ से जिस वस्तु को ग्रहण कर अमूर्तित किया गया है, यदि संभाव्य तथा आकांक्षित का पुट देकर उसके अर्थ का विस्तार कर दिया जाय तो हमें एक ऐसे स्वच्छन्दतावाद की प्राप्ति होगी जो यथार्थ के प्रति एक क्रांतिकारी दृष्टिकोण का आधार लेकर ही दुनिया को नये साँचे में ढाला जा सकता है। इस प्रकार की उत्कृष्ट सर्जना-कल्पना व यथार्थ की समन्वित कलात्मक साधना होती है। कला की उत्कृष्टता की पहचान भी यही है। महान् प्रतिभा अपनी रचनाओं में इन्हीं कलात्मक बिन्दुओं का विस्तार करती है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी कवि भी यथार्थवादी होता है तथा यथार्थवादी कवि भी स्वच्छन्दतावादी होता है। इन दोनों की समन्वित कलात्मक साधना से ऊँची कला उभरती है। इस बिन्दु पर आकर कवि व रचनाकार नवस्वच्छन्दतावादी हो जाता है।

पाश्चात्य विचारक एम० सेलियार ने स्वच्छन्दतावाद की बुराई का सम्बन्ध केवल क्रांतिकारी आन्दोलन से माना है। जहाँ यह अपने रास्ते से अलग हो गया है तथा सामाजिक रहस्यवाद और अद्यतन साम्यवादी समाजवाद में मानना चाहिए। लेकिन क्रान्ति के द्वारा रचनाकार अपनी चेतना का विस्तार करता है और समाजवादी यथार्थवाद के क्रम में भी यह क्रांतिकारी स्वच्छन्दतावाद से जुड़ता है। इन दोनों अव-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

धारणाओं से स्वच्छन्दतावादी कला महान् बनती है । स्वच्छन्दतावाद में क्रांति का होना दोष नहीं है, बल्कि युग-धर्म की व्याख्या है । समाजवादी यथार्थवाद क्रांति-आन्दोलन का आधार है । इन दोनों के कारण कला उच्चतर विन्दु की ओर अग्रसर होती है । वस्तुतः बाद के स्वच्छन्दतावादी मात्र स्वच्छन्दतावादी नहीं रहे । क्रांति-आन्दोलन तथा समाजवादी यथार्थवाद स्वच्छन्दतावादी को नवस्वच्छन्दतावादी स्वरूप देता है । वस्तुतः नवस्वच्छन्दतावादी काव्य स्वच्छन्दतावादी काव्य की उच्चतर भूमि है । गिलमैन को लिखे अपने पत्र में कॉलरिज का कथन है कि स्वच्छन्दतावादी विचार और कल्पना की इस गवेषणा को हम वहाँ समाप्त करते है जहाँ से आरम्भ लक्षित होता है और उनका विश्वास है कि वे इसे कुछ उच्चतर बिन्दु पर ले जा सके हैं । कविता के लिए उपस्थापित ऊँचे तर्कों की भूमिका के 'प्रोस्पेक्टस' नामक अपने ग्रंथ में वर्ड्सवर्थ ने मनुष्य, प्रकृति और मानव-जीवन के अपने ध्यानों के पीछे निहित मौलिक गुणों को अर्थात् जहाँ से चला है वहीं पहुँचा लेकिन उसी स्थान के उच्चतर बिन्दु पर ।

गंगोत्री से पानी चलते-चलते अन्त में भी उसी रूप में चलता है, लेकिन जगन्नियन्ता संसार की रचना क्यों करता है ? उद्देश्य के साथ करता है तो उसमें कमी होगी । निरुद्देश्य सर्जना का कोई अर्थ नहीं होता । इसलिए वह अपने पूर्ण आनन्द को रचनात्मक आनन्द के रूप में परिणत करने के लिए सृष्टि करता है । ठीक उसी तरह स्वच्छन्दतावादी साहित्यकार अपनी कल्पना को यथार्थ से जोड़ने के लिए समकालीन जीवनानुभूतियों से सिक्त कर अपनी मूल चेतना को जीवित रखता है । वस्तुतः अपने नूतन विकास की स्थिति में स्वच्छन्दतावादी कला जीवन-यथार्थ की अभिव्यंजना करती है । इस प्रकार हम कह सकते हैं कि हरिद्वार की गंगा से किसी भी स्थिति में काशी की गंगा कम पवित्र और अकल्याणकारी नहीं है, स्यात् ज्यादा ही है, क्योंकि उसने जन-जीवन को सींचने में हरिद्वार की गंगा से ज्यादा अपने को लगाया है । इसीलिए काशी की गंगा लोकातीत शिवत्व का अधिष्ठान बन सकी है । गंगा हरिद्वार से प्रवाहित होती हुई प्रयाग तक पहुँचकर त्रिवेणी बन जाती है । इसी त्रिवेणी के उपरान्त ही वास्तविक शिवत्व की प्राप्ति होती है जो काशी की उपलब्धि है । हरिद्वार की गंगा में पवित्रता ही पवित्रता है, किन्तु काशी की गंगा में कलुषता को मिटाने की क्षमता भी है । अतः नवस्वच्छन्दतावादी कला अपनी मूल चेतना रोमांटिकता को लेकर तो चलती ही है, लेकिन हरिद्वार की गंगा और काशी की गंगा में जो पार्थक्य है, जो यथार्थता है, जो उपयोगितावादी रूप है, वही स्थिति स्वच्छन्दतावादी और नवस्वच्छन्दतावादी कला और कलाकारों की है ।

हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी भाषा-शिल्प भी एक नवीन रूप में हमारे सामने आता है । उसी तरह हिन्दी के नवस्वच्छन्दतावादी रचनाकार भाषा-शिल्प के रूप में नवीन दिशा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

की ओर अग्रसर हो रहे हैं। बीसवीं शताब्दी का काव्य बौद्धिक एवं मीमांसात्मक होने से इसकी अभिव्यंजना विलष्ट होती जा रही है। कवि की चेतना अंतः एवं बाह्य, चेतन-अचेतन, वैयक्तिकता एवं सामाजिकता, विद्रोह एवं क्रांति, कल्पना और यथार्थ के संघात से संश्लिष्ट रूप में हमारे सामने आती है। इस संश्लेषण की स्थितियों को अभिव्यक्त करने के लिए कवि अपनी चेतना के अनुसार मिथक, फैंटेसी, बिम्ब, प्रतीक एवं प्रगीतात्मकता के द्वारा, समकालीन जीवन-बोध से संपृक्त कर सक्रिय कल्पना से एक नवीन रूप में उसकी पुनर्व्याख्या करता है। कवि ज्ञान को कलात्मक रूप देता है। इस प्रक्रिया में नवस्वच्छन्दतावादी साहित्यकार हर बिन्दु पर वैयक्तिकता / आंतरिकता, व स्वीय भावना को चित्रित करता है। इस चित्रण-प्रक्रिया में वह विरोधाभास को अपनी प्रतिभा से एक नूतन रूप देता है। इस सर्जन-प्रक्रिया में उसकी वैयक्तिकता, उसकी सर्जनात्मक क्षमता हर बिन्दु पर स्वच्छन्द उड़ान लेती चलती है। नवस्वच्छन्दतावादी साहित्यकार की आन्तरिकता जो कथ्यों की थी, उसकी रक्षा वे शिल्प तंत्र के रूप में नवस्वच्छन्दतावादी काव्य में करता है। वस्तुतः स्वच्छन्दतावादी चेतना की आत्मपरकता, वैयक्तिकता, आंतरिकता नवस्वच्छन्दतावादी शिल्प के रूप में दिखाई पड़ती है। शिल्प-तंत्र में हर कवि यहाँ एक-दूसरे से अलग है। यह अलगाव कवि की स्वच्छन्द, सर्जनात्मक एवं सक्रिय कल्पना का व्यापार है। शिल्प के रूप में भाषा, फैंटेसी, मिथक, बिम्ब, प्रतीक एवं प्रगीत आदि उपकरणों के द्वारा कवि अपनी आंतरिकता को मौलिक रूप में प्रस्तुत करता है। सामाजिक परिवेश और युगीन चेतना कवि-अनुभूतियों को सजग और प्रेरित करते हैं। फलतः उसकी अनुभूति में वैविध्य स्वाभाविक है। प्रत्येक नवस्वच्छन्दतावादी कवि के शिल्प-तंत्र में उसकी वैयक्तिकता अलग से बोलने लगती है। समकालीन जीवन-बोध को रूपायित करने में उनका शिल्प निजी शिल्प हो गया है। ये कवि स्वाभाविक रूप से नूतन बिम्ब-विधान, नवीन प्रतीक एवं मिथकीय चेतना के माध्यम से यथार्थ-बोध को चित्रित करते हैं। ये कवि शिल्पगत वैशिष्ट्य में आंतरिकता को लिए हुए हैं। भाषा शिल्प एवं बिम्ब-विधान, प्रतीक-योजना, मिथक एवं प्रगीतात्मकता के रूप में ये कवि अपने शिल्प को वैयक्तिक रूप देते हैं। इनकी भाषा तो वैयक्तिकता या आत्मपरकता का प्रथम प्रस्थान बिन्दु है। इसमें कवि की वैयक्तिक संवेदना तथा सांस्कृतिक चेतना का सम्पूर्ण प्रतिफलन होता है। बोलचाल की भाषा का नूतन प्रयोग, नवीन शब्द-संगठन एवं अर्थलय पर निर्मित स्वच्छन्द भाव-प्रवाह आदि के द्वारा ये कवि अपने आपको ही अभिव्यंजित करने का प्रयास करते हैं। यह अपने परिवेश एवं भाषागत रुझान के माध्यम से तत्सम, तद्भव, विदेशी एवं नूतन शब्दों के प्रयोग रचनाकार की आत्मपरकता ही है। भाषा के इस रचाव में कवि का पूरा व्यक्तित्व बोलने लगता है। इस प्रकार भाषा नवस्वच्छन्दता-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

वादी कवियों की आत्मपरकता का जीवन्त रूप है, जिसमें सामयिक जीवन-बोध के अनेक अनछुये, टटके एवं ताजे शब्दों का चयन निहित है। ये शिल्प-तंत्र कवि की अनुभूति एवं व्यक्तित्व से सिक्त हैं। नवस्वच्छन्तावादी कवियों की शिल्पगत विशेषताएँ कवि-वैयक्तिकता की नितान्त आत्मीय प्रतिक्रियाओं को मूर्तिमान करती है। इस प्रकार भाषा, बिम्ब, प्रतीक, मिथक फैंटेसी एवं प्रगीतात्मकता के रूप में नवस्वच्छन्दतावादी कवियों की शिल्पगत प्रवृत्तियाँ अपना रूप निर्मित करती हैं। नवस्वच्छन्दतावादी परम्परागत काव्य-भाषा से विद्रोह कर नवीनता को अपनाती हुई आगे बढ़ रही है। नवस्वच्छदन्ता-वादी कविता की भाषा वैचारिकता से बोझिल है। वैचारिक संश्लिष्टता के कारण कवि अपने भाव-बोध को नये बिम्बों, नये प्रतीकों, फैंटेसियों एवं मिथकों में एक नवीन रूप में हमारे सामने प्रस्तुत करता है। यहाँ कवि समकालीन जीवन-बोध को बिम्बों, प्रतीकों, मिथकों, फैंटेसियों एवं प्रगीतों में चित्रित करता है। इस चित्रण में कवि की स्वीय चेतना की अभिव्यंजना नूतन बिम्बों, प्रतीकों, मिथकों, फैंटेसियों एवं प्रगीतों के रूप में होता है। ब्रिम्ब अनुभूति-प्रसूत है। इसलिए अनुभूति के स्वच्छन्द प्रवाह में जो भी दृश्य, भाव अथवा वस्तु सामने है, उसे इन्द्रियग्राह्य रूप में चित्रित करना ही बिम्ब की सहजता है। आवेग से बिम्ब में आन्तरिकता, वैयक्तिकता एवं मानवीयता आती है, जो बिम्ब को स्वच्छन्द स्वरूप प्रदान करती है। आज कवि अपनी अभिव्यंजना प्रतीकों के द्वारा करता है। 'प्रतीक' कवि की आत्मिक अभिव्यंजना होती है और इसी विन्दु पर प्रतीकात्मक योजना स्वच्छन्दतावाद से जुड़ती है। मिथकीय अभिव्यंजना में कल्पना और यथार्थ दोनों का समन्वय होता है। इसमें रचनाकार वास्तविकता को सर्जनात्मक कल्पना से जोड़कर नवीन रूप देता है। ऐतिहासिक एवं मनोवैज्ञानिक सत्य को समकालीनता से जोड़ना वस्तुतः स्वच्छन्द वृत्ति का ही खेल है। वस्तुतः मिथक दैवी भावना से मानवी भावना की यात्रा है। सक्रिय फैंटेसी भी चेतन एवं अचेतन के द्वन्द्वों से उभरती है। फैंटेसी की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया के पीछे भाषा की अगाध निरन्तर साधना-शक्ति है। भाषा फैंटेसी को काटती-छाँटती है। वस्तुतः कवि की यह फैंटेसी भाषा को समृद्ध बनाती है, उसमें नये अर्थ भर देती है। शब्द को नये चित्र प्रदान करती है। इस प्रकार जो कवि भाषा का निर्माण करता है, विकास करता है, वह निःसन्देह महाकवि है। भाषा परम्परागत रूप में फैंटेसी की मूल चेतना को फैलाती है, उस फैंटेसी में संशोधन भी उपस्थित करती जाती है और ऐसी स्थिति में कवि के अन्तर-मन में भाषा एव भाव के बीच अन्तर्द्वन्द्व की स्थिति बनी हुई रहती है। यह द्वन्द्व अपनी अभिव्यक्ति के लिए भाषा पर दबाव डालती है। उसके शब्दों एवं मुहावरों में नयी अर्थमत्ता, नयी अर्थ-क्षमता एवं नयी अभिव्यक्ति भर देती है।

प्रगीत में कवि की स्वीय अनुभूतियाँ चित्रित होती हैं। प्रगीत कवि की आन्तरिकता की सबसे सशक्त अभिव्यक्ति का माध्यम है। इसमें कवि को अपने अन्तरमन को

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

अभिव्यंजित करने में बड़ी सुविधा होती है। इस प्रकार नवस्वच्छन्दतावादी शिल्प में आन्तरिकता एवं नवीनता हर विन्दु पर देखने को मिलती है। इस शिल्प-तन्त्र में कवि की आन्तरिकता बोलती है। वस्तुतः कविता जब विचारधारा की अभिव्यंजना देती है, तो कवि को बिम्ब, प्रतीक, फैंटेसी, मिथक एवं प्रगीतात्मकता का सहारा नूतन भाषा-विन्यास के रूप में लेना पड़ता है। आज की कविता दुरूह होती जा रही है। फलस्वरूप कवि अपने ज्ञान-विज्ञान की अनुभूतियों को संश्लिष्ट रूप में अभिव्यंजित करता है। इस अभिव्यंजना-शिल्प में कवि-व्यक्तित्व की झलक मिलती है, जिसमें वह अपने आदर्शों एवं अनुभवों को चित्रित कर देता है। फलतः इन शिल्प-तन्त्र में कवि की आत्मिक भावनाओं की प्रमुखता होती है। रचना-शिल्प के हर पड़ाव पर नवस्वच्छन्दतावादी कवि वैयक्तिकता व आत्मपरकता की स्थिति में रहता है। स्वच्छन्दतावादी कथ्य की आत्मपरकता व वैयक्तिकता नवस्वच्छन्दतावादी काव्य-प्रवाह में शिल्पों के रूप में दिखाई देती है।

नवस्वच्छन्दतावाद अपने सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक भावभूमि में यथार्थवादी एवं मानववादी है। अपने यथार्थवादी एवं मानववादी स्वरूप के कारण इनमें मानवीय हर्ष-विषाद की रेखाएँ उभरती रहती हैं। मनोवैज्ञानिक संदर्भों में भी इस नवस्वच्छन्दता-वाद में मानवी भावनाओं की ओर अधिक ध्यान देने पर बल है। यही कारण है कि नवस्वच्छन्दतावाद अपने विश्लेषणक्रम में मानवीय अधिक है। वस्तुतः नवस्वच्छन्दतावादी चेतना अपने में यथार्थता-युगसापेक्षता, मानवीयता तथा मनोवैज्ञानिकता की सहज अभिव्यंजना से अपनी एक खास पहचान बनाती है। यही मानवीयता इसकी आधु-निकता है और आज के संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता है। कथ्य एवं शिल्प के हर क्षेत्र में नवस्वच्छन्दतावादी समीक्षा-सिद्धान्त के सर्जन में रचनाकार अपनी अभिव्यंजना में मानवीयता को सर्वोपरि मानता है। मानवी आशा-निराशा को रेखांकित करना इस समीक्षा-सिद्धान्त का अभीष्ट है। आज यही हमारी एक विशेष उपलब्धि है। क्योंकि इस वैज्ञानिक युग में नवस्वच्छन्दतावाद में मानवीयता की स्थितियों को यथार्थ के धरातल पर चित्रण मिलता है। इस प्रकार नवस्वच्छन्दतावाद के भीतर जो मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया लक्षित होती है, उसमें रचनाकार अन्तः एवं बाह्य परिवेश को चित्रित करता है। वस्तुतः रचनाकार जब तक चेतन के किसी भाग का अचेतन से आवयविक सम्बन्ध नहीं जोड़ता है तब तक उस चेतन ऊर्जा की काव्यात्मक अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है। इस अर्थ में यह कहा जाना न्यायसंगत होगा कि चेतन मन की जो सृजनशील धारा होगी, उसके अनुकूल ही अचेतन की ऊर्जा अपनी अभिव्यक्ति चाहेगी। इस प्रकार चेतन मन की सृजनशीलता अचेतन की प्राकृत-धारा के बिना असंभव है। अचेतन

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

मानवी प्रकृति की आन्तरिक धारा है। इसलिए अचेतन की शक्ति व्यक्तिगत होने के साथ ही बाह्यगत एवं समाजगत भी होती है।

नवस्वच्छन्दतावादी काव्य के भीतर जो मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया लक्षित होती है, वह निःसन्देह स्वच्छन्दतावादी व छायावादी या उसके पूर्व की काव्य-प्रक्रिया से एकदम भिन्न है। स्वच्छन्दतावादी व छायावादी रचना धर्मी कवियों की तरह आवेशयुक्त होकर ये कवि अपने भावों के अनायास, स्वच्छन्द, अप्रतिहत प्रवाह में प्रवहमान नहीं है, बल्कि किन्हीं अनुभूत मानसिक प्रतिक्रियाओं को ही अभिव्यंजित करता है। कभी इन प्रतिक्रियाओं की मानसिक रूपरेखा प्रस्तुत करता है, कभी तो वह उस रूपरेखा में रंग भर देता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि वह व्याकुलता या आवेश का अनुभव नहीं करता। वस्तुतः स्थिति यह होती है कि वह अपने आवेश या व्याकुलता को बाँधकर नियंत्रित कर, ऊपर उठाकर संवेदनात्मक ज्ञान के रूप में प्रस्तुत कर देता है। नवस्वच्छन्दतावादी काव्य-धारा में मनोवैज्ञानिकता पर बल है। सौन्दर्य-वृत्ति के माध्यम से रचनाकार कलाकृति को संजीवनी देते हैं। वे स्वयं उसमें अपनी प्रकृति के प्रश्न को उभारते हैं। यह वृत्ति ऐसी है जिसे हम न स्वीकार करते हैं और न अस्वीकार कर सकते हैं और न उसमें संदेह कर सकते हैं, क्योंकि उस कलाकृति की वास्तविकता कोई प्रत्यक्ष वास्तविकता नहीं है।

●

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MI

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MII

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MID

डॉ० अजब सिंह

जन्म : गंगा और घाघरा के पावन संगम(द्वाब) सिताब दियारा भवन टोला जो कभी बिहार तथा कभी उ० प्र० की सीमा-रेखा में हटता-बढ़ता रहता है।

शिक्षा : आरम्भिक : गाँव में।
माध्यमिक : गौतम ऋषि हाईस्कूल टिविलगंज, सारण।
बी० ए० ऑनर्स : महाराजा कॉलेज, आरा।
एम० ए०, पी-एच० डी० : अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़।
डी० लिट्० : पटना विश्वविद्यालय।

अध्यापन : अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ में प्रारम्भ में रिसर्च फेलो के रूप में अध्यापन।
महाराजा कॉलेज, आरा।
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय।
सम्प्रति, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ के हिन्दी विभाग में रीडर।

प्रकाशन : आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ, स्वच्छन्दतावाद, छायावाद।

University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDL

प्रमुख समीक्षा ग्रन्थ

काव्यशास्त्र	डा० भगीरथ मिश्र	३०.०
पाश्चात्य काव्यशास्त्र	डा० भगीरथ मिश्र	४०.०
आलोचक का दायित्व	डा० रामचन्द्र तिवारी	२०.०
आचार्य रामचन्द्र शुक्ल	डा० रामचन्द्र तिवारी	३०.०
आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आलोचना कोश	डा० रामचन्द्र तिवारी	५०.००
जनवादी समझ और साहित्य	डा० रामनारायण शुक्ल	३५.००
साहित्य का समाजशास्त्र और रूपवाद	डा० बच्चन सिंह	२५.००
नवलेखन समस्याएँ और संदर्भ	डा० श्यामसुन्दर घोष	१५.००
अज्ञेय की गद्य-शैली	डा० सावित्री मिश्र	५०.००
मिथकीय कल्पना और आधुनिक काव्य	डा० जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव	१२०.००
पाश्चात्य साहित्यलोचन और हिन्दी पर उसका प्रभाव	डा० रविन्द्रसहाय वर्मा	१५.००
निराला की काव्य भाषा	डा० शकुन्तला शुक्ल	५०.००
उपरूपकों का उद्भव और विकास	डा० इन्द्रा चक्रवाल	१००.००

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu